उपासना के क्षण

प्रवचन-क्रम

1. मन का विसर्जन...2
2. विसर्जन की कला...25
3. श्रद्धा, अश्रद्धा और विश्वास..51
4. जीवन क्या है?...76
5. निर्विचार परिपूर्ण शक्ति है...100
6. मन के पार..121
7. उपासना का मतलबः पास बैठना..127
8. जीते-जी मरने की कला...132
9. प्रयास रहित प्रयास...144 10...सफलता नहीं, सुफलता .... 170 11...अलोभ की दृष्टि 192

उपासना के क्षण
पहला प्रवचन

मन का विसर्जन

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

इतने चिंतायुक्त हैं कि जो अंतरधारा चिंता की चल रही है वह दिखाई नहीं पड़ रही है। और जब हम इस ऊपर की सतह पर शांत हो जाएंगे, तो अंतरधारा बड़ी चिंता की चलती हुई मालूम होगी, उससे घबड़ाहट होगी और लगेगा यह क्या हो रहा है। उस वक्त भी बिल्कुल शिथिल होकर, उस वक्त भी चुपचाप साक्षीभाव रखना चाहिए। उस वक्त भी देखते रहना चाहिए, कुछ नहीं करना चाहिए। कुछ किया कि गड़बड़ शुरू हुई।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं, कुछ भी मत करिए। वह जो मैंने आज किया, नॉन-कोआपरेशन करिए। किसी तरह का भी सहयोग मत दीजिए विचार को, चुपचाप बैठे देखें और चले जाएंगे।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

असल योग ही समझने जैसी बात है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, विचार तो हैं, चल रहे हैं, लेकिन विचार अपने में शक्तिहीन हैं जब
तक कि मेरा उसे सहयोग न मिले। जब तक कि मैं उसको शक्ति न दूं। उसमें अपनी कोई शक्ति नहीं है। तो मुझे विचार से कुछ नहीं करना है, मैं जो शक्ति उसे देता हूं, वह भर नहीं देनी है। अभ्यास कुल इतना ही है कि मैं अपनी तरफ से शक्ति न दूं। वे आएं, आने दें; जाएं, जाने दें। आप किसी तरह की आइडेंटिटी विचार के साथ, किसी तरह का तादात्म्य, किसी तरह की मैत्री कायम न करें। इतना ही होश रखें कि मैं केवल देखने वाला भर हूं, ये आए और गए। आप धीरे-धीरे पाएंगे कि जो-जो विचार आएगा, अगर आपने कोई सहयोग नहीं दिया, तो वह बिल्कुल निष्प्राण होकर मर जाएगा, उसके प्राण नहीं रह सकते, वह खत्म हुआ। और इस तरह सतत प्रयोग करने पर अचानक आप पाएंगे कि उसका आना भी बंद हो गया। इसी साक्षी के माध्यम से हमारे भीतर जो संगृहीत हैं उनकी भी निर्जरा हो जाएगी।

प्रश्नः संचित?

हां, संचित जो हैं, उनकी भी निर्जरा हो जाएगी। वे आएंगे, उठेंगे, पूरे रूप से खड़े होंगे; लेकिन हम अगर चुप रहे और कोई सहयोग नहीं दिया, तो सिवाय इसके कि वे विसर्जित हो जाएं, उनका कोई रास्ता नहीं है और। तो कितनी ही चिंता पकड़ती हुई मालूम हो, चुपचाप देखते रहिए। यह भाव मत करिए कि मैं चिंतित हो रहा हूं, क्योंकि वह सहयोग शुरू हो गया फिर। इतना ही भाव करिए कि मैं देख रहा हूं कि चिंता है। मैं चिंतित हूं, यह तो खयाल ही मत करिए। यह विचार तो फिर सहयोग हो गया।
असहयोग का अर्थ है कि मैं एक सेपरेशन, एक भेद मान कर चल रहा हूं चिंता में और अपने में, विचार में और अपने में। जो हो रहा है उसमें और मैं जो देख रहा हूं उसमें, मैं एक भेद मान रहा हूं। इसी भेद को साधते चले जाना कि जो भी मेरे भीतर हो रहा है उससे मैं भिन्न हूं, जो भी मुझसे बाहर हो रहा है उससे मैं भिन्न हूं। इस बोध को साधते चले जाना। तो एक सीमा आएगी कि जो-जो जिस-जिस से मैं भिन्न हूं वह-वह विलीन हो जाएगा और अंततः केवल वही शेष रह जाएगा जिससे मैं अभिन्न हूं। भिन्न के विलीन हो जाने पर जो अभिन्न है, वह शेष रह

जाएगा। उसी शेष सत्ता का जो अनुभव है, वही स्वानुभव है। तो उसमें किसी तरह का तादात्म्य न करें, कोई तरह का संबंध न जोड़ें।
बात थोड़ी ही है, बहुत नहीं है वह। नहीं करते हैं इसलिए बहुत बड़ी मालूम होती है। बात बहुत थोड़ी ही है।

प्रश्नः क्या प्रारंभ में द्वैत होगा?

हां, प्रारंभ में द्वैत होगा। प्रारंभ में द्वैत होगा। अंत में द्वैत नहीं होगा। प्रारंभ से यह बोध रहेगा; यह विचार नहीं है, बोध ही है। भीतर बैठेंगे मौन होकर तो दिखाई पड़ेगा विचार का चलना। यह बोध ही है कि यह जो विचार चल रहा है यह और मैं भिन्न हूं। यह कोई विचार नहीं है। यह तो हम बाद में जब चर्चा करते हैं तो मालूम होता है कि यह विचार है। न, वह कोई बात नहीं, बस सिर्फ विचार चल रहा है और हम देख रहे हैं। जब यह विचार चलना बंद हो जाएगा और केवल हम देखते रह जाएंगे और कुछ दिखेगा नहीं। यानी दो ही स्थितियां हैं। हम देख रहे हैं और कुछ दिख रहा है और हम देख रहे हैं और कुछ नहीं दिख रहा है।
अभी हम जब भी देखेंगे भीतर तो कुछ दिखाई पड़ेगा। कुछ दिखाई पड़ेगा, वही विचार है। जो भी दिखाई पड़ेगा, वही विचार है। एक सीमा है कि देखते-देखते कि हम देखते रहेंगे और कुछ दिखाई नहीं पड़ेगा। जब कुछ नहीं दिखाई पड़ेगा तब जो अनुभूति होगी वह विचार की न होकर चैतन्य की है। क्योंकि अब तो वहां कोई दिखाई पड़ नहीं रहा। अब कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा, तो जो देखने की क्षमता है, वह जो ज्ञान की शक्ति है, वह जो अभी तक किसी-किसी को देखती रही थी, अब तो वहां कोई कंटेंट नहीं है जिसको देखे। क्योंकि अब वहां कोई भी नहीं है जिसको देखे, इसलिए सिवाय अपने को देखने के कोई उसके पास मार्ग नहीं रह जाएगा। तो हमारे पास जो ज्ञान है, उस ज्ञान से उसके ऑब्जेक्टस छीन लेने हैं, ताकि उसके पास देखने को कुछ न रह जाए। जब उसके पास देखने को कुछ न रह जाएगा तब भी देखने की क्षमता तो रहेगी। और जब कुछ देखने को नहीं रहेगा तो फिर वह देखने की क्षमता किसे देखेगी? उस अंतिम क्षण में जब कि चैतन्य देखने को कुछ नहीं पाता है, अपने को देखता है। तो उसी अपने को देखने को आत्म-ज्ञान कहते हैं।
एक ही साधना है कि हम किसी तरह से अपनी चेतना के जो ऑब्जेक्टस हैं, जो कंटेंट हैं कांशसनेस का उसको छीनते चले जाएं, उसको विरल करते चले जाएं, उसे विलीन करते चले जाएं। एक सीमा आएगी कि कंटेंट कुछ नहीं होगा केवल कांशसनेस होगी। जब तक कंटेंट कुछ है तब तक कांशसनेस दूसरे की है। और जब कंटेंट कुछ नहीं होगा तो कांशसनेस सेल्फ-कांशसनेस हो जाएगी। जब तक हम किसी को देख रहे हैं तब तक अपने को नहीं देख रहे हैं। जब हमें कुछ भी देखने को शेष नहीं रह जाएगा तब जिसको हम देखेंगे वह हम स्वयं हैं।

प्रश्नः मात्र दर्शन रह जाएगा।

हां, बस दर्शन मात्र रह जाएगा। इतनी ही साधना है कि हम चेतना के सामने
से उसके सारे विषय, जिन-जिन पर चेतना रुकती और ठहर जाती है, और जिनकी वजह से अपने पर नहीं लौट पाती, उनको धीरे-धीरे क्षीण कर दें। और क्षीण करने का रास्ता है कि हम असहयोग करें। हम अभी उनके बनाने वाले हैं, यानी हम ही उनको बनाए हुए हैं। जैसे खाली बैठते हैं तो कुछ न कुछ विचार चल रहे हैं। जो विचार चल रहे हैं वे अचानक थोड़े ही चल रहे हैं, हम ही उनको चला रहे हैं। क्योंकि हमारे बिना सहयोग के वे चल नहीं सकते, उनके नीचे हमारा सहयोग है। जब मैं क्रोध कर रहा हूं किसी पर तो मैं क्रोध को चला रहा हूं, कहीं मेरा सहयोग है। अगर मैं अपने सहयोग को हटा लूं, क्रोध का चलना संभव नहीं रह जाएगा, वह वहीं का वहीं गिर जाएगा।
जो-जो विचार चल रहे हैं उनसे सहयोग को खींच लें और कुछ न करें, बस इसी
को सामायिक, इसी को ध्यान समझें।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं है।)

असल में ये दोनों शब्द जो हैं हमारे, इंडिविजुअल और कॉ.जमिक, ये दोनों विचार के ही हैं। जो रह जाता है, न इंडिविजुअल है और न कॉ.जमिक है, उसे कहना कठिन है कि क्या है। क्योंकि उसे कोई भी विचार देना असंभव है। सारे विचार तो हमने अलग कर लिए। ये दोनों तो विचार ही हैं। तो उस सतह पर कोई विचार सार्थक नहीं है। न तो कह सकते हैं कि व्यक्ति है और न कह सकते हैं कि निर्व्यक्ति है। उस सीमा पर जो भी है वह किसी शब्द से उसको नहीं कहा जा सकता।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं है।)

यह हमारे सब विचार करने में अगर हम करेंगे तो जरूर होगा। यह तो हम कॉ.जमिक भी कहेंगे तो भी लिमिटेशन हो गई।

प्रश्नः न ऐसा करेंगे।

हां। कुछ भी कहें हम।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं है।)

नहीं, असल में यह जो हमारा इंडिविजुअल की धारणा है कि मैं एक व्यक्ति हूं, यह हमारे विचारों के कारण है। अगर मेरे सारे विचार विलीन हो गए, तो आपमें कोई ईगो और कोई व्यक्ति मालूम नहीं होगा। आपको मालूम होगा केवल होना। केवल बीइंग मालूम होगा। जिसमें न तो यह भेद मालूम होगा कि मैं व्यक्ति हूं या समस्त हूं। केवल होना मात्र रह जाएगा, सत्ता मात्र रह जाएगी, वह प्योर एक्झिस्टेंस मात्र होगा। उस प्योर एक्झिस्टेंस पर जो विचार हमारे इकट्ठे हैं उन विचारों के कारण हम एक इंडिविजुअल मालूम होते हैं।
अभी भी आंख बंद करके किसी दिन शांति से भीतर उतरिए तो नहीं पता चलेगा
कि जिसमें उतरे थे वे पटेल साहब थे। समझ में आई बात? यह जो हमें लगता है कि मैं अ हूं, आप ब हैं, आप स हैं, यह जो अ ब स हमने चिपकाया हुआ है, यह हमारे विचार तक ही है, यह नाम काम देता है, सार्थक है, विचार के पीछे यह कोई नाम सार्थक नहीं है। वहां तो एक नेमलेस, एक बिल्कुल अनाम सत्ता रह जाती है। उस सत्ता में रंच मात्र भी यह तय करना संभव नहीं है कि वह किसकी है, वह केवल सत्ता है।
अभी मैंने कहना शुरू किया कि अगर हम, जो हम कहते हैं कि मैं मुक्त हो जाऊंगा। मैं मुक्त हो जाऊंगा, यह बात बहुत ठीक नहीं है, असल में मैं से मुक्त हो जाऊंगा। यानी मैं मुक्त हो जाऊंगा, इसमें कहीं धारणा है कि मुक्त होकर भी मैं रहूंगा, यानी मैं की तरह। ऐसी बात नहीं है, मैं की मुक्ति मैं से भी मुक्ति है। जो शेष रह जाएगा उसमें इस "मैं" जैसी चीज को खोजे भी पाना संभव नहीं है। क्योंकि यह मैं जो था, यह जो अहंकार था, यह जो बोध था व्यक्ति होने का, यह उन्हीं विचारों के इकट्ठे पुंज की वजह से था। उन्हीं विचारों का इकट्ठे रूप का नाम मैं था। वे एक-एक खिसक जाएंगे, मैं खिसक जाएगा।
एक बौद्ध भिक्षु हुआ है, नागसेन। एक बौद्ध ग्रंथ है, मिलिन्दपंथय। वह बड़ा अदभुत भिक्षु हुआ। और बड़ी मीठी कथा है। नागसेन को मीनांदर नाम के यूनानी सेनापति ने, जिसको सिकंदर भारत में छोड़ गया था। मीनांदर ने नागसेन को आमंत्रित किया राज्य में, दरबार में, उससे चर्चा करने को। वह बड़ा उत्सुक था धार्मिक चर्चा का। तो उसने अपना रथ और अपने स्वागत के लिए लोग भेजे गांव के बाहर कि नागसेन भिक्षु को रथ पर लेकर वे आएं। पांच सौ भिक्षु और साथ थे। महल के बाहर आकर मीनांदर ने उसको नमस्कार किया नागसेन को। नागसेन रथ से उतरा। मीनांदर ने कहा कि नागसेन भिक्षु का हम स्वागत करते हैं।

उस नागसेन ने कहाः हम स्वागत को स्वीकार करते हैं यद्यपि नागसेन भिक्षु जैसा कोई है नहीं। उसने कहा कि हम स्वागत को स्वीकार करते हैं यद्यपि भिक्षु नागसेन जैसा कोई है नहीं।
वह मीनांदर बोलाः क्या कहते हैं? फिर स्वीकार कौन करता है?
नागसेन ने कहाः कामचलाऊ है कि आपको बुरा न लगे, लेकिन सच ही भिक्षु नागसेन जैसा कोई नहीं है।
तो मीनांदर ने कहाः फिर यह कौन आया? आप आए, आप मेरे सामने खड़े हैं, आप कौन हैं?
तो उसने एक बड़ी अदभुत बात कही। उसने कहाः यह जो रथ है, यह रथ है न?
मीनांदर ने कहाः निश्चित ही रथ है।
तो उसने कहाः इसके पहियों को निकाल कर हम अगर तुमसे पूछें कि यह रथ है,
तो तुम क्या कहोगे? वह कहेगा कि यह रथ नहीं है, ये पहिए हैं। उसने कहाः हम एक-एक हिस्सा इसका निकाल कर तुमसे पूछें कि यह क्या है, तो तुम क्या कहोगे? वह कहेगा कि ये पहिए हैं, यह आगे का डंडा है, यह पीछे का डंडा है, फलां है, ढिकां है। सारे रथ के अंग हम निकाल लेंगे, तुम किसी को भी रथ नहीं कहते कि रथ कहां है? तो मीनांदर ने कहा कि रथ केवल जोड़ है। अगर सारे अंग खींच लिए जाएं तो जोड़ नहीं बच रहेगा। रथ केवल जोड़ है।
नागसेन ने कहा कि जैसा रथ जोड़ है वैसे ही यह नागसेन नाम का जो व्यक्ति
है यह केवल जोड़ है। इसके हट जाने पर नागसेन नहीं रह जाएगा। जो रह जाएगा उसको नागसेन कहना कठिन है। जो रह जाएगा उसको नागसेन कहना कठिन है।
जैनों ने इसको अहंकार विसर्जन और आत्मोपलब्धि कहा। वह आत्मा जो है वह व्यक्ति नहीं है, अहंकार नहीं है। बौद्धों ने इसको अनात्म ही कह दिया, उन्होंने कहा कि वह आत्मा ही नहीं है। और कोई फर्क नहीं है दोनों में।
जो शेष रह जाता है उसको मैं की सत्ता का संस्कार देना नासमझी है। जैसे-जैसे मैं अपने भीतर चलता हूं, वैसे-वैसे मैं विलीन होता चला जाता है। यह आपको समझने जैसी बात है। जैसे-जैसे मैं बाहर चलता हूं, मैं सघन होता चला जाता है। वह जो मैं है, स्ट्रेंथन होता चला जाता है। तो जैसे-जैसे भीतर चलिएगा, मैं जो है विरल होता चलेगा। जो आदमी अपने से जितना बाहर चला गया है उतना उसका मैं मजबूत पाइएगा। और जो आदमी अपने जितने भीतर चला गया उतना उसमें मैं नहीं पाइएगा।
और हम जो बाहर चलते हैं, अगर बहुत गौर से देखें, तो उसको मैं को ही मजबूत होने का सुख है और कोई सुख नहीं है। वह जो बड़ा भवन खड़ा कर लेते हैं, उसमें सुख लेते हैं। वह जो बड़ा राज्य जीत लेते हैं, उसमें सुख लेते हैं। वह जो बड़ा धन इकट्ठा कर लेते हैं, वह जो पांडित्य या बड़ा साधु बन जाते हैं, उसमें जो सुख लेते हैं, वह सब मैं का सुख है। वह जितना हम ये सब तरह की चीजें इकट्ठा करते हैं उतना मैं जो है भर जाता है और वजनी हो जाता है, कुछ मालूम होने लगते हैं। क्योंकि फिर हम कह पाते हैं कि मैं, मैं कोई साधारण आदमी नहीं हूं। फिर हम कह पाते हैं कि मैं कोई साधारण आदमी नहीं हूं, मैं उतना ही ज्यादा ठोस और वजनी हो जाता है।
तो दुनिया में दो ही दौड़े हैं और दो ही तरह के आदमी हैं। एक दौड़ है कि मैं को मजबूत करो, और एक दौड़ है कि मैं को विसर्जित करो। एक तरह का आदमी है जो उस दिशा में चल रहा है जहां और घना मैं होता चला जाएगा। जितना घना मैं होगा, आत्मा से उतनी ही दूरी हो जाएगी। जितना प्रगाढ़ मैं का बोध होगा, उतने ही हम आत्मा से फासले पर चले जाएंगे। यानी अगर ठीक से समझिए, मैं की प्रगाढ़ता आत्मा से दूरी नापने का यंत्र है। और जितना मैं विरल होता चला जाएगा, उतना ही हम अपने करीब आने लगेंगे। और जिस क्षण हम बिल्कुल अपने में आएंगे, हम पाएंगे मैं नहीं है। यानी वास्तविक मैं को पाते ही जिसको हम मैं करके जानते रहे हैं, वह नहीं रह जाएगा।

प्रश्नः यह आध्यात्मिकता और भौतिकवाद, जो लगे अदृश्य या दृश्य; जो नहीं देखा था, जो देखा था, इस सबका, दोनों का समन्वय हो सकता है? विज्ञान कहता है, आत्मा कोई वस्तु ही नहीं है। तो वस्तुतः विचार, उसी का नाम आत्मा है। आत्मा जैसी कोई वस्तु ही नहीं, खाली शब्द है। तो जो खाली शब्द है,

आत्मा को किसी ने देखा नहीं है। अनुभव होता है, लेकिन दूसरे को अनुभव दे सकता नहीं है। एक सिद्धांत है। वह खुद को अनुभव होता है। तो हरेक का अनुभव, आत्मा का विचार अलग-अलग होता है। आत्मा अपने को मानते हैं, और ऐसा ही है, ऐसा ही ये वैज्ञानिक लोग कहते हैं। तो अपने घुटाला में, मन और जीव घुटाला में पड़ जाता है। इसलिए उसने सच्ची बात कही। यानी जो आज तक किसी ने देखा तो नहीं है, तो बातें करते हैं आत्मा की। अभी तो यह जो मार्क्सवाद है, उसमें तो क्या है कि संयुक्त दो तत्व हैं। अपन तो एक तत्व मानते हैं, अर्थात उसमें दूसरा कुछ है नहीं। वह तो दो मानता है--शक्ति और वस्तु। दोनों संयुक्त हैं, अलग नहीं हो सकते हैं। उसका रूपांतर होता है। शक्ति वस्तु हो जाती है, वस्तु आत्मा हो जाती है। यानी आत्मा वस्तु हो जाती है।
तो कोई नया विचार, यह विचार तो आपने बहुत सुंदर से सुंदर शिखर का विचार आपने किया है। तो उसमें एक विचार पुराना है। तो जे. कृष्णमूर्ति यही कहते हैं कि तुम मन को मार डालो, निर्भार हो जाओ, तो तुम्हें आत्मा का दर्शन होगा।

यह जो आपने पूछा कि कुछ विचारक हैं... यह जो आपने पूछा बड़ा अर्थपूर्ण है। सारी दुनिया में विचार यही हैं इस समय। कुछ लोग हैं जो कहते हैं कि मनुष्य के भीतर सिवाय पदार्थ के और पदार्थ से उत्पन्न शक्ति के और कोई आत्मा नहीं है। आत्मा जैसी कोई वस्तु नहीं, सिर्फ केमिकल ट्रांसफार्मेशन हैं। वह केवल पदार्थ का और रसायन का मिला-जुला रूप है। अगर ये सारी चीजें अलग हो जाएंगी, तो आत्मा जैसा वहां कोई भी नहीं है। यह विचार काफी जोर से पकड़ा है, और एकदम से टाल देने जैसा नहीं है।
दिक्कत सिर्फ यहीं है कि जो लोग इस विचार को दे रहे हैं, उनमें से एक
ने भी आत्मा को जानने के जो उपाय हैं, उनका प्रयोग नहीं किया है। उसके जो एक्सपेरिमेंट्स हैं, उनमें से नहीं गुजरे हैं। यह बिना प्रयोग के, जैसा मार्क्स ने कहा, यह बिना प्रयोग के, बिना किसी वैज्ञानिक साधना के कही हुई केवल विचारगत बात है; विचार से ऐसा तय करते हैं कि यह इतनी बात है। जो आप कहते हैं कि आत्मा को किसी ने देखा नहीं, यह गलत कहते हैं। ऐसा नहीं है कि आत्मा को किसी ने नहीं देखा। जिन्होंने देखा है, उन्हीं ने उसकी खबर दी है। वह कोई विचार नहीं है कि कुछ लोगों ने सोचा और तय किया कि आत्मा होनी चाहिए।
आप भी अपने भीतर उस सत्ता को अनुभव कर सकते हैं। अनुभव करने की पद्धति
और प्रयोग हैं। और जब उस पूरी-पूरी चेतना को अनुभव करेंगे तो आप सुस्पष्ट यह बात जानेंगे कि यह पूरा का पूरा शरीर अलग है और मैं यह जो चैतन्य का बिंदु हूं, बिल्कुल अलग हूं। उसमें रंच मात्र भी संबंध कहीं ढूंढे नहीं मिलेगा। और अगर और थोड़े गहरे जाइएगा तो बिल्कुल इसे शरीर से पृथक करके, अलग खड़े होकर, शरीर को पड़े हुए भी देखा जा सकता है। उतना भी साहस करिए तो शरीर के बाहर भी इस चैतन्य के बिंदु को अलग निकाल ले सकते हैं।
साथ में यह भी हमको लगता है कि यह जो ऐसा जो आत्मा का बिंदु है, यह जो चैतन्य का बिंदु है, यह बेभान होने से मिल जाएगा, तो कृष्णमूर्ति को आप गलत समझे। यह परिपूर्ण भान में होने से मिलेगा। बेभान होने से तो यह खोया हुआ है। बेभान होने से यह खोया हुआ है। जितने हम बेभान हैं, उतना ही हमको इसका पता नहीं लग रहा है। बेभान होने से केवल शरीर का पता लगता है। क्योंकि यह इतना स्थूल है शरीर कि इसके लिए जानने के लिए बहुत भान की जरूरत नहीं है। जितनी स्थूल चीज होगी, उतने बिना भान के भी पता चल जाएगी।
यहां से एक शराबी निकले नशे में, तो जो पत्थर पड़े होंगे, जिनसे वह टकराएगा, उनका उसे पता चल जाएगा कि यहां पत्थर पड़ा है, यहां रास्ता नहीं है। लेकिन जितनी सूक्ष्मतर चीजें इस कमरे में होंगी, उतना ही उसको पता पड़ना कठिन हो जाएगा।
तो जितने हम बेभान होंगे, उतने ही स्थूल और मोटी चीजों का पता चलेगा। अभी हमको अपने में खोजने से इतना ही पता चलता है कि शरीर है। यह हमारे एक बेहोशी की और बेभान की स्थिति है। जितना हमारा भान बढ़ेगा, जितना कांशसनेस, अवेयरनेस बढ़ेगी, उतना ही हमको इससे ज्यादा सूक्ष्मतर चीजों का अपने भीतर

होने का बोध होने लगेगा। जिस दिन हम परिपूर्ण भान में होंगे, उस दिन हमें उसका पता चलेगा जो मात्र कांशसनेस है। परिपूर्ण भान में आने पर उसका पता चलेगा जो केवल बोध मात्र है। उस परिपूर्ण बोध में जाने की जो प्रक्रिया है, वह मन को विसर्जित करने की है।
मन का विसर्जन आत्मा का विसर्जन नहीं है। मन के विसर्जन से ही आत्मा
का बोध शुरू होता है। मन से मेरा अर्थ है, विचार, उनका इकट्ठा जोड़, वह जो थॉट प्रोसेस है। जब वह मन के सारे विचार विलीन हो जाएंगे। अभी तो हम या मार्क्स या कोई भी लोग जो इस तरह चिंतन करते हैं, उनको दो ही बातें दिखाई पड़ती हैं, शरीर दिखाई पड़ता है और विचार दिखाई पड़ते हैं।
आप भी अपने भीतर जांचिएगा तो दो ही बातें मिलेंगी। एक तो यह शरीर है, यानी यह रासायनिक प्रोसेसेज हैं, केमिकल प्रोसेसेज शरीर में हो रही हैं वे। और थोड़ा भीतर हटिएगा, तो थॉट-प्रोसेस मिलेगी, विचार मिलेगा। बस दो ही चीजें मिलेंगी।
यह जो मन को मारने की बात है, यह इसीलिए है कि जब मन का विचार बंद हो जाएगा, तब आप अपने भीतर एक और तीसरी चीज पाएंगे, जो इसके पहले आपने पाई ही नहीं थी। और तब आपको कांशसनेस मिलेगी। वह कांशसनेस जो कि पाती थी कि मेरे में शरीर है और मेरे में विचार है।
आखिर कौन है जिसको यह पता चलता है कि यह मेरी देह है?
किसी को पता चल रहा है कि यह मेरी देह है। किसी को पता चल रहा है कि ये मेरे विचार हैं। जिसको यह पता चल रहा है कि मेरी देह, मेरे विचार, निश्चित ही देह और विचार के पीछे कुछ और भी है, जो इन दोनों को देखता और जानता है। तो वह जो बिंदु है इन दोनों के पीछे, जो दोनों को जानता और पहचानता है, जब ये दोनों बिल्कुल परिपूर्ण शांत होंगे, या न होने के बराबर हो जाएंगे, तब उसका बोध होगा। इसलिए पुराना जो "समस्त योग" है उसमें दो ही साधनाएं हैं, एक आसन की साधना है और एक ध्यान की साधना है।
आसन के माध्यम से शरीर की समस्त क्रियाओं को थिर किया जाता है और ध्यान के माध्यम से विचार की क्रियाओं को थिर किया जाता है। आसन के माध्यम से शरीर को जड़वत कर देते हैं और ध्यान के माध्यम से विचार को जड़वत कर देते हैं। जब शरीर भी जड़वत हो जाता है और विचार भी जड़वत हो जाते हैं, तब भी पता चलता है कि मैं हूं। जब शरीर की समस्त क्रियाएं शून्यप्राय हो गईं और चित्त भी शून्यप्राय हो गया, तब भी पता चलता है कि मैं हूं। और तब इतना स्पष्ट पता चलता है कि देह यह पड़ी है, मरे हुए विचार ये डले हैं, मैं अलग खड़ा हूं।
वह जो अलग होने का आत्यंतिक बोध है, जो अनुभूति है, वह अनुभूति हुई है,
उन लोगों ने कही है। और जो लोग उसका विरोध कर रहे हैं, उनकी बात का मूल्य इसलिए नहीं है कि उनमें से कोई भी उसका प्रयोग नहीं कर रहे हैं।
मार्क्स की बात का बहुत मूल्य नहीं है इस संबंध में, इसलिए नहीं कि उसने कोई गलत बात कही, इसलिए कि वह वहीं, उस स्थल पर साइंटीफिक नहीं है, जिसका दावा है उसके दिमाग में। उसके दिमाग में दावा है कि मैं हर चीज में साइंटीफिक हूं। साइंटीफिक होने का दावा एक ही माने रखता है कि मैं जो भी कह रहा हूं, स्वीकार कर रहा हूं या डिनाई कर रहा हूं, उसको मैंने प्रयोग करके जाना है। वह वैज्ञानिक इतना ही कह सकता है कि हम अभी जो प्रयोग करते हैं, उससे हमें आत्मा नहीं मिलती। वह यह नहीं कह सकता कि हमारे प्रयोगों से पता चलता है कि आत्मा नहीं है। यह अवैज्ञानिक हो जाएगी बात। वैज्ञानिक इतना कह सकता है कि हम जो प्रयोग करते हैं, उससे हमें आत्मा नहीं मिलती। यह तो साइंटीफिक असर्सन होगा। अगर वह यह कहे कि हमने प्रयोग करके देख लिया कि आत्मा नहीं है, यह बात अवैज्ञानिक हो जाएगी। अब यह बात वैज्ञानिक नहीं रह जाएगी। क्योंकि प्रयोग के बाहर की बात करने लगा वह।
महावीर या बुद्ध या उस तरह के जो लोग कहते हैं कि आत्मा है, वे इसलिए नहीं कहते कि आत्मा कोई सिद्धांत है, बल्कि एक प्रयोग से वे जानते हैं कि है। और एक ऐसे प्रयोग से उसको जानते हैं, बड़े आश्चर्य की बात यह है कि जिन-जिन को उसका अनुभव होगा, वे यहां तक कहने को राजी हैं कि एक दफा यह हो सकता

है कि संसार न हो, लेकिन वह है। वह इस दूर तक कि जगत को माया तक कहने के लिए राजी हो सकते हैं, लेकिन उसको इनकार करने को राजी नहीं होते।
हम जिसको स्वीकार करने में दिक्कत में हैं और हम जिसको इनकार करने में असमर्थ हैं, इसके बिल्कुल विपरीत होता है। जो लोग उसको अनुभव करते हैं, उसको ही स्वीकार कर पाते हैं और जिसको हम स्वीकार कर पाते हैं, वे कहते हैं कि वह न भी हो तो भी चलेगा। वह नहीं के ही बराबर है। करीब-करीब बात ऐसी है कि जैसे स्वप्न में हम सोए हों और स्वप्न को देखते हों। हमारे लिए स्वप्न सब कुछ है, जब हम स्वप्न को देख रहे हैं। जाग कर हम कहेंगे कि जो जाग कर देख रहे हैं, वह सब कुछ है, तो वह स्वप्न कुछ भी नहीं था।
लेकिन स्वप्न के भीतर निश्चित ही स्वप्न सब कुछ है। तो गवाही उनकी अर्थपूर्ण नहीं है जिन्होंने स्वप्न को ही देखा है, गवाही उनकी अर्थपूर्ण है जिन्होंने जाग कर भी देखा है। जिन्होंने स्वप्न भी देखा और जाग कर भी देखा, जो दोनों स्थितियों से गुजरे, उनकी गवाही, उनकी साक्षी महत्वपूर्ण है। जो अकेले स्वप्न में देख रहे हों और जागृति के बाबत कोई निर्णय देते हों, स्वप्न में कही गई बात का उससे ज्यादा कोई और मूल्य नहीं है।
तो मेरे साथ एक ही कठिनाई है, अब तक किसी भी मैटीरियलिस्ट या उस भांति
के भौतिकवादी विचारक ने यह साहस क्यों नहीं किया कि वह थोड़ा योग के माध्यम से जानने की भी तो कोशिश करे। जिसको वैज्ञानिकता का इतना दावा है, वह इतना भी तो करे कि इसका भी तो परीक्षण कर ले। और आप हैरान होंगे, आज तक किसी परीक्षण किए व्यक्ति ने इनकार नहीं किया है, निरपवाद रूप से।

प्रश्नः वह उनकी बात है, हो या न हो, वे ही जानें।

हां-हां, वही मैं कह रहा हूं। वही मैं कह रहा हूं कि उसका बिना परीक्षण किए... वे ठीक अर्थों में भौतिकवादी भी नहीं हैं। क्योंकि परीक्षण ही, प्रयोग ही तय करेगा कि क्या है और क्या नहीं है।
तो अभी, मार्क्स के बाद अभी पिछले सौ वर्षों में बहुत फर्क हुआ है। और वैज्ञानिक उस अर्थ में जड़वादी नहीं रह गया जैसा कि था। क्योंकि कुछ अदभुत घटनाएं घटीं। पहली घटना तो यह घटी कि जिसको मार्क्स के समय में मैटर कहा जाता था वह विलीन हो गई बात। अब मैटर जैसी कोई चीज है नहीं। पहले उसने इनकार कर दिया कि आत्मा जैसी कोई चीज नहीं है। इसके बाद बस पदार्थ ही सब कुछ है। फिर पदार्थ की जो खोज चली उससे धीरे-धीरे पता चला कि पदार्थ तो है ही नहीं। वह पदार्थ के अंतिम तल में जाकर जहां इलेक्ट्रान और न्यूट्रान रह जाते हैं, वहां कोई पदार्थ नहीं है, वहां केवल विद्युत कण हैं। और वे विद्युत कण मैटीरियल नहीं हैं। यानी उनका कोई वजन नहीं है और उनको कोई तौला नहीं जा सकता, नापा नहीं जा सकता। कोई रास्ता नहीं है।
विज्ञान एक अजीब मुसीबत में पड़ गया, आत्मा को पहले इनकार कर चुका था, मैटर को अब उसने इनकार कर दिया। अब उनके पास कहने को कुछ भी नहीं कि क्या है। इस वक्त का जो नवीनतम वैज्ञानिक है, उसके सामने सवाल यह है कि वह कुछ भी नहीं कह सकता कि क्या है।
तो मैंने तो एक और बात कहनी शुरू की, मैंने तो यह कहना शुरू किया, विज्ञान सत्य के संबंध में कुछ भी नहीं कह सकता, विज्ञान केवल यूटीलिटी के संबंध में कुछ कह सकता है। ट्रूथ और यूटीलिटी में फर्क है। विज्ञान कह सकता है कि विद्युत से पंखा कैसे चलेगा, विज्ञान यह नहीं कह सकता कि विद्युत क्या है। और अभी भी नहीं कहता। अभी भी विज्ञान यह नहीं कहता कि विद्युत क्या है। अभी भी वह यह कहता है कि पंखा यूं चल सकता है और मशीन यूं चल सकती है। विद्युत की उपयोगिता तो विज्ञान देता है, विद्युत क्या है यह नहीं दे सका।
तो मेरे सामने अब यूं नजर है कि साइंस जो है वह यूटीलिटी की खोज है। रिलीजन जो है वह ट्रूथ की खोज है। इन दोनों में फर्क है।

प्रश्नः अच्छा, जितने संत पुरुष हो गए हैं, उसको तो ऐसा सब मालूम हुआ आत्मा का, तो उसने तो रास्ता भी बहुत बताया है, बहुत-बहुत भजन में ऐसा

बताया है, जैसा कि कबीर ने बताया--कि पांच शरीर पिहु-पिहु करे छठा सुमिरे मन, आई सूरत कबीर की भीतर राम-रतन। इसलिए जैसा वह आपने आज सबेरे दर्शन में बोला आपने कि ऐसी... नहीं होनी चाहिए, प्यास बननी चाहिए। तो इनसे बोला कि पांच इंद्रिय को पूरी प्यास होनी चाहिए, वह बात की। पांच इंद्रियों को काम में लग जाना चाहिए। और मन भी जो काम में लग जाना चाहिए, फिर यह आत्मा का कुछ भास होगा। जहां तक कोई विषय का अभ्यास नहीं है, या प्रयोग नहीं है, या कुछ भी इसके पीछे पढ़ा नहीं है, वहां तक तो खाली बातें ही बातें रहती हैं। तो यह अनुभव वर्णन नहीं कर सकता आदमी। आपने जैसा बताया। आपको कभी ऐसा अनुभव हुआ कि शरीर और मन का जुदा अनुभव कभी आपको हुआ?

निरंतर हो रहा है।

प्रश्नः निरंतर हो रहा है। अच्छा तो फिर यह तो अपनी पक्की श्रद्धा हो
गई कि अभी आत्मा तो जरूर है ही। और आपको तो निरंतर यह चीज हो रही है। पर वह हम दूसरे को भाषा में समझाते हैं और भाषा से समझने वाला कोई नहीं है। जिसको अनुभव हुआ वह समझ सकता है, दूसरा नहीं समझ सकेगा।

न-न, यह जो है, यह जो हमको, असल में भाषा से आप कोई भी चीज क्या समझाते हैं, मैं कहूंगा कि यह एक दरवाजा है, आप समझ लेते हैं। क्यों? क्या इसलिए कि मैंने भाषा से आपको समझा दिया? नहीं, भाषा के अलावा आप इसको जानते हैं। जब मैं कहता हूं, यह दरवाजा है, तब आप इसको पूर्व से जानते हैं कि यह दरवाजा है, और इसलिए मेरा यह कहना कि यह दरवाजा है, आपको कुछ समझा पाता है।
भाषा से केवल शब्द दिए जाते हैं। अनुभव उपस्थित होने चाहिए। जब मैं
एक शब्द बोलता हूं तो आपमें कोई अर्थ पैदा नहीं कर सकता, केवल शब्द की प्रतिध्वनि दे सकता हूं। अर्थ आपमें होना चाहिए।
जैसे जब मैं कहता हूं कि यह मकान है, तो मकान आपको एक अर्थ देता है। जब मैं कहता हूं कि यह आत्मा है; आत्मा शब्द खाली रह जाता है, वह कोई अर्थ नहीं देता। मकान को आप जानते हैं इसलिए मकान अर्थ देता, आत्मा को आप नहीं जानते इसलिए वह अर्थ नहीं देता है। बोलने वाले की तरफ से सार्थकता नहीं आती, सार्थकता सुनने वाले की तरफ से पैदा होती है। बोलने वाले की तरफ से केवल शब्द आते हैं, सार्थकता सुनने वाला डालता है। तो आपकी जितनी अनुभूति होगी, उतने ही तल तक भाषा सार्थक होती है। आपकी जिस तल के आगे अनुभूति नहीं है, उस तल पर भाषा आपको शब्द रह जाएगी।
लेकिन उस तल पर भी वह एक तरह की सार्थकता उसमें है, और वह सार्थकता इसमें हैः उस तल पर जहां आपको शब्द समझ में नहीं पड़ते, क्योंकि आपकी अनुभूति नहीं है, वहां पर शब्द अर्थ नहीं देते, प्यास देना शुरू कर देते हैं। मेरी आप बात समझ रहे हैं? यानी जैसे कि मैंने कहा आत्मा है, आप नहीं समझ रहे हैं कि क्या है। लेकिन यह भी अगर आपको समझ में आ रहा है कि यह मेरी समझ में नहीं आता कि आत्मा क्या है, तो आपमें प्यास शुरू होनी शुरू हो गई है। यानी मैं आपको आत्मा तो नहीं बता पाया, लेकिन आत्मा कैसे आप जानेंगे, उस तरफ का शायद पहला संक्रमण आपमें हो गया।
तो वह मैंने आज सुबह भी आपसे कहा कि महावीर या उस तरह के कोई भी व्यक्ति आपको सत्य नहीं दे सकते हैं, वे तो एक प्यास दे सकते हैं। वे जिस अनुभव की बातें कर रहे हैं, वह अनुभव आपको समझ में नहीं पड़ेगा। नहीं पड़ सकता। लेकिन यह आदमी कह रहा है, इस आदमी में कुछ आपको दिख रहा है कि यह जो कह रहा है वह कहना भी नहीं है, तो आपको प्रतीत होता है कि यह आदमी जो कह रहा है जरूर कुछ इसे दिखाई पड़ रहा है, जो हमको दिखाई नहीं पड़ रहा है। कुछ यह अनुभव कर रहा है, जो हम अनुभव नहीं कर रहे हैं। यह किसी अज्ञात दिशा की बातें कर रहा है, जो हमें ज्ञात नहीं हैं, और आपके प्राण में एक कंपन शुरू हो जाएगा। वह कंपन आपको उस अज्ञात दिशा में ले जाएगा।
असल में शब्दों की दोहरी सार्थकता हैः जो आपको ज्ञात है, शब्द उसका बोध देते हैं; जो आपको अज्ञात है, शब्द उसकी प्यास देते हैं। समझे न? जो आपको ज्ञात है, उसका बोध देते हैं और जो आपको अज्ञात है, उसकी प्यास देते

हैं। तो अगर मैं ठीक से समझूं, तो जो शब्द आपको बोध देते हैं वे बहुत अर्थ के नहीं हैं; अर्थ के वे शब्द हैं जो आपको प्यास देते हैं; क्योंकि वे आपको अपने ज्ञात घेरे से बाहर उठाते हैं और अज्ञात की तरफ आकर्षित करते हैं। ये सारे शब्दः ईश्वर, आत्मा, परमात्मा, ये सारे शब्द शब्द की तरह घूमते हैं हमारे ऊपर। इनमें कोई कंटेंट नहीं है हमारे लिए। लेकिन ये शब्द भी हमको खींचते हैं। और ये शब्द इसलिए खींचते हैं कि जिन लोगों से ये शब्द आते हैं, वे लोग हमें खींचते हैं। और तब हमारे भीतर एक, एक क्रिया शुरू होती है कि जो भी ज्ञात है वही समाप्ति नहीं है। जो मुझे ज्ञात है वह अंत नहीं है। अभी और है ज्ञात होने को। अभी और है ज्ञात होने को।
जब तक आप परम आनंद को उपलब्ध न हो जाएं, तब तक स्मरण रखें कि अभी बहुत
है ज्ञात होने को। क्योंकि जो-जो अज्ञात है, वही मेरे दुख का कारण है, क्योंकि वही मेरे नियंत्रण के बाहर है। असल में ठीक से हम समझें, तो परिपूर्ण आनंद की उपलब्धि सूचना है इस बात की कि अब कोई भी ऐसा इसके भीतर तत्व नहीं जो अज्ञात है जो कि इसे परेशान करेगा।

प्रश्नः यह आनंद का संबंध शरीर के साथ है कि नहीं?

काहे का?

प्रश्नः जो आत्मानंद का संबंध है, अब समझो कि आपको अभी ऐसा मालूम हो गया कि मैं तो सारा दिन शरीर और आत्मा दोनों जुदा देख रहा हूं, और उसमें आनंद और दुख दो बात आती हैं। आनंद आता है तो आनंद का तो अनुभव अंदर में होता है। ऐसा एक शरीर में कोई दुख आता है तो आत्मा को दुख का अनुभव होता है, जैसा मन में अनुभव होता है? तो समझो कि बड़ा रोगी शरीर है और इसमें चौबीस घंटा दर्द हो रहा है, तो उसने जिसने आत्मा पाया है उसको तो दर्द का असर होना नहीं चाहिए।

असल में आत्मा केवल बोधमात्र की शक्ति है, बोध देती है। बोध का होना
एक बात है, बोध से पीड़ित होना बिल्कुल दूसरी बात है। इस पैर में चोट लगे, इसका बोध होना कि चोट है, एक बात है, चोट की पीड़ा से पीड़ित होना बिल्कुल दूसरी बात है। बोध तो उसको नहीं होगा जो बेहोश है, बोध उसको नहीं होगा जो बेहोश है, उसे तो बोध परिपूर्ण रूप से होगा जो होश में है। लेकिन यह बोध होना कि पैर में दर्द है, और यह बोध होना कि मैं दुखी हूं, अलग-अलग बातें हैं।
महावीर को भी अगर राह चलते कांटा गड़े, तो पता पड़ेगा कि कांटा गड़ा, लेकिन इतना ही पता पड़ेगा कि कांटा गड़ा। यह वैसे ही पता पड़ेगा कि जैसे आपको कांटा गड़ता तो भी पता पड़ता। आप रास्ते पर चलते होते उनके किनारे, आपको कांटा गड़ता तो वे कहते कि देखो तुम्हारे पैर कांटा गड़ा। जैसे यह उन्हें पता चलता, ऐसे यह भी पता चलता है, और वे कहेंगे कि देखो यह मेरे पैर में कांटा गड़ा। लेकिन इससे उनकी चेतना कहीं व्यथित नहीं होती है। यह केवल बोधमात्र है। यह आप बात समझे? यहां से हवा आई और मुझे बोध हुआ कि यहां से हवा आई। यह जो बोध है, यह पीड़ा नहीं है। पीड़ा, बोध जो भी हो उसके साथ मैं का संयोग पीड़ा है। जैसे मुझे बोध हुआ कि पैर में दर्द है, लेकिन मुझे बोध ऐसा थोड़े ही होता कि पैर में दर्द है, मुझे बोध ऐसा होता है कि मुझमें दर्द है।

प्रश्नः एकत्व बुद्धि है...

हां। एकत्व बुद्धि जो है... वह मुझे बोध होता है कि मुझमें दर्द है, मैं परेशान हूं। बोध के साथ तादात्म्य दुख लाता है। बोध के साथ तादात्म्य सुख लाता है। बोध के साथ तादात्म्यहीनता आनंद लाती है। मेरा फर्क समझ रहे हैं आप? यह मुझे बोध हुआ कि धन मेरा है, तो सुख मालूम होता है; फिर कल बोध हुआ कि जो धन मेरा था, वह चोरी चला गया, तो दुख होता है। धन मेरा था, यह सुख दे रहा था; धन मेरा अब नहीं रहा, यह दुख दे रहा है।

आनंद और सुख एक ही चीजें नहीं हैं। आनंद उस स्थिति का नाम है जहां धन मेरा है, यह सुख भी मेरा नहीं मानता; जहां धन मेरा गया, यह दुख भी मेरा नहीं मानता। जहां निपट मैं ही रह गया हूं और किसी और चीज से मेरा कोई संबंध नहीं मानता, असंग जहां मेरी स्थिति है, उस स्थिति में जो है, वह आनंद है।

प्रश्नः... जल्दी असर करता इनके ऊपर। शरीर का कोई रोग होता है, शरीर में कोई तकलीफ होती है, और कोई बड़ा रोगी, जिंदगी भर का रोगी होता है, तो वह आत्मानंद ले सकता है कि नहीं? मेरा कहने का यह है।

हां, आप जो कहते हैं न, आत्मानंद जो ले सके, तो शरीर मेरा है यह उसे बोध
ही नहीं होता। आपका शरीर स्वस्थ हो और चाहे बीमार हो, चाहे तकलीफ आपको पता चलती हो और चाहे तकलीफ पता न चलती हो, उसका आत्मानंद से कोई संबंध नहीं है। आत्मानंद अगर आदमी को हो सके, अनुभव हो सके उसका थोड़ा सा भी, तो वह थोड़ा सा भी अनुभव आपके सामने यह स्पष्ट कर जाएगा कि आप शरीर नहीं हो। तब इस शरीर के बाबत आपकी धारणाएं वैसी हो जाएंगी जैसे किसी और के शरीर के बाबत हैं। इस शरीर के बाबत आपकी धारणा करीब-करीब वैसी हो जाएगी जैसे नाटक में अभिनेता की अपने अभिनय के प्रति होती है।
जैसे कि राम की सीता चोरी गई होंगी, वह एक बात रही होगी। वाल्मीकि ने लिखा कि वे वृक्ष-वृक्ष से पूछते हैं, रोते हैं कि मेरी सीता कहां है? अब भी नाटक होता है, उसमें भी राम की सीता चोरी चली जाती है और वह भी वृक्ष-वृक्ष से पूछता है कि मेरी सीता कहां है? लेकिन इसके पूछने में और राम के पूछने में कुछ फर्क है। यह भी पूछ रहा है कि मेरी सीता कहां है। और हो सकता है कि राम से भी ज्यादा अभिनय कर रहा हो। लेकिन यह अभिनय है और इसे परिपूर्ण ज्ञात है। पर्दे के पीछे जाएगा और रात भर मजे से सोएगा, इसे उस सीता से कोई मतलब नहीं है, जो पर्दे पर इसने कहा था कि चोरी चली गई है। इसे बोध है कि जो सीता चोरी जा रही है, वह मेरी नहीं है। इसे बोध है कि जो शरीर रो-चिल्ला रहा है कि सीता चोरी जा रही है, वह भी केवल अभिनय है।
जैसे ही व्यक्ति आत्म-ज्ञान की तरफ अग्रसर होगा, सामान्य जीवन में अभिनय का रूप ले लेगा। और अभी तो अभिनय भी आप करें, तो वह भी असलियत का रूप ले लेगा। अभी तो दिक्कत यह है कि अगर कहीं अभिनय भी करें तो थोड़ी देर में उसी में उलझ जाएंगे।
आम अज्ञानी आदमी अभिनय करके भी इसमें उलझ जाता है और ज्ञानी आदमी परिपूर्ण जीवन में रह कर भी उसे अभिनय जानता है और नहीं उलझता। जिंदगी तो चलेगी ही। जिंदगी तो चलेगी ही। जब तक जीवन है, चलेगी। बात केवल दो ही हैं, जिसको आत्म-बोध होना शुरू होगा, उसे समस्त क्रियाएं अभिनय मात्र हो जाएंगी। इसलिए उसकी सारी क्रियाएं कुशल भी बहुत हो जाएंगी। पीड़ा और दुख अभिनय में नहीं होते हैं, केवल दिखावा रह जाएगा।
यह बोध अगर आपको कहीं घना होने लगे कि मैं कुछ और हूं, तो सब फर्क शुरू
हो जाएंगे। दर्द शरीर में होगा, तो पहले जैसा होता था अब भी होगा, शायद पहले इतना पता नहीं पड़ता था, अब ज्यादा पता पड़ेगा। क्योंकि अब परिपूर्ण चित्त शांत है। अब तो हर चीज ज्ञात होगी। जरा सा भी टिक-टिक हो रहा है, वह भी पता चलेगा। लेकिन, परिपूर्ण शांत चित्त में पता तो सब चलेगा लेकिन जो- जो पता चलेगा उसके साथ तादात्म्य बुद्धि नहीं रह जाएगी, उसके साथ आइडेंटिटी नहीं रह जाएगी, हम जानेंगे कि ऐसा हो रहा है। यह जानना होगा हमारा, यह हमारा ज्ञान होगा, लेकिन हम उससे संयुक्त हैं या वह हममें हो रहा है, यह बोध विलीन हो जाएगा। वह कहीं हो रहा है जिसके हम जानने वाले हैं। धीरे-धीरे हमको इतना ही पता रह जाएगा कि मेरा संबंध केवल जानने की शक्ति से है और किसी चीज से नहीं है। धीरे-धीरे पता चलेगा मैं केवल ज्ञान मात्र हूं और जो-जो मुझे ज्ञात होता है वह मेरे बाहर है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं है।)

असल में हम यह भी जान लें कि तत्व कितना है, तो कौन सा अंतर पड़ेगा? मैं
यह भी कह दूं कि तत्व इतना है, तो कौन सा अंतर पड़ेगा? करीब-करीब मैं कोई भी संख्या बोलूं, आप पर उसका कोई फर्क नहीं पड़ेगा। अगर मैं एक बोलूं, दो बोलूं, दस बोलूं, पचास बोलूं, तो आपको एक संख्या सुनाई पड़ेगी और तो कुछ खास मतलब नहीं होगा।
तत्व कितना है, जब हम यह पूछते हैं, तभी हम संख्या में पूछना शुरू कर दिए; फिर चाहे हम एक कहें, चाहे दो कहें, चाहे दस कहें। असल में अगर आप परिपूर्ण शांत होकर अनुभव करें, जो है उसका, तो आपको संख्या में कुछ भी ज्ञात नहीं होगा। न एक का, न दो का, न तीन का, न चार का। आपको यह भी ज्ञात नहीं होगा कि आपके अतिरिक्त भी कुछ है। आपको ज्ञात होगा केवल होने का, बोधमात्र होगा कि हूं। आपको बोध होगा एक प्योर एक्झिस्टेंस का। उसे मोटे रूप से लोग कह देते हैं एक है।
एक कहने की गुंजाइश नहीं है वहां। क्योंकि एक कहा तो दो हो गए। क्योंकि जिसने कहा वह तत्काल उससे अलग हो गया जिसके लिए उसने कहा। एक कहा कि दो हो गए। वहां गुंजाइश नहीं है यह कहने कि कितने हैं। असल में वहां कुछ भी कहने की गुंजाइश नहीं है। वहां केवल जानना मात्र है। और जानना इस बात का है कि जो भी है, वह एक में, दो में और तीन में, किसी शब्द में प्रकट नहीं है। वह जो होना है, जहां कोई संख्या में विभाजन नहीं है, जब हम उसी को बुद्धि के और अशांत चित्त के माध्यम से देखते हैं, तो वह अनेक में विभाजित दिखाई पड़ता है। वे जो विभाजन हैं, सत्ता के नहीं हैं, वे विभाजन चित्त के हैं।
यहां एक पागल आदमी आए इसी कमरे में, यहीं एक शांत आदमी इसी कमरे से गुजरे। कमरा यही होगा, पागल गुजरेगा तब भी यही होगा, एक शांत आदमी गुजरेगा तब भी यही होगा। लेकिन दोनों के इस कमरे के अनुभव अलग-अलग होंगे। पागल इसमें न मालूम क्या देखे। कमरा यही होगा, लेकिन दोनों के अनुभव अलग-अलग होंगे। क्योंकि दोनों के चित्त अलग-अलग स्थितियों में हैं।
हम जो देख रहे हैं, जब तक चित्त के द्वारा देख रहे हैं, तब तक हमारे सब निर्णय गलत हैं। चाहे हम एक कहें, चाहे दो कहें, चाहे चार कहें। जब हम इसी को बिना चित्त के देखेंगे, तब हमारे समस्त निर्णय सही होंगे, हम कुछ भी कहें। लेकिन उस वक्त कोई भी कुछ कहता नहीं है। यानी मुसीबत यह है कि जो चित्त से देखते हैं वे कहते हैं और जो चित्त से देखते हैं सब गलत देखते हैं। जो चित्त से नहीं देखते नहीं कहते और जो चित्त के बिना देखते हैं वे जो भी देखते हैं सही देखते हैं।
तो मैं नहीं कहता कितने तत्व हैं। मैं इतना ही कहता हूं, दो रास्ते हैं जो है उसको देखने के। एक चित्त का रास्ता है, जिसके माध्यम से सब अनेक रूपों में दिखाई पड़ेगा और एक अचित्त का रास्ता है। एक माइंड का, एक नो- माइंड का। एक अशांत चित्त का, एक परिपूर्ण शांत का जहां कि चित्त भी नहीं है। एक लहरों के माध्यम से जगत को देखने का रास्ता है कि लहरें सब चीजों को तोड़े दे रही हैं और एक परिपूर्ण शांत झील के माध्यम से देखने का रास्ता है। इतना ही मैं आपसे कह सकता हूं। जिन्होंने शांति से देखा है, उन्होंने किसी संख्या की बात नहीं कही। जो अशांति से देखे हैं, वे पच्चीसों तरह की संख्या गिनाए हुए हैं।
मैं नहीं कहता कितने तत्व हैं, मैं इतना ही कहता हूं कि तत्व को देखने
के दो रास्ते हैं। तत्व को देखने के दो रास्ते हैं। एक रास्ते से तो आप परिचित हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं है।)

चित्त के माध्यम से जब देखता है तो कभी परितृप्ति को उपलब्ध नहीं होता, और जो भी जानता है उसमें संदेह और प्रश्न बने रहते हैं। चित्त के माध्यम से जानता हुआ लगता है, जान कभी नहीं पाता। लगता है कि जान रहा हूं, लेकिन जान नहीं पाता। जान नहीं पाता तो पीड़ा और परेशानी कायम रहती है और चित्त रोज-रोज प्रश्न खड़े करता चला जाता है।

जीवन भर चित्त से जानेगा और वे प्रश्न वैसे के वैसे बने रहेंगे जो पहले दिन पूछना शुरू किए थे। चित्त कभी निष्प्रश्न स्थिति में नहीं ले जाएगा। निष्प्रश्न स्थिति में नहीं ले जाने का अर्थ है कि चित्त व्यथित होगा, पीड़ित होगा, परेशान होगा। क्योंकि जिस चित्त में प्रश्न हैं, वह पीड़ा में होगा। जिस चित्त में प्रश्न हैं, वह पीड़ा में होगा। प्रश्न जो हैं, पीड़ा के सूचक हैं और प्रश्न जो हैं, वह कहीं अंतर एक व्यथा है, उसके सूचक हैं। वह सब सोचना है, उसको खोज रहा है कि कहीं कुछ रास्ता मिल जाए। कोई रास्ता नहीं मिलता।
चित्त से कोई रास्ता नहीं मिलता, चित्त केवल प्रश्न देता है, कोई उत्तर नहीं देता। आज तक चित्त ने केवल प्रश्न दिए हैं, उत्तर नहीं दिए हैं। तो अगर प्रश्न ही प्रश्न जानने हों, तो चित्त दे सकता है। अधिक प्रश्न हो जाएंगे तो विक्षिप्त हो जाइएगा। थोड़े प्रश्न होंगे तो काम चलता रहेगा। फिर बहुत प्रश्न हो जाएंगे और उनका ओर-छोर बांधे नहीं मिलेगा तो विक्षिप्त हो जाइएगा।
चित्त प्रश्न देता है। चित्त की अंतिम परिणति विक्षिप्तता देती है। चित्त का आंदोलन प्रश्न पैदा करता है। फिर आंदोलन इतने हो जाएं कि उनका सम्हालना मुश्किल हो जाए, तो आप विक्षिप्त हो जाते हैं। यानी चित्त का परिपूर्ण विकास विक्षिप्तता है। माइंड का पूरा विकास मैडनेस है।
इसलिए दुनिया के, पश्चिम के विशेषतः, बड़े विचारक जो पागल होते रहे, वह आकस्मिक नही है, वह अनायास नही है। बड़ा विचारक पागल होगा।

प्रश्नः वह परिणाम है।

वह परिणाम है, अनिवार्य परिणाम है। यानी विचारक अगर कंसिस्टेंट हो और विचार करता ही चला जाए तो पागल हो जाएगा। जो विचारक पागल नहीं होते, वे बड़े विचारक नहीं हैं; वे बीच में कहीं रुक गए हैं, अभी पूरे अंतिम कनक्लुजन तक नहीं ले गए विचार को। यानी अगर कोई विचारक अपने विचार को अंतिम निष्पत्ति तक ले जाए, वह लॉजिकल कनक्लुजन जो है आखिर में, वहां तक ले जाए, तो वह पागल होना अनिवार्य है।
लेकिन भारत में जिनको हम कहते हैं, उनमें से कोई पागल नहीं हुआ। वे विचारक नहीं हैं असल में। महावीर, बुद्ध वगैरह विचारक नहीं हैं। ये दार्शनिक हैं। ये विचारक नहीं हैं।
विचार की अंतिम परिणति विक्षिप्तता है और निर्विचार की अंतिम परिणति विमुक्ति है। विचार प्रश्न देगा, उत्तर नहीं; निर्विचार होकर प्रश्न नहीं रह जाएंगे, उत्तर ही रह जाएगा।
तो अगर उत्तर पाना हो, तो निर्विचार में चलिए। और अगर प्रश्न ही प्रश्न जगाने हों एक के बाद एक, तो विचार में चलिए। जितने अधिक प्रश्न होंगे, उतनी व्यथा होगी, उतनी पीड़ा होगी। जितने प्रश्न न्यून होंगे, उतनी शांति घनीभूत होगी। निष्प्रश्न जिस दिन चित्त हो जाएगा, उस दिन परिपूर्ण शांति का अनुभव होगा।
तो विचार आनंद में नहीं ले जा सकता। क्योंकि विचार उत्तर में नहीं ले
जा सकता। निर्विचार आनंद में ले जाएगा, क्योंकि निर्विचार उत्तर में ले जाएगा।
दो ही दिशा हैं, या तो विचार से जगत को देखिए, चित्त से और या फिर निर्विचार से, अचित्त से जगत को देखिए।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

आप कहते हैं कि निर्विचार होने से आनंद मिलेगा। हाथ टूट जाएगा तो वह जुड़ेगा या नहीं?
जैसे ही व्यक्ति आनंद को उपलब्ध होगा, उसे पता चलेगाः मेरे भीतर कुछ
भी टूट नहीं सकता है, जो मेरा है; और जो मेरा नहीं है, वह सब टूटा ही हुआ है; वह चाहे हाथ टूटा हो, चाहे जुड़ा हुआ हो, वह उसे कोई माने नहीं रखता।

प्रश्नः यानी समाधान नहीं है।

नहीं, समाधान नहीं। उसका हाथ टूटा हो या साझा हो, वह दोनों स्थितियों में जानता है कि हाथ का कोई माने नहीं है। उसकी आंख फूटी हो या काम करती हो, वह दोनों स्थितियों में जानता है, यह आंख मेरी नहीं है। असल में हाथ साझा हो, इसका जो आग्रह है, वह हाथ के साझे होने का थोड़े ही है, वह मेरे हाथ का है। अगर बहुत गौर से देखिए, आंख ठीक हो, इसका थोड़े ही मतलब है, मेरी आंख ठीक होने का है। जैसे ही वह भीतर गया, वह जानता है, आंख आंख है, वह मेरी नहीं है। आप हैरान होंगे, आपका हाथ टूटता है तो ठीक होने की कल्पना उठती है, किसी और का टूटा है तो थोड़े ही उठती है। तो ठीक है। आपकी आंख फूटी हो तो ठीक होने का मन होता है, किसी और की फूटी हो, तो ठीक है। या वह कोई और भी, ऐसा हो कि उससे भी अपना कोई नाता है, तो उसकी भी ठीक हो जाए। वह भी हम कहीं न कहीं अपने से संबंध हमारा है।

प्रश्नः आंख बंद करने से आत्मा और शरीर अलग है, कितना टाइम तक सोच सकें?

नहीं, यह तो मैं सोचने को कहता ही नहीं। यह तो सोचने की थोड़े ही बात है। सोचिए मत। न, सोचिए मत। सोचिए मत। सोचने को नहीं कहता। सोचिए मत, चुपचाप आंख बंद करके बैठिए और कुछ मत सोचिए और जो भी विचार चलते हैं उनको चुपचाप देखते रहिए। कुछ सोचिए मत अपनी तरफ से। जो विचार चलते हैं, उनको देखते रहिए। उनको सहयोग मत दीजिए। यह तो अपने ही हाथ से सोचना चलाना हो गया, यह तो सहयोग हो गया विचार को। जो विचार चलते हैं, अपने आप चलते हैं, उनको चुपचाप देखते रहिए। आंख बंद करके उनको सिर्फ देखते रहिए। कोई छेड़खानी मत करिए। उनको हटाने की भी कोशिश मत करिए। वे आते हैं, आने दीजिए; नहीं आते हैं, मत आने दीजिए। आएं तो उनको देखते रहिए।
एक पंद्रह दिन इसी तरह आधा घंटा बैठ कर सिर्फ देखिए और कुछ मत करिए। पंद्रह दिन में पता चलेगा कि वह रोज, एक दो-चार दिन तक बढ़ते हुए मालूम होंगे कि वे ज्यादा से ज्यादा आ रहे हैं। घबड़ाइए मत, उनको आने दीजिए। अगर नहीं घबड़ाएंगे और उनको आने दिया तो क्रमशः आप पाएंगे कि वे जिस मात्रा में बढ़े थे उसी मात्रा में कम होने शुरू हो गए हैं। एक पंद्रह दिन के प्रयोग में आप पाइएगा कि उनकी संख्या बहुत न्यून हो गई है, वे कभी आते हैं, कभी खाली जगह छूट जाती है; कभी आते हैं, कभी खाली जगह छूट जाती है।
जो खाली जगह छूट जाएगी, उसमें आपको अपने आप अनुभव होगा कि शरीर से आत्मा अलग है। जब खाली जगह बड़ी होने लगेगी तो बड़ी देर तक अनुभव होगा कि आत्मा शरीर से अलग है। यह आपको सोचना नहीं, यह अनुभव होगा।
बात समझे न? और जब यह अंतराल काफी लंबा होगा, इंटरवल, कि एक विचार आया
और फिर दूसरा बहुत देर तक नहीं आया, तो वह जो खाली गैप होगा बीच का, उसमें आपको अपने आप झलक मिलेगी कि मैं अलग हूं।
आत्मा अलग है, यह सोचना नहीं है; यह तो दिखाई पड़ेगा। विचार भर चले जाएं, तो इसका दर्शन होगा।
तो सोचिए मत, सोचने से कोई लाभ नहीं है, सोचने से कोई मतलब नहीं है। सोच-सोच कर आपने समझ भी लिया कि आत्मा अलग है, तो वह फिजूल की बात है। वह जिस दिन नहीं सोचिएगा, उसी दिन फिर वह खिसक जाएगा। वह तो कल्पना हो गई हमारी।
एक अंधा यहां बैठा है और सोच रहा है कि खूब प्रकाश भरा हुआ है कमरे में, खूब प्रकाश भरा हुआ है। वह कितना ही सोचे, इससे आंख थोड़े ही ठीक होगी। वह जैसे ही इसको सोचना छोड़ेगा, पाएगा कि टकरा गया, अंधेरा ही था, गिर पड़े हैं फिर। अंधा, सोच-सोच कर बार-बार कि प्रकाश भरा हुआ है, कोई मतलब हल नहीं होता। प्रकाश भरा हुआ है, यह अंधे को सोचना नहीं है, उसको तो आंख ठीक करने के उपाय करने हैं। जिस दिन आंख ठीक होगी, उस दिन बिना सोचे उसको दिखाई पड़ेगा कि प्रकाश है।

आप सोचते थोड़े ही हैं कि प्रकाश है, दिखाई पड़ रहा है। आत्मा सोची नहीं जाती, उसका दर्शन होता है। विचार और दर्शन में यही भेद है। वह जो अभी मैं पूरी चर्चा कर रहा हूं, उसमें विचार और दर्शन में यही भेद है। हमको आत्मा का दर्शन करना है, विचार नहीं करना है। जो विचार करेगा, वह आत्मा को कभी नहीं पाएगा। वह आत्मा के संबंध में दूसरों ने जो कहा है, उसी-उसी को दोहराता रहेगा। उससे कहीं नहीं पहुंचिएगा। विचार को देखिए चुपचाप। और परिपूर्ण ढीले शांत होकर बैठ जाइए। फिर मैं कभी आता हूं तो ध्यान... कभी मैं जब करवाया, आप नहीं बैठी हैं। बैठी हैं?

बैठी हूं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बिल्कुल झूठ हैं। वाद तो सब झूठ हैं। क्योंकि वाद से सत्य का कोई वास्ता नहीं है। यानी यह वाद ठीक और वह वाद झूठ, ऐसा मैं नहीं कहता, वाद मात्र असत्य हैं, क्योंकि वाद मात्र बुद्धि के खेल हैं, उनका सत्य से कोई संबंध नहीं है। वह जो जाना जाता है, बिल्कुल निर्विवाद जाना जाता है, उसमें कोई वाद-वाद नहीं है। जिस दिन सब चित्त शांत होकर जानेगा कुछ, वह बिल्कुल निर्विवाद है, वहां कोई वाद नहीं है, कोई प्रतिवाद नहीं है।

प्रश्नः एक, निर्विवाद बात एक ही है, एक निर्विवाद बात यह है कि जब सब आत्मा में शांति लाएंगे, आनंद लाएंगे, तो दुनिया में अनाज तो उत्पन्न नहीं होगा। सारी दुनिया मर जाएगी। यानी यह दुनिया का कल दूसरा रूप नहीं हो जाएगा?

नहीं। आप यह ठीक कहते हैं। आप बड़े अच्छे प्रश्न पूछते हैं।
आप पूछते हैं कि अगर सारे लोग आत्मा में आनंद लिए तो फिर दुनिया में अनाज-वनाज पैदा नहीं होगा।
जैसे कि पागल और विक्षिप्त जो हैं, वे दुनिया में अनाज पैदा कर रहे हैं! मैं आपसे कह रहा हूं कि दुनिया में जो तकलीफ है, वह अगर सारे लोग चित्त-शांति को उपलब्ध हो जाएं, तो समस्त विलीन हो जाएगी। शायद अनाज बेहतर ही होगा, क्योंकि चित्त-शांत व्यक्ति जितना बेहतर अनाज पैदा कर सकता है, एक अशांत और विक्षिप्त आदमी नहीं कर सकता।
शांति का कर्म से विरोध नहीं है, अशांति का कर्म से विरोध है। अशांत आदमी जो भी कर्म करेगा, वह अकुशल होगा, क्योंकि अशांति उसको कर्म में बाधक होगी। शांत आदमी जो भी कर्म करेगा, वह सब कुशल हो जाएगा, क्योंकि शांति कर्म में सहयोगी है।
तो मेरी दृष्टि में अगर दुनिया में शांत लोग बढ़ते हैं, तो दुनिया की कुशलता बढ़ेगी। वह शांत आदमी अगर जूते भी सीएगा, अगर... जैसे कबीर था, कपड़े बुनता रहा, तो कबीर के बाबत कहा जाता है कि वैसे कपड़े कभी किसी बुनकर ने नहीं बुने हैं। अगर वह अपने कपड़े को लेकर बाजार में बेचने जाता था, तो लोग पागल की तरह टूट पड़ते थे। कबीर का कपड़ा खरीदना एक सुख की बात थी। कबीर से लोग कहते कि ऐसे कपड़े कभी किसी ने बुने नहीं। तो कबीर कहता कि इतनी शांति से और भगवान के लिए कपड़े किसी ने नहीं बुने, मैं क्या करूं। मैं तुम्हारे लिए नहीं बुनता, भगवान के लिए बुनता हूं। क्योंकि मैं तुम्हारे भीतर जो भगवान है, उसको जानता हूं, वह पहनेगा। और उसके लिए कोई गलत चीज तो बुनी नहीं जा सकती। और जब बुनता हूं तो भगवान में भरा हुआ बुनता हूं, तो भूल-चूक की तो गुंजाइश नहीं है।
तो कबीर ने कपड़े बनाए, वे कपड़े अर्थ रखते हैं और ही तरह का। एक गोरा कुम्हार हुआ, वह भी एक फकीर था, उसने जो घड़े बनाए, वे अदभुत थे।
दुनिया में अब तक जो भी काम श्रेयस्कर हुआ है, वह शांत लोगों ने किया, अशांत लोगों ने थोड़े ही। अशांत लोगों की वजह से परेशानी है, उनकी वजह से अनाज नहीं होता। शांत लोगों की वजह से अनाज होगा। इतना ही स्मरण रखिए कि

यह जो हमारे चित्त में एक धारणा घर कर गई है कि शांत लोग छोड़ कर भाग खड़े होते हैं, यह गलत है। असल में अशांत लोग भाग खड़े होते हैं, अशांति में, घबड़ाहट में। शांत लोग तो फिर वापस लौट आते हैं।
मैं कल ही रात कह रहा था कि महावीर और बुद्ध जंगल में भाग गए थे, तब वे अशांत थे, जब वे शांत हुए तो वापस लौट आए। अभी तक ऐसे किसी आदमी के बाबत सुना है जो शांत होकर वापस बस्ती में नहीं लौट आया हो? अशांत आदमी बस्ती से भाग गए जंगल में, लेकिन जब वे शांत हुए तो कहां गए? वे वापस बस्ती में लौट आए। और उसके बाद की जिंदगी कोई खाली हाथ बैठे थोड़े ही रहे। उन्होंने इतना किया कि हम कर नहीं सकते।
महावीर अपने उपलब्धि के बाद चालीस वर्ष तक सतत सक्रिय हैं। बुद्ध मरते घड़ी तक सक्रिय हैं। मर रहे हैं बुद्ध जिस घड़ी, अंतिम घड़ी है और उन्होंने अपने शिष्यों से कहा कि अब, अब तो मैं छोड़ता हूं देह। तो आनंद ने कहाः अब हम किसी को आने नहीं देंगे। अब हम बाहर रुकते हैं, अब कोई आए नहीं। वे समाधि में लीन हो रहे हैं और तभी दूर से भागता हुआ एक युवक आया और उसने आनंद को आकर कहा कि लेकिन फिर तथागत मुझे कहां मिलेंगे अगर यह घड़ी मैं चूकता हूं, मुझे अंदर जाने दें। मुझे तो उनसे वचन सुन लेना है जो मेरे जीवन को बदल दे। लेकिन आनंद ने कहाः अब तो बहुत देर हो गई। उसका नाम था, सुभद्र, उससे कहा, सुभद्र, अब बहुत देर हो गई। अब तो वे अंतिम लीन हो रहे हैं, अब तो वे एक चरण नीचे उतर गए, अब तो वे देह को छोड़ रहे हैं, घड़ी भर में देह छूट जाएगी। लेकिन सुभद्र बोलाः तुम वह तो ठीक कह रहे हो, लेकिन फिर मुझे कब किन जन्म में ऐसा आदमी मिलेगा?
तो बुद्ध ने अंदर से कहाः सुभद्र को रोको मत, उसे आने दो। कोई यह न कहे
कि तथागत पर एक पाप, कलंक रह गया। एक कलंक रह गया कि सुभद्र खड़ा कहता था कि मैं प्यासा हूं, मुझे दो और उन्होंने नहीं दिया। थोड़ी घड़ी भर रुक सकता हूं। सुभद्र को अंदर आने दो।
वह मरते घड़ी, मर रहा है आदमी, लेकिन सुभद्र को कह रहा है कि शांति और आनंद कैसे पाया जा सकता है।
जिस आदमी के हाथ से बुद्ध की मृत्यु हुई। एक लोहार के घर वे आमंत्रित
थे भोजन के लिए। और वहां बिहार में कुकुरमुत्ते, वे जो बरसात में उग आते हैं, उनको सुखा कर रख लेते हैं गरीब लोग, और खिला देते हैं बाद में सब्जी बना कर। वह गरीब लोहार था। तो उसने उनकी सब्जी बनाई और बुद्ध को खिला दी। उनमें कभी-कभी जहर होता है। कहीं भी उग आते हैं। उस जहर से बुद्ध को शरीर में पीड़ा व्याप्त हुई।
जब वे घर लौटे, तो उन्हें, वहां से अपने आवास पर लौटे, तो उन्हें दिखा
कि शरीर में विष व्याप्त हो रहा है। तो उन्होंने कहा कि जाओ उस लोहार को कहना कि तू अत्यंत धन्यभागी है कि तथागत अंतिम अन्न तेरा ग्रहण किए। उसको कहना जाकर कि तू अत्यंत धन्यभागी है कि तथागत ने अंतिम अन्न तेरा ग्रहण किया। ऐसा सौभाग्य बहुत मुश्किल से उपलब्ध होता है। इसलिए जाकर कहो कि कहीं लोग मेरे मरने के बाद उसको परेशान न करें। आनंद से कहा कि मेरे मरने के बाद कहीं लोग उसको परेशान न करें कि इसके खाने की वजह से उनकी मौत हो गई। उसको जाकर कहो और सारे गांव में यह ढिंढोरा पीट दो कि वह आदमी धन्यभागी है कि तथागत ने अंतिम अन्न उसका ग्रहण किया। ऐसा सौभाग्य कल्पों में कभी किसी को मिलता है।
यह शांत आदमी का लक्षण है कि अपने मरने के बाद उसको कोई परेशान न करे नाहक। इसको अपनी मौत की परेशानी नहीं है। यह आदमी मर रहा है, उसकी चीज खाकर, इसको इसकी परेशानी नहीं है। इसको परेशानी इसकी है कि मेरे मरने के बाद कहीं लोग उसको हैरान न करें कि तुम्हारे भोजन से इसकी मौत हो गई है। यह शांत आदमी अपनी मृत्यु के बाद भी उसको कारण मान कर कोई परेशान न किया जाए, उसकी व्यवस्था किए जाता है। अशांत आदमी और व्यवस्था करता है।
मैंने एक कहानी पढ़ी है कि एक वृद्ध आदमी मरता था। उसके सात जवान लड़के
थे, उसने उन सबको बुलाया और उनसे कहा कि मुझे एक खास बात कहनी है, अगर तुम वायदा करो तो मैं कहूं।

बड़े लड़के तो कोई उठे नहीं, छोटा लड़का नासमझ था; वह उठ कर उसके पास गया,
कि मरता हुआ पिता, और वह कहता है। तो वह बड़ा हैरान हुआ कि बड़े भाई क्यों नहीं जाते? बड़े भाइयों ने उसको रोका भी कि मत जाओ। लेकिन वह बड़ा हैरान हुआ कि मरता बाप... मरता बाप बोला कि मैं मर रहा हूं और तुम लोगों में इतना भी नहीं है कि मैं एक बात कहता हूं, वह मान लो।
तो छोटा लड़का गया, उसने उसके कान में कहा कि मेरी एक ही प्रार्थना है, इतना तू कर देना, मैं तो मर ही रहा हूं, मैं तो मर ही जाऊंगा, मर जाऊं तो मेरी लाश के टुकड़े बगल वालों के घर में डाल देना। तो जब मैं उनको पकड़े हुए राजा के कर्मचारी उनको जेल में ले जाते देखूं, कि मेरी आत्मा उनको देखेगी, मैं बड़ा परितृप्त हो जाऊंगा। मैं तो मर ही रहा हूं, उनकी सजा हो जाएगी।
यह जो आदमी है, उस लड़के से बोला कि मैं तो मर ही रहा हूं, तो मर ही जाऊंगा, लेकिन जब मैं मर जाऊं तो मेरी लाश के टुकड़े बगल वाले के घर में डाल देना। तो मेरी आत्मा परितृप्त हो जाएगी, जब मैं देखूंगा कि राज कर्मचारी इनको बांधे हुए जेल लिए जा रहे हैं।
वह लड़का बड़ा हैरान हुआ कि यह मरता हुआ बाप और इसको यह सूझ रही है!
मैं आपसे पूछता हूं, आपको भी यही सूझेगी। यह अशांति का अंतिम------ जिंदगी भर भी तो यही सूझ रहा है कि कौन किस तरह फंस जाए और तृप्ति हो जाए दिल को।
अशांति चारों तरफ अशांति को पैदा करती है। शांति चारों तरफ शांति को पैदा करती है। शांत मनुष्य से इस जगत का कोई अहित असंभव है, हित ही हो सकता है। अशांत आदमी से इस जगत का कोई हित असंभव है, अहित ही हो सकता है।
तो मुझे धार्मिक साधना जगत की विरोधी नहीं दिखाई पड़ती, धार्मिक साधना में ही जगत का हित और साध्य दिखाई पड़ता है।
तो मुझे नहीं लगता कि अन्न कम हो जाएगा। अन्न कम हुआ है अशांति से शायद। शायद शांति हो तो व्यवस्था हो जाए। शांत लोग सब कुछ व्यवस्थित कर सकेंगे।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

वह ठीक कहते हैं आप। वैसा आदमी साधु नहीं है, ऐसा समझना चाहिए। मैं ऐसे आदमी को साधु नहीं मानता हूं। और वैसा आदमी शांत भी नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

एक ही निर्णय आते हैं, एक ही परिणाम आते हैं। उनके कहने में शायद भेद
हो सकता है, क्योंकि भाषाएं अलग हैं। उनके अपने विचार, जो उन्होंने जानने के पहले इकट्ठे कर लिए, वे अलग हैं। अब तक अनुभव तो एक ही हुआ है।
बड़ा अच्छा प्रश्न पूछ रही हैं कि जब एक सा ही अनुभव होता है अ को और ब को, समस्त अनुभूति एक सी होती है धर्म की और एक सी हो तभी वह वैज्ञानिक है। पर वह एक सी उनके बोलने में तो मालूम नहीं होती। कोई कुछ कहता हुआ दिखता है, कोई कुछ कहता हुआ दिखता है। तो दिखता है न--बुद्ध कुछ कहते दिखते हैं, महावीर कुछ कहते दिखते हैं, क्राइस्ट कुछ कहते दिखते हैं।
अगर बहुत गौर से देखें, तो ये सारे लोग एक बात जरूर कहते हैं कि जो हम
कह रहे हैं, वह उसको प्रकट नहीं कर पा रहा है जो हम जान रहे हैं। एक बात तो ये सारे लोग कहते हैं। ये सारे लोग यह कहते हैं कि हम जो कह रहे हैं वह उसको नहीं प्रकट कर पा रहा है जो हम जान रहे हैं। तब जो ये कह रहे हैं, यह एक आर्टिफिशिएल डिवाइस भर है। तब ये जो कह रहे हैं उसे कहा नहीं जा सकता, जो अनुभव हुआ है उसे बिना कहे भी रह जाना बड़ा मुश्किल मालूम हो रहा है।
जो अनुभव हुआ है उसे कहा नहीं जा सकता, बिना कहे रह जाना भी मुश्किल है। तो फिर एक ही रास्ता है कि ये कुछ एक कृत्रिम व्यवस्था करते हैं उसकी तरफ संकेत करने की। यह संकेत करने की जो कोड व्यवस्थाएं हैं, सबकी अलग-अलग होती हैं। और स्वाभाविक है अलग-अलग हों। इसलिए जैन एक तरह की बात करते हैं, ईसाई एक तरह की, मुसलमान एक तरह की।

ये सबकी आर्टिफिशिएल डिवाइसेस हैं। ये सब अलग-अलग मालूम होती हैं। इससे एक सारा विवाद सारे जगत में खड़ा होता है कि ये सारे लोग अगर एक ही सत्य को जान रहे हैं तो अलग-अलग क्यों कह रहे हैं? और तब अंधे मतावलंबियों को यह दिक्कत पैदा होती है कि सत्य हमारा ही है, बाकी सब गलत हैं। क्योंकि सब तो दूसरा-दूसरा कुछ और कह रहे हैं तो वह गलत ही होगा। क्योंकि सत्य तो एक ही हो सकता है।
जब कि सच्चाई यह है कि ये सब के सब जो रूप हैं, इनमें कोई भी सत्य नहीं है। जो भी कहा जा सकता है, वह सत्य नहीं है। वह अनुभूति तो सबकी समान है जो नहीं कही जा रही है, लेकिन उस नहीं कही जाने वाले की तरफ इशारा करने को इन्होंने जो व्यवस्था की है, वह सबकी अपनी-अपनी कृत्रिम और काल्पनिक है। सारी फिलासफी की सिस्टम्स जो हैं, काल्पनिक हैं। उनमें सत्य प्रकट नहीं हुआ है। उनमें सत्य प्रकट नहीं होता है। लेकिन उनके माध्यम से अगर कोई चले तो किसी दिन उसको सत्य प्रकट हो सकता है। मेरी आप बात समझे?

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं, कोई जरूरत नहीं, कोई जरूरत नहीं। उसको तो ध्यान की भी जरूरत नहीं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां-हां, यह दोनों की जरूरत तो उसको लाने के लिए है, उसके आने पर इन दोनों की कोई जरूरत नहीं। शुरू में इनकी उपयोगिता है। इनकी उपयोगिता है। इनसे सहारा मिलता है। क्यों? क्योंकि आपने अनुभव किया होगा कि हमारे चित्त की सारी स्थितियां हमारे शरीर की आदतों से बंध जाती हैं। जैसे, आप अनुभव करेंगे, कोई चिंता आ गई, आप सिर खुजा रहे हैं। आप सिर क्यों खुजा रहे हैं? अगर ऐसे आदमी का हाथ पकड़ लीजिए, वह अपनी समस्या हल नहीं कर सकेगा। मेरे एक वाइस चांसलर थे सागर युनिवर्सिटी के, डाक्टर गोर। उनकी आदत थी, वे जब मुकदमा करते थे तो वे अपने कोट का एक बटन घुमाते रहते थे। जब भी उन्हें कोई चिंता या कोई खास दिक्कत हो तो वे उसको घुमाने लगेंगे और कुछ कहेंगे।
वे प्रिवी कौंसिल में एक मुकदमे में थे। यह जाहिर बात थी कि वे जब इसको घुमाते हैं तो वे कुछ जरूर कोई तरकीब निकाल रहे होते हैं। उनके विरोधी वकील ने उनके नौकर से वह बटन तुड़वा दी, वह जो कोट में उनके होती थी। वे तो अपना कोट पहन कर गए, वे गए। और वे ठीक मुद्दे पर जब आए, उन्होंने बटन पर हाथ रखा, बटन नदारद। बटन नदारद, वे घबड़ा गए। वह तो हैबिट थी उनकी, एसोसिएशन था उसका, वह हैबिट के साथ उनका चिंतन चलता था। एकदम से वह जो उन्होंने बटन घुमाया और उनका दिमाग भी उस तरफ काम करता था।
कुछ लोग हैं जो सिगरेट पीते बैठेंगे तो चिंतन चलेगा। आप हैरान होंगे,
आप एक खास ढंग से बैठेंगे तो खास तरह का चिंतन चलेगा। अगर आप उसी चिंतन को दूसरी पोजिशन में बैठ कर करना चाहें, आप नहीं कर पाएंगे। आप हैरान होंगे कि आप करीब-करीब आपकी सब चिंतन की स्थितियों में शरीर एक विशेष आसन ग्रहण कर लेता है। उसकी आदत हो जाती है।

प्रश्नः तो चित्त का शरीर के साथ संबंध है?

हां-हां, संबंध है। तो ये जो आसन हैं, यह आपकी जो रूटीन हैबिट है, उसको तोड़ने के लिए हैं। जैसे आप बैठे हैं, आप कभी खयाल नहीं करते कि आप एक घड़ी भर को भी थिर नहीं बैठते। कभी पैर चलाएंगे, कभी हाथ चलाएंगे, कभी सिर हिला लेंगे, कभी गर्दन हिला लेंगे, कभी बांहें उचका लेंगे, कुछ न कुछ आप कर रहे हैं।
यह जो आपकी आदत है शरीर की अथिरता की, यह आपके अथिर चित्त के साथ संयुक्त हो गई है, वर्षों की आदत से। अगर इस शरीर को आप बिल्कुल शिथिल छोड़

कर बैठ जाएं थोड़ी देर, तो आप हैरान होंगे कि आपकी बहुत तबीयत होगी इसको हिलाने-डुलाने की। लेकिन अगर आप न हिलाएं-डुलाएं, तो इसके साथ ही आप पाएंगे कि अथिर शरीर की आदतों के साथ जो अथिर चित्त की आदत थी, उसमें फर्क पड़ना शुरू हो जाएगा।
अगर शरीर भी आप बिना हिलाए पांच मिनट के लिए बैठ जाएं, बिल्कुल बिना हिलाए, तो आप अचानक पाएंगे कि चित्त बहुत शांत हो गया। यह तो मेकेनिकल रूटीन है बनी हुई। तो इसलिए शरीर का भी उपयोग है। अगर उसको बिल्कुल शांत शिथिल मुर्दे की तरह छोड़ दिया जाए, तो आप पाएंगे कि चित्त को शांत होने में...

प्रश्नः तो शरीर पर काम करने में भी चित्त तो शांत होता ही है?

हां-हां। होता ही है। होता ही है। और फिर चित्त को, असल तो चित्त को शांत करना है। शरीर उसकी भूमिका बन जाता है। शरीर को शांत करिए, तो भूमिका बन जाती है। फिर चित्त को शांत करिए, भीतर और जाने की भूमिका बन जाती है।

प्रश्नः यह भूमिका है खाली शांत होने की?

शांत होने की एक ही भूमिका है।

तो कुछ व्यक्तिगत प्रश्न हैं तो उनकी मैं बात कर लूं।
आपने जो कहा न कि अगर वह सीधे समाधि में कोई व्यक्ति जाए तो वह फिर इतनी बात नहीं करेगा। चित्त का चिंतन चले तो बात करेगा। चित्त का जो चिंतन है, वह सत्य को नहीं देता है; लेकिन सत्य की अभिव्यक्ति को माध्यम देता है, एक्सप्रेशंस देता है। तो दुनिया में समाधि को बहुत लोग उपलब्ध हुए हैं, लेकिन जो-जो लोग समाधि को उपलब्ध हुए हैं, उन्होंने सत्य के बाबत कहा नहीं है, कहा थोड़े से लोगों ने है।
विचार जो है सत्य तक ले जाने का तो माध्यम नहीं है, लेकिन सत्य अगर उपलब्ध हो जाए तो दूसरे तक कहने का माध्यम जरूर है। उसकी उपयोगिता है। सत्य तक ले जाने में नहीं, लेकिन सत्य अगर अनुभव हो जाए, तो दूसरे से कम्युनिकेट करने में उसकी उपयोगिता है। सत्य को जानने में तो विचार का कोई उपयोग नहीं है, लेकिन अगर विचार की आपमें क्षमता और शक्ति है, तो सत्य अगर आपको अनुभव हो, तो उसको दूसरे से कह देने में उसकी उपयोगिता है। उसकी उपयोगिता है।
इसलिए मैं विचार का विरोधी नहीं हूं। सत्य को जानने में वह माध्यम है, इसका विरोधी हूं। मैं उसको जो कि मूढ़ है और विचार नहीं करता, कोई मूल्य नहीं देता हूं। जो जड़बुद्धि है और विचार नहीं करता, उसके लिए मेरा कोई मूल्य नहीं है। जड़बुद्धि विचार नहीं करता इसलिए सत्य को जानता है, ऐसा मैं नहीं कहता। जो विचार करता है और विचार को छोड़ सकता है, वह सत्य को जान सकता है। जो विचार ही नहीं करता, वह तो सत्य को जान ही नहीं सकेगा।
मेरी आप बात समझ रहे हैं? यानी विचार करना एक सीमा तक बहुत उपयोगी है,
एक सीमा पर घातक हो जाएगा। प्यास को जगाने में बहुत उपयोगी है, सत्य को जानने में घातक हो जाएगा। तो प्यास जगाएगा विचार, प्यास को घनीभूत करेगा विचार।
इतना स्मरण रहे कि जो प्यास को घनीभूत कर रहा है, वही पानी नहीं है। प्यास और पानी में अंतर है न! पानी कहीं और तलाश करना होगा। जो प्यास में ही पानी को तलाश करने लगे, तो नासमझ है। यानी मुझे प्यास लग रही है, तो प्यास में पानी नहीं खोजा जा सकता। प्यास तो पानी को खोजने की प्रेरणा भर है।
तो विचार आपमें प्रश्न खड़े करता है, विचार आपमें जिज्ञासा पैदा करता है, विचार आपमें प्यास को घनी करता है। लेकिन जो विचार में ही पानी को खोजने लगें, वे नासमझ हैं। विचार की सामर्थ्य इतनी है कि प्यास घनी कर दे, पानी देने की सामर्थ्य नहीं है। पानी तो और भी गहरे जाना होगा, जहां विचार

भी नहीं हैं, वहां मिलेगा। लेकिन अगर विचार की एक ट्रेनिंग रही हो, तो जब सत्य मिलेगा उसे कहने में सुविधा होगी; नहीं तो कहा नहीं जा सकता।

प्रश्नः यानी आपका कहना ऐसा है कि हरेक प्रोसेस से आदमी को निकलना पड़ता है।

निकलना पड़ता है।

प्रश्नः हरेक प्रोसेस से, विचार की प्रोसेस आ गई, शांति की प्रोसेस आ गई।

उससे भी निकलना पड़ेगा।

प्रश्नः और जहां कहीं प्रोसेस नहीं रह जाए, वहां पहुंचना है।

नहीं रह जाए, वहां पहुंचना है। ठीक समझा आपने।

प्रश्नः वह प्रोसेस पर पहुंच गए तो हमारे को आत्मा का दर्शन होता है।

ठीक कहते हैं आप। हर चीज से निकल जाना है।

प्रश्नः तो हरेक के साधन एक ही होने चाहिए।

है नहीं, दिखाई पड़ते हैं।

उपासना के क्षण
दूसरा प्रवचन

विसर्जन की कला

प्रश्नः आज सबेरे जो आपने बात किया, उस ईश्वर ने का योग जो गीता का मूल-मंत्र जो है उसमें इनसे पहली यही बात बताई है कि जिसका यह सुख और दुख इससे जो "पर" होने की बुद्धि है वह "पर" से जो आसक्ति उठा सकता है और जो उसमें भी समान भाव रख सकता है वही बड़ा पात्र बनता है, यह तत्व-ज्ञान है। यह आत्मा का पात्र ही वहां से शुरू होता है।
ये जो मन में विचारते हैं वही बात आती है। हमारे मन में जो मंथन चल रहा
है वही बात आपके लेक्चर में आती है।

हूं, आपके प्रश्न भी दोहरा लें, हां।...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, आप भी बोलिए।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

ठीक।
हूं, और कोई प्रश्न हों तो वे सब पूछिए।...
हूं, पूछिए, पूछिए।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हूं-हूं, और कुछ तो नहीं है न अब बात?

आपने एक प्रश्न पूछा है कि आनंद का थोड़ी देर को अनुभव होता है फिर वह आनंद चला जाता है, तो वह आनंद और अधिक देर तक कैसे रहे?
यह बहुत महत्वपूर्ण है पूछना, क्योंकि आज नहीं कल जो लोग भी आनंद की साधना में लगेंगे, उनके सामने यह प्रश्न खड़ा होगा।
आनंद एक झलक की भांति उपलब्ध होता है, एक छोटी सी झलक, जैसे किसी ने द्वार खोला हो और बंद कर दिया हो। हम देख भी नहीं पाते उसके पार कि द्वार खुलता है और बंद हो जाता है। तो वह आनंद बजाय आनंद देने के और पीड़ा का कारण हो जाता है। क्योंकि जो कुछ दिखता है, वह आकर्षित करता है, लेकिन द्वार बंद हो जाता है। उसके बाबत चाह और भी घनी पैदा होती है। और फिर द्वार खुलता नहीं। बल्कि फिर जितना हम उसे चाहने लगते हैं, उतना ही उससे वंचित हो जाते हैं।...
ये सारी चीजें ऐसी हैं कि चाही नहीं जा सकतीं। अगर मैं किसी व्यक्ति
से चाहूं कि उसने इतना प्रेम दिया है मुझे, और प्रेम दे, तो जितना मैं चाहने लगूंगा, उतना मैं पाऊंगा कि प्रेम उससे आना कम हो गया है। प्रेम उससे आना बंद हो जाएगा। ये चीजें छीनी नहीं जा सकतीं। ये जबरदस्ती पजेस नहीं की जा सकतीं। जो आदमी इनको जितना कम चाहेगा, जितना शांत होगा, उतनी अधिक उसे उपलब्धि होगीं।
एक बहुत पुरानी कथा है। मैं पिछली बार कहा भी आपको। एक हिंदू कथा है।
एक काल्पनिक ही कहानी है। नारद एक गांव के करीब से निकले। एक वृद्ध साधु ने उनसे कहा कि तुम भगवान के पास जाओ तो उनसे पूछ लेना कि मेरी मुक्ति कब तक होगी? मुझे मोक्ष कब तक मिलेगा? मुझे साधना करते बहुत समय बीत गया। नारद ने कहाः मैं जरूर पूछ लूंगा। वे आगे बढ़े तो बगल के बरगद के दरख्त के नीचे एक नया-नया फकीर जो उसी दिन फकीर हुआ था, अपना तंबूरा लेकर नाचता था, तो नारद ने उससे मजाक में पूछा, नारद ने खुद उससे पूछा, तुमको भी पूछना है क्या भगवान से कि कब तक तुम्हारी मुक्ति होगी? वह कुछ बोला नहीं।

जब वे वापस लौटे, उस वृद्ध फकीर से उन्होंने जाकर कहा कि मैंने पूछा था, भगवान बोले कि अभी तीन जन्म और लग जाएंगे। वह अपनी माला फेरता था, उसने गुस्से में माला नीचे पटक दी। उसने कहा, तीन जन्म और! यह तो बड़ा अन्याय है। यह तो हद्द हो गई।
नारद आगे बढ़ गए। वह फकीर नाचता था उस वृक्ष के नीचे। उससे कहा कि सुनते हैं, आपके बाबत भी पूछा था, लेकिन बड़े दुख की बात है; उन्होंने कहा कि वह जिस दरख्त के नीचे नाचता है, उसमें जितने पत्ते हैं, उतने जन्म उसे लग जाएंगे।
वह फकीर बोला, तब तो पा लिया। और वापस नाचने लगा। वह बोला, तब तो पा लिया, क्योंकि जमीन पर कितने पत्ते हैं! इतने ही पत्ते, इतने ही जन्म न? तब तो जीत ही लिया, पा ही लिया। वह वापस नाचने लगा। और कहानी कहती है, वह उसी क्षण मुक्ति को उपलब्ध हो गया, उसी क्षण।
यह जो नॉन-टेंस, यह जो रिलैक्स माइंड है, जो कहता है कि पा ही लिया। इतने जन्मों के बाद की वजह से भी जो परेशान नहीं है और जो इसको भी अनुग्रह मान रहा है प्रभु का, इसको भी उसका प्रसाद मान रहा है कि इतनी जल्दी मिल जाएगा, वह उसी क्षण सब पा लेगा।
तो हमारे मन की दो स्थितियां हैं। एक तो टेंस स्थिति होती है, जब हम कुछ चाहते हैं कि मिल जाए और एक नॉन-टेंस स्थिति होती है, जब कि हम चुपचाप जो मिल रहा है, उसको रिसीव करते हैं; कुछ झपटते नहीं। टेंस स्थिति एग्रेसिव है, वह झपटती है। नॉन-टेंस स्थिति रिसेप्टिव है, वह छीनती नहीं, वह चुपचाप ग्रहण करती है।
ध्यान जो है वह एग्रेसन नहीं है, रिसेप्शन है। वह आक्रमण नहीं है, वह आमंत्रण है। वह झपटता नहीं कुछ; जो आ जाता है, उसे स्वीकार कर लेता है।
तो आनंद के क्षणों को, शांति के क्षणों को झपटने की, पजेस करने की कोशिश न करें। वे ऐसी चीजें नहीं हैं कि पजेस की जा सकें। वह कोई फर्नीचर नहीं है जो अपन बस से उठा कर कमरे में रख लें। वह तो उस प्रकाश की तरह है कि द्वार हमने खोल दिया, बाहर सूरज उगेगा तो प्रकाश अपने आप भीतर आएगा। हमारे लिए प्रकाश को बांध कर भीतर लाना नहीं पड़ता है, सिर्फ द्वार खोल कर प्रतीक्षा करनी होगी। वह आएगा। वैसे ही मन को शांत करके हम चुपचाप प्रतीक्षा करें और जो मिल जाए उसके लिए धन्यवाद करें और जो नहीं मिला, उसका विचार न करें; तो आप पाएंगे कि रोज-रोज आनंद बढ़ता चला जाएगा, बिना मांगे कोई चीज मिलती चली जाएगी, बिना मांगे कोई चीज गहरी होती चली जाएगी। और अगर मांगना शुरू किया, जबरदस्ती चाहना शुरू किया, तो पाएंगे कि जो मिलता था, वह भी मिलना बंद हो गया।
समस्त साधकों के लिए, जो आत्मिक आनंद की तलाश में चलते हैं, सबसे बड़े खतरे के क्षण तब आते हैं, जब उनको थोड़ा-थोड़ा आनंद मिलने लगता है। बस, अक्सर वहीं रुकना हो जाता है। वह मिला कि उनका मन होता है और मिल जाए। और जहां उनका यह मन हुआ कि और मिल जाए, वह जहां एग्रेसिव हुए पाने के लिए, वह जो मिलता है, उसके दरवाजे भी बंद हो जाएंगे।
तो इतना स्मरण रखें कि जो मिलता है, उसके लिए भगवान का धन्यवाद करें;
और जो नहीं मिलता है, उसकी फिकर न करें; और अपने भीतर शांत होने के प्रयास में संलग्न रहें। क्या मिलता है, इसकी चिंता छोड़ दें; हम क्या बन रहे हैं, शांत कैसे हो रहे हैं, इसकी चिंता करें। जिस मात्रा में आप शांत हो जाएंगे, उस मात्रा में आनंद मिलना अनिवार्य है। उसकी फिकर छोड़ दें। यानी इसकी बिल्कुल फिकर छोड़ दें कि क्या मिला, क्योंकि वह जो भी मिलने की आपकी क्षमता पैदा हो जाएगी, उसके आप हकदार हैं, वह आपको मिलेगा ही।
इसी संदर्भ में आपने पूछा कि हम बुरा कर्म करते हैं तो लोग कहते हैं
कि बुरा परिणाम मिलेगा, अच्छा काम करेंगे तो अच्छा परिणाम मिलेगा।
यह जो हम सोचते हैं, मिलेगा, फ्यूचर की भाषा में, यह गलत है। हमने बुरा काम किया, उसी क्षण बुरा हो गया, कुछ आगे नहीं मिलेगा, उसी क्षण हमारे भीतर कुछ बुरा हो गया। हमने कुछ भला किया, उसी क्षण हमारे भीतर कुछ भला हो गया। हम अपने को कांस्टेंटली क्रिएट कर रहे हैं। हमारा प्रत्येक कर्म हमको बना रहा है। बनाएगा नहीं, इसी क्षण बना रहा है। हम अगर ठीक से जिसको जीवन कहते

हैं, वह जीवन ही नहीं है, वह एक सेल्फ क्रिएशन भी है। जो-जो हम कर रहे हैं, उससे हम बन रहे हैं, हमारे भीतर कुछ बन रहा है, कुछ घना हो रहा है, कुछ अपने ही भीतर हम अपने चैतन्य का निर्माण कर रहे हैं। तो हम जो-जो कर रहे हैं, उसके, ठीक उसके अनुकूल या उसके जैसा हमारे भीतर कुछ बनता चला जा रहा है। तो लोग कहते हैं कि नरक में आप चले जाएंगे या स्वर्ग में चले जाएंगे।
वे कुछ इस तरह की बात करते हैं जैसे नरक और स्वर्ग कोई ज्योग्राफी में कहीं होंगे। लोग जिस तरह की बात करते हैं, मैं ऐसा नहीं करता, नरक और स्वर्ग ज्योग्राफी में नहीं हैं, साइकोलॉजी में हैं। वह भौगोलिक धारणाएं नहीं हैं, मानसिक धारणाएं हैं। जब आप बुरा करते हैं, उसी क्षण नरक में चले जाते हैं।
मेरी धारणा मैं आपको कह रहा हूं। जब मैं क्रोध करता हूं, तो मैं उत्तप्त हो जाता हूं और अग्नि की लपटों में अपने आप चला जाता हूं, उसी वक्त। तो नरक में आप कभी चले जाएंगे, ऐसा नहीं है या स्वर्ग में आप कभी चले जाएंगे, ऐसा नहीं है। चौबीस घंटे में आप अनेक बार नरक में होते हैं और अनेक बार स्वर्ग में होते हैं। जब-जब आप क्रोध से भरते हैं, उत्ताप तीव्र वासना से भरते हैं, तब-तब आप अपने भीतर नरक को आमंत्रित कर लेते हैं।
तो लोग कहते हैं, आप नरक में चले जाएंगे या स्वर्ग में चले जाएंगे; मेरा मानना ऐसा है कि आपमें नरक और स्वर्ग अनेक बार आ जाता है। वह आपकी मानसिक घटना है। कहीं जमीन फोड़ कर नीचे नरक नहीं मिलेगा और कहीं आकाश में खोजने से कहीं कोई स्वर्ग नहीं मिल जाएगा। और आप हैरान होंगे कि सारी दुनिया के लोगों की स्वर्ग-नरक की धारणाएं बड़ी भिन्न-भिन्न हैं। क्योंकि वे तो साइकोलॉजिकल हैं।
तिब्बत है, तिब्बत में जो नरक है, उनकी जो कल्पना है नरक की, वह बड़े ठंडे स्थान की है। क्योंकि तिब्बत में ठंडक बहुत कष्टप्रद है। तिब्बत में ठंडक बहुत कष्टप्रद है। ठंडक से कष्टप्रद तिब्बत में कुछ भी नहीं है। तो तिब्बत की जो कल्पना है नरक की, कि जो पापी होंगे, वे एक ऐसे स्थान में जाएंगे, जहां इतनी ठंडक है, उनकी मुसीबत हो जाएगी। यह ठंडक से बड़ी मुसीबत नहीं है कोई। हमारे मुल्क की जो कल्पना है नरक की, वह अग्नि की लपटों वाली है, वहां ठंडक नहीं है, नहीं तो हमको तो वह हिल-स्टेशन साबित होगा।
तो हमारे मुल्क में हम सोचते हैं कि जो नरक है, वहां तो अग्नि की लपटें
जल रही हैं और उसमें डाला जाएगा और कड़ाइयां जल रही हैं तेल की, उनमें पटका जाएगा। ये हमारी कल्पनाएं हैं। क्योंकि गर्मी हमें कष्ट देती है तो हम सोचते हैं पापी को कष्ट देने के लिए गरम जगह होगी। और तिब्बत में ठंडी जगह है और भारत में गरम जगह है। ऐसा नरक नहीं हो सकता या उसमें ऐसे खंड नहीं हो सकते, वहां ठंडे और नरक...
असल में ये तो हमारी कष्ट की कल्पनाएं जो हैं, उनको हम इस भांति प्रवेश में कल्पित कर लेते हैं।
कष्ट मानसिक घटना है, भौगोलिक घटना नहीं है। अभी भी आप जब बुरा करते हैं तो आपके भीतर अत्यंत कष्टप्रद स्थितियों का निर्माण होता है। तो अभी कभी-कभी होता है, अगर आप निरंतर बुरा करते जाएंगे तो वह सतत होने लगेगा। और करते चले जाएंगे तो एक घड़ी ऐसी आ सकती है कि आप चौबीस घंटे नरक में होंगे। तो आदमी, आम आदमी कभी नरक में होता है, कभी स्वर्ग में होता है। फिर बहुत बुरा आदमी अधिकतर नरक में रहने लगता है। फिर बिल्कुल बुरा आदमी चौबीस घंटे नरक में रहने लगता है। भला आदमी स्वर्ग में रहने लगता है। और भला आदमी और स्वर्ग में रहने लगता है। बिल्कुल भला आदमी बिल्कुल स्वर्ग में रहने लगता है। जो भले और बुरे दोनों से मुक्त है, वह आदमी मोक्ष में रहने लगता है। मोक्ष में रहने लगने का मतलब यह है, कोई स्थान नहीं है यह, कहीं स्पेस में खोजने पर ये जगह नहीं मिलेंगी कि यह रहा स्वर्ग और यह रहा नरक। यह मनुष्य की जो साइकोलॉजी है, उसका जो मानसिक जगत है, उसके विभाजन हैं।
तो मानसिक जगत के तीन विभाजन हैंः नर्क और स्वर्ग और मोक्ष। नरक से, जिसको मैंने आज सुबह कहा दुख; स्वर्ग से, जिसको मैंने आज सुबह कहा सुख; और मोक्ष से मेरा मतलब हैः न सुख, न दुख, वह जो आनंद है।

तो यह मत सोचिए कि कल कभी ऐसा होगा कि हम बुरा करेंगे तो उसका बुरा फल होगा। यह मत सोचिए कि हम भला करेंगे तो उसका भला फल होगा।:जो भी हम कर रहे हैं, साइमलटेनियसली, उसी वक्त, क्योंकि यह हो ही नहीं सकता कि मैं अभी क्रोध करूं और अगले जन्म में मुझे उसका फल मिले, यह बड़ी डीलेड हो जाएगी, यह बात फिजूल हो जाएगी। क्योंकि इतनी देर क्या होगा? मैं अभी क्रोध करूं, अगले जन्म में मुझे फल मिले, यह बात बड़ी फिजूल हो जाएगी। इतनी देर क्यों होगी?
मैं जब क्रोध कर रहा हूं, क्रोध करने में ही मैं क्रोध का फल भोग रहा हूं। क्रोध के बाहर क्रोध का फल नहीं है। क्रोध ही मुझे वह पीड़ा दे रहा है, जो क्रोध का फल है। और जब मैं अक्रोध कर रहा हूं तो मुझे उसी क्षण फल मिल रहा है, क्योंकि अक्रोध का जो आनंद है, वही उसका फल है। जब मैं किसी की हत्या करने जा रहा हूं तो हत्या करने में ही मैं वह कष्ट भोग रहा हूं जो कि हत्या करने का है और जब मैं किसी की जान बचा रहा हूं तो उस जान बचाने में ही मुझे वह सुख मिल रहा है जो कि उसमें छिपा है। मेरी आप बात समझ रहे हैं न? कर्म ही फल है। कर्म का कोई फल नहीं होता, कभी भविष्य में नहीं। कर्म ही, प्रत्येक कर्म अपना फल स्वयं है।
तो बुरा कर्म मैं उसको नहीं कहता जिसके बाद में बुरे फल मिलेंगे। बुरा कर्म मैं उसको कहता हूं जिसका बुरा फल उसी क्षण तुम्हें मिल रहा है।
उस फल को जांच कर ही अनुभव कर लेना कि कर्म बुरा है या भला है। जो कर्म अपनी क्रिया के भीतर ही दुख देता हो वही कर्म बुरा है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, मेरी धारणा मैं आपको बताऊं।

प्रश्नः आपने बोला न कि जो हैबिच्युअल हो जाता है, उसको कैसा असर होगा?

जी?

प्रश्नः जो हैबिच्युअल हो गया, बुरा करने के लिए, अच्छा करने के लिए; उसको पीछे असर कैसा होगा?

उसी क्षण हो रहा है। फर्क इतना ही है।

प्रश्नः हैबिच्युअल होने पर।

हां, मैं आपको बताता हूं। आप कितने ही हैबिच्युअल हो जाएं, आप कितने
ही हैबिच्युअल हो जाएं, जैसे समझ लीजिए, एक आदमी निरंतर क्रोध करने की आदत हो जाए उसे, तो क्या आप सोचते हैं क्रोध उसे पीड़ा नहीं देगा? उसे तो और भी पीड़ा देगा। आप ऐसा समझिए कि आपमें से कुछ कभी-कभी क्रुद्ध होते हैं, कुछ फिर क्रुद्ध रहने ही लगते हैं। यानी इतनी आदत हो जाती है कि वे चौबीस घंटे क्रुद्ध हैं और वे मौके की तलाश में हैं कि कभी आप कुछ मौका दें और वे क्रोध जाहिर कर दें। वे क्रुद्ध हैं। वे चढ़े ही हुए हैं क्रोध में। वे घूम रहे हैं चारों तरफ कि आप मौका दें और वे क्रोध को जाहिर करें। बाकी वे क्रुद्ध हैं, उनके चेहरे, उनके भीतर घूम रहा है क्रोध।
उनकी पीड़ा आप अनुभव नहीं कर सकते। बड़ी पीड़ा तो यह है कि वे सारे सुख और शांति के सब क्षणों से वंचित हो गए। क्योंकि जो निरंतर चौबीस घंटे भीतर क्रुद्ध है, वह किसी शांति के क्षण को कभी अनुभव नहीं करेगा। वह किसी प्रेम के क्षण को कभी अनुभव नहीं करेगा। वह किसी आनंद के क्षण को कभी अनुभव नहीं करेगा। वे सब तो द्वार उसने अपने क्रोध से ही बंद कर लिए। वह जो टेंशन चल रहा है चौबीस घंटे क्रोध का उसने सारे महत्वपूर्ण क्षणों को बंद कर दिया। बड़ा तो उसे दंड यह मिल गया। और फिर क्रोध की जो अग्नि है वह अलग

उत्ताप दे रही है उसे। उसके शरीर को भी कष्ट दे रही है, उसके मन को भी कष्ट दे रही है और निरंतर उसे नीचे लेती चली जाएगी।
दो तरह के इमोशंस हैं, निगेटिव और पाजिटिव। कुछ इमोशंस हैं, जैसे क्रोध है, घृणा है, इनको करके आपको तत्क्षण नुकसान हो जाता है। आगे नहीं कभी, उसी वक्त आपमें से कुछ खो जाता है, आप खंडित हो जाते हैं, आप नीचे हो जाते हैं। आप कभी अनुभव करें, क्रोध के बाद एक क्षण विचार कर अनुभव करें कि क्या हुआ? आप पाएंगे कि आप कहीं ऊंचे तल पर थे, नीचे आ गए। आप कहीं शांति में थे, वह शांति गई, आप बड़ी अशांति में आ गए। आप पाएंगे, कुछ अगर ताजगी थी भीतर, वह ताजगी खो गई और सब बासा-बासा हो गया। आपमें अगर कोई शक्ति अनुभव होती थी, वह शक्ति चली गई और बहुत थके-थके मालूम हो रहे हैं।
जो-जो चित्त की प्रक्रियाएं आपको थकान लाती हों, कष्ट लाती हों, उदासी लाती हों, नीचे उतरे का भाव लाती हों, अशांति लाती हों, वे सब निगेटिव हैं। पाजिटिव भी हैं, कि जिनको करने के बाद आप अनुभव करते हैं कि आप और ताजे हो गए; जिनको करने के बाद आप अनुभव करते हैं कि शक्ति और अनुभव हो रही है; जिनको करने के बाद आपको अनुभव होता है कि शांति घनी हो गई; जिनको करके आपको अनुभव होता है आप कोई दो सीढ़ियां अपने आंतरिक जीवन में ऊपर चढ़ आए। निरंतर आपको अनुभव होगा। दोनों तरह के काम आप कर रहे हैं और दोनों तरह के काम का हरेक को अनुभव है।
तो मेरी जो धारणा है, कोई कर्म भविष्य में फल नहीं लाता। कर्म ही फल है। उसी क्षण। क्योंकि हिसाब-किताब कौन रखेगा कि किस... इससे मतलब क्या है। यह तो फिजूल का पागलपन का खयाल है कि कोई हिसाब-किताब रखेगा और फिर आपको नरक भेजेगा और आपको स्वर्ग भेजेगा।

प्रश्नः खयाल ऐसा है कि जो कर्म के, जैसे बैंक में क्रेडिट व डेबिट की तरह होता है और पीछे इसका हिसाब-किताब करते हैं।

कोई हिसाब कहीं... मेरी धारणा मैं आपको कहता हूं कि एक-एक कर्म हमने किया, करने में ही हमने उसे भोग लिया। तो बुरा कर्म नरक में नहीं ले जाएगा, बुरा कर्म नरक है। भला कर्म स्वर्ग में नहीं ले जाएगा, भला कर्म स्वर्ग है। और वह तीसरी स्थिति की मैंने बात कही, जो कि कर्म के बाहर है, वह आनंद है, वह मोक्ष है। न वहां शुभ कर्म हैं, न वहां अशुभ कर्म हैं। न वहां क्रोध है, न क्रोध का क्षमा करना है, वहां वह कुछ भी नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, वह कुछ भी नहीं है। वहां वे दोनों बातें नहीं हैं। वहां परम शांति है।
तो वह आप जो पूछे कि उस क्रोध को हम क्या करें? वह जो हममें उठता है, वह
जो हममें घना होता है, हम उसको क्या करें?
हम दो ही काम करते हैं, क्रोध उठेगा तो हम दो काम करते हैं। एक काम तो
हम यह करते हैं कि जैसे ही क्रोध उठता है, हम उसे किसी को बिंदु बना कर निकालते हैं। तो मुझे क्रोध उठा तो मैं किसी को बिंदु बनाऊंगा और निकालूंगा। एक तो यह है। दूसरा यह काम है कि जब क्रोध उठता है तो मैं किसी को बिंदु नहीं बनाता, अपने को बिंदु बनाता हूं और उसे दबा लेता हूं। मतलब दो हैं, या तो मैं उसे निकालता हूं और या दबा लेता हूं। या तो क्रोध करता हूं या सप्रेस कर लेता हूं, उसे दमन कर लेता हूं।
दोनों स्थितियों में भारी गलती हो जाती है। जब मैं किसी पर उसे निकालता हूं, जब मैं उस वेग को किसी पर निकालता हूं तो मुझे उसे निकालने की आदत पड़ती है। यानी कल मैं उसे और जल्दी निकालूंगा, परसों फिर और जल्दी निकालूंगा। एक दिन ऐसी हालत आएगी कि मैं उसे बिना कारण भी निकालने लगूंगा। एक दिन ऐसी हालत आएगी कि मुझे इससे मतलब ही नहीं रहेगा कि उसमें कुछ संबंध भी था कि नहीं और मैं निकालूंगा।

हम चौबीस घंटे जो क्रोध कर रहे हैं, उसमें अनेक बार उन लोगों पर क्रोध
कर रहे हैं, जिनका कोई संबंध नहीं था। अक्सर हम उन लोगों का क्रोध जिनका संबंध था, उन पर भी निकालते हैं, जिनका कोई संबंध नहीं था। हो सकता है आप दुकान पर किसी से क्रुद्ध हुए हैं और नहीं निकाल सकते, घर में बच्चे पर निकाल सकते हैं, पत्नी पर निकाल सकते हैं। फिर क्रोध कहीं भी निकलने लगेगा। फिर वह धीरे-धीरे बिल्कुल इररेशनल हो जाएगा, उसमें यह भी फिकर नहीं रहेगी कि इसने कुछ किया या नहीं।
आप हैरान होंगे, आप चीजों तक पर क्रोध निकाल लेते हैं। दरवाजा नहीं खुलता तो उसको इतने जोर से धक्का देते हैं, गाली भी देते हैं। और कभी-कभी सोचने की बात है कि दरवाजे को गाली देने या दरवाजे को धक्का देने में कौन सी अकल हो सकती है। मैं लोगों को देखता हूं, कलम स्याही नहीं फेंक रही, उसको गाली देकर पटक देते हैं। मैं बड़ा हैरान हूं कि इस कलम पर भी इनका क्रोध निकल रहा है, जो कि बेचारी बिल्कुल ही, जिसे क्रोध से कोई मतलब नहीं है। तो जो आदमी कलम पर क्रोध निकाल रहा है, उसके क्रोध से क्या घबड़ाना। मतलब वह आप पर भी ऐसे ही निकाल रहा है, उसे कोई मतलब थोड़े ही है। वह तो उसके लिए मुद्दा चाहिए, कहीं भी निकाल रहा है। कहीं भी निकाल रहा है।
जापान में एक साधु हुआ, उससे एक जर्मन विचारक मिलने गया था। जब वह उससे मिलने गया तो वह एक आदमी से कह रहा था कि जाकर जूते से क्षमा मांग कर आओ, तुमने जूते गुस्से में निकाले हैं। वह जर्मन विचारक बड़ा हैरान हुआ कि यह क्या पागलपन हो रहा है! वह उससे कह रहा है कि तुम जूते से क्षमा मांग कर आओ। और वह आदमी पागल गया भी। वह तो बड़ा हैरान हुआ विचारक कि यह क्या कर रहा। वह आदमी गया और उसने जूते से जाकर क्षमा मांगी कि महानुभाव क्षमा करिए। तो उसने उससे पूछा साधु से कि यह पागलपन, हमने सुना था कि पूरब के साधु बड़े पागल होते हैं। यह क्या पागलपन है? जूते से क्षमा मंगवाते हैं? वह बोला कि इस आदमी ने जूता क्रोध से उतारा। अगर आप जूते को क्रोध से उतारने के योग्य मानते हैं तो फिर क्षमा मांगने योग्य भी मानना चाहिए। इसने ऐसे जूते को उतारा कि जैसे कि वह उस पर क्रोध कर रहा है।
उस आदमी ने कहाः हां, मैंने क्रोध किया था। मैं क्रुद्ध तो किसी और बात से था, जूते ने जरा देर की उतरने में तो मैंने उसे गुस्से से उतारा था। तो यह साधु ने मुझसे क्षमा मंगवाई है उससे कि तुम क्षमा मांग कर आओ। तो ही अंदर आओ, नहीं तो क्या तुम्हारा फायदा अंदर आने का।
हम अनुभव करें अगर तो हम पाएंगे कि क्रोध निकास लेता है। जो उसे निकालने की निरंतर आदत में पड़ जाएगा, वह धीरे-धीरे उसे निकालता रहेगा और जितना क्रोध निकालेगा उतनी आत्म-शक्ति हीन होती चली जाएगी।
तो क्रोध को निकालने का रास्ता तो गलत है क्योंकि उससे क्रोध और घना होगा। और एक रास्ता यह है कि क्रोध को दमन करो। जो लोग भी क्रोध से बचना चाहते हैं, फिर वे दूसरे रास्ते का उपयोग करते हैं। जब क्रोध आए तो ऊपर तो मुस्कुराहट कायम रखो और क्रोध को भीतर दबा लो। हममें से अधिक लोग यह करते हैं। अनेक कारणों से। कुछ लोग करते हैं धार्मिक वजह से कि क्रोध करना बुरा है, इससे नरक में जाना पड़ेगा। कुछ लोग शिष्टाचार के वश कि कैसे क्रोध करें। कुछ लोग कुछ सामाजिक संबंधों के कारण कि कैसे क्रोध करें। कुछ इसलिए कि मालिक के साथ नौकर कैसे क्रोध करे। तो हम अपने को दबाते हैं, दमन करते हैं, रिप्रेशन करते हैं।
जब आप क्रोध को दबाते हैं, तब भी आप नुकसान कर रहे हैं। क्योंकि दमित क्रोध जाएगा कहां, वह भीतर घूमेगा। वह कांशस माइंड से दब जाएगा तो अनकांशस माइंड में घूमेगा। आप ऐसे सपने देखोगे जिसमें आपने किसी की हत्या कर दी। आप मन ही मन में ऐसी कल्पना करोगे कि उसके मकान में आग लगा दी या उसको जूते मार रहे हैं या कुछ कर रहे हैं। मन में ही चलेगा यह अब। यह आपके भीतर सरकेगा। और आपके चित्त को अंदर से विकृत करेगा और घुन लगा देगा।

प्रश्नः यह भी क्रोध है।

यह भी क्रोध है। यह आंतरिक दमन हुआ, वह चल रहा है भीतर। पहले से नुकसान
था कि आदत पड़ती, इससे नुकसान यह है कि आप धीरे-धीरे क्रोध से उत्तप्त रहने लगोगे। उसके वेग निकलेंगे नहीं, वे वेग भीतर घुमड़ेंगे।
ऐसा आदमी बड़ा घातक है, वह कभी इतना खतरनाक क्रोध करेगा जो कि पहले वाला आदमी कभी नहीं कर सकता। इसलिए कई दफे बहुत सीधे-सादे दिखने वाले लोग हत्याएं कर देते हैं। आमतौर से बहुत क्रोधी लोग हत्या नहीं करते। क्योंकि उनका रोज-रोज क्रोध निकलता है। लेकिन जो क्रोध को दमन करता चला जाएगा, कई दफा यह अनुभव हुआ कि यह आदमी तो बड़ा सीधा था, इसने यह काम कैसे किया? उसने बहुत दिन दमन किया। वेग बहुत इकट्ठा हो गया। फिर किसी चीज से वह क्रुद्ध हो गया और सारा वेग इकट्ठा निकल गया। और तब वह बहुत खतरनाक काम कर सकता है। यह वेग किसी दिन निकल सकता है। ऐसा आदमी पागल हो सकता है। यह वेग इतना ज्यादा दमित हो जाए कि इसके निकलने का रास्ता न रहे तो दिमाग खराब हो जाएगा।
कोई भी वासना, कोई भी वेग किया जाए तो आदत बनती है, दमन किया जाए तो विक्षिप्त कर सकता है। तो दूसरा भी रास्ता रास्ता नहीं है।
तो न तो मैं निकालने को कहता हूं, न दबाने को कहता हूं, मैं कुछ तीसरी बात कहता हूं। मैं उसे विसर्जन करने को कहता हूं। एक है क्रोध का भोगना, एक है क्रोध का दमन करना और एक है क्रोध का विसर्जन करना।
विसर्जन करने को समझने की बात है। जब क्रोध उठे, तो न तो उसे किसी पर प्रकट करिए, क्योंकि आपमें क्रोध उठा इसके लिए कोई दूसरा जिम्मेवार नहीं है, आप ही जिम्मेवार हैं। इसको स्मरण रखिए। हम आमतौर से बोझ दूसरे पर टाल देते हैं कि मुझे इसलिए क्रोध उठा कि उस आदमी ने गाली दी। लेकिन किसी की गाली मुझमें क्रोध को नहीं उठा सकती अगर मुझमें क्रोध न हो। मेरे भीतर जो है, वही कोई दूसरा मुझमें उठा सकता है।
यहां हम पर्दा खोलें, यहां इतने लोग बैठे दिखाई पड़ें, तो पर्दा खोलने वाला इतने लोगों को पैदा थोड़े ही कर रहा है। वह पर्दा खोल भर रहा है। यहां इतने लोग दिखाई पड़ते हैं, ये यहां मौजूद हैं। जब एक आदमी आपको गाली देता है तो आपमें क्रोध थोड़े ही पैदा करता है, आपके भीतर पर्दा खोलता है, क्रोध आपके भीतर मौजूद है। अगर वहां क्रोध मौजूद न हो, गाली क्रोध नहीं ला सकती। मेरी आप बात समझे न? वहां क्रोध मौजूद है इसलिए गाली क्रोध लाती है। वहां अभिमान मौजूद है इसलिए सम्मान सुख लाता है।
एक आदमी आपका बड़ा आदर करता है, आप बड़े सुखी हो गए। आप सोचते हैं, सुख उसने दिया! वहां तो अभिमान मौजूद था, उसने पर्दा भर खोल दिया सम्मान करके।
वहां अब बड़ा अच्छा लगने लगा। उसने गाली दे दी, अपमान हो गया, वहां अभिमान तो मौजूद था, आप क्रुद्ध हो गए।
आपके भीतर चीजें मौजूद हैं, बाहर के लोग केवल जो मौजूद हैं उसी को प्रकट करने का कारण बन सकते हैं। आपके भीतर पैदा कोई भी कुछ भी नहीं कर सकता है।
इसे स्मरण रखें कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति में कुछ भी पैदा नहीं कर सकता है। सिर्फ जो उसमें मौजूद है, उसको दिखला सकता है। तो दूसरे पर तो क्रोध को कभी कारण न मानें कि दूसरे ने क्रोध करवा दिया है। फिर इसलिए दूसरे का तो चिंतन सवाल नहीं रखता।
और फिर मैंने जैसा परसों रात आपको कहा, कि जब-जब आप उसका चिंतन करने लगेंगे, तब-तब क्रोध को आप देख नहीं पाएंगे। आप उसको देखने लगे जिसने गाली दी। मैं उसका विचार करने लगा। उसी बीच क्रोध मुझे पकड़ लेगा और मथ डालेगा। उसी बीच मैं नरक में उतर जाऊंगा। तो जब वह उसने गाली दी तब उसकी तो फिकर छोड़ें, आंख बंद करके अपने क्रोध को देखें।
तो एक रास्ता तो निकालने का था, वह तो उपयोग का नहीं है। दूसरा रास्ता दमन करने का था, वह भी उपयोग का नहीं है। तीसरा रास्ता हैः न तो निकालें, न दमन करें। आंख बंद कर लें। क्रोध का साक्षात करें, उसके साक्षी बनें, उसके विटनेस बनें, उसको देखें, सिर्फ देखें। उसे पूरा उठने दें। उससे कह दें कि उठो और हम तुम्हें देखते हैं, तुम क्या हो। न तो हम निकालेंगे, न हम दमन करेंगे, हम तुम्हें देखेंगे।

एकांत कोने में बंद हो जाएं, साधना का बड़ा अदभुत क्षण है। क्रोध पकड़े, साधना के लिए अदभुत क्षण समझें। मंदिर जाने से वह लाभ न होगा, जो क्रोध में आ जाने से हो सकता है। दरवाजा बंद कर दें। एकांत में शांत होकर बैठ जाएं। आंख बंद कर लें और कृपा समझें उस आदमी की जिसने इस क्रोध को देखने का आपको मौका दिया, जो आपके भीतर था। इस नरक का आपको मौका दिया। आंख बंद कर लें, अब इस पूरे को उठने दें और चुपचाप इसे देखें। इसे कुछ न करें, इसे छेड़ें-छाड़ें नहीं। एक जस्ट अवेयरनेस भर इसके बाबत पैदा करें कि देख रहे हैं हम उसे, उसे उठने दें, उसके पूरे रूप को फैलने दें, चुपचाप देखते रहें। न तो उसे किसी पर अभी चित्त में भी निकालने की कोशिश करें और न दबाने की।

प्रश्नः फर्क इतना है कि एक सेकेंड में क्रोध आ जाता है तो एक सेकेंड में इसका दमन कैसे करने का है?

नहीं-नहीं, दमन को तो मैं नहीं कह रहा, दमन को मैं नहीं कह रहा।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

एकांत, हां। अपने को बंद कर लें कहीं, चुपचाप और जो उठता है उसे देखें। सिर्फ देखें। कुछ न करें। एक क्षण को उठेगा, उसको ही देखें। कोई फिकर नहीं है। आप गलत खयाल में हैं कि क्रोध एक क्षण को उठता है। उसका उभार बड़ी देर तक रहता है। उठता एक क्षण को होगा, उसकी सरकती धुएं की रेखा बहुत देर तक चलती है। कोई फिकर नहीं अगर वह अपनी पूरी जवानी में न दिखाई पड़े, बुढ़ापे में दिखाई पड़े तो भी कोई हर्ज नहीं है। उसकी अंतिम लकीर भी दिखाई पड़े तो भी कोई हर्ज नहीं है। देखने का प्रयोग शुरू करें। देखने का अभ्यास घना होगा तो किसी दिन वह बिल्कुल अपने जन्म में भी पकड़ा जा सकेगा। अभी तो ऐसा ही होगा कि वह आखिरी लकीर उसकी दिखाई पड़ेगी।
अभी तो ऐसा होगा कि क्रोध करने की जो पुरानी आदतें हैं, उसमें अगर बैठें भी एकांत निरीक्षण को तो उसकी आखिरी जाती हुई लकीर दिखाई पड़ेगी। कोई हर्ज नहीं। पर वह भी शुरुआत अच्छी है, कुछ तो दिखा। और कुछ दिखेगा, और कुछ दिखेगा। किसी दिन पूरा क्रोध आपको दिखाई पड़ेगा।
और एक बड़ा अदभुत अनुभव होगा। जब इसका अभ्यास थोड़ा घना हो जाएगा और आप क्रोध को देखने में समर्थ हो जाएंगे, तो आप देखेंगे कि न तो क्रोध किसी के ऊपर जा रहा है और न दमित हो रहा है; वह विसर्जित हो रहा है, एवोपरेट हो रहा है। न तो किसी पर जा रहा है, किसी आदमी के प्रति अब नहीं है वह और न अपने भीतर दमन हो रहा है। अब वह तो भाप की तरह, जैसे भाप उड़ती जा रही है, वह ऐसा उठ रहा है और निकलता जा रहा है। वह क्रोध उठता हुआ, निकलता हुआ मालूम होगा, किसी व्यक्ति के प्रति नहीं, वह विलीन होता हुआ मालूम होगा, वाष्पीभूत होता हुआ मालूम होगा।
और इतनी परम शांति का अनुभव होगा उसके वाष्पीभूत होने पर कि जिसकी आप कल्पना नहीं कर सकते। जो क्रोध आपको नरक में ले जाता है, वही क्रोध आपको स्वर्ग में ले जाएगा। उसका दमन करते तो नरक में जाते हैं और उसको किसी पर प्रकट करते हैं तो नरक में जाते हैं। उसे कुछ भी नहीं करते, इन दोनों पर कुछ भी नहीं करते, न दमन करते, न प्रकट करते हैं, उसके साक्षी बनते, उसका ऑब्जर्वेशन करते हैं, उसको देखते हैं कि यह क्या है वेग। और जो मैं क्रोध के संबंध में कह रहा हूं, वह सब चीजों के संबंध में ठीक है। सेक्स हो, लोभ हो और कुछ और हो। जो भी वेग पकड़ते हों चित्त को, उनके निरीक्षक बनें। उनका एक सेल्फ-ऑब्जर्वेशन शुरू करें।
ऑब्जर्वेशन में और थिंकिंग में फर्क समझ लें। क्रोध को विचारने को नहीं कह रहा हूं कि आप विचार करें कि क्रोध क्या है, पुराने ग्रंथों में क्या लिखा है क्रोध के बाबत। वह मैं नहीं कह रहा। उसमें तो फिर आप निरीक्षण नहीं कर पाएंगे। क्रोध के संबंध में सोचने को नहीं कह रहा हूं, क्रोध को देखने को कह रहा हूं। यह मत सोचिए कि क्रोध बड़ी बुरी चीज है और फलानों ने कहा है कि क्रोध नहीं करना चाहिए, यह मैं नहीं कह रहा आपसे। यह

तो सोचना होगा। क्रोध को देखने को कह रहा हूं, अंतर्दृष्टा बनें, उसको देखें, आंख गड़ाएं उसके ऊपर और जानें कि यह क्या है। कोई निर्णय न लें। वही मैं परसों कहता था। उसके बाबत यह निर्णय न लें कि वह अच्छा है कि बुरा है। इतना ही जानें कि कुछ है जिसे हम देखें कि क्या है।
आप हैरान हो जाएंगे, अगर ऐसा निरीक्षण किया, तो पहले ही निरीक्षण के अनुभव में आपको एक अदभुत बात मालूम होगी कि जितना हिस्सा आप क्रोध का निरीक्षण कर लोगे, उतना हिस्सा विलीन हो जाएगा। वह आपके भीतर सरकेगा नहीं। देख लेने के बाद, उसके विलीन हो जाने के बाद वह आपका पीछा नहीं करेगा, जो अभी करता है।
अभी मैंने ऐसा अनुभव भी किया, ऐसे लोग हैं जिनको बीस साल पहले का क्रोध भी पीछा कर रहा है अभी। ऐसे भी लोग हैं कि उनके बाप को किसी ने क्रोधित किया था और वह उनको उनका पीछा कर रहा है जन्म से। यानी पुश्तैनी दुश्मनी भी चलती है, कि वह हमारे बाप का उनसे झगड़ा था, वह भी चल रहा है। वह क्रोध अभी उनका पीछा कर रहा है। अजीब सी बात है। और आपको भी क्रोध पीछा करता है, वर्षों तक। उस आदमी को देख कर आप फिर उत्तप्त हो जाते हैं, वह तो रखा है भीतर। वह दो वर्ष पहले आपको गुस्सा दिलाया था, वह आदमी एक दिन दिखाई पड़ जाए और आप पाएंगे कि आप फिर भीतर से कोई चीज जग गई है, कोई सांप भीतर उठ खड़ा हुआ और परेशान कर रहा है।
तो जितना आप निरीक्षण कर लोगे, उतने से आप बाहर हो जाओगे, वह आपका पीछा नहीं करेगा। जितना क्रोध की पूरी घटना का निरीक्षण करने में समर्थ हो जाओगे, उस दिन आप पाओगे क्रोध गया। थोड़े दिन निरीक्षण करने पर क्रोध विलीन हो जाएगा। इसके बाद क्रोध आना कठिन हो जाएगा। जब निरीक्षण परिपूर्ण हो जाएगा, ऑब्जर्वेशन पूरा हो जाएगा, तो क्रोध आना मुश्किल हो जाएगा। क्योंकि इसके पहले वह आए और आप ऑब्जर्वेशन में लग जाओगे। अभी मैंने कहा कि वह जाता हुआ आखिरी हिस्सा आपको दिखाई पड़ेगा। निरंतर अभ्यास से वह आने के पहले आपको दिखने की घटना शुरू हो जाएगी। किसी ने गाली दी, वह गाली दे रहा है और आप देखने लगोगे भीतर कि कहां है, वह उठता है कि नहीं। और आप हैरान हो जाओगे, अगर उसके पहले ही निरीक्षण की क्षमता आ जाए, वह आएगा ही नहीं, वह पैदा ही नहीं होगा।
निरीक्षण क्रोध की मृत्यु है। पूर्व-निरीक्षण क्रोध का जन्म ही नहीं होना है। वह जन्म ही नहीं होगा उसका। तब उस निरीक्षण के माध्यम से जब क्रोध का जन्म नहीं होगा, तो जो आपके चित्त की स्थिति होगी, उसका नाम अक्रोध है। वह क्रोध को दबाने से नहीं आती, क्रोध को निकालने से नहीं आती, क्रोध के विसर्जन से आती है।

प्रश्नः क्रोध करने के बाद माफी मांग लें तो विसर्जन हो जाएगा।

नहीं, उससे कोई संबंध नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न-न, माफी मांगें या नहीं मांगें, वह मैं नहीं कह रहा, वह मैं नहीं कह रहा। वह निकलती हो, जरूर मांग लें। नहीं निकलती हो, शिष्टाचार के लिए मांगना हो तो भी कोई... उसको मैं नहीं कह रहा। मैं यह कह रहा हूं कि माफी क्रोध को नहीं मिटाती, क्रोध के परिणाम को फीका करती है।
मैंने आपको क्रोध में गाली दे दी और मैंने जाकर आपसे माफी मांग ली। मेरा क्रोध इससे नहीं मिटता माफी मांगने से; आप पर मैंने जो गाली दे दी थी क्रोध में, उसका जो आप पर घातक प्रभाव हुआ था, वह थोड़ा सा कम हो जाएगा। अगर मैंने बहुत गहरी माफी मांग ली तो और कम हो जाएगा। अगर सच में उनके पैर पकड़ लिए और काफी... यानी जो-जो मैंने क्रोध में किया था, उसके बिल्कुल विपरीत किया। क्रोध में मैंने क्या किया था, उनके अहंकार को चोट पहुंचाई थी, और माफी में मैं क्या करूंगा, उनके अहंकार को फुसलाऊंगा और खुशामद करूंगा।

माफी क्या है? खुशामद है। माफी क्या है आखिर? आप जो कल मुझे गाली दे गए
और आज आकर मेरा पैर पकड़ लिए और कहने लगे क्षमा कर दें, तो कल जो गाली मुझे दे गए थे, उससे मेरे अहंकार को चोट लगी थी, मेरे ईगो को चोट लगी थी; आज आकर मेरा पैर पकड़ रहे हैं, मेरे ईगो की परितृप्ति होती है।
अगर उसी मात्रा में मेरे ईगो को आपने परितृप्त कर दिया जिस मात्रा में चोट लगी थी, तो मेरे पर परिणाम खत्म हो जाएगा। समझे न? पर आपका थोड़े ही कुछ होने वाला है।

प्रश्नः जो नुकसान हुआ वह तो हुआ ही।

हां?

प्रश्नः जब क्रोध किया तब अहं का बोध हुआ, माफी मांगते हैं तब अपने अहं का पता... थोड़ा सा अंधापन में हो जाता है। नहीं तो आदमी माफी भी नहीं मांगे।

नहीं-नहीं, मैं तो आपको कहूंगा...

प्रश्नः जो नुकसान हुआ उसकी पूर्ति तो होती नहीं।

अपना जो नुकसान हुआ उसकी कोई पूर्ति नहीं होती। और यह जो आप सोच रही हैं कि जब क्रोध किया हमने और किसी को गाली दी थी तो अपने अहंकार का पोषण हुआ था। अब हम क्षमा मांग रहे हैं तो हमारे अहंकार का विसर्जन हुआ। इस भूल में मत पड़ना। अब शायद और अहंकार का पोषण हुआ। तब आप क्रोधी थे, अब क्षमावान भी होकर घर लौटे।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, तब आपने अहंकार का जो मजा लिया था, वह क्रोध में लिया था, कि तुमने मुझे गाली दी तो मैं तुमको दुगुनी वजनी गाली देता हूं। अब आप घर यह सोच कर लौट रहे हैं कि मैं कितना क्षमाशील प्राणी, कितना क्षमावान प्राणी हूं कि उनसे क्षमा मांग कर... तब जो था दंभ, वह बहुत जिसको कहें नेचरल था, अब बहुत सोफिस्टिकेटिड है। जो फर्क है, वह बड़ा सहज वाला दंभ था कि आपने गाली दी, हमने भी गाली दी। अब जो दंभ है, वह बड़ा विकसित दंभ है। उसका पता पड़ जाता, इसका पता पड़ना कठिन होगा।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

मैं आपको कहूं, उसको बुरा नहीं कह रहा, उसको मैं बुरा नहीं कह रहा। माफी मांगी, बुरी बात नहीं है। माफी मांगी, वह सच्ची थी, इसका लक्षण यह नहीं है कि वह हिसाब से निकली या अपने आप निकली, इसका लक्षण यह है कि अगर वह सच्ची थी तो दुबारा क्रोध नहीं पैदा होना चाहिए। क्योंकि सवाल यह है कि अगर वह सच्ची थी तो फिर दुबारा, अगर फिर दुबारा वैसा ही क्रोध पैदा होता है और फिर वैसी ही माफी मांगी जाती है, तो इसका मतलब क्या है। तब तो मतलब यह हुआ कि क्रोध भी एक मैकेनिकल रिएक्शन है और माफी भी एक मैकेनिकल रिएक्शन है। क्रोध भी निकलता, फिर माफी भी मांग लेते हैं। क्रोध भी निकलता, फिर पश्चात्ताप भी कर लेते हैं। हम पूरी जिंदगी इसी चक्कर में हैं। वही काम करते हैं, उसके लिए दुखी हो लेते हैं। फिर वही करते हैं, फिर दुखी हो लेते हैं, फिर वही...
अगर कोई आपकी जिंदगी उठा कर देखे पूरी तो बड़ा हैरान होगा कि आप वही- वही काम, आखिर कर क्या रहे हैं? काम क्या है आपका, आप कोई चक्कर लगा रहे हैं कि कहीं चल रहे हैं? वही काम, फिर वही माफी; फिर वही काम, फिर वही माफी। फिर पश्चात्ताप, फिर दुख, फिर पश्चात्ताप। करीब-करीब दिन-रात की तरह हमारी

जिंदगी में कुछ बातें बंधी हैं, बिल्कुल रूटीन, उन्हीं-उन्हीं को हम कर रहे हैं।
मेरा कहना, इस रूटीन को तोड़िए। रूटीन को तोड़ने का मतलब यह है कि अगर क्षमा मांगने जाते हैं तो इस विचार के साथ जाइए कि अब क्रोध नहीं, नहीं तो क्षमा नहीं मांगूंगा। क्या क्षमा मांगने से फायदा है। जब कल फिर क्रोध करना ही पड़ेगा, इस पर नहीं किसी और पर करेंगे, तो क्षमा मांगने से क्या फायदा। पश्चात्ताप मत करिए अगर कल फिर क्रोध करने की स्थिति है। तो तय करिए कि पश्चात्ताप नहीं करेंगे। क्योंकि कल फिर क्रोध करना ही है। अगर यह अनुभव आपमें आए कि पश्चात्ताप नहीं करेंगे, क्षमा नहीं मांगेंगे। उस आदमी से कह दीजिए कि हम क्षमा नहीं मांगेंगे क्योंकि क्षमा मांगने से कोई फायदा नहीं। कल अगर तुमने फिर हमारे साथ ऐसा ही किया तो हम फिर क्रोध करेंगे। इसलिए हम क्या क्षमा मांगे आपसे। क्षमा नहीं मांगेंगे।

प्रश्नः नहीं, लेकिन मैं यह पूछता हूं कि सारा संसार तो ऐसा मानसिक द्वारा नहीं हो सकता...

नहीं, सारे संसार को मैं कह ही नहीं रहा।

प्रश्नः थोड़ा सा ऐसा है कि समाज और सेक्शन हो सकता है कि जिसकी वजह से हमारा डेली नीड, फर्स्टः क्लाथ, फूड, वॉटर, परफेक्शन, एवरी डे डेली न्यूज एक्सट्रा दिमाग से पैदा हो सके। यह जो हम पैदा करने के लिए जाते हैं, तब यह क्रोध करना पड़ता ही है। अगर बिना क्रोध करने से ऐसी ही कोई हमारी रोज की अलौकिक चर्या पैदा हो सकती हो, तो ऐसा कोई सेक्शन एक्झिटेंट है कि जिसकी वजह से हम उसको कवर कर सकें?

यह जो मेरी जो बात है, वह समझ में आ जाए तो फिर इन प्रश्नों को मैं ले लूं। मैंने कहा कि दमन नहीं, भोग नहीं, विसर्जन मार्ग है। क्रोध विसर्जित किया जा सकता है ऑब्जर्वेशन, निरीक्षण से। जितने शांत होकर आप किसी वासना का निरीक्षण करेंगे, वासना उतनी विलीन हो जाएगी। जितने अशांत होकर आप वासना का निरीक्षण न करके वासना के प्रति मूर्च्छित होंगे और बाहर के कारणों का निरीक्षण करेंगे, वासना उतनी प्रगाढ़ हो जाएगी।
मूर्च्छा क्रोध का प्राण है और निरीक्षण क्रोध की मृत्यु है।
और मूर्च्छा के रास्ते और तरकीबें हैं। रास्ता यह है कि जब क्रोध आएगा तो हम क्रोध का निरीक्षण नहीं करेंगे; उसका निरीक्षण करेंगे, जिसने क्रोध हममें दिलवा दिया। हम समझेंगे कि उस आदमी की गलती है कि उसने हमको गाली दी, तो हमें क्रोध आया, नहीं तो हमको क्यों क्रोध आता। अगर कोई हमको गाली न दे, तो हम क्यों क्रोध होने वाले हैं। क्रोध तो हमको उस आदमी ने करवाया। अगर सारे लोग ऐसे हों कि कोई हमको गाली न दें, तो हम क्रोध नहीं करेंगे। इसलिए हमारा तो कोई सवाल ही नहीं है। उसने गाली क्यों दी या उसने हमको परेशान क्यों किया या उसने अपमान क्यों किया।
हम उस वक्त क्रोध को न देख कर उसको देख रहे हैं जिसने क्रोध दिलवाया।
और इस भांति हमारी नजर और निरीक्षण उस पर लगा रहेगा। इसी स्थिति में जब हम निरीक्षण किसी और का कर रहे हैं, भीतर हम स्थिति में मूर्च्छित हैं। हम, वहां हमारा ध्यान लगा है, यहां ध्यानहीन हैं। इस मूर्च्छा की स्थिति में क्रोध हमारे जीवन को पकड़ लेगा।
जब हम क्रोध कर चुकेंगे और हमारी शक्ति व्यय हो जाएगी क्रोध में, धक्का लगेगा, तब अचानक उस पर से ध्यान हट कर जिस पर हम क्रोधित हो रहे थे, अपने पर ध्यान आएगा। इस शक्ति के खोने की वजह से, पीड़ा की वजह से, ध्यान अपने पर आएगा। तब हम पछताएंगे कि यह तो बड़ा, यह तो नहीं करना था, यह तो फिजूल किया, इससे क्या फायदा था।
जब मूर्च्छा टूटती है, पश्चात्ताप होता है। लेकिन तब तक क्रोध चला गया। फिर निरीक्षण करने को कुछ है नहीं। तूफान जा चुका, अब वहां सब चीजें टूटी-फूटी पड़ी हैं, उनका ही निरीक्षण करो, उससे दुखी होओ और तय करो कि अगली

बार क्रोध नहीं करेंगे। जब फिर क्रोध आएगा, तब फिर आप निरीक्षण करने को मौजूद नहीं रहेंगे, बाहर कहीं चले जाएंगे, फिर सब खंडित होगा। फिर लौट कर देखेंगे, फिर पश्चात्ताप होगा। क्रोध और पश्चात्ताप का यूं घेरा चलेगा। और ये जो हमारी बातें हैं कि हम कहते हैं कि करना ही पड़ता है, यह जो हम कहते हैं कि क्रोध करना ही पड़ता है, स्थिति ऐसी, समाज ऐसा, ये सब जस्टिफिकेशंस हैं, जो हम अपनी गलतियों के लिए निरंतर खोजते हैं।
मेरी बात समझें। समाज जैसा हम चाहते हैं, वैसा कभी नहीं होगा। कभी नहीं होगा। आप समाप्त हो जाएंगे और समाज जैसा है वैसा रहेगा।
अगर महावीर या बुद्ध यह सोचें कि जब समाज अच्छा हो जाएगा, तब हम शांत
हो जाएंगे, तो वे कभी शांत नहीं होते। इस जगत में समाज के तल पर ऐसी स्थिति कभी नहीं आएगी कि सारे लोग इतने शांत हों कि आपको क्रोध का मौका न दें। और मेरा मानना है कि अगर ऐसी स्थिति कभी आ जाए तो वह बिल्कुल डेड लोगों की होगी, मुर्दा लोगों की, कि वे ऐसा कुछ भी न करें कि आपमें क्रोध पैदा हो। यह तो असंभव है।
दुनिया में यह तो असंभव है कि बाहर की कोई भी स्थितियां, क्योंकि मैंने आपको कहा कि आप तो कलम में स्याही न चले तो क्रोधित हो जाते हैं। आपका तो रास्ते में चलते में चप्पल टूट जाए तो क्रोधित हो जाते हैं। तो यह तो असंभव है कि चप्पलों को राजी किया जाए कि वे कभी रास्ते में चलते में न टूटें। यह तो असंभव है कि कलमों को समझाया जाए कि तुम कभी जब कोई खत लिखता हो तो देख लेना कि कोई मतलब का काम कर रहा है तो इस वक्त स्याही बंद न हो। यह तो बड़ा असंभव है। आदमियों को भी समझा-बुझा कर अगर राजी कर लिया, तो भी तो असंभव है, क्योंकि यह तो बहुत और दुनिया है। तो इसमें कुछ तय करना कठिन है कि यहां गर्मी पड़ रही है और पंखा बंद हो जाए, तब इसको समझाना बड़ा कठिन है कि अब इस वक्त गर्मी पड़ती है, और हम क्रुद्ध हो जाएंगे और हम गुस्से में आ जाएंगे।
दुनिया कभी ऐसी नहीं होगी कि उसमें क्रोध को पैदा करने के कारण विलीन
हो जाएं। लेकिन व्यक्ति ऐसा हो सकता है कि उसमें क्रोध के कारणों के रहते हुए, क्रोध की शक्ति विलीन हो जाए। यानी दो ही तो बातें हैं कि क्रोध के कारण विलीन हो जाएं तो हम अक्रोधी हो जाएंगे। या फिर हममें क्रोध करने की क्षमता विलीन हो जाए तो हम अक्रोधी हो जाएंगे।
एक रास्ता है कि बाहर सब ठीक हो जाए तो हम क्रोध नहीं करेंगे। यह असंभव है। यह कभी नहीं होगा। यह हो ही नहीं सकता।
अभी मैं एक सफर में था। मेरे कंपार्टमेंट में एक सज्जन थे। उनसे मेरी कुछ क्रोध के बाबत बात होती थी, तो जो आपने पूछा उन्होंने भी कहा कि भई, बाहर ऐसी चीजें हैं कि हम क्या कर सकते हैं। बाहर लोग सब गड़बड़ कर देते हैं। मैंने उनसे कहा कि अगर लोग ही होते दुनिया में, तो भी ठीक था, समझाते- बुझाते। अब वह भी आसान काम नहीं था, तीन अरब लोग हैं जमीन पर। आप एक को समझाने की बात करता हूं तो वह भी तो वह कहता है कि बाकी एक को छोड़ कर तीन अरब जो लोग हैं, वे गड़बड़ कर रहे हैं। वह दूसरे को समझाऊंगा, वह कहेगा कि बाकी लोग गड़बड़ कर रहे हैं, जब तक वे ठीक न हो जाएं, तो हम कैसे ठीक हो सकते हैं। अगर ये सारे लोग यह कहते हैं कि बाकी लोग ठीक न हो जाएं, तो हम कैसे ठीक हो सकते हैं। तब तो ठीक होने का कोई उपाय नहीं। क्योंकि एक ही क्षण में सारे लोग ठीक हो जाएं, यह असंभव। फिर चीजें हैं दुनिया में।
फिर क्या हुआ कि वह ट्रेन चली और एक स्टेशन के बीच आकर खड़ी हो गई। और कोई दो घंटे खड़ी रही। उनके क्रोध का तो ठिकाना नहीं रहा। वे डिब्बे के बाहर झांकें, अंदर आएं कि मेरा तो मुकदमा गड़बड़ हुआ जा रहा है। मुझे तो यह है, मुझे तो वह है। और मुझे तो इतने वक्त पहुंचना ही चाहिए था। फिर तो वे इतने उत्तप्त होने लगे, तो मैंने उनसे कहा कि आप देखिए, अब यह ट्रेन खड़ी हो गई, अब यह बड़ा कठिन है कि यह ट्रेन बिल्कुल खड़ी हो ही नहीं कभी जब कोई आदमी मुकदमे के लिए जा रहा हो। बड़ा कठिन है। इस ट्रेन को कोई पता नहीं। और आपके मुकदमे से इसे कोई मतलब नहीं। इसको पता भी नहीं, इसको आपके मुकदमे से मतलब भी नहीं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां। तो अब यह जो आदमी है, यह कहता है कि अगर ट्रेन कभी खड़ी न हो तो हम क्रोधित नहीं होंगे। तो यह तो असंभव है। यह संभव नहीं है।
सवाल दुनिया का बिल्कुल नहीं है। सवाल निपट व्यक्ति का है। और हम दुनिया के नाम उठा कर अपनी कमजोरियां छिपाते हैं। हम यह कमजोरी छिपा लेते हैं, अपने को समझा लेते हैं कि हमारा थोड़े ही कसूर है। जो आदमी अपनी गलतियों को जस्टीफिकेशन खोज लेगा, वह आदमी कभी परिवर्तित नहीं होगा। क्योंकि जस्टीफिकेशन तो बहुत हैं।
अपनी गलतियों के लिए कोई एक्सप्लेनेशन, कोई जस्टीफिकेशन, कोई तर्कबद्ध रेशनेलाइजेशन मत खोजिए। अपनी गलती को अपनी गलती समझिए, उसे दूसरे पर मत टालिए। क्योंकि टालने से वह कभी आपका पीछा नहीं छोड़ेगी। टालना तरकीब है, जिसके माध्यम से हम अपने को मुक्त कर लेते हैं कि हमारी है ही नहीं, हम क्या कर सकते हैं इसमें।
हम सारे लोग और हमारी सारी बुराइयां इसीलिए जीती चली जाती हैं कि हम कभी उनको अपना ही नहीं मानते। जिस बुराई को हम अपना न मानेंगे, उस बुराई से हम मुक्त नहीं हो सकते हैं। बुराई से मुक्त होने का पहला कदम यह है कि पूरी तरह उसको अपने लिए जिम्मेवार समझो कि मैं उसका जिम्मेवार हूं। पहले तो, पहले यह पूरा अनुभव करो कि पूरी रिस्पांसिबिलिटी मेरी है। पहली तो बात यह है और फिर दूसरी बात यह कि उस बुराई को गाली मत दो, उसका निरीक्षण करो। और तब धीरे-धीरे अनुभव होगा, जिम्मेवारी ले लेने से कि मेरी बुराई, बुराई को दूर करने के प्रयत्न शुरू होते हैं।
इस दुनिया की सबसे बड़ी कठिनाई यही है कि हर आदमी अपनी सारी बुराइयों
के लिए किसी और को जिम्मेवार समझता है। हर आदमी। हर आदमी अपनी बुराई के लिए किसी और को जिम्मेवार समझता है। कोई आदमी अपनी बुराई के लिए अपने को जिम्मेवार नहीं समझता। जो जिम्मेवार नहीं समझेगा, वह उसे दूर करने के उपाय क्यों करने लगा। सवाल ही नहीं उठता। वह जिम्मेवार ही नहीं उसके लिए। तो आत्मिक साधना का पहला चरण तो यह है कि समस्त बुराइयां जो तुममें हैं, उसके लिए तुम जिम्मेवार हो, इसे अंगीकार करो; दूसरे पर बोझ मत टालो, दूसरे का बहाना मत लो। इसके लिए बड़ा साहस चाहिए। क्योंकि हम अपनी आंखों में अपनी एक तस्वीर बनाए हुए हैं, जो बड़ी खूबसूरत होती है। उसमें यह मानना कि हम पर भी दाग और धब्बे हैं, बड़ा कठिन होता है। हम सारे लोग अपनी-अपनी एक तस्वीर बनाए हुए हैं, अपने मन में। एक-एक इमेजिनेशन, एक-एक चित्र हमारा दिल में है, जो हम अपना बनाए हुए हैं कि हम ऐसे आदमी हैं। और उसमें यह मानना कि हम क्रोध करते हैं, उस चित्र को खंडित करता है। वह जो कल्पना है, उसको तोड़ता है। बड़ा बुरा लगता है।
जिस आदमी को आत्मिक जीवन में जाना है, उसे अपनी तस्वीर बिल्कुल खंडित
कर लेनी होगी। उसे हिम्मत करनी होगी कि मैं जैसा हूं, वैसा ही अपने को जानूं। वैसा नहीं जैसा कि मैं होना चाहता हूं या दिखना चाहता हूं।
हम अपने भीतर कोई तीन तरह के आदमियों को लिए हुए हैं। एक तो जैसे हम हैं, जिसका हमें पता ही नहीं पड़ता। एक जैसे हम दिखना चाहते हैं, जिसको हम रोज-रोज सम्हालते रहते हैं। और एक जैसे हम लोगों को दिखाई पड़ते हैं। तो कोई तीन पर्तें हमारे भीतर हैं। एक तो वह जैसा हम लोगों को दिखाई पड़ते हैं, उसकी भी हम फिकर रखते हैं कि लोगों को हम कैसे दिखाई पड़ते हैं। हम उसकी बहुत फिकर करते हैं। पूछते रहते हैं, पता लगाते रहते हैं कि लोगों को हम कैसे दिखाई पड़ते हैं, वे हमको ठीक समझते हैं कि नहीं। कौन आदमी हमें देख कर हंसता है, कौन आदमी हमें देख कर क्या करता है, वह हम सब पता रखते हैं, उस सबका हिसाब रखते हैं। उसका हम हिसाब रखते हैं और एक तस्वीर बनाए रखते हैं कि लोग हमें क्या समझते हैं। और एक हम अपनी तस्वीर बनाए रखते हैं और भीतरी हृदय में, जिसको हम चाहते हैं कि लोग हमें ऐसा समझें।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, आप यह कहती हैं कि कुछ लोग हैं, जो अपनी भूलों को, अपने पापों को जाकर कनफेश करेंगे और सोचते हैं कि उनके पाप जो हैं, वे क्षमा कर दिए गए। यह जो बात है, अगर सच में उन्होंने कनफेश किया है, और उनके पाप क्षमा
हो गए, तो वे ही पाप उनसे फिर दुबारा नहीं होने चाहिए। लेकिन जब दूसरे दिन सुबह चर्च के बाहर लौट कर वे फिर वैसे ही पाप करते हुए दिखाई पड़ते हैं, तो उन्होंने वह कनफेशन को भी एक तरकीब बना लिया। वह एक मतलब हो गया। वह पुरानी तरकीब यहां भारत में भी थी इस तरह की कि लोग सोचते गंगा-स्नान कर आए तो पाप से मुक्त हो गए। फिर गंगा से लौट आए फिर वही पाप करेंगे। फिर यह भी सुविधा हो गई कि जब मन होगा, गंगा में जाएंगे स्नान कर लेंगे।
रामकृष्ण परमहंस से किसी ने पूछा कि लोग कहते हैं कि गंगा में जाने से पाप मिट जाते हैं, आप क्या कहते हैं? वे बड़े सीधे-सादे आदमी थे, वे यह भी नहीं कहना चाहते थे कि गंगा में जाने से पाप नहीं मिटते। उन्होंने कहा, पाप तो एकदम मिट जाते हैं, लेकिन गंगा के किनारे जो दरख्त होते हैं, आप पानी में डूबे, वे लोग दरख्त पर बैठ जाते हैं, पाप उठ कर दरख्त पर बैठ जाते हैं। आप नहा कर वापस निकले, वे फिर सवार हो जाते हैं। वह गंगा दूर कर सकती है, गंगा दूर कर सकती है, लेकिन गंगा में कब तक डूबे रहिएगा, वह तो निकलना ही पड़ेगा। वे फिर वापस सवार हो जाएंगे। इसलिए उसमें कोई सार नहीं गंगा में जाने से।
टाल्सटाय ने, लीयो टाल्सटाय ने एक घटना लिखी है कि मैं एक दिन सुबह-सुबह चर्च गया। एक बहुत बड़ा करोड़पति, एक बड़ा प्रख्यात आदमी वहां कनफेश कर रहा था, सुबह पांच या चार बजे एकांत में जाकर अपने पापों के बाबत। अंधेरा था, मैं भी एक कोने में खड़े होकर सुनता रहा। मैं बड़ा हैरान हुआ। मैं उसको बड़ा अच्छा आदमी समझता था। और वह कह रहा था कि मैं पापी हूं और मैं दुराचारी हूं और मैं यह हूं और वह हूं। और वह बड़ा रो रहा था और कह रहा था, हे प्रभु! मुझे क्षमा करो मेरे पापों के लिए। टाल्सटाय ने लिखा कि मैं तो उसे बड़ा अच्छा आदमी समझता था। उस दिन पता चला कि अरे, यह तो दुष्ट बड़ा दुराचारी है। वह आदमी निकला, उसको पता नहीं था कि यहां और भी कोई खड़ा है। उसने मुझे देखा, वह बड़ा घबड़ा गया। मैं भी उसके पीछे-पीछे चला। जब हम चौगड्डे पर पहुंचे, तो मैंने कहा कि भाई सुनते हो, एक आदमी से, ये जो सज्जन हैं, जिनको अपन अब तक ठीक समझते रहे, यह पक्का पापी है, अभी मैं इसका सुन कर आया सब कनफेशन। तो उस आदमी ने गुस्से से टाल्सटाय को देखा और कहा कि देखो, वह बात मंदिर की थी और मुझे पता नहीं कि तुम मौजूद थे। वह बाजार में कहने की नहीं है। और अगर तुमने किसी से कहा तो अपमान का मुकदमा चलवाऊंगा। ये मुझे पता नहीं कि तुम वहां थे। और फिर तुमसे मैंने कही भी नहीं, वह तो भगवान और मेरे बीच की बात है।
ये जो हमारी धारणाएं हैं, इनमें कोई अर्थ नहीं हैं। कनफेशन का जो मूलतः अर्थ है, वह बहुत दूसरा है। उसका अर्थ यही है, जो मैंने कहा। अगर व्यक्ति अपने परिपूर्ण पाप को, अपनी परिपूर्ण बुराई का निरीक्षण करे, उसे दिख जाए सब, तो वह प्रभु के सामने निवेदन कर देगा। निवेदन यह कि ये-ये मुझमें हैं। ये-ये मुझमें, पूरा ऑब्जर्वेशन करे, तो वह निवेदन कर देगा कि मेरे, जो प्रभु को मानते उस भांति, वे निवेदन कर देंगे कि हमारे भीतर है। वह निरीक्षण से निवेदन आएगा। निरीक्षण में ही मौत हो जाएगी। निवेदन तो औपचारिक है। पाप की मृत्यु तो निरीक्षण में ही हो जाएगी। निवेदन औपचारिक है कि यह मुझमें दिखाई पड़ा, यह मैं प्रभु से कह दूं। वह आदमी मुक्त हो जाएगा। वह निरीक्षण से मुक्त हो रहा है। क्योंकि बिना निरीक्षण के तो निवेदन नहीं कर सकता।
तो दुनिया में जो कौमें ईश्वर को मानती हैं, वे अपने पाप को जाकर उनके सामने निवेदन कर देंगी। लेकिन निवेदन के पहले निरीक्षण चाहिए। जब तो वे कहेंगे कि मुझमें क्या पाप है।
जो कौमें ईश्वर को नहीं मानतीं, वे निरीक्षण से ही पाप से बाहर हो जाएंगी। वह निवेदन से पाप से बाहर नहीं हो रहे, वे तो निरीक्षण से ही पाप के बाहर हुए जा रहे हैं।

पर अकेला कनफेशन, जैसा वह हो गया है एक फार्मेलिटी, कि लोग सोचते हैं
कि कह दिया भगवान से, मामला खत्म हो गया। इससे कोई हल नहीं। क्योंकि कल दूसरे दिन वही काम तो फिर कर रहा है वह आदमी। उसको कहीं पीड़ा ही नहीं है इस बात की कि मैंने जो किया वह बुरा था। वह तो डर के वश कि यह रास्ता अच्छा है, आसान है। यह तो बहुत ही आसान रास्ता है कि आप जाकर कनफेश कर दें, मामला खत्म हुआ। फिर करें, फिर कनफेश कर दें। यह तो बहुत सस्ता हो गया।
मैं ऐसा नहीं मानता। इतना सस्ता जीवन नहीं है कि गंगा में नहाने से या चर्च में जाकर कनफेश करने से आप बाहर हो सकते हैं। कोई बाहर, इतने भर से कोई बाहर नहीं हो सकता। इतने भर से कोई बाहर नहीं हो सकता। उसके लिए तो किसी और आंतरिक साधना में लगना होगा। किसी और गहरे निरीक्षण में लगना होगा। एक इनर ऑब्जर्वेशन में प्रविष्ट होना होगा। और तब उसके माध्यम से अगर कनफेशन निकले तो ठीक है। अगर किसी की वैसी निष्ठा हो तो वह जाकर भगवान को निवेदन कर दे, बाहर हो जाएगा। लेकिन कनफेशन अकेला बाहर नहीं कर सकता। अगर कनफेशन अलग करता हो, बाहर करता हो, तब बहुत आसान बात है। जिंदगी भर लोग यही सोचते हैं, और पापियों के लिए बड़ी राहत हो जाती है। उनको बड़ी राहत हो जाती है कि कितने ही पाप करो, जाकर भगवान से कह देंगे, सब बाहर हो जाएंगे। नहीं हो सकते हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

यह जो मैं कह रहा था, समझ में आया? जो मैं चर्चा कर रहा हूं, यह समझ में आई? नहीं-नहीं, मैं इसलिए यह कह रहा हूं कि कई दफा मुझे ऐसा लगता है कि... जैसे कि मैं क्रोध के बाबत चर्चा कर रहा हूं, अगर वह समझ में आ जाए तो उसका कोई परिणाम होगा। नहीं तो क्रोध की बात आपने एक तरफ रखी, अब आप पूछते हैं कि पुनर्जन्म होते हैं या नहीं। या यह होता है या नहीं। मैं पुनर्जन्म समझा भी नहीं पाऊंगा और आप शायद पूछेंगे कि यह आत्मा क्या है। तो होता क्या है, मेरा मानना यह है, किसी एक भी प्रश्न की पूरी आंतरिक गहराई में उतर जाएं, आपके सारे प्रश्न हल हो जाएंगे। एक भी प्रश्न की पूरी गहराई में उतर जाएं, सारे प्रश्न हल हो जाएंगे। और एक प्रश्न को छुएं और दूसरे पर कूद जाएं, कोई प्रश्न हल नहीं होगा, कोई प्रश्न हल नहीं होगा।
मेरी बात समझे? मेरी बात समझे न आप? कोई भी एक प्रश्न को परिपूर्णरूपेण, उसकी पूरी जड़ तक उतर जाएं, तो शायद आप हर प्रश्न की जड़ में उतर जाएंगे। क्योंकि प्रश्न शायद एक ही है आदमी का, उसके रूप भर अनेक हैं। वह बातें करता है यह और वह, यह और वह। प्रश्न शायद एक ही है। कभी इस पर सोचिए।
यह जो क्रोध के बाबत इतनी उत्सुकता से मैंने बात की, उसका कुल कारण इतना ही है कि वह बात हर चीज के बाबत वैसी की वैसी है। उतनी की उतनी लागू है। क्योंकि हमारे सारे वेग चाहे चिंता का हो, चाहे क्रोध का हो, चाहे किसी और कामना का हो, किसी और इच्छा का हो, एक से हैं। और जो आदमी क्रोध को हल करने में सफल हो जाएगा, वह एक पूरा का पूरा टेक्नीक जान गया, जो किसी भी दूसरे वेग पर प्रयोग करने से वहां भी सफल हो जाएगा। और तब जो निर्वेग स्थिति होगी चित्त की, उसमें आप जानिएगा, उसमें आपको अनुभव होगा इस बात का कि आप आज ही नहीं हो जगत में। उस शांत स्थिति में आपको अनुभव होगा, आपका पीछे भी होना है। उस शांत स्थिति में आपको अनुभव होगा कि आप बड़े अनंत जीवन के मालिक हो। उसमें आपको अनुभव होगा, उस निर्वेग, निर्द्वंद्व चित्त की स्थिति में, चैतन्य की स्थिति में, आपको अनुभव होगा कि मैं शरीर नहीं हूं। और जिसको मैंने सेल्फ-ऑब्जर्वेशन कहा, आत्म-निरीक्षण कहा, अगर उसका प्रयोग करें, तो आप दंग रह जाएंगे कि आपके भीतर आपके पिछले जन्मों की स्मृतियां भी मौजूद हैं, वे मेमोरी.ज भी मौजूद हैं। अगर आप बहुत गहराई से निरीक्षण करने में समर्थ हो जाएं, तो आप अपने पिछले जन्मों की सारी स्मृतियों को वापस देख ले सकते हैं। लेकिन उसके पहले मैं कहूं कि पुनर्जन्म होता है, कोई अर्थ नहीं रखता।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

उससे क्या मतलब है? उससे क्या हल होगा? अगर तारीख का भी पता चल जाए, तारीख का भी पता चल जाए, समय का भी पता चल जाए, वजह का भी पता चल जाए, तो उससे आपको क्या होगा? यानी उससे आपको क्या, मैं यह पूछता हूं, उससे क्या होगा? उससे तो कुछ भी नहीं होगा। आप कहेंगे ठीक है। यानी सवाल जो है, मेरा जोर जो है, मैं कोई विचारक नहीं हूं, जरा भी। मेरा इससे भी कोई मतलब नहीं है कि यह फलां सिद्धांत कैसा, ढिकां सिद्धांत कैसा। मुझे इससे कोई मतलब नहीं है। अभी मैं एक गांव में ठहरा था। गांव के दो वृद्धजन मेरे पास आए और उन्होंने कहा कि बीस साल से एक झंझट और झगड़ा हमारे बीच है। हम दोनों मित्र हैं। एक जैन थे, एक ब्राह्मण थे। एक झंझट हमेशा है, जो हमेशा बकवास में आ जाती है, विवाद हो जाता है। तो आपकी बातें कुछ अच्छी लगीं, तो हम पूछने आए हैं कि आप शायद हमारा हल कर दें। इस बुढ़ापे में हल हो जाए तो अच्छा। हम दोनों पुराने मित्र हैं, लेकिन वह एक बात। मैंने पूछा कि वह कौन सी बात है जो बीस साल से आपको परेशान किए हुए है? तो उन्होंने कहा कि यह सवाल है कि जगत को भगवान ने बनाया या कि नहीं बनाया? ये ब्राह्मण जो हैं, ये कहते हैं कि बनाया भगवान ने और हम कहते हैं कि ये भगवान ने बनाया नहीं, यह तो अनादि है। तो इस मुद्दे पर हमारे झगड़े हैं और वे कभी खत्म ही नहीं होते, बस यूं बकवास शुरू हो जाती है।
तो मैंने उनसे पूछा, अगर यह तय भी कर दूं बिल्कुल या कोई भी तय कर दे बिल्कुल कि भगवान ने बनाया, तो आप क्या करिएगा? या यह तय हो जाए कि भगवान ने नहीं बनाया, तो आप क्या करिएगा? वे बोलेः करना क्या है, बस तय हो जाएगा। थोड़ी देर हम यह सोचें कि जिन-जिन प्रश्नों का हमारे जीवन के ट्रांसफार्मेशन से कोई वास्ता न हो, वे, वे प्रश्न, जिसको हम कहें, वह कल बिजुभाई कहते थे, प्रास्टिट्यूशन ऑफ माइंड, वह और उसमें कोई मतलब नहीं है। वह हम दिमाग के साथ व्यर्थ नासमझी का काम कर रहे हैं। कोई फायदा नहीं, कोई मतलब नहीं।
मैं कोई विचारक नहीं हूं। मेरी दृष्टि इससे बिल्कुल संबंधित नहीं कि क्या है, क्या नहीं है। मेरी दृष्टि कुल इस बात से संबंधित है कि आप जो हो इस क्षण, वह क्षण आपका दुख से भरा है। अगर वह दुख से नहीं भरा है, तब तो कोई दिक्कत ही नहीं है। फिर आपको कोई प्रश्न ही नहीं है।
बुद्ध के जीवन में एक घटना घटी। एक व्यक्ति ने, मौलुंकपुत्त नाम के एक व्यक्ति ने जाकर उनसे ग्यारह प्रश्न पूछे। उन प्रश्नों में सारे प्रश्न आ जाते हैं। यह प्रश्न भी आ जाता उसमें कि आत्मा जगत में क्यों आई। यह जगत किसने बनाया। ये सारे प्रश्न आ जाते हैं। करीब-करीब वह ग्यारह प्रश्नों के आस-पास सारी फिलासफी घूमती है, सारे जगत की।
बुद्ध ने मौलुंकपुत्त से कहा कि तुम उत्तर चाहते हो? सच में चाहते हो?
वह बोलाः उत्तर चाहता हूं, तब तो मैं पूछता हूं। मैं तो अनेक वर्षों
से पूछता हूं।
तो बुद्ध ने कहाः जिन-जिन से तुमने पूछा, उन्होंने उत्तर दिए थे?
उसने कहाः सबने उत्तर दिए थे।
तो बुद्ध ने कहाः तुम्हें उत्तर फिर मिला क्यों नहीं? बुद्ध ने पूछा
कि जब अनेक से पूछ चूके, उन सबने उत्तर दिए, तुम्हें उत्तर क्यों नहीं मिला? क्या वे उत्तर गलत थे? अगर वे उत्तर गलत थे, तो तुम्हें क्या सही उत्तर का पता है? तभी तुम उनको गलत समझ सकते हो। बुद्ध ने बड़ी अदभुत बातें उससे कहीं। उससे कहा कि आप मुझे यह कहो, इतने लोगों से पूछा, उत्तर उन्होंने दे दिए, तो वे उत्तर तुम्हें तृप्त क्यों नहीं किए? क्या वे उत्तर गलत थे? अगर वे गलत थे तो अर्थ हुआ कि तुम्हें सही का पहले से पता है। अगर सही का पहले से पता है तो पूछते क्यों हो? अगर सही का पता नहीं तो फिर उनको तुमने गलत क्यों माना?
तो बुद्ध ने कहाः मैं भी तुम्हें उत्तर दे दूंगा, फिर भी तुम किसी से पूछोगे। आखिर मैं तुम्हें उत्तर दे दूं, फिर तुम किसी से पूछोगे। तो बुद्ध

ने कहाः मैं तुम्हें उत्तर नहीं देता। मैं तुम्हें उत्तर नहीं देता, उत्तर जानने की विधि देता हूं।
बुद्ध ने एक अदभुत बात कही। मैं तुम्हें उत्तर नहीं देता कि आत्मा है क्या और कब आई और नहीं आई और पीछे जन्म था कि नहीं और आगे जन्म होगा कि नहीं और आगे बैकुंठ में जाएंगे कि कहां जाएंगे, यह मैं कुछ नहीं देता उत्तर। मैं तुम्हें उत्तर नहीं देता। क्योंकि उत्तर जिन्होंने दिए, तुमने उनके उत्तरों के साथ जो व्यवहार किया, वही तुम मेरे उत्तर के साथ भी करोगे। तो मैं तुम्हें उत्तर नहीं देता। तुम एक छह महीने रुक जाओ, मैं जो करने को कहता हूं, करो। और मुझसे मत पूछना बीच-बीच में। छह महीने के बाद मैं ही तुमसे पूछूंगा कि अब पूछना हो तो पूछ लो।
तो बुद्ध का एक शिष्य था आनंद, उसने मौलुंकपुत्त से कहाः इनकी बात में
मत आना। मैं कोई दस-बारह वर्ष से इनके करीब हूं, और यह धोखा इन्होंने कई लोगों को दिया। जो भी इनसे आकर प्रश्न पूछता है, उससे ये कहते हैं कि छह महीने रुको, साल भर रुको, फिर तुम्हें उत्तर दूंगा। फिर न मालूम उन लोगों को क्या हो जाता है कि वे पूछते ही नहीं।
तो बुद्ध के पास जो संघ बैठता था, उसमें ऐसे हजारों भिक्षु थे जिन्होंने कभी नहीं पूछा, जो सामने ही बैठे रहते थे। एक दफा और प्रसेनजित ने बुद्ध से पूछा कि ये सामने के लोग क्या हैं? बिल्कुल समझ नहीं आता, ये हमेशा ही बैठे रहते हैं। न कभी कुछ पूछते, न कभी सिर हिलाते, न कुछ कहते, चुपचाप बैठे सुनते रहते हैं। ऐसा मालूम होता है कि पता नहीं ये सुनते भी कि नहीं सुनते। न कुछ पूछते, न कोई विवाद करते, न कभी कोई उत्तर, न कोई, बस बैठे रहते, सुनते हैं और चले जाते हैं। बुद्ध ने कहाः ये बड़े पहुंचे हुए लोग हैं, ये बामुश्किल आगे आ पाते हैं। ये पीछे, जब तक पूछते रहते हैं, पीछे ही रहते हैं। फिर जैसे-जैसे इनका पूछना खत्म होता चला जाता है, ये आगे आ पाते हैं। ये बड़े छंटे हुए लोग हैं। ये इसलिए नहीं पूछते कि इनका प्रश्न ही नहीं है कोई। प्रश्न गिर गए।
तो वह मौलुंकपुत्त से आनंद ने कहा कि तुम अगर रुके छह महीने, आशा कम है
कि पूछो। फिर वह छह महीने रुका। बुद्ध ने उसे जो करने को कहा, उसने किया। छह महीने के बाद बुद्ध ने भरे संघ में, भिक्षुओं के बीच में कहा कि मौलुंकपुत्त, तुम प्रश्न लेकर आए थे, पूछ लो। वह आदमी खड़ा हो गया और बोला, मेरे कोई प्रश्न नहीं हैं। छह महीने में वे तो हवा हो गए। बुद्ध ने कहाः कोई उत्तर मुझसे पूछना हो तो पूछ लो। उसने कहाः कोई उत्तर आपसे नहीं पूछना, क्योंकि यह तय हो गया, उत्तर अपना आ गया। उत्तर अपना आ गया।
तो जीवन-सत्य के संबंध में उत्तर किसी से नहीं मिलेंगे। उत्तर तो भीतर मौजूद है, उस भीतर तक पहुंचने की विधि मिल सकती है।
मैं नहीं कहता कि क्रोध क्या है। मैं नहीं कहता, अक्रोध क्या है। मैं इतना ही कहता हूं कि जो भी हो क्रोध, उसका निरीक्षण करो। निरीक्षण विधि है। उससे क्रोध का पता चलेगा। उसके ही माध्यम से अक्रोध का पता चलेगा। निरीक्षण विधि है। अपने भीतर विचार का निरीक्षण करो, उससे विचार का पता चलेगा। उसी से धीरे-धीरे निर्विचार का पता चलेगा। निरीक्षण विधि है। उसका निरीक्षण करो, धीरे-धीरे शरीर का पता चलेगा।
अभी तो शरीर का भी आपको पता क्या है। अभी आपने शरीर को भी ऐसे देखा है जैसे अपने बाहर से देख रहे हों। अभी आप शरीर के इस ऊपरी तल से ही परिचित हैं, यह जो ऊपर से दिखाई पड़ता है। अभी आपने शरीर को ऐसा थोड़े ही देखा है जैसे शरीर के भीतर बैठ कर शरीर को देख रहे हों। अभी शरीर को ऐसा देखा जैसे बाहर से खड़े होकर देख रहे हों। अभी अपने शरीर से भी आपका जो परिचय है, वह ऐसा जैसे एक आदमी मकान के बाहर खड़े होकर मकान को देख रहा हो वह। और एक आदमी मकान के भीतर बैठ कर मकान को देख रहा हो। अभी आपने भीतर बैठ कर शरीर को भी नहीं देखा। जरा निरीक्षण में गहरे उतरेंगे तो भीतर बैठ कर शरीर को देखेंगे। तब आपको पता चलेगा यह ज्योति का पिंड भीतर और यह बाहर खोल घिरी हुई है। यह साफ दिखेगा।

अभी मन को भी नहीं देखा, और भीतर उतरेंगे तब आपको मन दिखाई पड़ेगा कि ज्योति भीतर और चारों तरफ विचार की मक्खियां घूम रही हैं। उसके पार शरीर की चमड़े की हड्डी की खोल चढ़ी हुई है।
वह निरीक्षण आपको धीरे-धीरे भीतर ले जाएगा, आंतरिक में ले जाएगा। और
तब केवल शुद्ध उसका अनुभव होगा, जो निरीक्षण करता रहा, उसका अनुभव होगा और उसके अनुभव से सारे प्रश्न, सारे प्रश्न हल हो जाएंगे।
तो मैं आपको प्रश्न के उत्तर देता हूं तो मुझे हमेशा यह खयाल बना रहता
है कि कहीं कोई बौद्धिक ही बात न रह जाए कि ऐसा लगे कि मैं कुछ अच्छे से उत्तर दे रहा हूं। उनका कोई मतलब नहीं है। मेरे अच्छे-बुरे उत्तर का कोई मतलब नहीं है। मेरी सारी चेष्टा इस बात की है, इसकी नहीं कि आपका थोड़ा सा एकेडेमिक ज्ञान बढ़ जाए, कि आपको कुछ और अच्छी-अच्छी बातें पता चल जाएं। इससे मुझे क्या मतलब है। मेरी पूरी चेष्टा यह है कि आपको उस बात का एक दिशा खुल जाए, जहां आप शांत हो सकें और सत्य को जान सकें।
तो मैं नहीं कहता कुछ कि कब आत्मा आई या नहीं आई, मैं कुछ नहीं कहता। इतना मैं आपसे कहता हूं कि अभी आपमें कुछ है जो आत्मा है। और अभी आपको अपने तक उतरने का रास्ता है। उसको व्यर्थ प्रश्नों में खोकर समय और जीवन को व्यय न करें।
एक पिछली बार बात किया, एक भिक्षु ने जाकर एक संन्यासी के पास, वह चीन में घटना घटी, वह एक संन्यासी के पास गया। वहां रिवाज था कि संन्यासी के तीन चक्कर लगाओ, उसको प्रणाम करो, फिर प्रश्न पूछो। वह सीधा जाकर पहुंचा, उसने उसके हाथ पकड़े और उसने उससे प्रश्न पूछा। वह संन्यासी बोला, तुमको इतना भी पता नहीं है, रिवाज का भी पता नहीं कि पहले विधिवत दक्षिणा करो, फिर बैठो, नमस्कार करो, फिर जगह पर बैठो, फिर पूछो। तुम ऐसा हाथ पकड़ कर पूछते हो जैसे कोई झगड़ा हो गया मेरा तुमसे। उसने तो जाकर हिला दिया और पूछा।
और वह आदमी बोला, मैं तीन नहीं, मैं तीन हजार चक्कर लगा लूं, लेकिन जीवन का भरोसा नहीं है। अगर मैं तीन ही चक्कर लगाने में समाप्त हो जाऊं तो जिम्मा तुम्हारा। उसने कहाः मैं अगर तीन ही चक्कर लगाने में गिर जाऊं और मर जाऊं, किसी क्षण तो मरूंगा ही, अगर तीन ही चक्कर में गिर जाऊं और मर जाऊं, और नमस्कार करने में ही मेरा प्राण निकल जाए, तो फिर जिम्मा किसका? फुरसत मुझे नहीं है। और उसने एक बड़ी अजीब बात कही। तो उसने पूछा, तुम पूछना क्या चाहते हो? उसने कहा कि यह भी मैं तय नहीं कर पाता कि क्या पूछूं। मैं तुमसे यही पूछने आया हूं कि क्या पूछना चाहिए?
यह बड़ी अजीब, मुझे बड़ी प्रीतिकर लगी। उसने कहाः मुझे यह भी पक्का नहीं गलत-सलत पूछूंगा क्योंकि मैं तो गलत आदमी हूं, मुझे कुछ हिसाब-किताब है नहीं। मैं इतना ही पूछने आया हूं, क्या पूछना चाहिए, यह मुझे बता दो। बड़ा रेयर, उसने पूछाः क्या पूछना चाहिए यह मुझे बता दो। और फुर्सत मुझे है नहीं, नहीं तो मैं तीन हजार चक्कर लगा लूं, मुझे कोई दिक्कत नहीं है।
यह जो आदमी है, ये प्रश्न नहीं हैं इसके पास, प्यास है। और हमारे पास अक्सर प्रश्न हैं, प्यास नहीं है। प्यास को घनीभूत करो और प्रश्नों के विस्तार में मत जाओ, प्यास की गहराई में जाओ। प्रश्न गहरे नहीं होते, प्रश्न विस्तृत होते हैं। प्यास विस्तृत नहीं होती, प्यास गहरी होती है। प्रश्नों का एक्टेंशन होता है, प्यास इंटेंसिव होती है। एक प्रश्न, दो प्रश्न, पचास प्रश्न और लाख प्रश्न हो सकते हैं। प्यास लाख नहीं होती, प्यास एक ही होती है। और गहरी हो जाएगी, और गहरी हो जाएगी, और गहरी हो जाएगी।
मेरी बात समझे न? प्रश्न लंबे होते चले जाएंगे, बहुत हो सकते हैं। प्यास एक ही होती है, गहरी होती चली जाती है। एक सीमा पर इतनी प्यास घनी हो जाती है कि तब तुम प्रश्न नहीं चाहते, तब तुम कुछ जानना नहीं चाहते। यह कोई चीज आपको तृप्त नहीं कर सकती कि कोई बता दे कि ऐसा है, वैसा है।
तो मैंने यह अनुभव किया, और पूरे मुल्क में अनेक लोगों से मिल कर मुझे
यह अनुभव आया कि सारे प्रश्न करीब-करीब ऐसे हैं, जैसे स्कूलों में होते हैं; जैसे परीक्षा के प्रश्न होते हैं, एकेडेमिक; जिनका जीवन से कोई संबंध

नहीं है। फिजूल, जिनसे कोई मतलब नहीं है। उनका कोई मूल्य नहीं है। मैं उनके उत्तर में उत्सुक नहीं हूं। हों पिछले जन्म, न हों, इससे मुझे कोई मतलब नहीं है।
मतलब मुझे इससे है कि अभी तुम्हें एक जन्म है, एक जीवन है हाथ में, अभी
एक क्षमता है, इस क्षमता के बीच तुम्हें बोध है कि दुख भरा है, अशांति है, पीड़ा है, परेशानी है, इसको दूर करने के उपाय की फिकर करो। उसको ही पूछो, जगह-जगह से, तरफ-तरफ से उसको ही खोदो। उसी पर सारे का सारा चैतन्य, सारा केंद्रीकरण, उसी पर लगा दो। और अपने भीतर जो सबसे बड़ा, जो तुम्हें कारण दिखाई पड़ता हो दुख का, उस पर निरीक्षण करने लग जाओ।
किसी को क्रोध मालूम होगा, किसी को लोभ मालूम होगा। वह जो खास केरेक्रिस्टीक हो तुम्हारे दुख की, जिसके केंद्र पर तुम्हारी सारी पीड़ा घूम रही है, जिसके केंद्र की वजह से तुम अशांत हो, उस पर निरीक्षण को लगा दो। उस पर पूरे केंद्रित होकर काम करने में लग जाओ। तो उसी काम से तुम्हें उत्तर आने शुरू होंगे। और उनके भी उत्तर आ जाएंगे, जिनका उस काम करने से सीधा संबंध नहीं मालूम होगा।
अगर उत्तर चाहने हैं, तो प्रश्नों की फिकर छोड़ो और कुछ साधना के क्रम में थोड़े से अपने को संयुक्त कर लो। और अगर उत्तर नहीं चाहने हैं, तो फिर बहुत ग्रंथ हैं, और बहुत उत्तर देने वाले हैं, उन सबके उत्तर इकट्ठे करो। तुम एक पंडित होकर मर जाओगे, जो बहुत से उत्तर जानता था, लेकिन जिसके पास उत्तर नहीं था; जो बहुत उधारी की बातें जानता था, लेकिन जिसके पास अपना कुछ भी नहीं था। तथाकथित ज्ञानी और पंडित से दरिद्र आदमी दूसरा नहीं होता है। ये जो सो-कॉल्ड विचारक समझे जाते हैं, इनसे ज्यादा गरीब और दयनीय आदमी दूसरा नहीं होता। इनका कोई उत्तर अपना नहीं है। ये सब सुना हुआ, सब पढ़ा हुआ दोहरा रहे हैं, दोहरा रहे हैं। यह सब मुर्दा, इसमें कोई अर्थ नहीं है, कोई अर्थ नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं, आप बाद में आए मालूम होता है कुछ।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां-हां, मैं यह कह रहा था कि हम अपने भीतर एक चित्र बनाए हुए हैं अपना ही। बड़ा भव्य, बड़ा भव्य एक चित्र बनाए हुए हैं अपने भीतर। वह भव्य चित्र हमारा, हमें जीवन भर धोखा देता है। उसकी वजह से हम अपने में कभी कोई बुराई स्वीकार नहीं कर पाते, कोई गलती नहीं देख पाते, कोई दाग नहीं देख पाते। तो अपनी कल्पना से अपने भव्य चित्र को खंडित कर दें, उसे उठा कर फेंक दें। क्या मुझे होना चाहिए, इसकी फिकर छोड़ दें; क्या मैं हूं, उसको जानें। हम सब एक आदर्श से पीड़ित हैं और इसलिए एक अभिनय में पड़े हुए हैं। हम सब एक आदर्श कल्पना अपनी बनाए हुए हैं कि मैं ऐसा आदमी हूं, मैं वैसा आदमी हूं। वही कल्पना हमको धोखा दिए रहती है। क्योंकि हम उस कल्पना के कारण, जब भी हममें कोई बुराई होती है तो हम मान ही नहीं सकते कि हममें है। हम समझते हैं कि किसी और की वजह से हममें है।
अभी मैं एक प्रोफेसर से बात करता था। वे बोले, कुछ क्रोध ऐसे होते हैं, राइच्युअस इनडिग्नेशन, वे बोले, कुछ तो क्रोध ऐसे होते हैं कि जो तो क्रोध ही नहीं हैं। यह तो बिल्कुल ही ठीक है। मैंने कहाः क्रोध तो कोई ठीक नहीं हो सकता है। इस शब्द से झूठा शब्द कोई नहीं हो सकता। कोई क्रोध ठीक नहीं हो सकता। क्योंकि कोई अंधेरा कहे कि कुछ अंधेरे ऐसे होते हैं, जो प्रकाश होते हैं; यह तो नासमझी की बात हो गई। कुछ अंधे ऐसे होते हैं, जिनको दिखता है; यह तो बिल्कुल फिजूल की बात हो गई। यह तो कोई मतलब की बात नहीं है। ये तो विरोधी शब्द हैं। राइच्युअस और इनडिग्नेशन में तो विरोध है।

प्रश्नः बेसिस होगा, वह क्रोध करने के लिए बेसिस उसका अच्छा है, सच्चा
है बेसिस।

हां, सभी क्रोध करने को आप कोई न कोई बेसिस मानते हैं जो सच्चा है। और सच्चा मानते हैं इसलिए क्योंकि क्रोध करने की तरकीब खोज रहे हैं। यानी तरकीब जो हमारे दिमाग की है, वह यह है कि क्रोध हमें करना है और अपना जो कल्पना में हमने चित्र बना रखा है भव्य और दिव्य, उसको भी कायम रखना है। तो फिर हम वह जो बेसिस है, उसको कहेंगे कि वह बिल्कुल ठीक है और हमारे योग्य ही है कि हम क्रोध करें इस वक्त। हमारी दिव्यता क्रोध करने से खंडित न हो इसलिए क्रोध करने के कारण को हम ठीक है, यह दावा करेंगे। यहीं तो भूलें छिपी हैं।
तो मेरा कहना यह है कि पहले अपने भीतर जो एक प्रतिमा बना रखी है अपनी,
वह खंडित कर दें। उसकी फिकर छोड़ें, उसको जानने लगें जो कि आप असलियत में हैं। और तब आप बड़े अजीब मालूम होंगे।
हो सकता है आप सोचते हों कि मेरा जैसा अच्छा पति नहीं है। जरा गौर से अपने भीतर देखिएगा तो आप पाएंगे आप कौन से पति हैं और काहे के अच्छे हैं। शायद आप सोचते हों कि मुझसे बेहतर कोई पिता नहीं है। जरा गौर से देखिए आपमें पिता जैसा क्या है और कहां के पागलपन में पड़े हैं। ये जो भ्रम हम कहे हुए हैं कि हम ऐसे हैं, हम वैसे हैं, इसको थोड़ा हटा कर पर्दे को उसको देखिए जो आप हैं। तो आप पाएंगे शायद वहां पिता जैसा कुछ भी नहीं है, पति जैसा वहां कुछ भी नहीं है। और घबड़ाहट इसलिए होगी कि आपका चित्र टूटना शुरू हो जाएगा।
लेकिन साधक को इससे गुजरना होगा। यही तपश्चर्या है। यही कष्ट है जो सहना पड़ेगा उसे। और अपनी सारी दिव्य प्रतिमा को खंडित करके, वह जैसा नग्न और नैतिक जैसा है, उसको जानना होगा। जब वह अपने को जानेगा, जैसा वह है, तो उसमें फर्क होने शुरू हो जाएंगे। क्योंकि जो बुराई उसमें दिखाई पड़ेगी अब, उसको सहना कठिन हो जाएगा। दिखती नहीं थी इसलिए सहता था; दिखेगी, सहना कठिन हो जाएगा। यानी किसी बुराई को देखने लगना, उससे मुक्त होने का रास्ता बन जाता है। तो अपने को हमेशा हम, उलटा काम में लगे हुए हैं, हम हमेशा यह सिद्ध करने में लगे हुए हैं कि हमारी जो आदर्श कल्पना है अपने बाबत, बड़ी सच है। चौबीस घंटे हम उसी को सिद्ध करने में सब तरफ लगे हुए हैं।
अगर कोई हमारी निंदा करे तो हम उसका विरोध करेंगे। अगर कोई हमें गाली
दे तो हम उसका प्रतिवाद करेंगे। अगर कोई हमारे विरोध में कुछ कहे तो हम उसका प्रतिरोध करेंगे ताकि हमारी वह प्रतिमा खंडित न हो।
एक साधु था, वह एक गांव के बाहर ठहरा हुआ था। युवा था और सुंदर था। गांव में एक स्त्री, एक युवती गर्भवती हो गई। और उससे लोगों ने पूछा, दबाव डाला, उसने कहा कि यह साधु का बच्चा है। बच्चा उसे हुआ, सारा गांव कुपित हो गया। उसने जाकर बच्चा उस साधु के ऊपर पटक दिया। उसने पूछा, क्या बात है? तो उन लोगों ने कहा कि यह तुम्हारा बच्चा है। वह बोलाः इ.ज इट सो? ऐसा है क्या? वह बच्चा रोने लगा तो उसे वह सम्हालने में लग गया। लोग गाली बके, अपमान किए और चले गए।
वह दोपहर को भीख मांगने गया उस बच्चे को लेकर, उसको कौन भीख देता। तो सारे गांव में अफवाह और सारे गांव में उसकी हंसी-मजाक और व्यंग्य। जहां से निकले लोग भीड़ बना कर खड़े हैं और देख रहे हैं और हंसी उड़ा रहे हैं कि यह साधु और अपने बच्चे को भी लिए हुए। अब उसको भोजन भी चाहिए और बच्चे के लिए दूध भी चाहिए। बच्चा रो रहा है और वह बेचारा सारे गांव में मांग रहा है। कौन उसको भिक्षा देगा। कोई भिक्षा नहीं दिया। वह उस घर के सामने भी गया जिस घर की लड़की का वह बच्चा था। उसने वहां भी आवाज दी। उसने कहाः मुझे भीख न दो, बस इस बच्चे को भीख दे दो, इसको दूध मिल जाए तो बहुत है।
तो जिस लड़की का यह बच्चा था, उसके लिए सहना कठिन हो गया। वह इनटालरेबल
हो गया अब। उसने अपने पिता से कहा कि मुझे क्षमा करें, मैंने झूठ कह दिया। साधु का तो कोई संबंध नहीं है इससे। मैंने असली बाप को बचाने के लिए साधु का नाम ले दिया। मैंने सोचा था कि मामला खत्म हो जाएगा। साधु को आप भगा-वगा

कर वापस लौट आओगे। यह जो हालत हो रही है, इसकी मैंने कल्पना नहीं की थी। यह तो साधु पर बहुत ज्यादा हो गया।
पिता बोला, अरे, और उसने कहा भी तो नहीं कि यह मेरा बच्चा नहीं है। उस नासमझ को कहना तो चाहिए था। वे सारे लोग नीचे गए, उसके हाथ-पैर जोड़े। वह बोलाः क्या बात है? उससे जब वे बच्चा छीनने लगे तो वह बोला, क्या बात है? तो उन्होंने कहाः यह बच्चा तुम्हारा नहीं है। वह बोलाः इ.ज इट सो? ऐसा मामला है क्या, बच्चा मेरा नहीं है? जब सांझ को लोगों ने उससे पूछा कि तुम कैसे पागल हो, तुमने सुबह ही क्यों नहीं कह दिया। वह बोला कि जब इतने लोग कहते हैं तो ठीक ही होगा।
असल में अपनी कोई उसकी कल्पना ही नहीं है, कोई प्रतिमा ही नहीं है, जिसको बचाना है। यह कोई प्रतिमा नहीं है कि मैं बाल-ब्रह्मचारी हूं और मेरा यह कैसे हो सकता है। यह कोई प्रतिमा ही नहीं है अपनी। तुम कहते हो तो यही ठीक होगा। तुम गलती पर होओगे तो तुम्हीं अपनी गलती ठीक कर लेना; मैं कहां जिम्मेवार हूं उसको ठीक करने का। अगर तुम मुझे व्यभिचारी और दुराचारी समझोगे तो यह भी ठीक है क्योंकि मुझे इसकी भी रक्षा नहीं करनी है।
जो आदमी इस भांति अपने चित्रों और प्रतिमाओं को छोड़ दे, उसको मैं साधु कहता हूं। आमतौर से जो हम साधु देखते हैं, वह बड़ी अपनी प्रतिमा रखता है। वह कुछ है, इसकी पूरी फिकर रखता है। वह यह सिद्ध करने की चौबीस घंटे कोशिश में है कि वह कुछ है। जिसने यह कोशिश छोड़ दी सिद्ध करने की कि मैं कुछ हूं और जैसा निपट है, वैसा ही होने को राजी हो गया, उसको मैं साधु कहता हूं। उस दिशा से जो चलेगा और आत्म-निरीक्षण में गतिमान होगा, वह एक दिन जरूर उसको जान लेगा। झूठा दंभ और मिथ्या व्यक्तित्व अपने में खड़ा करने की बात नहीं है। इससे बड़ी दिक्कत होगी। इससे मैं देखता हूं कि हमारे प्रश्न जो हैं, जिन्यून नहीं हो पाते हैं।
अभी मैं कई दफा देखता हूं, आप कुछ पूछना चाहते हैं, कुछ और पूछते हैं। क्योंकि जो पूछना चाहते हैं, कहीं उससे ऐसा पता न चल जाए कि आपमें यह मामला भी है।
मैं बड़ा हैरान हूं, मुझे, मैं कलकत्ता एक मीटिंग में बोलता था, एक सज्जन ने ब्रह्मचर्य पर किताब लिखी है। बड़ी किताब लिखी और बड़ी प्रशंसित हुई। वे मुझे एक किताब भेंट किए मीटिंग में। ब्रह्मचर्य पर मैंने कुछ कहा, जो मेरी अपनी धारणा थी, कही। उनको अब कुछ प्रश्न पूछना था, लेकिन बड़ी मुसीबत में पड़ गए। तो वे खड़े होकर बोलेः मेरे एक मित्र हैं, वे ब्रह्मचर्य साधना चाहते हैं, लेकिन उनसे सधता नहीं, तो क्या करें? तो मैंने पूछा कि वे मित्र हैं आपके कि आप ही हैं, पहले मैं यह समझ लूं। वे बहुत घबड़ा गए। बोले कि नहीं, मेरे एक मित्र हैं। मैंने कहा कि मित्र की फिकर छोड़िए, उन मित्र को लाइए। रास्ता जरूर है, रास्ता जरूर है लेकिन उन मित्र को ले आइए। क्योंकि मैं आपको समझाऊं, आप उनको समझाएं, बड़ा गड़बड़ हो जाएगा। आप मित्र को ले आइए, मैं उनको समझा दूंगा। वे बड़े बेचैन हुए। जब मैं चला आया, उन्होंने मुझे एक चिट्ठी लिखी कि क्षमा करें, तकलीफ मेरी है लेकिन मैं साहस नहीं कर सका पूछने का।
तो मैंने उनको लिखा कि साहस आप कर सकते थे, अगर वह ब्रह्मचर्य पर आपने किताब न लिखी होती। वह दिक्कत हो गई न। वह जो किताब लिखी है, जो एक प्रतिमा हो गई कि मैं जो कि इतना जानने वाला ब्रह्मचर्य का हूं, तो मैं पूछूं किसी से तो कोई कहेगा अरे, अभी आपको साधने की आपको खुद ही दिक्कत है!
हमें जो तकलीफ है, मैं साधुओं से मिलता हूं, साधु मुझसे सबके सामने बात नहीं करना चाहते। भीड़ हो तो मुझसे मिलना नहीं चाहते। चाहते हैं एकांत में, अलग, मैं उनसे मिलूं। क्योंकि उनकी तकलीफें वही की वही हैं, जो कि वे सबके सामने नहीं कह सकते। अकेले में वे मुझसे यही पूछते हैं कि ब्रह्मचर्य कैसे सधे? चित्त अशांत रहता है तो कैसे? चित्त में क्रोध आता है तो क्या करें? यह वे अगर सबके सामने मुझसे पूछेंगे तो वह जो प्रतिमा उन्होंने अपनी खड़ी कर रखी हैं चारों तरफ कि वे बड़े शांत चित्त हैं, वे बड़ी

मुश्किल में पड़ जाएंगे; क्योंकि वे पूछते हैं कि अशांति कैसे मिटे, तो लोग समझेंगे कि अभी शांत चित्त नहीं हुए।
तो हम एक असली आदमी अगर सामने हम न रख सकें, तो हम उस असली आदमी में फर्क कैसे कर सकेंगे? हम एक झूठे आदमी को सामने रखे हुए हैं और असली आदमी को पाना चाहते हैं। आत्मा को पाना चाहते हैं, और एक नकल, एक अभिनय, एक एक्टिंग चारों तरफ खड़ी किए हुए हैं, तो नहीं हो सकेगा।
मेरा मानना है कि इसमें घबड़ाने की कोई जरूरत नहीं है। जिंदगी के सीधे प्रश्न पूछना बंद हो गए हैं। कोई पूछेगा आत्मा है या नहीं, परमात्मा है या नहीं। यानी इनसे कोई मतलब नहीं है आपको। आपके मतलब के प्रश्न कुछ और हैं, जो आपकी जिंदगी को पीड़ित किए हुए हैं और परेशान किए हुए हैं। जिनकी वजह से आप दिक्कत में पड़े हुए हैं। जिनका आप परिवर्तन अगर आपको समझ में आ जाए तो क्रांति हो जाए। लेकिन वह कोई नहीं पूछेगा। क्योंकि उनको कैसे पूछें, क्योंकि वे तो हमारी, वह हमको खोल देंगे और हमारे बाबत जाहिर कर देंगे। जिंदगी के असली प्रश्न हम पूछते ही नहीं और नकली प्रश्न पूछे चले जाते हैं। मेरा जोर ही इसी बात पर है कि जिंदगी के असली प्रश्न पकड़ें। यह सब बकवास है, इससे कोई मतलब नहीं है। असली प्रश्न पकड़ें। मेरी मुसीबत क्या है? मेरी दिक्कत क्या है? मैं कहां उलझा हूं? मैं कहां परेशान हूं? मेरा दुख कहां है? उसको केंद्रित करें, उसको पकड़ें, उसके बाबत सोचें, उसके बाबत विधि को समझें, उस पर प्रयोग में लग जाएं।
और बड़े मजे की बात यह है कि इस भांति जो प्रयोग में लगेगा, वह हो सकता
है एकदम से ऐसा भी न दिखे कि धार्मिक है, क्योंकि न आत्मा की बात करता, न परमात्मा की बात करता, न पुनर्जन्म की बात करता। लेकिन बड़े रहस्य की बात यह है कि जो इस भांति जिंदगी को पकड़ कर काम में लग जाएगा, वह एक दिन उस जगह पहुंच जाएगा जहां आत्मा और परमात्मा सब जान लिए जाते हैं।
अभी कल रात जो मैंने कहा, वह मैंने यही कहा कि महावीर ने किसी से जाकर नहीं पूछा कि आत्मा है या नहीं, पुनर्जन्म है या नहीं। तो वहां बैठ कर जंगल में क्या यह सोचते होंगे कि आत्मा है या नहीं। कभी यह सोचा आपने, क्या सोचते होंगे? यह बैठ कर सोचते होंगे कि आत्मा है या नहीं, कि पुनर्जन्म हैं या नहीं। नहीं, यह कुछ नहीं सोचते। क्रोध पर काम कर रहे हैं, सेक्स पर काम कर रहे हैं। काम इन पर चल रहा है। काम आत्मा-वात्मा पर थोड़े ही चलता है कुछ।
वह बारह वर्ष की जो तपश्चर्या है, काम किस पर कर रहे हैं, कोई आत्मा पर काम कर रहे हैं, कि कोई पुनर्जन्मों का पता लगा रहे हैं, कि निगोध का पता लगा रहे हैं, कि अनादि जगत कब बना इसका पता लगा रहे हैं। कुछ नहीं लगा रहे हैं, काम कर रहे हैं क्रोध पर; काम कर रहे हैं सेक्स पर; काम कर रहे हैं लोभ पर। वहां काम कर रहे हैं। उसी काम के माध्यम से एक दिन स्थिति आती है कि ये सब विसर्जित हो जाते हैं। ये सब जब विसर्जित हो जाते हैं तो उसका अनुभव होता है जो आत्मा है।
बातचीत आत्मा की है। काम आत्मा पर नहीं करना है कुछ। काम किसी और ही चीज पर करना है। पर हम आत्मा के बाबत पूछे चले जाएंगे। उसका कोई मतलब नहीं है, कोई मतलब नहीं है।

उपासना के क्षण
तीसरा प्रवचन

श्रद्धा, अश्रद्धा और विश्वास

अचानक, और कोई बात भी नहीं करता है, आकर हिलाया, आंख खोली तो पूछा कि ईश्वर को जानते हैं? थोड़े झिझक गए। वे झिझके, विवेकानंद वापस कूद गए। उन्होंने चिल्ला कर कहा कि रुको जरा, बात क्या है? विवेकानंद ने कहाः आपकी झिझक ने सब कुछ कह दिया, अब पूछने को मुझे कुछ है नहीं। आपकी झिझक ने सब कह दिया।
रामकृष्ण के पास गए, तो रामकृष्ण से भी वही पूछाः ईश्वर को जानते हैं?
तो रामकृष्ण ने कहा कि तुझे जानना है? तू जानेगा?
इसमें, यह जो फर्क है। एक महर्षि देवेंद्रनाथ हैं। रामकृष्ण कुछ भी नहीं जानते देवेंद्रनाथ के मुकाबले। कुछ भी नहीं जानते हैं। जहां शब्द और शास्त्र के जानने का संबंध है। लेकिन यह आदमी है जो शब्द और शास्त्र को नहीं जानता, लेकिन कुछ जानता है। जो एक अलग आयाम है, एक अलग दिशा है चित्त के जानने की।
तो एक तो हमारा रास्ता है जीवंत अनुभव का और एक रास्ता है शाब्दिक स्मृति का।
मैं अभी एक अनाथालय में गया। वहां बच्चों को वे सिखाते हैं, धर्म सिखाते हैं। जैसा अभी आप कह रहे थे कि धर्म की शिक्षा होनी चाहिए। नहीं होगी धर्म की शिक्षा तो क्या होगा? और मैं तो कहता हूं कि धर्म की शिक्षा से ज्यादा खतरनाक कोई शिक्षा नहीं हो सकती। क्योंकि धर्म की शिक्षा में आप सिखाएगा क्या? शब्द ही सिखाएगा।
उन्होंने मुझे कहा कि हम धर्म की शिक्षा देते हैं बच्चों को। आप इनसे कुछ भी प्रश्न पूछिए, ये उत्तर देंगे।
मैंने कहाः आप ही पूछिए, मैं सुनूंगा।
उन्होंने पूछा कि ईश्वर है? उन सब बच्चों ने हाथ हिला दिए, हां, ईश्वर है।
यह हाथ किस बात पर हिल रहा है? इनको पता है ईश्वर का, इन बच्चों को?
नहीं। इन्हें एक शब्द सिखा दिया गया कि ईश्वर है। इस शब्द में कोई भी अर्थ नहीं है। कोई भी अर्थ नहीं है इस शब्द में। एक बच्चे को सिखा दिया कि ईश्वर है। जैसे कैमेस्ट्री सिखाते हैं, फिजिक्स सिखाते हैं, ऐसा यह भी सिखा दिया। इसको परीक्षा पास करनी है तो इसने सीख लिया कि ईश्वर है। यह किताब में लिखेगा कि ईश्वर है। ये उत्तर देंगे तो हाथ हिलाएगा कि ईश्वर है। ये, ये अनुभव हैं? ये शब्द हैं।
आत्मा है? तो बच्चों ने कहाः हां, आत्मा है।
कहां है? तो उन्होंने हाथ उठा कर बता दिया कि यहां है।
ये, ये हाथ झूठे हैं, जो कह रहे हैं कि यहां है। यह भी सीखा हुआ है। इन बच्चों को कोई भी पता नहीं है।
मैंने एक लड़के से पूछा कि हृदय कहां है?
उसने कहाः यह तो हमें बताया नहीं।
आत्मा कहां है? वह कहता है, यहां। फिर पूछा, हृदय कहां है? वह बोला, यह हमें बताया नहीं गया।
ये बच्चे सीख जाएंगे, ये बच्चे बूढ़े भी हो जाएंगे, लेकिन यह जो सीखा है, इसको दोहराते रहेंगे। जब भी जिंदगी में सवाल उठेगा, ईश्वर है? उनका सीखा हुआ उत्तर आएगा कि हां, ईश्वर है। और यह उत्तर बिल्कुल झूठा है। यह इन्होंने जाना नहीं है। ये बच्चा हों या ये बूढ़े हो जाएं, तब भी ये इसी उत्तर को दोहराते रहेंगे। यह खतरनाक बात हो गई। यह शब्द पकड़ लिया गया। और इसीलिए तो इतने धर्म हैं। अगर दुनिया में सत्य जाना जाता तो इतने धर्म कैसे हो सकते थे? लेकिन शब्द बहुत हैं, इसलिए बहुत धर्म हैं। धर्म शब्दों पर खड़े हैं, सत्यों पर खड़े नहीं हैं। नहीं तो इतने धर्म कैसे हो सकते थे? मैं जानता, आप जानते, और अगर हम सत्य जानते, तो मेरे बीच, आपके बीच फासला और दीवाल क्या हो सकती थी? नहीं, लेकिन आप कुरान जानते हैं, मैं गीता जानता

हूं, तो दीवाल है। मैंने एक तरह के शब्द पकड़े हैं, आपने दूसरे तरह के शब्द पकड़े हैं। अब ये शब्द और आपके शब्द में विरोध है।

प्रश्नः ये साधन हैं।

नहीं।

प्रश्नः मैं जहां तक समझ सकूंगा, यूं एक कुरान या आत्म, हमारा जिस समय होता है, वह साधन है।

काहे का?

प्रश्नः उस भ्रम को जानने के लिए, जिस भ्रम की व्याख्या एक आदि-भौतिक इसमें भी हो सकती है, आध्यात्मिक भी हो सकती है।

यह जो, यह जो हमें खयाल होता है, असल में साधन केवल उन चीजों को जानने
के हो सकते हैं जो हमसे परायी हों, जो हमसे दूर हों, उन तक पहुंचने के साधन हो सकते हैं।
जैसे में जबलपुर से हैदराबाद आया, तो बीच का रास्ता पार करना पड़ा।
लेकिन मनुष्य और परमात्मा के बीच फासला नहीं है, इसलिए साधन हो नहीं सकता।

प्रश्नः मनुष्य और जीवन में फासला है।

नहीं।

मनुष्य और अंतर-आत्मा जो है, मनुष्य का एक ध्येय है, अंतर-आत्मा का कोई आकार नहीं है। जो उस आकार को और इस ध्येय को, बीच में जो कुछ एक अंतर है, उस अंतर को जानने के लिए साधन न हो, तो कैसे उसकी परिपूर्णता होगी।

कोई अंतर नहीं है। यह जो सारी बात है, जिन चीजों के बीच भी फासला है, उन चीजों के बीच रास्ते होंगे।

प्रश्नः नहीं, फासला हमारे लिए है। क्योंकि हमने उस परिपूर्णता को ली नहीं।

न, न, न। आपके बीच और परमात्मा के बीच कोई भी फासला नहीं है।

प्रश्नः मैं परमात्मा को आत्मा ही बोल रहा हूं।

आत्मा बोले दें, उससे फर्क नहीं पड़ता।

प्रश्नः हमें परमात्मा पर कोई और दूसरी... तो एक विभूति, अतः यह दर्शन नहीं देता।

तब तो फासला और भी नहीं है। तब तो वही है।

प्रश्नः नहीं, मेरे लिए इसलिए है कि मैंने उस आत्मा को देखा नहीं है, न दिखा हुआ है। अब यह देह को देखा हूं, तो उस आत्मा को मुझे देखना हो...

इस पर थोड़ा मैं जो कह रहा हूं, तब फिर आत्मा नाम के शब्द और आपके बीच फासला है। आत्मा नाम के शब्द, आत्मा को देखा नहीं, जाना नहीं, एक शब्द सुना है।

प्रश्नः नहीं, शब्द नहीं सुना।

और क्या जाना है?

प्रश्नः उस शब्द को सुना नहीं है, मगर उसे परिपूर्णता को देखने के लिए मैंने विचार किया।

वह विचार भी तो आपका कहां से? वह विचार, विचार हम करते ही उस चीज का हैं जिस चीज का हमें अनुभव नहीं होता। जिस चीज का हमें अनुभव होता है उसका हम विचार ही नहीं करते।

प्रश्नः तो लक्ष्य ही नहीं है फिर जीवन में?

मैं उसकी अलग बात करूं। इस तरह कूदिएगा तो मुश्किल होगी। यानी मैं, यह
जो मैं कह रहा हूं, अंतर और फासले हमें मालूम पड़ रहे हैं क्योंकि हमने कुछ शब्द--कोई एक परंपरा में पैदा हुआ है, ईश्वर शब्द को सीख लिया है, किसी ने आत्मा को, किसी ने किसी और को। इन शब्दों के बीच और हमारे बीच फासला मालूम पड़ता है। लेकिन अगर आत्मा का जरा सा भी अनुभव हो तो पता चलेगा कि कोई फासला नहीं, क्योंकि आप ही तो आत्मा हो। और मैं यह कह रहा हूं कि जब तक अनुभव नहीं होगा, जब तक इस शब्द पर पकड़ रहेगी तब तक अनुभव नहीं होगा।
क्योंकि होता क्या है, हम जिन चीजों के संबंध में भी शब्दों को पकड़ लेते हैं, जैसे समझ लें कि मैं यहां आया, और आपसे आने के पहले मुझे किसी ने कह दिया कि आप बहुत भले आदमी हैं या किसी ने कह दिया कि बहुत बुरे आदमी हैं, और मैंने आपके बाबत एक तस्वीर बना ली। वह तस्वीर तो बिल्कुल झूठी है। आपको तो मैं जानता नहीं। अच्छी या बुरी एक खयाल मैंने बना लिया। फिर आपसे मुझे मिलाया गया, फिर मैं आपसे मिल नहीं पाऊंगा। आपके और मेरे बीच में एक तस्वीर खड़ी हुई है जो मैं बना कर आया हूं अच्छे और बुरे होने की। फिर मैं उसी तस्वीर से आपको देख रहा हूं।

प्रश्नः कल्पना।

हां। उसी तस्वीर से देख रहा हूं। और वह तस्वीर मुझे आपसे जोड़ नहीं रही, तोड़ रही है। अगर मेरे और आपके बीच कोई तस्वीर न हो, तो मैं आपको वैसा ही देख पाऊंगा जैसे आप हैं।
तो हम तो हर चीज के बाबत बीच में कुछ बना लेते हैं। परमात्मा के या आत्मा के बाबत भी बीच में बना लेते हैं। और वह जो बनाया हुआ है, वह हमारे जानने का साधन नहीं बनता बल्कि दीवाल बनता है बीच में, वह खड़ा हो जाता है। जैन एक तरह के शब्द खड़े करता है, मुसलमान एक तरह के, हिंदू एक तरह के, बौद्ध एक तरह के, शब्दों को बीच में खड़ा कर लेते हैं। ये शब्दों के द्वारा वह देखता है फिर पार। अब ये, ये शब्द जो हैं, और इनकी व्याख्या जो है, और इनका सोच-विचार जो है, वह सब बीच में एक दीवाल की तरह खड़ा होता है।
जिस चीज की भी परिपूर्ण सच्चाई को हमें जानना हो, उसके संबंध में हमारी कोई पूर्व कल्पना, कोई प्रिज्युडिस, कोई पक्षपात, कोई धारणा, कुछ भी नहीं होनी चाहिए। हमें इतना निष्पक्ष, इतना शांत, इतना निःशब्द होकर जाना चाहिए उस सत्य के पास कि हम अपनी तरफ से कुछ भी उस पर आरोपित न करें, कुछ इंपोज न करें, सीधे जैसी हों हम वैसा उन्हें देख पाएं।
तो शब्द और शास्त्र आपकी कल्पना बन जाती, बीच में बाधा बन जाती। फिर
आप जानते नहीं कि ये शब्द सत्य हैं या शास्त्र सत्य हैं, यह भी आप नहीं जानते। यह आपको कैसे पता है कि सत्य है? सिर्फ इसलिए कि परंपरा कहती है। और तो कुछ नहीं। और परंपरा तो एक लंबा प्रचार है।
हिटलर ने अपनी आत्म-कथा में लिखा कि ऐसा कोई असत्य नहीं है जिसे थोड़े प्रोपेगेंडा से सत्य न बनाया जा सके। उसने लिखा, मैं अपने अनुभव से कहता

हूं कि मैंने बड़े-बड़े असत्य बोले और वे सब सत्य हो गए। और करोड़ों लोगों ने उन पर विश्वास कर लिया।
आप हिंदू घर में पैदा हुए हैं या मैं मुसलमान घर में पैदा हुआ हूं, तो मैं जिस किताब को कहता हूं कि यह सच है, सिवाय इसके और क्या इसके सच होने का प्रमाण है कि मेरे दिमाग में बचपन से यह बात प्रोपेगेट की गई है कि यह सच है। और क्या इससे ज्यादा प्रमाण है। मेरे पिता के दिमाग में भी प्रोपेगेट की गई है। और परंपराओं से, हजारों वर्ष से एक चीज का प्रचार किया गया है कि यह सत्य है। आपके दिमाग में दूसरी किताब सत्य है। एक तीसरे के दिमाग में तीसरी किताब सत्य है। यह सब प्रोपेगेंडा है। और यह प्रोपेगेंडा मेरे दिमाग में मैं भर लूं और फिर इसको लेकर मैं खोजने जाऊं, मेरी खोज असंभव हो जाएगी। मैं तो बंध गया। और जो दिमाग बंधा हुआ है वह खोज नहीं कर सकता। खोज के लिए चाहिए तो बिल्कुल खुला हुआ मन। जिसकी कोई पक्षपात नहीं, जिसका कोई शब्द नहीं है, कोई शास्त्र नहीं, सिर्फ एक खोज है, एक प्यास है।
तो इतनी खोज और प्यास अगर हो, तो दिखाई पड़ना शुरू हो जाएगा कि शब्द बाधा बन रहा है। किसने आपको सिखाया शब्द, और यह बिल्कुल संयोग की बात थी कि आपको एक घर में रखा गया, दूसरे घर में रख कर आपको दूसरे शब्द सिखाए जा सकते थे, और कोई अड़चन न आती।
जैन घर में लड़का पैदा होता है तो उसे ईश्वर का, सृष्टिकर्ता का कोई खयाल नहीं आता। क्योंकि उसके घर में नहीं सिखाया जाता कि किसी ने सृष्टि बनाई है। उसी के बगल में हिंदू परिवार में लड़का सीख रहा है कि सृष्टि बनाने वाला भगवान है, उसने दुनिया बनाई है। और ये दोनों सीख कर बड़े हो रहे हैं।
वहां सोवियत रूस में दूसरा लड़का पैदा हो रहा है, जिसको हुकूमत सिखा रही है कि कोई भगवान नहीं है, कोई आत्मा नहीं है, आदमी सिर्फ शरीर है। वह बच्चा वह सीख कर खड़ा हो रहा है।
मेरे एक मित्र रूस से लौटे, तो वे मुझे कहने लगे कि एक छोटे से बच्चे
से मैंने पूछा कि तुम्हारा ईश्वर के संबंध में क्या खयाल है? तो उसने कहा कि पहले हुआ करता था ईश्वर, अब नहीं है। पहले हुआ करता था, अब नहीं है। पहले लोग नासमझ थे, ईश्वर को मानते थे। अब तो लोग समझ गए, यहां कोई ईश्वर को कोई मानता नहीं।
उस बच्चे को यह सिखाया जा रहा है। आप अपने बच्चे को यह दूसरी बात सिखा रहे हैं, तीसरा तीसरी बात सिखा रहा है। यह जो सिखावट से पैदा हुआ ज्ञान है बिल्कुल झूठा है।
मेरा कहना यह है कि इसमें कौन सा ठीक, यह सवाल नहीं है। मेरा कहना यह
है कि जो भी हम इस तरह की बातें सीख लेते हैं और उनको हम आधार बना कर खोज शुरू करते हैं, वह खोज गलत है। वह पहले से ही पंगु होगी खोज, पैर काट दिए गए पहले से। सत्य की खोज के लिए निष्पक्ष मन चाहिए।

प्रश्नः निर्मल भी चाहिए।

निर्मल भी चाहिए। जरूर चाहिए। जरूर चाहिए। तो वह जितना निर्मल और निष्पक्ष, जितना निर्दोष मन होगा, उतनी खोज गतिमान होगी।

प्रश्नः क्षमा कीजिए। मैंने जो प्रश्न आप पर खड़ा किया था, यह सारी अवस्था कब होती है कि इस पंक्ति में न बैठें, किस पंक्ति में--सोचने के, विचार के, ये सब विभूतियां, ये प्रकृतियां कब बनती हैं? इस आयु में तभी बनेगी जिस आयु में मैं विज्ञान जानता ही नहीं, यानी बचपना। जिस काल में क्योंकि मैं अभी जानता ही नहीं कि ईश्वर या वगैरह, उस काल में तो बनता नहीं। फिर से एक रूढ़ि से, शास्त्र से बनाया जाता है, जैसी आपकी कल्पना है। और नहीं बनाने के लिए अगर फिर मुझको ही छोड़ दिया जाए, कोई साधन न दिया जाए मुझे--न शास्त्र का, न शब्द का, न सिद्धांतों का, कोई दिया नहीं गया, अब मुझे ही छोड़ा गया, तो क्या मेरे लिए वह संस्कार आएगा और वह संस्कृति आएगी, जिस संस्कृति से मैं आपकी विचारधारा, उस पंक्ति में जाकर बैठूं कि जहां मैं उस

आत्मा को, जिस आत्मा को कि मैं परमेश्वर समझता हूं, उसको मेरे आयु में उस साधना, बगैर साधना के उसको ले लूं?

दो बातें हैं। एक बात तो यह कि अगर व्यक्ति को बिल्कुल उस पर छोड़ दिया जाए बचपन से, बिल्कुल उस पर छोड़ दिया जाए बचपन से, तो भी सत्य की खोज की संभावना इस स्थिति से ज्यादा होगी जिसमें हम उसे कुछ सिखाते हैं, एक बात। इसलिए ज्यादा होगी कि जिज्ञासा बच्चे को सिखानी नहीं पड़ती, जिज्ञासा तो बच्चे में होती है। जिज्ञासा मारनी पड़ती है, सिखानी नहीं पड़ती। छोटा सा बच्चा भी जिज्ञासा तो करता है कि क्या है यह? सब क्या है? ये प्रश्न उसमें उठते हैं। लेकिन इन प्रश्नों को हम दबा देते हैं। सिखाते तो नहीं, यह भगवान की बनाई गई प्रकृति है। बच्चा पूछता है, यह कहां से आया? हम कहते हैं, यह भगवान ने बनाया।
हम एक झूठी बात कह रहे हैं जिसका हमें भी पता नहीं। और बच्चा इतना छोटा है कि सोचता है कि पिता बहुत ज्ञानी हैं, इसलिए जरूर ठीक कहते होंगे। पिता भी कहते हैं, स्कूल का शिक्षक भी कहता है, संन्यासी भी कहता है, पंडित भी कहता है, आस-पास के लोग भी कहते हैं। बच्चा सोचता है, इतने बड़े-बड़े लोग, इतने ताकत के लोग, समझदार लोग, ये जब कहते तो ठीक ही कहते होंगे। बच्चा पकड़ लेता आप जो कहते हैं उसको। परिणाम क्या होता है? आप उसे ज्ञान तो दे नहीं रहे हैं, आप केवल एक शब्द दे रहे हैं, सिद्धांत दे रहे हैं। और एक बड़ी महत्वपूर्ण चीज नष्ट कर रहे हैं जो उसके भीतर थी, इंक्वायरी जो थी, वह नष्ट हो रही है। क्योंकि जैसे ही वह इसको पकड़ लेगा, इंक्वायरी खत्म हो जाएगी। और लड़का अगर इंक्वायरी करता ही चला जाए, तो आप कहते हैं, छोटी मुंह बड़ी बात मत करो। अगर वह लड़का यह कहता ही चला जाए कि नहीं, हमें शक होता है। भगवान को किसने बनाया? तो आप कहेंगे कि देखो, ये अभी तुम्हारी पूछने की बातें नहीं हैं, अभी उम्र आने दो। और आप खुद भी अपने दिल में जानते हैं कि अभी हमको भी इसका पता नहीं है। लेकिन आप बच्चे के सामने ज्ञानी बने हुए हैं।
असल में हरेक को ज्ञानी बनने में बड़ा सुख मिलता है--बाप को भी, गुरु को भी। उपदेशक, ज्ञानी बनने में, गुरु बनने में बड़ा सुख है। और छोटे के सामने तो बहुत सुख है। वह छोटा सा बच्चा है उसकी अभी कोई, आप उसकी जिज्ञासा की हत्या कर रहे हैं। आप उसको, अगर वह यह जिज्ञासा किए जाएगा तो गाली देंगे कि नास्तिक है, गड़बड़ है, यह है, वह है। सब तरह के दबाव डाल कर धीरे-धीरे, धीरे- धीरे, धीरे-धीरे उसकी जिज्ञासा तो खत्म हो जाएगी और वह आपकी बातें दोहराने लगेगा कि जगत को ईश्वर ने बनाया है, आत्मा अमर है, ऐसा है, वैसा है, वे सारी बातें। जैसा आप दोहरा रहे हैं, तोते की तरह वह भी उन बातों को दोहराने लगेगा। इनको आप कहते हैं कि हमने उसे सत्य की दिशा में भेज दिया। आपने हत्या कर दी। सत्य की दिशा में तो जिज्ञासा ले जाती उसे। तो पिता--मैं यह नहीं कहता कि आप इसको बिल्कुल इस पर छोड़ दें, मैं यह कहता हूं, इसके भीतर जो जिज्ञासा है उसके सहयोगी बनें, दुश्मन न बनें।
तो मैंने कहा कि पहली बात तो मैं यह कहता हूं कि अगर, अगर यही विकल्प
हो हमारे सामने कि या तो हम सिखाएंगे बच्चे को कि ईश्वर है, आत्मा है, फलां- ढिकां और या हम बिल्कुल छोड़ देंगे। तो भी मैं कहूंगा कि बिल्कुल छोड़ देना बेहतर है। इससे ज्यादा बच्चे सत्य की खोज में जा सकेंगे जितने जा रहे हैं, एक बात। लेकिन मेरा कहना यह नहीं, मेरा कहना यह है कि बच्चे की जिज्ञासा के साथी बनें। उसकी इंक्वायरी को और बढ़ाएं। और उससे कहें कि तूने बहुत अदभुत प्रश्न पूछा। मैं भी इसे पूछ रहा हूं, अभी तक जान नहीं पाया हूं। हम मिल कर पूछें। हमारा पूरा परिवार मिल कर पूछे, हम खोजें, हम सोचें, ये-ये उत्तर लोगों ने दिए हैं, लेकिन मुझे अभी तृप्ति नहीं हुई, क्योंकि मुझे नहीं जाना। ये-ये उत्तर हैं लोगों के दिए हुए कि ईश्वर ने बनाया है। लेकिन इसके विरोध में भी कहने वाले लोग हैं कि ईश्वर ने नहीं बनाया, ईश्वर है ही नहीं। बच्चे के सामने सारी बातें खोल दें। उसकी इंक्वायरी बढ़ने दें, उसकी जिज्ञासा बढ़ने दें। उसको ज्ञान न दें, उसकी जिज्ञासा को बढ़ाएं। अगर आप उसकी जिज्ञासा इतनी प्रबल कर सकते हैं कि वह उस समय तक किसी बात को मानने को राजी नहीं होगा जब तक कि वह खुद न जान ले, तो आपसे बेहतर पिता उस बच्चे

को दूसरा नहीं मिल सकता था। जब तक कि वह मानने को राजी नहीं होगा, जब तक कि वह खुद जानने की दिशा में खड़ा न हो जाए, जब तक कि खुद कुछ उसे अनुभव न मिलने लगे, तब तक वह मानने को राजी नहीं होगा। इसका मतलब यह नहीं कि आप अश्रद्धा सिखा रहे हैं।
(जल्दी न कर लेंगे आप)

प्रश्नः हां-हां, वही देख रहा था मैं।

इसका मतलब यह नहीं कि आप अश्रद्धा सिखा रहे हैं। क्योंकि अश्रद्धा भी
एक तरह की शिक्षा है, जैसे श्रद्धा एक तरह की शिक्षा है। आप यह नहीं सिखा रहे हैं कि ईश्वर नहीं है। एक शिक्षा यह है कि ईश्वर है, एक शिक्षा यह है कि ईश्वर नहीं है। ये दोनों शिक्षाएं हैं। यह भी मत सिखाइए की ईश्वर नहीं है। आपको यह भी कहां पता है। आप तो बच्चे को कहिए कि मुझे पता नहीं है। कुछ लोग कहते हैं ईश्वर है, कुछ लोग कहते हैं ईश्वर नहीं है। मैं भी खोज रहा हूं। मैंने अभी जाना नहीं है। तुम भी खोजना। तुम भी खोजना।

प्रश्नः किस साधनों पर खोजना?

विवेक से। विवेक खोज है असल में। असल में बच्चे का विवेक बढ़ना चाहिए।

प्रश्नः विवेक...

उसके तो रास्ते हैं न सब।

प्रश्नः लेकिन रास्ते होकर फिर साधन हुआ।

मेरा मतलब नहीं समझे आप। विवेक को जगाने के रास्ते हैं। परमात्मा को पाने के रास्ते नहीं हैं।

प्रश्नः नहीं-नहीं, विवेक को जगाने का रास्ता भी हो तो लक्ष्य वही है।

नहीं, इसको समझ लें। फर्क क्या होगा, जैसे कि इस कमरे में अंधेरा भरा हो, तो मैं आपसे कहूंगा कि प्रकाश को जलाने के रास्ते हैं, अंधेरे को अलग करने के रास्ते नहीं हैं। मेरा मतलब आप समझे? मैं कहूंगा, प्रकाश को जलाने के रास्ते हैं, अंधेरे को अलग करने के रास्ते नहीं हैं। हां, प्रकाश जल जाए तो अंधेरा अलग हो जाता। लेकिन अगर हम अंधेरे को अलग करने का कोई उपाय खोजने लगें कि लाओ गठरियां बांधो अंधेरे को फेंको। तलवार लाओ अंधेरे को धकाओ। मित्र इकट्ठे हो जाओ, रस्सियों में बांधो, अंधेरे को बाहर निकालो, तो हम पागल हो जाएंगे।

अंधेरे को निकालने का कोई रास्ता नहीं होता। प्रकाश को जलाने का रास्ता होता है। और बड़े मजे की बात यह है कि प्रकाश जल जाए तो अंधेरा पाया ही नहीं जाता। मैं जो फर्क कर रहा हूं, ईश्वर को पाने का कोई रास्ता नहीं है। मेरा मतलब यह है कि न पूजा से ईश्वर मिल सकता है, न माला फेरने से, न शास्त्र रटने से, न राम-राम रटने से, ईश्वर को मिलने का सीधा कोई रास्ता नहीं है। सीधा आप चाहें कि मैं ईश्वर को पा लूं, तो क्या करूं, तो कोई रास्ता नहीं है।
नहीं, लेकिन विवेक को जगाने का रास्ता है। और विवेक जग जाए, तो ईश्वर पाया ही हुआ है। विवेक जगने पर ऐसा नहीं मालूम होता कि मैंने ईश्वर को पा लिया, ऐसा मालूम पड़ता मैं कैसा पागल था, ईश्वर जो कि मिला ही था, आत्मा जो कि मेरे भीतर थी ही, वह मुझे दिखाई नहीं पड़ती थी। यानी ईश्वर...

प्रश्नः विवेक के लिए सदबुद्धि की जोड़ होनी चाहिए।

उसी सदबुद्धि के लिए यह सारा प्रयोग है। और ये जो, ये विवेक को रोकने वाले रास्ते हैं--शास्त्र और शब्द और स्मृति, ये सब विवेक रोकने वाले रास्ते हैं। क्योंकि इससे विवेक पैदा नहीं होता, इससे पकड़ पैदा होती है, श्रद्धा पैदा होती है, इंक्वायरी पैदा नहीं होती, जिज्ञासा पैदा नहीं होती। यह जो कठिनाई है, जो विवेक को रोकने वाला रास्ता है वह यह है कि तुम मान लो। यह खतरनाक है। तुम खोजो। लेकिन हम तो बच्चे को कहते हैं कि मान लो। तुम मान लो कि ऐसा, हम कहते हैं, हमारे पिता कहते हैं, ऋषि-मुनि कहते हैं, हजारों साल से लोग कहते हैं, तुम मान लो।
मान लेने की जो बात है, विश्वास कर लेने की जो बात है, वह विवेक-विरोधी है। विवेक पैदा नहीं होगा। कि दुनिया की हत्या इसी में हो गई। आज दुनिया में इतना अविवेक है, उसका सारा बुनियादी कारण धार्मिक लोग हैं, जिन्होंने अविवेक की शिक्षा दी। विश्वास के नाम पर दी है, श्रद्धा के नाम पर दी है, आस्था के नाम पर दी है। अविवेक, सारी दुनिया में अविवेक है। और जब यह अविवेक हमारे सामने आता तो हम घबड़ाते हैं कि यह क्या हो रहा है? यह क्या हो रहा है? अब यह देखिए न...

प्रश्नः उनको विवेक को लाने के लिए आप तो कहते हैं पाठ नहीं होनी चाहिए। उनको विवेक को लाने के लिए कोई आदर्शित जीवनों का अभ्यास नहीं होना चाहिए।

बिल्कुल।

प्रश्नः तो फिर विवेक स्वयंभू और स्वयंप्रेरित...

विवेक जो है, विवेक जो है, जब भी हम उसके सामने आदर्श रखते हैं तो कुंठित होता है, विवेक जो है। जैसे हम एक बच्चे को कहते हैं, तुम गांधी जैसे बन जाओ।

प्रश्नः आपने अभी जैसे स्वामी रामकृष्ण का कहा, विवेकानंद जी का कहा, आपने यह कहा।

तो मैं यह आदर्श नहीं बता रहा हूं। इनको आदर्श नहीं बता रहा हूं।

प्रश्नः उदाहरण के रूप में तो बतलाया।

तो मैं जो कह रहा हूं उसको एक्सप्लेन भर करने को। ये आदर्श नहीं हैं। मैं किसी बच्चे को नहीं कह सकता कि तुम विवेकानंद बन जाओ। यह इससे गलत कोई बात ही नहीं हो सकती। मैं तो यह किसी बच्चे को कह ही नहीं सकता कि तुम रामकृष्ण बन जाओ। यह तो बात ही गलत है और झूठी है। क्योंकि जब भी हम किसी को कहते हैं कि तुम उस जैसे बन जाओ, तभी पाखंड शुरू हो जाता है। क्योंकि यह बच्चा असल में अपने जैसा ही बन सकता है किसी और जैसा कभी बन ही नहीं सकता। आज तक कोई बच्चा बन ही नहीं सका है। एक गांधी पैदा होता, एक रामकृष्ण, एक विवेकानंद, कोई बच्चा किसी जैसा पैदा होता, हो भी नहीं सकता। होना भी नहीं चाहिए। दुनिया में जरूरत भी नहीं है एक जैसे दो आदमियों की। लेकिन जब भी हम कह देते हैं कि उस जैसे बन जाओ, तो इसके मन में एक झूठा काम शुरू होता है।

प्रश्नः नहीं, वैसे बन जाओ नहीं, वे इस तरीके से ऐसे बने।

तुम भी उस तरीके से, आखिर सवाल यह है, सवाल यह है असल में, सवाल असल में
यह है कि कौन किस तरीके से कैसा बना, अगर उसी तरीके से आप बिल्कुल चले, तो आप बिल्कुल एक नकली आदमी बन कर खड़े होंगे। आपके भीतर असली आदमी पैदा नहीं

होगा। आपके भीतर असली आदमी कभी पैदा नहीं होगा। क्योंकि हर आदमी इतना यूनीक है, इतना अद्वितीय है कि हर आदमी की जिंदगी का रास्ता भी अद्वितीय है और अलग है। और नहीं तो मेरे होने की, आपके होने की कोई जरूरत नहीं है। मैं काफी हूं या आप काफी हैं। हम इतने लोग यहां बैठे हैं, हम सब उठ कर यहां से अगर चलेंगे, हम सबके रास्ते अलग होने वाले हैं। क्योंकि हम जहां बैठे हैं हम सब अलग जगह बैठे हैं। हम सब अपनी-अपनी जगह से चलेंगे। हम सब अपनी- अपनी जगह से चलेंगे।
अभी तक व्यक्तित्व की मौलिक गरिमा स्वीकृत नहीं हुई है। अभी तक। अभी
तक हम कहते हैं किसी को आदर्श बना कर टाइप बना लेते हैं कि वैसे बन जाओ। तो उसके परिणाम यह होते हैं कि राम तो कोई बनता नहीं, रामलीला के राम बन जाते हैं बस, घूम-फिर कर इतना हो पाता है। और उससे दुनिया धीरे-धीरे झूठी होती चली गई। यह जो इतना पाखंड, और उन मुल्कों में जहां धर्म की ज्यादा शिक्षा, पाखंड ज्यादा है। उसका कुल कारण इतना है, क्योंकि धार्मिक शिक्षा यह कहती है कि इस जैसे बनो, इस रास्ते से चलो।
नहीं, मेरा कहना यह है कि रास्ते की फिकर न करें। फिकर करें विवेक की,
जो कि रास्ता खोज लेता है। हम यहां बैठे हैं, एक तो रास्ता यह है कि हमसे कहा जाए कि आगे रास्ता है वहां से निकलिए। और एक रास्ता यह है कि हमें आंख दी जाए और हमसे कहा जाए, आपके पास आंख है और रास्ता खोज लीजिए।
तो मेरा कहना यह हैः बच्चे को आंख दें, विवेक दें। सहारा दें कि उसमें खुद खोजने की, सोचने की, विचार करने की बुद्धि उत्पन्न हो कि वह अपना रास्ता खोजे। रास्ता न दें। रास्ता देना आसान है, आंख देनी कठिन है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, विवेक भीतर है, सोया हुआ है। हम थोड़ा सहारा दें, तो वह जग जाएगा। जैसे एक बीज है, हम उसे बगीचे में डाल देते हैं--पानी डालते हैं, खाद डालते हैं; अंकुर थोड़े ही निकालते हैं, अंकुर तो भीतर है। सारी स्थिति जमा देते हैं।

प्रश्नः अंकुर तो है सबमें।

हां।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

उसको हेल्प करें, सहायता करें।

प्रश्नः नो-नो। यू गिव बी शास्त्र, सम बिलीफ।

नो-नो, विथ नो बिलीफ। चाइल्ड इ.ज बार्न विथ ए इन क्वेस्ट। विथ नो बिलीफ। बिलीफ इ.ज गिवन।

प्रश्नः ऑल इन दि हिंदू शास्त्रा...

ये ही तो बिलीफ हैं। ये ही तो बिलीफ हैं। यह आपको किसने कहा? यह आपको किसने कहा? यह आपने कैसे मान लिया? यह आपने कैसे मान लिया? यह तो एक प्रोपेगेंडा है। आप हिंदू घर में पैदा हुए, एक हिंदू प्रोपेगेंडा के भीतर पले, आप बातें दोहराने लगे। यह बिल्कुल मेकेनिकल है। ये जो हम बातें मान लेते हैं, ये बिलीफस हैं। और इनसे विवेक पैदा नहीं होता।

प्रश्नः यह तो कहना मानने का जरा तकलीफ है।

तकलीफ होगी। तकलीफ होगी। यह तकलीफ होगी। तकलीफ होगी। तकलीफ होनी जरूरी है। तकलीफ इसलिए होगी कि हम, हमारा सारा माइंड, हमारा सारा माइंड बिलीफ से बना हुआ है। तो अगर हम यह कहें कि सब बिलीफस गलत हैं, तो घबड़ाहट होगी।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, न, न। यह मैं आपसे विश्वास करने को नहीं कह रहा। आई डोंट से दैट यू बिलीव मी। द ऑल बिलीवस आर फाल्स। यह मैं नहीं कह रहा। मैं तो यह कह रहा हूं कि विचार करें। और अगर ऐसा दिखाई पड़े कि बिलीफ गलत है...

प्रश्नः दैट इ.ज इनबॉर्न क्वालिटी विथ हिम।

नो, इट इ.ज नॉट इनबॉर्न। दैट इ.ज ए कल्टीवेटिड।

प्रश्नः न, आई थिंक इनबार्न।

न-न, समझ गया मैं। समझा। यह जो हम कहते हैं कि इनबॉर्न है...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न-न, समझ गया मैं आपकी बात। इनबार्न कहें, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। जब
हम यह कहते हैं कि यह इनर्बान है, इनबार्न इमिटेशन नहीं है, इनबार्न ईगो है।

प्रश्नः वॉटेवर इ.ज।

न, फर्क हो जाएगा। बहुत बड़ा फर्क हो जाएगा। जब हम कहते हैं कि यह जज है, इसका अनुकरण करो, तुम भी जज हो जाओ। जज इमिटेट करने की बात इनबॉर्न नहीं है, लेकिन अहंकार! जज को आदर मिल रहा है समाज में, रिस्पेक्ट मिल रहा है, रिस्पेक्टिबिलिटी है, लोग नमस्कार कर रहे हैं। इसके भीतर भी इनबॉर्न है कि मुझे भी लोग नमस्कार करें, मुझको भी लोग आदर दें। तो जब आप कहते हैं कि जज बन जाओ; जज यह नहीं बनना चाहता, लेकिन रिस्पेक्ट मिलेगा जज बनने से, तो यह पीछे लग जाता है। इस तरह हम एक्सप्लायट कर रहे हैं इसके ईगो को।
जब हम एक बच्चे को कहते हैं, गांधी बन जाओ--देखो गांधी कितना बड़ा महात्मा है! बच्चे के मन भी होता--बड़ा महात्मा हो जाऊं तो मुझे भी आदर मिलेगा। तो वह जो अहंकार है वह इनबॉर्न है। और उस अहंकार को एक्सप्लायट कर रहे हैं। आप कह रहे हैं--गांधी बन जाओ, राम बन जाओ, कृष्ण बन जाओ, जज बन जाओ, चोर बन जाओ, डाकू बन जाओ, नेता बन जाओ। कुछ न कुछ कह रहे हैं उसको। उसका एक्सप्लायटेशन कर रहे हैं आप उसके ईगो का। उसको आप कह रहे हैं कि तुम यह बन जाओ, तो तुमको भी ऐसा ही आदर मिलेगा--लोग नमस्कार करेंगे, पैर छुएंगे, ऊंची गद्दी पर बिठाएंगे, तुमको भी आदर मिलेगा।
आदर पाने की इच्छा इनबॉर्न है। और आप उसका एक्सप्लायटेशन कर रहे हैं।
और एंबीशन में लगा रहे हैं ईगो को। अगर दूसरे तरह की एजुकेशन हो, दूसरे तरह का कल्चर हो, तो हम इस अहंकार को किसी दूसरे काम में लगाएंगे, इस काम में नहीं। इससे खतरनाक दुनिया पैदा हुई। जब हम कहते हैं, इस जैसे बन जाओ, तो एक काम्पिटेटिव वर्ल्ड पैदा हुई है। हर आदमी दूसरे जैसा बनने की कोशिश में लगा हुआ है। उसके परिणाम सामने हैं। दस साल में एक महायुद्ध होगा। जरूरी हो गया, क्योंकि एक आदमी दूसरे आदमी जैसा बन रहा है। एक नेशन दूसरे नेशन जैसा बनने की कोशिश में लगा हुआ है। सारे लोग इस कोशिश में लगे हुए हैं। एक कांफ्लिक्ट और एक इस्ट्रगल पैदा हुई, एक वायलेंस पैदा हुई।
लेकिन, क्या यह नहीं हो सकता कि यह जो हमने कोशिश की है कि तुम इस जैसे
बन जाओ, इसको हम कुछ और रास्ते पर ले जा सकें। जैसे मेरा खयाल यह है, हर

बच्चे को कहा जाना चाहिए कि तुम किसी जैसे बनने की कोशिश मत करना, क्योंकि तुम खुद ही कुछ बनने को पैदा हुए हो।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं, वह आप नहीं होने दे रहे। वह आप नहीं होने दे रहे। आप नहीं होने
दे रहे।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

यह जो आप कहते हैं न, यह जो आप...

प्रश्नः... तो भी विवेक जगाने का एक रास्ता।

न, इसको थोड़ा...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

मैं समझा, मैं समझा आपकी बात। आप जब भी यह कहते हैं कि गांधी जैसे बनो,
हो सकता है आपका यही खयाल हो कि आप गांधी की कॉपी करो यह नहीं कहना चाह रहे हैं, यह आप नहीं कहना चाह रहे हैं, लेकिन आप बच्चे के माइंड में एक आइडियल पैदा कर रहे हैं, एक कंसेप्ट पैदा कर रहे हैं कि ऐसा आदमी होना चाहिए। गांधी जैसा होना चाहिए या राम जैसा होना चाहिए। आप एक कंसेप्ट पैदा करते हैं। बच्चा एक तरह का है, एक तरह का कंसेप्ट पैदा कर रहे हैं। एक डिस्टेंस है दोनों के बीच में। उस कंसेप्ट को पाने के लिए बच्चा कोशिश करेगा कि मैं इस तरह का हो जाऊं। गांधी ने एक खास सिचुएशन में एक तरह से एक्ट किया, मैं भी करूं। गांधी ने सादगी जीवन में रखी, मैं भी सादा बनूं। गांधी नॉन-वायलेंट हैं, तो मैं नॉन-वायलेंट हो जाऊं। एक कंसेप्ट आप पैदा कर रहे हैं, एक पैटर्न पैदा कर रहे हैं, जिसमें बच्चा अपने को ढालना शुरू करेगा।
फर्क समझ लें यह आप। बच्चे के सामने एक पैटर्न है जिसमें वह अपने को ढालना शुरू करेगा। यह एक स्थिति है। और मैं यह कह रहा हूं, बच्चे के सामने कोई पैटर्न नहीं है। बच्चे की अपनी क्वालिटीज हैं, बच्चे की अपनी क्षमताएं हैं, अपनी कैपेबिलिटिज हैं, अपनी संभावनाएं हैं, सीड्स हैं अपने। कोई पैटर्न नहीं है आगे। इनको हम सहारा दे रहे हैं बढ़ने के लिए। बिना किसी पैटर्न के आगे इनको हम बढ़ने का सहारा दे रहे हैं। तो बच्चा उस स्थिति में पहुंचेगा जहां बच्चे को पहुंचना चाहिए। जहां बच्चे के भीतर की अपनी आत्मा उसे उपलब्ध होगी। और जब हम पैटर्न देते हैं, तो उसमें काट-छांट होगी, च्वाइस होगी। बच्चा एक चीज को हटाएगा, एक को लाएगा, एक को सम्हालेगा। च्वाइस होगी न। एक पैटर्न होगा, एक ढांचा होगा। एक ढांचे में बच्चा खड़ा होगा। यह हो सकता है कि दस-पंद्रह-बीस साल की निरंतर कोशिश के बाद बच्चा कुछ-कुछ गांधी जैसा आदमी खड़ा हो जाएगा। तो यह आदमी झूठा होगा। और इस तरह के व्यक्तित्व से इस बच्चे को कभी कोई शांति नहीं मिलेगी। क्योंकि इसके भीतर बहुत कुछ दबा देगा यह, बहुत कुछ हटा देगा, बहुत कुछ सम्हाल लेगा। यह एक च्वाइस होगी। यह ग्रोथ नहीं होगी।
और एक बच्चा है जिसके सामने बिल्कुल फ्रीडम है, आगे कोई पैटर्न नहीं है, कोई आइडिया नहीं है, उसके भीतर कुछ क्वालिटीज हैं। प्रेम है। हम कहते हैं, प्रेम को बढ़ाओ, विकसित करो। हम यह नहीं कहते कि गांधी जैसा प्रेम करो। क्योंकि गांधी जैसा प्रेम एक च्वाइस है। और गांधी एक लिमिटेड च्वाइस है। और आदमी हजार ढंग से प्रेम कर सकता है। कोई गांधी जैसे प्रेम करने की जरूरत भी नहीं है। और मेरा तो कहना यह है कि मोहनदास करमचंद गांधी के अलावा उस तरह से कोई एक्ट कर ही नहीं सकता दूसरा आदमी। क्योंकि न वैसी सिचुवेशन हो सकती है। न वैसा वक्त हो सकता है। न वैसा व्यक्तित्व हो सकता है। न वे क्वालिटीज हो सकती हैं। कोई दूसरा आदमी वैसा एक्ट कर ही नहीं

सकता। और जब भी कोई दूसरा आदमी एक्ट करने की कोशिश करेगा, तो एक तरह की अपने ऊपर जबरदस्ती करेगा। अनिवार्य रूप से करेगा। अपने को तोड़ेगा, फा.ेडेगा, मिटाएगा, बनाने की कोशिश करेगा। अगर बन भी गया किसी तरह से, तो एक झूठा आदमी खड़ा होगा। वह आपने चाहा हो या न चाहा हो। लेकिन आपने आइडिया पैदा किया उसके दिमाग में कि ऐसा।
मेरा कहना, आइडिया पैदा न करें। बच्चे की जो, जो-जो इनबॉर्न व्वालिटीज
आप कहते हैं, हैं उसमें कुछ। तो सब बच्चों में हैं। उनमें कौन सी क्वालिटी जीवन के लिए आनंद से भरती हैं, कौन सी क्वालिटी जीवन को शांति से भरती हैं, कौन सी क्वालिटी विवेक से भरती हैं, उसकी तरफ बच्चे को सहारा दें। सामने एक कंसेप्ट खड़ा मत करें, एक आइडियालॉजी खड़ी मत करें। सहारा दें। प्रेम के लिए सहारा दें। समझ में आने वाली बात होगी उसके लिए, उसका प्रेम विकसित हो। हो सकता है गांधी से बड़ा प्रेम उसके भीतर से निकले। और यह तो तय है कि उसका प्रेम जिस ढंग का निकलेगा वह किसी दूसरे जैसा होने वाला नहीं है, वह बिल्कुल अपनी किस्म का होगा।
और यह जो यूनीकनेस है एक-एक इनडिविजुअल की, यह जो गरिमा है, जब यह पूर्ति के करीब पहुंचती है, तो जो शांति मिलनी शुरू होती है, वही शांति है। एक चमेली का फूल है, एक गुलाब का फूल है; हम चमेली के फूल को कहें कि गुलाब के फूल जैसे हो जाओ। अगर कोशिश करके वह फूल गुलाब जैसा होने की कोशिश करने लगे, तो एक बात तय है, अगर किसी तरह गुलाब का फूल हो भी जाए, तो भी न तो उसमें गुलाब की वह गंध होगी, न वह रौनक होगी, न वह शान होगी, जो उसके चमेली होने में होती। और दूसरी बात यह है कि एक तो वह हो ही नहीं पाएगा। और इस कोशिश में एक बात तय है, गुलाब होने की कोशिश में चमेली का फूल चमेली नहीं हो पाएगा, और गुलाब तो हो ही नहीं पाएगा। एक, एक बिल्कुल क्रिपिल्ड, यह हमारी सारी दुनिया में जो क्रिपिल्ड आदमी पैदा हो रहा है, उसका कुल कारण ये आइडियाज हैं। ये कंसेप्ट, आइडियालॉजी और आइडियलस। ऐसे बनो, ऐसे बनो।
आप देखिए कि पांच-छह हजार साल के इतिहास में मनुष्य-जाति के आप मुश्किल से ऐसे सौ आदमी निकाल पाएंगे जिनके आप कहें कि ये आइडियल हैं। और बाकी सारे लोगों का क्या हुआ? बाकी सारे लोग कहां गए? और मैं आपको यह भी कह दूं, ये वे ही लोग हैं जिन्होंने किसी को आइडियल नहीं माना। यह बड़े मजे की बात है। ये सौ लोग वे ही लोग हैं जिनकी ग्रोथ बिल्कुल इनडिपेंडेंट है। गांधी हैं, अगर गांधी हिंदुस्तान के किसी भी संन्यासी को अपना आइडियल बना लें, तो गांधी पैदा ही नहीं होगा। रामकृष्ण को बना लें, या विवेकानंद को बना लें, या शंकराचार्य को बना लें, या बुद्ध को बना लें, या महावीर को, गांधी पैदा नहीं होगा। ये गांधी बिल्कुल गड़बड़ चीज हैं, इन सबको अगर आप आइडियल मानते हैं तो। बुद्ध को अगर आइडियल मानते हैं तो, महावीर को आइडियल मानते हैं तो। महावीर राज्य छोड़ कर भागते हैं, यह गांधी राजनीति में खड़ा हुआ है बिल्कुल बिना भय के। यह इसे कोई घबड़ाहट नहीं मालूम हो रही है यहां, यह बल्कि जिंदगी में खड़ा हुआ है वहां सामने। आपका सारा संन्यासी संसार छोड़ कर भागता है, यह संसार में खड़ा हुआ है। यह अगर किसी को भी आइडियल बना ले, तो यह आदमी गांधी नहीं हो सकता। यह हो जाता, ऐसे बहुत से संन्यासी घूम रहे हैं सारे मुल्क में, उनमें से एक यह भी होता। इसका कोई पैटर्न नहीं है, इसकी ग्रोथ है। और बिल्कुल अननोन ग्रोथ है। इसलिए गांधी कहते हैं कि मैं एक्सपेरिमेंट कर रहा हूं। कर रहा हूं, यह ठीक लगता है, यह ठीक लगता है। करता हूं, देखता हूं। नहीं ठीक लगता, छोड़ता हूं। जो ठीक लगता फिर उसको करता हूं। एक ग्रोथ है।
तो गांधी में एक ग्रोथ है, और ग्रोथ जहां होती है वहां लाइफ होती है।
और जहां पैटर्न होता है वहां लाइफ नहीं होती है।
पैटर्न में मशीन ढाल सकते हैं, जब आप आदमी को ढालने लगते हैं तो आप गलती कर गए। आदमी में कुछ फर्क रखिए, वह पैटर्न नहीं है। कोई ढांचे में मत ढालिए उसको।
तो बच्चे के सामने तस्वीर मत लटकाइए कि यह तेरा ढांचा है तू ऐसा बन जा। इससे नुकसान हुए। क्राइस्ट का ढांचा लटका कर कितने पादरी क्राइस्ट

जैसी शक्ल-सूरत और लटकाए हुए क्रास घूम रहे हैं, एक क्राइस्ट तो पैदा होता नहीं। और क्राइस्ट जो पैदा हुआ वह बिल्कुल ढांचे के बाहर। उस वक्त का जो ढांचा था उसमें बैठा नहीं तब तो लोगों ने फांसी लगाई, नहीं तो फांसी क्यों लगाते अगर आइडियल होता वह, आदर्श होता। बिल्कुल आदर्श नहीं था यह आदमी। उस जमाने का जो आदर्श था, जिनको जिनके बीच में था उनको लगा कि यह गड़बड़ है। इसको मारना चाहिए, इसको जिंदा रखना ठीक नहीं है।
तो जो हम जिनको आदर्श बनाए हुए हैं--कभी आपने सोचा इस बात को कि वे जब पैदा हुए थे, जब थे, तो वे कुछ गड़बड़ लोग थे। इनमें कोई आदर्श नहीं थे। तो दुनिया में सौ-पचास थोड़े से लोग हुए हैं जिनमें लिविंग लाइफ में कुछ ऊंचाइयां पाई हैं। और बाकी लोग इमिटेशन कर रहे हैं। या तो इमिटेशन करने में सफल हो जाते हैं, तो भी मेरा कहना है, व्यर्थ हो गए वे। असफल हो जाते तो भी व्यर्थ हो गए। दोनों हालतों में असफल हो जाते हैं। क्योंकि उसके भीतर जो पैदा होना था वह पैदा नहीं हो पाता। तो एक-एक व्यक्ति की व्यक्तिगत खूबी, उसकी यूनीक इनडिविजुअलिटी की स्वीकृति नहीं है हमारे धर्म में, हमारे विचार में, हमारे समझ में।
मेरा कहना है, प्रत्येक व्यक्ति अपने जैसा है। और इसलिए उससे मत कहिए
कि तुम किसी और जैसे हो जाओ। उससे यह कहिए कि जो तुम्हारे भीतर है, जो तुम्हारे भीतर पोटेंशियल है उसे फैलाओ, उसे विकसित करो। हम उसके सहारे बनेंगे। हम उसे ढांचा नहीं देंगे, हम उसके साथी होंगे। हम उसे आदर्श नहीं देंगे, हम उसे सहारा देंगे।
हम एक पौधे को गड़ाते हैं जमीन में बीज को, हम उसको आदर्श नहीं देते कि तुम ऐसे बन जाना। हम सिर्फ खाद देते हैं, पानी देते हैं; साथ देते हैं, बागुड़ लगा देते हैं कि तुम्हें बकरी न चर जाए। तो वह बड़ा होगा।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

यह जो आर्डरली ग्रोथ है न, यह जो आर्डरली...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां-हां, मैं समझा। मैं समझा। हम बहुत जल्दी नतीजे ले लेते हैं। इतनी जल्दी कनकलूजन न लें। असल में, असल में, यह जो हम आर्डरली सोसाइटी की फिकर करते हैं न, बिल्कुल ठीक कहते हैं। इसी की फिकर का परिणाम धीरे-धीरे यह हो रहा है कि दुनिया एक दिन इतनी आर्डरली होगी कि इनडिविजुअलस होंगे ही नहीं। आप आर्डर में लाने की जो हमारी फिकर है उसका मतलब, आर्डर में आप तब आ जाएंगे जब आपके पास मस्तिष्क बिल्कुल न हो। आपके पास बुद्धि बिल्कुल न हो, आप बिल्कुल आर्डर में आ जाएंगे। ये कुर्सियों को जहां रख दीजिए वहीं रखी रहती हैं। पंखे को चला दीजिए वह वैसा ही चलता रहता है, बीच में कहता नहीं कि हम चलने से इनकार करते हैं, हम नहीं चलेंगे। आदमी में थोड़ी गड़बड़ है, उसके पास दिमाग है। तो आदमी बिल्कुल आर्डर में कभी नहीं हो सकता। और जिस दिन हो जाएगा उससे बड़े दुर्भाग्य का कोई दिन नहीं होगा। उससे बड़े दुर्भाग्य का कोई दिन हो सकता है कि आदमी बिल्कुल आर्डर में हो जाए? लेकिन, समाज चाहता है कि बिल्कुल आर्डर में हो जाएं, पॉलिटिशियन चाहता है कि बिल्कुल आर्डर में हो जाएं। क्योंकि जहां आर्डर है वहां रिबेलियन नहीं है, वहां कोई विद्रोह नहीं है, वहां कोई तोड़-फोड़ नहीं है। सारी दुनिया के डिक्टेटर्स चाहते हैं कि आर्डर में हो जाएं। बिल्कुल आर्डर में हो जाएं। हम कहें लेफ्ट, तो आप लेफ्ट घूमें, हम कहें राइट, तो राइट घूमें। हम कहें, खड़े हो जाओ, तो खड़े हो जाएं। वे तो हमको एक मिलिटरीराइज करना चाहते हैं सारी दुनिया में। और उसके लिए करने का एक रास्ता सबसे अच्छा है कि हमारे भीतर जो थोड़ी सी बुद्धि है वह और खत्म कर दी जाए। उसको खत्म करने की कई तरकीबें हैं--विश्वास पैदा करो, तो खत्म होती है; शास्त्र पकड़ाओ, तो खत्म होती है; हिंदू पकड़ाओ, मुसलमान पकड़ाओ, तो खत्म

होती है; मस्जिद और मंदिर पकड़ाओ, तो खत्म होती है। कुछ चीजें पकड़ा दो, बिलीफस पकड़ा दो। विवेक दो, खतरा है। विवेक तो रिबेलियस है।
लेकिन मेरा कहना यह है कि अगर सारी दुनिया में बहुत विवेक हो, तो विवेक का भी एक अपना आर्डर है। आपको मैं बताऊं, इसको समझ लें थोड़ा। अभी विवेक रिबेलियस है, क्योंकि बिलीफ से जो दुनिया बनी है, वह गलत है। इसलिए विवेक को रिबेलियन करना पड़ता है।
हम यहां इतने लोग बैठे हुए हैं, अगर हम सब लोग हिंदुस्तान में थे, गुलाम थे दो सौ साल तक, हम बड़े आर्डरली लोग थे, हम गुलामी के खिलाफ कुछ नहीं करते थे। दस-पच्चीस गड़बड़ लोग पैदा हुए, वे कहने लगे कि हमको आजाद होना है। ये खतरनाक लोग हैं, इन्होंने सोच-विचार शुरू कर दिया, ये कहते हैं कि हमको आजाद होना है, हमको बदलना है, हिसाब बदलना है, यह ठीक नहीं है यह हिसाब। ये दस-पांच लोगों में भी विवेक न होता, तो ठीक था, हम मजे से जी रहे थे, हम अपने आराम से चले जा रहे थे।

प्रश्नः आर्डरली।

आर्डरली। बिल्कुल आर्डर में थे। इन्होंने केऑस्क पैदा कर दी। ये गांधी गड़बड़ आदमी हैं। ये केऑटिक हैं, अनार्किक हैं। असल में दुनिया में, लेकिन यह अनार्किक कब तक है? यह तब तक विवेक अनार्की पैदा करेगा जब तक कि विश्वास गड़बड़ पैदा कर रहा है। जिस दिन दुनिया में बहुत अधिक लोगों के पास विवेक होगा अनार्की की कोई जरूरत नहीं रह जाएगी। विवेक विल क्रिएटिड ओन आर्डर।
अभी विवेक का आर्डर पैदा नहीं हुआ दुनिया में। जो आर्डर है वह अविवेक
का है, इग्नोरेंस का आर्डर है अभी। जब तक नालेज का आर्डर पैदा नहीं होता, तब तक तो रिबेलियन होगा। और मैं कहता हूं, होना चाहिए। यह तो बड़ा खतरनाक है अगर नहीं होगा तो।
हमारे मुल्क की हालत यह है। गरीबी सह रहे हम आज चार हजार, तीन हजार साल से, लेकिन हम कहते हैं कि हमारे कर्म का फल है। पिछले जन्म में हमने बुरा काम किया था उसका हम फल भोग रहे हैं, इसलिए हम गरीब हैं। इसको हम दोहरा रहे हैं तीन हजार साल से। हम कभी की गरीबी मिटा सकते थे अपने मुल्क में, लेकिन हम उसको नहीं मिटा पाए। और नहीं मिटा पाएंगे, जब तक हम इस बात को दोहराए चले जा रहे हैं। आर्डर है, इसमें कोई गड़बड़ करने की सवाल ही नहीं है। हम सब चीजों को सहते चले जाते हैं। हम कहते कि यह आर्डर है। तो आर्डर, डेड आर्डर नहीं होना चाहिए।

प्रश्नः सेल्फ ग्रोथ।

एक सेल्फ ग्रोथ होनी चाहिए। एक फ्रीडम होनी चाहिए माइंड को। एक इनडिविजुअलिटी होनी चाहिए। और मैं कहता हूं कि इस दुनिया से अनार्किक दुनिया भी बेहतर होगी, जैसी यह दुनिया है। इसको, इसको क्या है इस आर्डर से।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, न, न। ये हमारे मन को समझाने के कंसोलेशंस हैं। हिंदू कहता है कि हिंदू धर्म बहुत अच्छा है। मुसलमान कहता है, मुसलमान धर्म अच्छा है। ईसाई कहता है, ईसाई धर्म अच्छा है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

देखिए, सवाल यह नहीं है। सवाल यह नहीं है। सवाल यह नहीं कि आपका रिटर्न कांस्टिट्यूशन है या नहीं। सवाल यह है कि जो भी है रिटर्न, अनरिटर्न, उस पर आप फेथ करते हैं या उसको विचार करते हैं, सवाल यह है। आप उस पर विश्वास करते हैं या विचार करते हैं, सवाल यह है। सवाल यह नहीं कि लिखा

है कि गैर-लिखा है। अगर आप उस पर विश्वास करके मानते हैं, अगर आप मानते हैं कि वेद जो है भगवान की लिखी हुई किताब है, तो आप वही बात कर रहे हैं जो कि क्रिश्चियन कर रहा है, वह कहता है, यह बाइबिल जो है ईश्वर के पुत्र की लिखी किताब है, कुरान जो है यह भगवान के भेजा हुआ पैगंबर की किताब है।

प्रश्नः आई डोंट थिंक ए एनी हिंदू से दैट। तो विवेक बिलीव ए समथिंग,
बट दि हिंदू एण्ड इंटेलेक्चुअल हिंदू, नेवर...

इंटेलेक्चुअल तो जो है वह समझिए कि अगर ठीक से इंटेलेक्चुअल है तो हिंदू-मुसलमान हो नहीं सकता। यह तो नॉन-इंटेलेक्चुअल की बात है हिंदू होना, मुसलमान होना। यानी मेरा मतलब यह है, अगर आप इंटेलेक्चुअल हैं, तो आप हिंदू हो नहीं सकते, न आप मुसलमान हो सकते हैं।

प्रश्नः वॉट हेपंड दैट सेंस इनडिविजुअलिटी युनिवर्सलिटी, दे कुड थिंक ऑफ इट, इनडिविजुअलिटी टु युनिवर्सलिटी, दे शुड बी पैकेज ऑफ टीचिंग, बट वी शुड गिव अप टु... इ.ज बॉर्न, फ्रॉम मैन टु मैन देयर इ.ज नो एनी कंसेप्ट ऑफ रिलीजन, क्रीड ऑर ऐनी अदर।
बट दैन क्वेश्चन इ.ज अराइज, वॉट टु डू फ्रीडम, फ्रीडम गवर्नमेंट... इंटरनेशनल।

न-न, सभी मैटर में। मैं कब कहता हूं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण ठीक नहीं।)

हां-हां, बिल्कुल ठीक है, होना चाहिए। होना चाहिए न। होना चाहिए न।
बिल्कुल होना चाहिए।

प्रश्नः एंटी होना चाहते हैं।

बिल्कुल होना चाहिए। बिल्कुल होना चाहिए। होना चाहिए।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण ठीक नहीं।)

यह जो है न, यह जो आपको, अनार्की से इतना घबड़ाते क्यों हैं?

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण ठीक नहीं।)

डाउटफुल होना चाहिए। डाउटफुल होना चाहिए।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण ठीक नहीं।)

हां-हां, यह जो है न, यह जो है, आप पौधे के साथ जो व्यवहार करते हैं वही आदमी के साथ करना चाहते हैं। यही आपकी गलती है। मैं एक पौधे को लगाता हूं, अगर उसकी फिकर नहीं करूंगा जंगल पैदा हो जाएगा। क्योंकि पौधे को विवेक नहीं दिया जा सकता। पौधे को विवेक नहीं दिया जा सकता। लेकिन एक आदमी को विवेक दिया जा सकता है। और आप कौन हैं इसके जिम्मेवार कि एक आदमी को आप जंगली नहीं होने देंगे और एक बगीचा बनाएंगे, आप कौन हैं? आप भी एक आदमी हैं न? आपको यह हक कहां से मिल जाता?
मैं पिता हूं एक बच्चे का इससे मुझे यह हक मिल जाता है कि बच्चे को मैं बनाऊं जैसा मैं चाहता हूं? और मैं खुद कौन सा आदमी हूं, मैंने खुद कौन सी चीजें पा लीं, मैंने खुद जीवन में क्या जान लिया जो मैं बच्चे को बनाने की कोशिश कर रहा हूं? मैं ज्यादा से ज्यादा अपनी एक नकल और पैदा कर दूंगा। जो

कि मैं खुद ही जमीन पर एक भार था और एक परेशानी था। यह बच्चा भी एक भार और परेशानी हो जाएगी।
मेरा कहना यह है, छह-सात हजार या दस हजार साल से हम आदमी को ढांचे में ढाल कर बनाने की कोशिश किए हैं, यह दुनिया पैदा हुई है। आप कहते हैं कि यह अनार्की पैदा हो जाएगी। इससे ज्यादा बदतर दुनिया हो सकती है जैसी दुनिया है?

प्रश्नः तो इसलिए कहते हैं कि मेरा विवेक और आपका विवेक अलग होगा।

कोई हर्जा नहीं।

प्रश्नः फिर वे कहते हैं कि हरेक का विवेक अपना-अपना होगा।

अगर मैं आपको कहूं, इसको थोड़ा विचार करेंगे, तो मेरा विश्वास और आपका विश्वास अगर अलग-अलग हो तो खतरनाक दुनिया बनेगी, क्योंकि विश्वास लड़वा देगा। विवेक लड़वाएगा नहीं, एक बात। क्योंकि विवेक के साथ पहली शर्त यह है कि वह दूसरे को भी मौका देने के लिए राजी है। और मान्यता, विश्वास के साथ यह बात नहीं है। मैं कहता हूं, मेरा विश्वास ठीक आपका गलत।

प्रश्नः बिलीफस और विवेक में वहां फर्क ही नहीं है।

बिलीफस तो खतरनाक हैं, क्योंकि मैं आपकी बिलीफ को कहता हूं गलत। और इसको मैं विचार करने को राजी नहीं हूं। मैं कहता हूं, गलत, तो गलत और मेरी ठीक, तो ठीक। और अगर ज्यादा गड़बड़ हो तो तलवार से निर्णय कर लेते हैं कि कौन ठीक है और कौन गलत है। हिंदू-मुसलमान यही कर रहा है। तय कर लेता है कि तलवार निकाल लो, तो हम तय कर लेते हैं कौन ठीक।
बिलीफस के पास विचार करने का तो मौका नहीं है, तलवार चलाने का मौका है। तो तलवार चलती रही पांच हजार साल से। लेकिन विश्वास से अलग विवेक की बात यह है कि अगर आपकी बात मुझे गलत लगती है तो मैं समझाऊंगा। और मेरी बात आपको गलत लगती है तो आप समझाएंगे। झगड़ा वहीं शुरू होगा जहां विश्वास आ जाएगा और विवेक खत्म हो जाएगा। वहीं झगड़ा शुरू होगा। और अगर हम विवेक के अंत तक अनुगामी हों, तो झगड़े की कोई गुंजाइश नहीं। एक सीमा आ जाएगी कि मेरा और आपका विवेक एक हार्मनी पैदा कर गए। और विश्वास से तो कभी हार्मनी पैदा हो नहीं सकती। क्योंकि कोई रास्ता ही नहीं, कोई ब्रिज नहीं मेरे-आपके बीच। आप हिंदू हैं, मैं मुसलमान हूं, ब्रिज है ही नहीं बीच में कोई।

प्रश्नः तो फिर विवेक समझने और समझाने में है?

वह है न।

प्रश्नः पहले मन में आती है या बुद्धि में आती है?

बात करनी पड़े। असल में, असल में--

प्रश्नः तो वह कहां आती है पहले विवेक? क्या मन में आती है?

ठीक ऐसे कभी बात करनी पड़े। लेकिन मैं कहूंगा कि ऐसी दुनिया जो विवेक
से भरी हो अगर अराजक भी हो तो भी स्वागत योग्य है। ऐसी दुनिया से जो कि बिल्कुल आर्डर में हो और जहां विवेक न हो, ऐसी दुनिया से। यानी ऐसी मृत्यु बेहतर जो विवेक से आए, उस जीवन के बजाय जो विश्वास से आता। वह जीवन ही नहीं है फिर, वह तो मुर्दगी है। एक कब्रिस्तान पर शांति होती है, उस तरह की शांति हमारे घरों में भी रही आए तो उसका कोई मतलब नहीं है। उसका कोई मतलब नहीं है। उसका कोई मतलब नहीं।

प्रश्नः तो आप ही का एक उदाहरण है कि एक ने पूछा कि मुझे, तपस्या में बैठा हुआ था और ब्रह्म को जानना चाहता था, किसी ने जाकर उसको पूछा कि तुम ब्रह्म जानना चाहते हो? उसने कहा कि मुझे बताइए कि ब्रह्म कहां है? तो उन्होंने आलिंगन दिया। और भी पूछा, बात नहीं कर रहा है, और ज्यादा आलिंगन दिया, और उस आलिंगन देने में ही उन्होंने उसको बतलाया कि यहां ब्रह्म है।

बताया जा सकता है।

प्रश्नः तो वह आलिंगन लेने के अंदर जो भीतर कल्पना आती है कि प्रेम का, वह प्रेम ही वह यह है, वहां विवेक वह काम करता है।

बस दो बातें अगर मनुष्य के जीवन में संभव हो जाएं--उसके मस्तिष्क में विवेक और हृदय में प्रेम हो, तो बात पूरी हो जाती है। और किसी तरह की, और कुछ करने की जरूरत नहीं है।

प्रश्नः आप पूछते हैं, विवेक को भी छोड़ देना है, प्रेम को छोड़ देना है।
ये दोनों भी छोड़ दीजिए।

हां, यह भी सोचा जा सकता है।

प्रश्नः दो दोनों भी छोड़ दीजिए।

यह इसलिए नहीं छोड़ सकते कि हम-आप, लेकिन...

प्रश्नः आप जिसको विवेक समझते हैं हो सकता है कि वह बड़ा होने के बाद उसको लोग न मानें।

हां-हां। मैं आपकी बात समझा।

प्रश्नः हमने आपको आज देखा, तो भई हमारे से पहले यह विवेक कह कर यह गलत चीज बताई, बहुत अच्छा होता कि अगर वे अच्छी चीज बताते।

नहीं, आप विवेक कह कर गलत चीज बता नहीं सकते।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न-न, आप मेरी बात नहीं समझे। आप मेरी बात नहीं समझे। आप मेरी बात नहीं समझे। जब तक आप बिलीफस न दें, तब तक, तब तक कोई खतरा नहीं है। विवेक कोई कंसेप्ट थोड़े ही है देने का।
जैसे एक बच्चा है, हम उसे व्यायाम करवाते, उसे स्वास्थ्य मिल जाता है।
तो स्वास्थ्य तो एक प्रगाढ़, एक ठोस चीज है। ठीक वैसे ही अगर हम उसे संदेह करना सिखाएं, तो उसे विवेक मिलना शुरू होता है। संदेह करना सिखाएं। तो विवेक को लाने का जो मैथड है वह तो राइट डाउट है, उसे हम संदेह करना सिखाएं तो विवेक आता है। और जब मैं उसे संदेह करना सिखाऊंगा तो अपने पर संदेह करना भी सिखाता हूं।

प्रश्नः संदेह का माने क्या? मैंने पढ़ा फिर तो मुझे संदेह का माने नहीं मालूम पड़ा। तो आपके सारे इसमें संदेह की कल्पना, जैसे हम दूसरे शब्दों में लेते, वही है या--

क्या खयाल आपको?

प्रश्नः संदेह यानी डाउट।

हां-हां, डाउट ही। डाउट सिखाएं बच्चे को। डाउट से बेहतर कुछ भी नहीं है।

प्रश्नः आपका कहना है कि कोई चीज बगैर क्वेश्चन के... कबूल न करें।

नहीं कबूल करें। नहीं कबूल करें। न हम कोशिश करें उसको कि वह कबूल कर
ले, यह भी कोशिश न करें।

प्रश्नः जैसे पिता ने बच्चे को नहीं समझाया, तो वह बच्चा हमेशा पिता
के पास तो रहता नहीं, समाज में और भी लोग हैं।

समझा मैं, समझा मैं।

प्रश्नः किसी ने हिंदू बच्चे से कह दिया कि तुम्हारा मजहब, तुम्हारा
मत बिल्कुल गलत है, हमारा इस्लाम ठीक है। तो बच्चा समझ गया बहुत ठीक कहा। पिता...

नहीं-नहीं, पिता ने अगर डाउट ठीक सिखाया हो, तो वह नहीं मानेगा। पिता
ने डाउट नहीं सिखाया, तो मान सकता है। आप मेरी बात नहीं समझ रहे। अगर पिता ने डाउट सिखाया है उसे करना, तो कोई मुसलमान उसे यह कहेगा कि इस्लाम अच्छा है, तो डाउट करेगा। जिस बच्चे को डाउट सिखाया उसे तो कोई कनवर्ट कर नहीं सकता। वह तो दुनिया में एक अपने किस्म का, उसको तो आप कभी इस तरह से क्रिश्चियन और मुसलमान बना नहीं सकते, कुछ नहीं कर सकते, हिंदू नहीं बना सकते, जैन नहीं बना सकते। और अगर वैसा बच्चा जिसने डाउट करना सीखा है...

प्रश्नः आप भगवान को मानते हैं।

मैं किसी चीज को मानता नहीं, जिस चीज को जानता हूं उसको जानता हूं और जिसको नहीं जानता नहीं जानता।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं, जानता हूं, मानता नहीं।

प्रश्नः यू बिलीव इन गॉड?

नो-नो, आई डोंट बिलीव, आई नो।

प्रश्नः डू यू बिलिव एक्झिस्टेंस ऑफ गॉड?

नो।

प्रश्नः यू डोंट बिलिव।

आई नो।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

आई नो, आई नॉट ए बिलिव, आई नो। मुझसे कोई पूछे कि आप प्रेम में विश्वास करते हैं कि नहीं? तो मैं कहूंगा कि मैं प्रेम को जानता हूं, विश्वास क्यों करूंगा? मैं प्रेम करता हूं।

प्रश्नः इसमें तो बिलीव ही रहेगी।

न-न, बिलीव तो तभी आप करते हैं जिसको आप नहीं जानते हैं। ए बिलीव इन इग्नोरेंस।

प्रश्नः यू नो दि गॉड एक्झिस्ट?

गॉड एक्झिस्ट यह बिलीव करने वाले का कहना है। आई नो गॉड इट सेल्फ इ.ज एक्झिस्टेंस। बिलीव जो करता है, वह कहता है, गॉड एक्झिस्ट। जो जानता है, वह कहता है, एक्झिस्टेंस इ.ज गॉड।

प्रश्नः आई एम गॉड।

एक्झिस्टेंस इ.ज गॉड। देयर इ.ज नो आई, नो दाउ। जब तक आई और दाउ है तब तक आपको पता भी नहीं उसका कि गॉड क्या है। अगर कोई कहता है कि आई नो गॉड, तब भी गड़बड़ बात है। क्योंकि "आई" तो बचता नहीं। देयर इ.ज ए नोइंग, एण्ड नो, आई नोइंग, देयर इ.ज ए नोइंग। देयर इ.ज ए नोइंग।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

दैट इ.ज ए बिलीफ। दैट नॉट नोइंग। बिलीफ इ.ज ए इग्नोरेंस।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, न, न। देयर इ.ज नो क्वेश्चन ऑफ प्रूफ ऑर डिसप्रूफ। देयर इ.ज नो क्वेश्चन ऑफ प्रूफ ऑर डिसप्रूफ। बिलिवमेंट यी से आई बिलीफ, यू हैव सप्रेसड द डाउट। बिलीफ इ.ज सप्रेसिव ऑफ डाउट। जब मैं कहता हूं, मैं विश्वास करता हूं, इसका मतलब यह है कि मैंने संदेह को अपने भीतर दबा दिया। नहीं तो मैं यह क्यों कहूंगा कि मैं विश्वास करता हूं। विश्वास करने का मतलब यह है कि मेरे भीतर डाउट है। डाउट को मैंने दबा दिया और मैंने एक ट्रेडीशन को पकड़ लिया और मैं कहता हूं कि मैं विश्वास करता हूं। जितने जोर से आप कहते हैं कि मैं विश्वास करता हूं उतने ही बड़े डाउट को अपने भीतर दबाए हुए हैं। जिसके भीतर कोई डाउट नहीं है उसके भीतर बिलीफ भी नहीं रह जाती। वह चीजों को जानता है।
जैसे मुझसे कोई पूछे कि आप विश्वास करते हैं कि क्या वह दरवाजा है? डू
यू बिलीव इन द डोर? तो मैं कहूंगा कि इसमें बिलीव का क्या सवाल है। आई नो दैट इ.ज ए डोर। इसमें बिलीव का कहां सवाल है।

प्रश्नः आई अंडरस्टैंड। आई वा.ज इन एक्झिस्टेंस देयर इ.ज ए गॉड।

यह आप अपनी बिलीफ के लिए सपोर्ट खोजते होंगे तो गलती हो जाएगी। जब आप कहते हैं, जब हम कहते हैं कि देयर इ.ज ए गॉड, तब मेरा जानना है कि यह एक बिलीफ होगी। मैं तो यह अनुभव कर पाया कि जानता हूं, ऐसा दिखाई पड़ता है। दैट व्हीच इ.ज यू मे कॉल इट गॉड। दैट व्हीच इ.ज यू मे कॉल इट गॉड। दैट व्हीच एक्झिस्ट यू मे कॉल इट गॉड। जो कुछ भी है, और दैट इ.ज।

प्रश्नः लाइफ इट सेल्फ इ.ज गॉड।

लाइफ इट सेल्फ इ.ज गॉड।

प्रश्नः लाइफ इ.ज एनी फॉर्म।

लाइफ इ.ज एनी फॉर्म। च्वाइसलेसली इन एनी फॉर्म। ऑल दैट इ.ज। सो देयर इ.ज नॉट ए गॉड एण्ड ए क्रिएशन, ए क्रिएटर एण्ड ए क्रिएशन, दि क्रिएटिविटी इट सेल्फ इ.ज गॉड। दे आर नॉट टू थिंग। ए बीइंग, ए क्रिएटर एण्ड ए क्रिएशन। दि होल क्रिएटिविटी इ.ज गॉड। एण्ड दैट कैन नॉट बी बिलीव इट कैन बी एक्सपीरिएंस।

प्रश्नः वॉट हेपंड टू डिफरेंस थिंग, वॉट एक्झेटली इ.ज गॉड। आई बिलिव
इन गॉड।

यू बिलिव इन ए बीइंग।

प्रश्नः एक्झिस्टेंस इट सेल्फ इ.ज गॉड।

एब्सोल्यूटली।

प्रश्नः एण्ड वॉट अबाउट यू ससक्राइब दि केरी ऑफ द एक्झिस्टेंस ऑफ गॉड, ओनली यू डिफर इन इंटरप्रिटेशन।

न, न, न। योर्स इ.ज ए थीयरी, माईन इ.ज नॉट ए थीयरी। योर्स इ.ज ए बिलीफ, माई इ.ज नॉट ए बिलीफ। दैट इ.ज दि डिफरेंस।
ए बिलाइंड मैन बिलीव इन लाइट, ए मैन विद आईज नोज। वह जो अंधा आदमी है
वह विश्वास करता है कि लाइट है। क्या मतलब है उसके विश्वास का? कोई भी मतलब नहीं है। और आंख हो तो दिखाई पड़ता है कि लाइट है। तो अंधा आदमी कहेगा, हम दोनों की बातें बिल्कुल एक जैसी हैं, क्योंकि मैं--आई बिलीव इन लाइट एण्ड यू नो लाइट, दोनों एक जैसी हैं।
बिल्कुल एक जैसी नहीं हैं।

प्रश्नः बहुत फर्क है।

क्योंकि अंधा आदमी अंधेरे को भी नहीं जानता, लाइट तो दूर है, अंधेरे
को देखने के लिए भी आंख चाहिए। तो नो डार्कनेस यू हैव। आंख न हो तो अंधेरा भी नहीं जान सकते आप।
यही मेरा कहना है कि यह बिलीफ जो है खतरनाक है। यह जानी चाहिए, तो नालेज आ सकती है। और जब तक बिलीफ है तब तक नालेज कभी नहीं आ सकती।

प्रश्नः वॉट एक्झेटली योर मिशन सर?

नो मिशन सर।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न-न, ऐसा खयाल मुझे नहीं जरा भी। कोई भी किसी को एनलाइटन करने जाइए इससे ज्यादा बुरी बात और क्या हो सकती है। किसी को एनलाइटन करने जाना अच्छी बात नहीं है। क्योंकि उसमें हमने दूसरे को मान ही लिया कि वह बेचारा नहीं जानता है। तो अच्छी बात नहीं है। किसी को एनलाइटन करने का खयाल नहीं है, मुझे कुछ बातें दिखाई पड़ती हैं, अच्छी लगती हैं, तो आई वांट टु शेयर विथ यू, नॉट टु एनलाइटन। जस्ट टु शेयर विथ यू।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

आदमियों के बाबत बात नहीं करता। कुछ भी कॉमन लें।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं, मैं तो न आपको टीच करना चाहता, न अवेकन करना चाहता।
(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)
ही इ.ज ए टीचर, आई एम नॉट ए टीचर।
प्रश्नः नो, ही से मे आई नॉट कम टु टीच यू।
अवेकनर ही इ.ज ए अवेकनर। अवेकनर।
प्रश्नः यू बिलांग टू एनी सेक्ट।
आई बिलांग टु रिलीजन, नो सेक्ट।

उपासना के क्षण
चौथा प्रवचन

जीवन क्या है?

प्रश्नः जीवन क्या है?

जब भी कोई पूछता है, जीवन क्या है? तो वह ऐसी बात पूछ रहा है जैसे अंधा आदमी पूछे, प्रकाश क्या है? या कोई आदमी पूछे, स्वाद क्या है? या कोई आदमी पूछे सुगंध क्या है? अगर तुमसे कोई पूछे स्वाद क्या है, तो क्या कहोगे? पूछे सुगंध क्या है, तो क्या कहोगे? जब कोई पूछे, स्वाद क्या है, तो तुम ज्यादा से ज्यादा यह कह सकते हो कि लिया जा सकता है लेकिन कहा नहीं जा सकता। स्वाद चखा जा सकता है, जीया जा सकता है, जाना जा सकता है, लेकिन कहा नहीं जा सकता। और स्वाद तो जीवन का एक अनुभव है, सुगंध जीवन का दूसरा अनुभव है, प्रेम जीवन का तीसरा अनुभव है, पीड़ा जीवन का चौथा अनुभव है, आनंद पांचवां अनुभव है। जीवन के हजार-हजार अनुभव हैं। एक अनुभव को भी नहीं कहा जा सकता और जीवन समग्र अनुभव का जोड़ है। तो एक अनुभव को भी नहीं कहा जा सकता कि क्या है तो समग्र जोड़ को तो कहने का कोई उपाय नहीं रह जाता कि क्या है।
इसीलिए आदमी पूछता चला जाता है कि जीवन क्या है और सोचता है कि मैं बिल्कुल ही ठीक प्रश्न पूछ रहा हूं। और उत्तर बिल्कुल नहीं मिलता। हजारों साल से आदमी पूछता है, जीवन क्या है? अभी तक कोई उत्तर किसी ने दिया नहीं। आगे भी कभी कोई देगा नहीं। उत्तर लोग देने की कोशिश करते हैं, वे उनसे भी ज्यादा नासमझ हैं जो प्रश्न पूछते हैं। क्योंकि प्रश्न इररिलेवेंट है, प्रश्न जो है असंगत है। कौन सी चीज पूछी जा सकती है और कौन सी चीज नहीं पूछी जा सकती, इसका हम कभी भेद ही नहीं करते। हम तो मानते हैं कि जिस चीज को भी हम प्रश्न बना सकते हैं, उसको हम पूछ सकते हैं। जिसको भी भाषा में क्वेश्चन मार्क दिया जा सकता है, वह प्रश्न बन जाता है। भाषा का जहां तक संबंध है, बन जाता है।
सुगंध क्या है? इस प्रश्न में कहां भूल है? भाषा के लिहाज से प्रश्न पूरा बन गया। सुगंध के बाबत पूछ रहे हैं; क्या है, यह पूछ रहे हैं और प्रश्नवाचक लगा हुआ है। सुगंध क्या है, उत्तर चाहिए।
भाषा की दृष्टि से जो संगत प्रश्न हैं, वे भी अनुभव की दृष्टि से असंगत हो सकते हैं। सुगंध जानी जा सकती है, कही नहीं जा सकती। और सुगंध जीवन के हजार-हजार अनुभव का जरा सा टुकड़ा है। जीवन का अर्थ हैः समस्त अनुभवों का जोड़।
कोई पूछता है, जीवन क्या है? प्रश्न बिल्कुल ठीक मालूम पड़ता है। प्रश्न है, उत्तर देना वाला भी सोचता है, उत्तर होना चाहिए कोई, क्योंकि प्रश्न पूछा गया है। और झंझट शुरू हो गई, गलती शुरू हो गई।
लिंग्विस्टिक भूल है, भाषा की गलती है और कुछ नहीं है। और यह अगर तुम्हें दिखाई पड़ जाए, यह अगर तुम्हारी समझ में आ जाए कि कुछ चीजें हैं जो पूछी नहीं जा सकती हैं। क्योंकि पूछने भर से कोई मतलब हल नहीं होता। कुछ चीजें हैं जो नहीं पूछी जा सकती हैं। अगर यह भी तुम्हारी समझ में आ जाए, तो शायद तुम्हें यह भी समझ में आ जाए कि फिर जीवन को जानने का रास्ता कुछ और होगा। पूछने का रास्ता नहीं रह जाता।
तो पहली तो बात यह है कि ऐसे प्रश्न की असंगति, इनहेरेंट, इनकनसिस्टेंसि है।

प्रश्नः जी, मेरे कहने का मतलब...

मेरी बात समझ लो पहले।

जी हां। जी हां।

तुम्हारा मतलब तो मैं बिल्कुल ठीक समझ रहा हूं।

प्रश्नः मेरे कहने का मतलब और है।

कुछ प्रश्न मूलतः असंगत होते हैं। और सारा दर्शनशास्त्र असंगत प्रश्नों पर खड़ा होता है। संगत प्रश्नों के तो उत्तर मिल जाते हैं, तो बात खत्म हो जाती है, असंगत प्रश्नों के उत्तर नहीं मिलते, इसलिए बात खत्म नहीं होती।
पांच हजार साल पीछे चले जाओ, रेल्वेट करेशी भी यही पूछता हैः जीवन क्या है? ढाई हजार साल पहले चले जाओ, बुद्ध से भी आदमी पूछ रहा हैः जीवन क्या है? तुम मुझसे पूछ रहे होः जीवन क्या है? हजार साल बाद भी, दस हजार साल बाद भी कोई पूछेगा किसी सेः जीवन क्या है?
प्रश्न बिल्कुल पूछा जा रहा है निरंतर, उत्तर एक भी नहीं दिया गया आज तक। इससे दो बातें हो सकती हैं, या तो यह हो सकता है कि आज तक किसी को उत्तर पता नहीं है, आगे पता चल जाएगा। या यह भी हो सकता है कि प्रश्न ऐसा है कि असंगत है, इसलिए उत्तर कभी नहीं होगा।
मेरी दृष्टि में ऐसे प्रश्न का उत्तर नहीं होता, ऐसे प्रश्न का अनुभव होता है। तो यह मत पूछो कि जीवन क्या है, यह पूछो कि जीवन कैसे जाना जाए? जीवन तो है। और कुछ है। एक्स वाय जेड कुछ भी है। जीवन तो है। तुम्हारे पास भी जीवन है। तुम्हारी इतनी उम्र बीत गई, तुम जीए हो। एक आदमी सत्तर साल तक जीएगा, और सत्तर साल के बाद भी पूछेगा, जीवन क्या है? यह आदमी जीया, जीवन से गुजरा, रोज-रोज जीया, श्वास चली, श्वास गई, सोया, उठा, दुख झेले, सुख झेले, प्रेम किया, घृणा की, लड़ा-झगड़ा, दोस्त बना, सब इसने जीया, और आखिर में सत्तर साल के बाद पूछता है, जीवन क्या है?
तो दो ही मतलब हैं इसके। एक तो यह कि जीवन गुजर गया, यह जीवन को जान नहीं पाया; जीवन में बहता रहा, लेकिन जीवन को पकड़ नहीं पाया या जीवन इसको ऊपर से छूता रहा, इसके पूरे प्राणों तक--वे जो पूछ रही हैं, समग्र रूप से कैसे जीएं?--यह समग्र रूप से नहीं जी पाया।
जैसे कि समझो मैं तुम्हारे घर आऊं, दौड़ता हुआ तुम्हारे घर में से निकल जाऊं। घर में से निकला, वहां कौन सी तस्वीर लगी थी, कौन लोग बैठे थे, वहां क्या हो रहा था, कौन गीत गा रहा था, कुछ भी नहीं, दौड़ता हुआ घर से निकल गया। एक गीत की कड़ी मेरे मन में गूंजती हुई सुनाई पड़ी, किसी बच्चे का रोना सुनाई पड़ा, बर्तन बजते थे घर के वे सुनाई पड़े, कुछ बात चलती थी उसकी एक कड़ी सुनाई पड़ी और मैं भागता हुआ निकल गया, वह सब गड्डमड्ड हो गया। गीत की कड़ी, बर्तन की आवाज, झगड़ा, बातचीत, घर, चित्र, सब गड्डमड्ड हो गया। मैं भागता हुआ निकल गया। अब मैं लौट कर देखता हूं, तो मुझे समझ में नहीं आया कि मैं जहां से निकला वह क्या था? वह घर था, पागलखाना था, संगीत घर था, चौका था, झगड़ने वाले लोग थे, दफ्तर था, क्या था? अब मैं पूछता हूंः वह घर क्या था? और मैं उससे निकला, उस घर से मैं गुजरा, और अब मेरे सामने सवाल हैः वह घर क्या था? उसकी बहुत सी चीजें चित्त पर रह गईं--गीत की कड़ी भी रह गई, झगड़े की आवाज भी रह गई, बर्तन भी रह गए, चौका भी रह गया, घर के लोग भी रह गए, चित्र भी रह गए, दीवाल-- छोटा सा एक सबका मिक्सचर, एक सबका सम्मिश्रण, मन पर एक छाया रह गई। और मैं इतनी तेजी से निकला उस छाया के पास से कि उस छाया का भी पूरा इंपेक्ट, उस छाया की भी पूरी छवि मेरे चित्त पर बन नहीं पाई, बस मैं निकल गया।
जैसे कि मैं एक कैमरा लेकर दौड़ता हुआ निकल जाऊं इस कमरे से, और कैमरे
की आंख खुली हो, और पीछे जाकर कैमरे का चित्र खोलूं और देखूं कि सब गड्डमड्ड है, कुछ समझ में नहीं आता। अब दौड़ता हुआ कोई कैमरा लेकर यहां से निकल जाएगा, तो तस्वीर तो बनेगी, लेकिन बहुत सी तस्वीरें बन जाएंगी, और एक-दूसरे के ऊपर बन जाएंगी, और फिर उसे खोल कर देखना--पहचानना मुश्किल है कि आदमी है कि कुर्सी है कि मकान है कि क्या है, क्या नहीं है। तब आदमी पूछने लगे कि यह चित्र क्या है? वह आदमी ठीक प्रश्न पूछ रहा है। उसकी समझ में नहीं आता यह चित्र क्या है। वह पूछता है, यह चित्र क्या है? लेकिन सवाल यह

है कि इससे एक ही बात सबित होती है कि यह चित्र भागते में लिया गया है, कैमरा कंपता था, हिलता था; आदमी ठहरा हुआ नहीं था, रुका हुआ नहीं था।
जीवन से हम भागते हुए, दौड़ते हुए, आंखें बंद किए हुए, इधर-उधर देखते हुए निकल जाते हैं। पीछे हम पूछने लगते हैं, जीवन क्या है? यह, यह जो प्रश्न उठता है, यह जीवन गलत ढंग से जीया जा रहा है, इसका सबूत है। यह प्रश्न उठता है, यह इस बात की खबर है कि जीवन को जितनी समग्रता से, जितनी पूर्णता से जीना चाहिए, वह नहीं जी रहे हैं। अब यह जो...
हम जीते हैं अत्यंत आंशिक रूप से, अत्यंत उथले।
तुम मेरे पास आए। तुम आए, तुमने मुझे नमस्कार कर लिया और बैठ गए। क्या तुम सोच सकते हो कि नमस्कार जैसे छोटे से कृत्य में इंटेंसिटी के कई लेयर हो सकते हैं, कई सतह हो सकती हैं गहराई की।
एक आदमी नमस्कार करके चला गया। न उसने मुझे देखा, न उसके हाथ उसने जान
कर उठाए, एक मैकेनिकल एक्ट--कोई दिखता है, नमस्कार कर लेते हैं, गुजर जाते हैं। उससे तुम पूछो कि कौन बैठा था? तुमने किसको नमस्कार किया था? शायद वह सांझ को याद भी न कर पाए कि मुझे कुछ खयाल नहीं आता; दिन में पच्चीस लोगों को नमस्कार करता हूं; जो मिलता है, नमस्कार करता हूं।
इस नमस्कार के पीछे कोई भाव भी नहीं है। एक औपचारिकता है, पूरी हो जाती है; एक फार्मेलिटी पूरी हो गई। एक दूसरा आदमी किसी को नमस्कार करता है, इसके पीछे पूरे प्राण हो सकते हैं, पूरे प्राण हो सकते हैं। यह नमस्कार सिर्फ हाथों का जुड़ना नहीं, पूरे प्राणों का जुड़ना हो सकता है। यह नमस्कार सिर्फ एक औपचारिक कृत्य नहीं, एक हार्दिक घटना हो सकती है। और हो सकता है कि सारे जीवन इस घटना को भूला न जा सके, यह इतनी गहरी बैठ जाए चित्त में कहीं जाकर, यह एक जीवंत अनुभव बन जाए।
हम जीते हैं ऐसे जैसे भागते हुए लोग, दौड़ते हुए लोग; जो किसी भी क्षण खड़े नहीं होते, भागे चले जाते हैं, भागे चले जाते हैं। आगे देखते हैं; जो पास दिखाई पड़ रहा है, उस पर नजर नहीं पड़ती; या जो गुजर गया है, उसका विचार करते हैं। लेकिन जो गुजर गया, वह भी नहीं है अब। जो आगे आने वाला है, वह भी नहीं है अभी। जो है--मोमेंट, इस क्षण में--उसको पूरे रूप से, उसको पूरी टोटेलिटी में, इतना कि जैसे उसका हमने पूरा रस निचोड़ लिया हो, हमने सारा सार जो था सब खींच लिया हो, सब आत्मसात कर लिया हो, ऐसा हम नहीं जीते। इंटेंसिटी नहीं है, एक तीव्रता।...
अकबर के दरबार में दो जवान लड़के एक दिन गए। दोनों राजपूत हैं। और जाकर दरबार में खड़े हो गए हैं तलवारें लिए हुए और अकबर से कहने लगे कि हम दो बहादुर जवान हैं और सेना में भर्ती होना चाहते हैं।
अकबर ने सहज पूछ लियाः बहादुर हो, यह तुम सर्टिफिकेट लाए हो, प्रमाणपत्र लाए हो बहादुरी का कोई? मैं कैसे जानूं कि तुम बहादुर हो? अकबर का यह कहना था कि वे दोनों तलवारें तो म्यान के बाहर आ गईं। अकबर तो एक क्षण चौंक ही गया, और वे तलवारें तो एक-दूसरे की छाती में घुस गईं, वे दोनों जवानों की। एक सेकेंड में यह हो गया। वे दोनों तो गिर पड़े, खून के फव्वारे छूट गए। अकबर ने कहाः पागलो, यह क्या किया?
अकबर के दरबार में एक राजपूत था, मानसिंह। वह सेनापति था उसका, वह आया। अकबर ने कहा कि यह क्या पागलपन है? ये दोनों राजपूत लड़के छुरी भोंक दिए। दोनों सगे भाई हैं। जुड़वां भाई हैं।
मानसिंह ने कहा कि राजपूत से और बहादुरी का प्रमाणपत्र मांगना बेहूदी बात है। राजपूत से बहादुरी का प्रमाणपत्र मांगना! बहादुरी का कोई प्रमाणपत्र होता है? एक जिंदा मिसाल हो सकती है। और बहादुरी की एक ही मिसाल होती है कि आदमी मरने को दो कौड़ी का समझता है। और तो कोई बहादुरी की मिसाल होती नहीं। बहादुरी का और कोई प्रमाण होता ही नहीं कि आदमी मौत को दो कौड़ी का समझता है। उन लड़कों ने कह दिया कि यह है बहादुरी, कि मौत हमारे लिए इस क्षण या उस क्षण, कोई फर्क नहीं लाती।
कारण-अकारण चिंता की बात नहीं है, सार्थक-व्यर्थ हम मर सकते हैं। और
अब इसके लिए, इसमें क्या प्रमाण दें? किसी से सर्टिफिकेट लिखा कर लाएं?

क्या प्रमाण हो सकता है इसका? इसका एक ही प्रमाण हो सकता है कि हम वह दिखा दें जो हम कहते हैं कि हम कर सकते हैं।
मानसिंह ने कहा कि भूल कर कभी किसी से अब राजपूत से कभी बहादुरी का प्रमाणपत्र मत मांगना। यह बात ही बेहूदी है यह। यह तो, यह सवाल ही नहीं उठ सकता।
अकबर ने अपनी आत्मकथा में लिखवाया है कि मैंने पहली दफा किसी छोटे से कृत्य पर पूरे जीवन को भी दांव में लगाने वाले लोग देखे। छोटे से कृत्य पर! एक आंशिक, एक जरा सी बात, लेकिन क्षण में सारा, पूरा, इसको कहूंगाः इंटेंसिटी। हम होते उसकी जगह, हम कहते अच्छा साहब, हम कहीं से लिखवा लाते हैं। क्कलेक्टर का लिखवा लाएं? एम पी का लिखवा लाएं? कि किसका चल जाएगा? हम लिखवा लाते हैं, सर्टिफिकेट लिखवा लाते हैं।
हम सर्टिफिकेट तो लिखवा लाते हैं, लेकिन थोड़ा सोचो। बहादुरी का सर्टिफिकेट केवल कायर लिखवा सकता है, बहादुरी का सर्टिफिकेट बहादुर नहीं लिखवा सकता। बहादुरी का प्रमाणपत्र केवल कायर, वह जो कावर्ड है, वह जो कायर है, वह ला सकता है; बहादुर नहीं ला सकता। नैतिकता का सर्टिफिकेट, जिसके जीवन में कोई नैतिकता नहीं है, वह ला सकता है। जिसके जीवन में कुछ भी नैतिकता है, सर्टिफिकेट नहीं ला सकता, जी सकता है।
इसको मैं कहूंगा, समग्रता से। नहीं कह रहा हूं कि मर जाएं या छुरा मार लें, यह नहीं कह रहा हूं। यह कह रहा हूं कि जीवन का कोई भी कृत्य इतना समग्र हो कि सारा जीवन कनसनट्रेटिड हो जाए, सारा जीवन एकाग्र, उस पूरे क्षण में डूब जाए।
उस क्षण में उन बहादुरों ने क्या जाना होगा, इसकी आप कल्पना कर सकते हैं? आप पूरी जिंदगी जी कर नहीं जान सकोगे। आप सत्तर साल जी कर नहीं जान सकोगे जो उस एक मोमेंट में, सत्तर साल कनसनट्रेटिड, सत्तर साल का सारा निचोड़... कल्पना कर सकते हो उस क्षण में जब वे तलवारें बहार आ गई होंगी। डिसिसिव मोमेंट। जिसका आगा-पीछा नहीं।

प्रश्नः थॉटलेसनेस।

थॉटलेसनेस। क्योंकि अगर विचार करें तो थोड़ा सोचेंगे कि क्या करना चाहिए। विचार नहीं। उसने पूछा, प्रमाण बहादुरी का? तलवार बाहर आ गई, छाती में चली गई। वे दोनों हंसते हुए जमीन पर गिर पड़े। उस एक क्षण में क्या आप कल्पना कर सकते हैं उनके भीतर क्या हुआ होगा? नहीं कर सकते। नहीं कर सकते। आप इतना ही सोचेंगे, बड़े पागल थे, नाहक मर गए। इतना ही सोच पाएंगे ज्यादा से ज्यादा, बड़े पागल थे, नाहक मर गए, ऐसे कोई मरना होता है। आप कौन सी समझदारी से मर जाओगे? आप क्या कर लोगे? लेकिन उस एक क्षण में जिसने इतना दांव लगा दिया पूरा जीवन का, इतनी तीव्रता से, इतना कन्सन्ट्रेटिड, तो उस क्षण में क्या उदघाटन हुआ होगा?
सूरज की किरणें गिर रही हैं, अलग-अलग पड़ रही हैं; छोटा सा कांच ले आएं फोकस करने वाला; सूरज की किरणें इकट्ठी हो गईं और एक बिंदु पर पड़ने लगीं और आग जल उठी। एक-एक किरण बिखरती है, कुछ नहीं कर पाती। इतनी किरणें इकट्ठी हो गई हैं एक कांच के द्वारा, और एक कागज पर पड़ीं, आग भभक उठी। एक-एक किरण को पता ही नहीं है इस अनुभव का कि आग भड़क उठती है, वह अनुभव क्या है। लेकिन वे कनसनट्रेटिड किरणें जानती हैं।
तो हम जीते हैं सत्तर साल लेकिन किसी क्षण में ऐसे नहीं जीते कि पूरा जीवन दांव पर हो। जब मैं कहता हूं, समग्रता से जीना, तो उसका मतलब है एक-एक क्षण पूरे जीवन को दांव की चुनौती मानता, एक-एक क्षण। यह भी सवाल नहीं है कि कौन सा क्षण, एक-एक क्षण पूरे जीवन की चुनौती मानता, पूरे जीवन को दांव पर मानता है।
एक जापानी फिल्म अभिनेता था, निकाजो। उसने कोई एक करोड़ रुपया कमाया अमरीका में। बचपन से अमरीका चला गया। एक करोड़ रुपया कमाया। और जब वृद्ध होने लगा तो रुपया लेकर, दुनिया का चक्कर मार कर, जापान वापस लौटने लगा। इधर पेरिस आया, एक करोड़ रुपया उसके पास है, वह सारी जिंदगी की कमाई है। वह

वापस जा रहा है, वह अपने किसी गांव में एक झोपड़ा बना कर रहेगा। पेरिस में ठहरा है। उसके मित्र वहां हैं बहुत से, वे मिलने आए और उन्होंने कहा कि पेरिस आए हो, तो माउंट कार्ले जरूर देख लो--वह जुए के अड्डे हैं माउंट कार्ले में। क्योंकि पेरिस जो आया उसने अगर माउंट कार्ले में जुआ नहीं खेला, तो वह पेरिस आया ही नहीं। वही तो मजा है वहां।
उसने कहाः अच्छी बात। वह एक करोड़ रुपया लेकर वहां पहुंच गया। एक करोड़ रुपया ले गया। सारी जिंदगी की कमाई है। वह एक करोड़ रुपये लेकर माउंट कार्ले पहुंच गया। उसके मित्रों ने कहाः एक करोड़? एक ही दांव लगाना है, क्योंकि एक-एक रुपये का क्या दांव लगाना। उसके मित्रों ने कहाः तुम पागल तो नहीं हो गए हो?
उसने कहाः पागल मैं हमेशा से हूं। लेकिन दांव जब लगाना है तो पूरा ही लगाना। फिर काहेका, तुम काहेका जुआ, एक रुपये का जुआ। एक करोड़ रुपया जिसके पास हो वह एक रुपया जुए पर लगा कर क्या कोई जुए का अनुभव ले सकता है? पागल है वह। उसका एक रुपया कोई मीनिंग का नहीं है। एक करोड़ रुपया पास है, एक रुपया जुए के दांव पर लगा रहा है। धोखा दे रहा है दांव का। दांव-वांव लगा ही नहीं रहा है वह। उसको पता है, इसका क्या है, जाए, जाए, कोई मतलब नहीं।
एक करोड़ रुपये उसने जाकर दांव पर लगा दिए। माउंट कार्ले पर इतना बड़ा दांव कभी नहीं लगाया गया दुनिया में। उस जुए का सबसे बड़ा अड्डा है। रात कोई दस-पांच करोड़ रुपये का जुआ होता है। लेकिन एक करोड़ का! स्वीडन का, डेनमार्क का राजा भी मौजूद है। वे देखने आ गए हैं सारे लोग कि एक करोड़ का दांव कभी नहीं लगा माउंट कार्ले में। वह राजा भी दंग रह गया। उसकी भी हिम्मत के बाहर है। एक करोड़ का दांव! एक दांव!
तुम उस आदमी की कल्पना करो। अब मैं यह कह रहा हूं कि जुआरी किस तरह जी सकता है। एक-एक रुपया लगा कर जी सकता है; उसको मैं कहता हूं, आंशिक जीना। सब, टोटल; तो उसको मैं कहता हूं, समग्र। अब उस आदमी के क्षण की कल्पना करो, उस आदमी के भीतर क्या हो रहा हो? साइलेंस आ जाएगी।

प्रश्नः कंप्लीट साइलेंस।

कंप्लीट साइलेंस आ जाएगी। कंप्लीट सरेंडर हुआ जा रहा है। यह कोई मामला ऐसा नहीं है कि खेल लिए और घर जाकर सो गए। यह मामला अब आखिरी है।

प्रश्नः पीछे कुछ नहीं है।

अब वह, उसको थोड़ा देखें, निकाजो को, वह खड़ा है जुए की दांव की टेबल पर। लगा दिया एक करोड़ रुपया उसने दांव पर। अब वहां पूरे जुआघर में सन्नाटा छा गया, न केवल उस पर सन्नाटा छा गया है। अब वह घड़ी की टिक-टिक भी सुनाई पड़ रही है एक-एक आदमी को। एक-एक क्षण बीत रहा है और यह इसका पूरा फैसला हुआ जा रहा है यह आदमी का कि क्या होगा, क्या नहीं होगा। और वह हार गया। और वह हार गया निकाजो। और टैक्सी में बैठा, मित्र ने पैसे चुकाए टैक्सी के और होटल में आकर सो गया। दूसरे दिन अखबारों ने तो खबर ही छाप दी कि उसने आत्महत्या कर ली। किसी और आदमी ने आत्महत्या की थी। अखबार में खबर छप गई, उसने आत्महत्या कर ली, क्योंकि वह और क्या करेगा। सुबह जब वह नौ बजे उठा, उसने अखबार पढ़ा, 21.30 उसके... के निकट एक किसी आदमी ने आत्महत्या की है, और लोगों को शक हो गया कि वही निकाजो ने कर ली होगी। क्योंकि वह करेगा। वह करेगा क्या अब। वह हंसने लगा खूब। उसने कहा कि इसमें आत्महत्या की क्या बात है। इसमें आत्महत्या की क्या बात है।
वह वापस लौट गया, जापान नहीं आया, वापस अमरीका लौट गया। वहां लोगों ने कहाः क्या किया?
उसने कहा कि मैंने जो जान लिया, वह कभी मुश्किल से कोई जान सकता है। मैंने जो जान लिया, उस एक क्षण में जो मुझे दिखाई पड़ा, उस क्षण में मेरे लिए सारा सब कुछ साफ हो गया। मैंने जी लिया।

इसको मैं कहता हूं, टोटल लिविंग। यह मैं नहीं कह रहा हूं कि जुआ खेलने लगे कोई। मेरी बातों से यह झंझट रोज हो जाती है। फिर इधर-उधर लिखते हैं लोग कि मैंने कह दिया कि जुआ खेलो। मैंने कह दिया कि छाती में छुरा मार लो। तो अब मेरी बातों से ये मतलब निकल सकते हैं। लेकिन मैं कह यह रहा हूं, मैं सिर्फ कह यह रहा हूं कि टोटल लिविंग का क्या मतलब है मेरा।
तो जिस क्षण में भी, अगर मैं आपका हाथ भी प्रेम से पकड़ता हूं, तो वह हाथ मेरे लिए दांव होना चाहिए टोटल लिविंग का। मैंने हाथ पकड़ा तो ऐसे जैसे मेरे लिए यह सब कुछ, मेरा सारा जीवन, उस हाथ में इकट्ठा हो गया है, मेरी अंगुलियों में आ गया है। तो फिर उस इंपेक्ट की बात और है। तो वह हाथ जब आपको छुएगा, तो उस छूने की बात और है। वह राज और है, वह रहस्य और है। हाथ आप भी छूते हैं, हाथ वह भी छूता है। किसी को हृदय से लगाया है प्रेम से, तो फिर उस क्षण में सब समाप्त हो गया, वह दांव है पूरा। तो वहां जितना प्रेम मेरे पास है, वह सब लगा दिया है दांव पर; इसके पीछे बचेगा कि नहीं बचेगा, यह सवाल नहीं है। तो वह जो छूना है, वह जो स्पर्श है, वह बात और है।
जिंदगी भर उसी के लिए तड़फता है आदमी कि कोई किसी परिपूर्ण क्षण में हृदय से लगा ले। लेकिन न लगाने वाला है परिपूर्ण क्षण में, न हमारी हिम्मत है कि हम तैयार हो जाएं लगाने को। सो टुकड़ा-टुकड़ा, एक-एक रुपया दांव पर जिंदगी भर लगाते हैं। सत्तर साल में जुआ तो खेलते हैं, लेकिन एक-एक रुपये का खेलते हैं। कभी दांव का मजा भी नहीं आता। जुआ भी खेल लेते हैं, जिंदगी भी खराब हो जाती है।
इकट्ठा! तो तुम्हें पता चल जाएगा जीवन क्या है! नहीं तो तुम्हें कभी पता नहीं चलेगा। पूछने से तो कभी पता नहीं चलेगा।

प्रश्नः मेरा पूछना ऐसा था कि आपने जैसे कहा कि टेस्ट है, स्मैल है, तो
ये सब प्रापर्टीज हैं, इसे भी डिसक्राइब कर सकते हैं हम।

कोई डिसक्रिप्शन नहीं हुआ।

प्रश्नः क्योंकि वह प्रापर्टी नहीं है, अब यह ब्राउन कलर दिखता है तो ब्राउन कलर प्रापर्टी है।

बिल्कुल नहीं है।

प्रश्नः कि ब्राउन कलर यह इसका प्रापर्टी नहीं दिखता है।

बिल्कुल नहीं, उसकी प्रापर्टी तो कलर होती ही नहीं किसी चीज की।

प्रश्नः मगर यह अभी की बात है।

न-न, अभी भी नहीं, कभी नहीं होती।

प्रश्नः तो यह ब्राउन क्यों दिखता है?

हां, ब्राउन क्यों दिखता है, वह मैं तुम्हें कहता हूं। वह मैं तुम्हें कहता हूं। तुम विज्ञान के विद्यार्थी हो थोड़े-बहुत।

प्रश्नः हां जी, हां जी, थोड़ा-बहुत किया था मैंने, ज्यादा नहीं किया है।

हां-हां, किए हैं। कलर प्रापर्टी नहीं है किसी चीज की। इस कमरे के बाहर हम चले गए, इस कमरे में कोई चीज कलर की नहीं रह जाएगी। कलर आंख और चीज के जोड़ के बीच की घटना है। आंख के बिना कलर नहीं होता कहीं।

समझ लें इसको थोड़ा। तुम सोचते होओगे हम कमरे के बाहर चले गए तो यहां
की कुर्सी जो लाल रंग की है, वह लाल रंग की रहेगी, इस भूल में मत रहना। कमरे के बाहर, कमरे के भीतर, दोनों में कुर्सी में कोई रंग नहीं रह जाएगा, कुर्सी बेरंग हो जाएगी। क्योंकि कलर जो है वह आंख और कुर्सी के जोड़ से पैदा होता है।

प्रश्नः जी, वह संयोग है।

समझो थोड़ा। समझो थोड़ा। कलर कुर्सी की प्रापर्टी नहीं है। अंधेरे कमरे में कोई चीज में कोई कलर नहीं होता। यह मत सोचना कि दिखाई नहीं पड़ता। कलर ही नहीं होता। क्योंकि कलर होने के लिए प्रकाश चाहिए।
अब कलर का जो पूरी की पूरी व्यवस्था है, वह यह है कि सूरज की किरण में सात हिस्से होते हैं। वह तो तुम जानते हो न, सात रंग होते हैं? सूरज की किरण पड़ती है मेरी इस धोती पर, अगर मेरी धोती सारी किरणों को वापस लौटा देती है, कोई किरण को एब्जार्ब नहीं करती तो धोती सफेद मालूम पड़ेगी। सफेद का मतलब है, सूरज की सारी किरण वापस लौटा दी गई। अगर मेरी धोती सारी किरणों को पी जाती है तो धोती काली दिखाई पड़ेगी। काली का मतलब यह है कि सूरज की सारी किरण पी गई धोती। अगर मेरी धोती लाल दिखाई पड़ती है तो उसका मतलब है, सब किरणें पी गई, लाल किरण नहीं पी। लाल किरण धोती की क्वालिटी नहीं है। लाल किरण धोती नहीं पीती है इसलिए लौट कर लाल किरण आंख में दिखाई पड़ती है। धोती में लाल रंग कहीं भी नहीं है। बड़े मजे की बात है, धोती में लाल को छोड़ कर सब रंग पी गई है वह। सिर्फ लाल रंग को उसने छोड़ दिया। वह छूटा हुआ रंग लौट कर आंख पर दिखाई पड़ रहा कि धोती लाल है। धोती बिल्कुल लाल नहीं है, इसीलिए लाल दिखाई पड़ रही है। धोती अगर लाल हो तो लाल दिखाई नहीं पड़ेगी। तो लाल रंग जो है वह धोती की प्रापर्टी नहीं है। लाल रंग आंख, धोती और किरण के बीच का अनुभव है। अनुभव किसी की प्रापर्टी नहीं है। अकेली आंख भी लाल रंग नहीं देख सकती, अकेली धोती भी लाल रंग की नहीं होती, अकेली किरण में भी कोई रंग नहीं होता। अनुभव।
जब तुमने कोई चीज खाई और तुम्हें वह खट्टी मालूम पड़ी, तो तुम सोचते हो नींबू खट्टा है। तुम पागल हो। नींबू खट्टा नहीं होगा। तुम्हारी जीभ का जो अनुभव है करने का, जो ढंग है, वह जो अनुभव करने का ढंग है--वही नींबू दूसरे जानवर की जीभ में खट्टा नहीं होगा; तीसरे जानवर की जीभ में दूसरा स्वाद लाएगा; चौथे जानवर की... पांचवां... । और हम इतने लोग जो बैठे हैं, सबकी जीभ पर भी एक सा खट्टे का अनुभव नहीं लाएगा।
एक आदमी बुखार में है, उसकी जीभ पर दूसरा स्वाद होगा। एक आदमी स्वस्थ है, उसकी जीभ पर दूसरा स्वाद होगा। एक आदमी को सर्दी है, तो उसकी जीभ पर तीसरा स्वाद होगा। यह जो स्वाद का अनुभव तुम्हें हो रहा है, यह नींबू का अनुभव नहीं है, न तुम्हारी जीभ का अनुभव है। नींबू और जीभ के बीच जो घटना घटती है...

प्रश्नः संयोग का।

संयोग का अनुभव है। अनुभव है, प्रापर्टी किसी की भी नहीं है। प्रापर्टी का मतलब होता है कि वह उस चीज का गुण है, हमसे उसका कोई संबंध नहीं। तो जब कोई पूछे कि क्या है स्वाद? तो अगर तुम यह भी कह देते हो कि तीन चीजों के बीच में घटा हुआ अनुभव है, तब भी अनुभव से अभी कुछ पता नहीं चला। हम पूछेंगे, वह अनुभव क्या है? तब आखिर में रिडयूज करनी पड़ेगी बात यहां कि अनुभव लेना होता है, अनुभव कहा नहीं जा सकता। यानी मेरा मतलब यह है कि हम कितना ही चक्कर लगा-लगू कर व्याख्या करें, आखिर में हमको यह कहना पड़ेगा कि भई, यह तो...

प्रश्नः चख कर देखना पड़े।

यह तो चख कर देखना पड़े। और फिर भी जरूरी नहीं है कि चख कर जो मैंने देखा है, वही तुम देख लोगे। क्योंकि मेरी जीभ है और तुम्हारी जीभ है, इनमें इतना फर्क है कि जिसका हिसाब नहीं है।
तो इसलिए मैं कहता हूं, अनुभव है और वैयक्तिक अनुभव है। तो महावीर को जैसा अनुभव जीवन का हुआ, तुमको होगा मैं नहीं कह सकता।

प्रश्नः नहीं हो सकता।

तो मुझको जो हुआ, मैं नहीं कहता कि इनको होगा। इतना मैं कहता हूं कि जीवन का अनुभव होने का ढंग टोटल इंटेंसिटी है। फिर भी अनुभव अलग होंगे। फिर भी अनुभव अलग होंगे। क्योंकि निकाजो को जो अनुभव हुआ दांव लगा कर, हम नहीं कह सकते कि वही अनुभव अकबर के दरबार में उन लड़कों को हुआ होगा जो उनकी छाती में छुरा गया। अनुभव अलग रहे होंगे। क्योंकि ये व्यक्ति अलग हैं। इनकी टोटल कांबिनेशन अलग है। और इतना, जिंदगी इतनी जटिल बात है कि जरा सा फर्क और सब फर्क हो जाता है। जरा सा फर्क। और हरेक का व्यक्तित्व बिल्कुल अलग है।
तो जब हम पूछते हैं, जीवन क्या है? तो भी हम एक बड़ी गड़बड़ बात पूछ रहे हैं। हम पूछ सकते हैं, राम का जीवन क्या है? बुद्ध का जीवन क्या है? अ का जीवन क्या है? ब का जीवन क्या है? जीवन क्या है? जीवन का ऐसा कोई मतलब नहीं होता। क्योंकि जीवन क्या है, यह हमेशा एक वैयक्तिक अनुभव है। तो मेरा कहना यह है कि यह मत पूछो, क्योंकि यह पूछने के पीछे हमारा खयाल यह है कि चीजों की व्याख्या हो सकती है, एक डेफिनिशन हो सकती है। मेरी समझ यह है, किसी चीज की कोई डेफिनिशन नहीं हो सकती। सब डेफिनिशन कामचलाऊ हैं, थोथी हैं। थोड़ा सा काम चलता है, फिर डेफिनिशन पूछनी पड़ती है, फिर डेफिनिशन पूछनी पड़ती है। अंत में इनडिफाइनेबल पकड़ में आता है। आखिर में हमेशा आता है पकड़ में वह जिसकी कोई व्याख्या नहीं हो पाती। वहां जाकर हम खड़े रह जाते हैं। वहां जाकर हम खड़े रह जाते हैं।
तो जब कोई पूछता है, तो पूछने वाला भी पूछ लेता है और उत्तर देने वाला
भी दे देगा कि जीवन फलां है, ढिकां है। सब बोथा और थोथला है। जरूरत की बात समझने की यह है कि जीवन जाना जा सकता है और कैसे? तो वह "कैसे" के लिए वह जो पूछ रही है, वह मैंने कहाः जीओ ऐसे कि दांव इकट्ठा हो। जीओ ऐसे कि एक-एक क्षण में पूरे प्राणों की शक्ति संयुक्त हो जाए। जीओ ऐसे कि पीछे कुछ छूट न जाए। तुम पूरे मौजूद हो जाओ। हम हमेशा जीते हैं विदहेल्ट, पीछे कुछ रुका हुआ है, कुछ छूटा हुआ है। मैंने अगर किसी को प्रेम किया, तो भी मैं पीछे रोका हुआ हूं कुछ। यह प्रेम मेरा पूरा नहीं है। अभी मैं पीछे काफी विदहेल्ट किए हुए हूं कि पता नहीं यह ठीक साबित हो कि नहीं हो, यह प्रेम आगे चले कि नहीं चले, यह आदमी ठीक हो कि नहीं हो, अभी मैं एक हिस्से से कर रहा हूं, बाकी हिस्से को पीछे रोके हुए हूं कि कल जरूरत पड़े तो इसको भी वहीं खींच लूं।
अभी परसों क्या हुआ, एक बहन मुझसे मिलने आई। वह मिल कर जाने लगी--वह कृष्णमूर्ति के पास जाती होगी--मैं, मुझे बाथरूम उठ कर जाना है, तो मैं भी उठ कर खड़ा हुआ, तो वह कहने लगी कि मैं आपके गले मिलना चाहूं तो मिल सकते हैं? मैंने कहा, तू बिल्कुल मिल सकती है। तो वह मेरे गले मिली, मुझसे गले मिल रही है, लेकिन ऐसा देख खिड़की के बाहर रही है कि कोई देख तो नहीं रहा। अब मैं, यानी वह मिली मुझसे गले, लेकिन वह खिड़की खुली है, तो वह देख... गले मुझसे मिली, देखा खिड़की के बाहर। तो मैंने उससे पूछा कि तू मिली किससे-- मुझसे कि खिड़की से, कि खिड़की के बाहर जो लोग हैं उनसे? क्योंकि सवाल यह है... अब, अब यह इसको मैं कहता हूं कि यह बिल्कुल नॉन-इंटेंस लिविंग। और काहे के लिए गले मिलना। मतलब क्या हुआ मिलने का? काहे के लिए मिलना गले। तो मिली भी और नहीं भी मिली। उसको खयाल भी हो गया कि मैं गले भी मिल ली और मैं जानता हूं कि गले मिलने का तो कोई संबंध ही नहीं हुआ। क्योंकि वह देख रही खिड़की के बाहर कि कोई देख तो नहीं रहा।

यह, इसको मैं कह रहा हूं, इसको मैं कह रहा हूं, एक किसी भी क्षण में, कोई
भी क्षण, यह भी नहीं कह रहा हूं कि किस क्षण में, लेकिन हमारे पीछे कुछ विदहेल्ट नहीं किया गया, हमने चुकता, अपने सारे जीवन के फोकस को लगा दिया, तो जीवन का अनुभव हो सकता है, नहीं तो नहीं हो सकता। वह कोई भी क्षण हो, इसका सवाल नहीं। भोजन करने में भी अगर मैंने समग्र जीवन को लगा दिया, तो मैं स्वाद को जानूंगा। संगीत सुनने में अगर मैंने सारा प्राण लगा दिया और मैं सिर्फ कान रह गया हूं, सब सिकुड़ कर कान बन गया, अब मेरे भीतर कुछ भी नहीं है, मैं कान ही कान हूं, तो फिर संगीत का अनुभव होगा। भोजन करते वक्त मैं जीभ ही रह गया हूं और कुछ भी नहीं हूं, सब खो गया, मेरा सारा व्यक्तित्व जीभ बन गया है, तो फिर मैं स्वाद का अनुभव कर लूंगा। प्रेम करते वक्त मैं हृदय ही रह गया हूं। विचार करते वक्त मैं बुद्धि ही रह गया हूं, फिर कुछ भी नहीं है मेरे पास आगे-पीछे। फिर कोई, कुछ और मामला नहीं है, मैं सिर्फ बुद्धि हूं, तो फिर, तो मुझे बुद्धि का अनुभव होगा। हर चीज के अनुभव हैं।

प्रश्नः तो क्रोध करें?

बिल्कुल क्रोध हो जाएं। चुकता, पूरे, तो क्रोध का अनुभव हो। तो क्रोध
का अनुभव होगा। और मजा यह है कि क्रोध का अनुभव हो जाए, तो क्रोध से आदमी मुक्त हो जाता है। और प्रेम का अनुभव हो जाए, तो पूर्ण प्रेम हो जाता है। अनुभव हो जाए पूरा। मेरा मतलब यह है कि क्रोध के वक्त भी, मेरा तो कहना यह है कि पूरी इंटेंस लिविंग क्रोध की भी। तो जब पूरा क्रोध का पता चल जाएगा तो दुबारा क्रोध होगा ही नहीं।
मैं पाप उसको कहता हूं, बुराई उसको कहता हूं, जिसके पूरे अनुभव से छूट जाती हो वह। और पुण्य उसको कहता हूं, धर्म उसको कहता हूं, जिसके पूरे अनुभव से भीतर आ जाती हो वह। किसी चीज का पूर्ण अनुभव अगर उससे मुक्त करा देता हो तो समझ लेना कि वह फिजूल था, हम व्यर्थ उसके साथ परेशान हो रहे थे। और किसी चीज का पूर्ण अनुभव, अगर वह हमें पूरा आत्मैक्य बना देता हो तो समझ लेना कि वह सार्थक था, उसके बाहर हम व्यर्थ जी रहे थे।
आप अभी पता नहीं कर सकतीं कि प्रेम बचेगा कि क्रोध, जो बच जाएगा उसको मैं पुण्य कहता हूं, पूरे जीवन से। जैसे हमने आग में सोना डाल दिया, सोना बच जाएगा, कचरा जल जाएगा। जो बच जाएगा, वह सोना; जो जल गया, वह कचरा।
तो इंटेंस लिविंग की जो फायर है, वह जो आग है पूरे जीवन की, समग्र जीवन की, उसमें डाल दो अपने को। जो बच जाए, वह धर्म; जो जल जाए, वह अधर्म था। और वह जल जाएगा, क्योंकि उतनी इंटेंस लिविंग में वह बच नहीं सकता जो फिजूल है, वह तो जलेगा। वह बचता इसलिए है, अब यह बड़े मजे की बात है, इसके दो परिणाम होते हैं। क्योंकि हम टुकड़ा-टुकड़ा जीते हैं, तो जो व्यर्थ है, वह बचा रह जाता है। आग बुझी-बुझी सी है, उसमें कचरा भी नहीं जलता। राख में डाले हुए हैं, वह कचरा भी नहीं जलता। तो जो व्यर्थ है वह बचा रह जाता है टुकड़ा-टुकड़ा जीने से और जो सार्थक है वह निखर नहीं पाता टुकड़ा-टुकड़ा जीने से। जीवन एक कचरा बना रह जाता है। पूरी तरह जीने वाले आदमी का व्यर्थ जल जाता है, सार्थक शेष रह जाता है।
इसलिए आप हैरान होंगे कि दुनिया में जो बड़े कनवर्शंस हुए, वे उन लोगों
के थे, जैसे वाल्मीकि का या अंगुलीमाल का, ये जो कनवर्शंस थे, ये कनवर्शंस इनके टोटल लिविंग से आए। ये चोरी भी कर रहे थे तो वह पूरी समग्र थी। वाल्मीकि चोरी कर रहा था तो समग्र थी। चोर था तो पूरा था। वह हत्यारा था, अंगुलीमाल, तो पूरा था। हत्या ही थी उसकी जिंदगी। जब वह हत्या कर रहा था तो हत्यारा ही था सिर्फ और कुछ भी नहीं था। इस टोटल लिविंग से क्रांति आती है। और ये जो मीडियाकर आदमी हैं, जो कभी किसी चीज को पूरी तरह नहीं जीता, किसी चीज को जीता ही नहीं पूरी तरह--न कभी प्रेम पूरा करता, न कभी घृणा पूरी करता; न कभी क्रोध पूरा करता, न कभी क्षमा पूरी करता; न कभी मित्र पूरा बनाता, न कभी शत्रु पूरा बनाता--यह आदमी जीवन को नहीं जान पाता। तो यह पूछता फिरता मंदिरों में, मस्जिदों में, गुरुओं के पास, साधु-संत, जीवन क्या है? कोई क्या बताएगा कि जीवन क्या है! कोई क्या बताएगा इसमें! और

बताने वाले मिल जाएंगे क्योंकि न वे जीवन को जीए हैं, तो उन्होंने भी कुछ डेफिनेशंस बना रखी हैं कि फलाना, ढिकाना, यह है, वह है, वह बता देगा।
तो मैं नहीं कहता कि जीवन क्या है। मैं तो यह कहता हूं, जीवन कैसे जाना
जा सकता है। और उसकी हिम्मत जुटानी चाहिए। और जब तक जवान हो तब तक जुटा लेनी चाहिए, क्योंकि जवान दांव नहीं लगा सकता तो बूढ़ा तो फिर कैसे लगाएगा, फिर बहुत मुश्किल है।

प्रश्नः नहीं, मेरा कहने का मतलब ऐसा था कि यह पत्थर भी है...

मैं सोचता हूं कि तुम अभी वहीं रुके हो। मैं जो कह रहा हूं उसको पूरा इंटेंसली सुन रहे हो?

प्रश्नः मैं सुन रहा हूं। अभी आपने जो यह कहा कि यह सफेद दिखता है...

कहां, इसीलिए तो मैं कह रहा हूं कि तुम वहीं रुके हो।

प्रश्नः नहीं, उसमें मेरी कुछ डिफिकल्टीज और हैं।

हां, तो तुम वहीं रुक जाओगे न। फिर मैं जो पीछे कहे चले जा रहा हूं, उसको सुन ही नहीं पा रहे हो।

प्रश्नः नहीं, उसका सुना मैंने आपका।

उसको कैसे सुनोगे?

प्रश्नः आपने कहा इंटेंसली जीना चाहिए।

क्या समझे उससे?

प्रश्नः पूरी समग्रता से, पूरे रस से जीना चाहिए।

क्या समझे? जीए हो कभी?

प्रश्नः कोई भी क्रिया करूं।

कोई क्रिया की है कभी?

प्रश्नः हां जी, बहुत सी की है।

कौन सी क्रिया की है?

प्रश्नः हां जी, जिंदगी में जो जी जाती है वह क्रिया।

तो वह सब लोग जी रहे हैं।

प्रश्नः हां, तो वह तो है ही।

इंटेंसली।

प्रश्नः पर इंटेंसली।

हां, कैसे जीए वह।

प्रश्नः रस, रसवंती होता है जो, रस ज्यादा गिर रहा हो। कोई भी चीज को ज्यादा उपयोग से करना।

यह मैंने कहां कहा। न मैंने उपयोग का कहा, न मैंने रस का कहा।

प्रश्नः नहीं-नहीं, मोर इंटेंसिटी। आप और हम उसका उपयोग भी करें तो आपको कोई समझता तो है नहीं।

उपयोग की नहीं कह रहा हूं।

प्रश्नः उपयोग यानी ज्यादा कनसनट्रेशन लगाना कोई भी चीज में। उपयोग
हम इसे ही कहते हैं। कोई भी चीज में ज्यादा कनसनट्रेशन लगाना वह उपयोग कहा जाता है।

अच्छी बात है।

प्रश्नः और आपने भी यही कहा कि ज्यादा कनसनट्रेशन से जीना चाहिए। मैंने भी वही कहा। तो अभी आपने जो बताया था कि सफेद रंग जो है वह कुछ किरणें वापस भेज देने से वह सफेद दिखता है। एक ब्राउन कलर है तो कुछ किरणें वापस भेजने से वह ब्राउन दिखता है, तो फिर वह वह कलर ही क्यों फेंक देते हैं और दूसरे कलर क्यों नहीं फेंकते?

यही तो जानना है। यही तो जानना है।

प्रश्नः हां, तो यही बात है कि उसको प्रापर्टी कहना, क्या कहें?

नहीं तो... पर इससे तुम्हें जीवन को जानने में क्या होगा? यही मैं कह रहा हूं कि तुम वहीं रुके हो। यही मैं कह रहा हूं कि तुम वहीं रुके हो। कठिनाई क्या हो जाती है, हम व्यर्थ की बातों पर रुक जाते हैं। उससे कोई लेना-देना नहीं है। मैं जो कर रहा हूं...

प्रश्नः इसके पीछे मेरा मतलब है पूछने का...

तुम्हारा मतलब क्या है पीछे, वह मैं समझता हूं।

प्रश्नः आप आत्मा में मानते हो या नहीं मानते? यह मेरा पूछने का मतलब है।

तो अब यह, यह तो बिल्कुल ही बेवकूफी हो गई फिर।

प्रश्नः हां जी, क्योंकि जीवन को आप आत्मा के कारण समझते हो कि वह...

वह बड़ा मजा हो गया, यही तो मैंने पहले कहा था कि अपने सारे प्रश्न रख लो, और यह तो प्रश्न दूसरा ही हो गया, इससे कोई संबंध ही न रहा उसका।

प्रश्नः इसके पीछे जो मेरा भाव था...

पीछे तुम्हारे क्या था, मैं पूछा पहले ही तुमसे। तो मैं अभी फिजूल मेहनत किया इतनी देर।

प्रश्नः कि जीवन आत्मा के कारण रह गया, यही आपने अगर...

तुमको पता है क्या कुछ?

प्रश्नः जी नहीं, मुझे कुछ पता नहीं, अज्ञानी हूं मैं।

यह जो, यह जो सारा मामला है, लेकिन तुम्हें पता है कि आत्मा और जीवन, फलां-ढिकां, यह सब पता मालूम होता है।

प्रश्नः हां जी?

यह सब तुम्हें पता मालूम होता है आत्मा वगैरह का।

प्रश्नः हां जी, आत्मा के लिए तो बहुत, यह हिंदुस्तान आर्य भूमि में
जो आत्मा का नाम नहीं जानता रहे, वह तो कमभागी है।

कमभागी है। यह तो बात है। यह तो बात है। सब कमभागी यहीं आर्य भूमि में इकट्ठे हो गए मालूम होते हैं।

प्रश्नः नहीं-नहीं, मेरा कहने का, यानी इसके पीछे मेरा पूछने का उद्देश्य इतना ही है।

तुम्हारे उद्देश्य से मुझे मतलब नहीं; तुम जो पूछते हो, उससे ही मुझे मतलब है। और इसलिए सीधा उसकी मैं बात कर सकता हूं। अभी मैं आत्मा की बात करूंगा, फौरन दूसरा उद्देश्य निकल आएगा, जिसका तुम्हें अभी पता भी नहीं है कि वह है। हम तो शिफ्ट होते हैं। हमारे क्वेश्चन में भी हमारे पूरे प्राण थोड़े ही होते हैं। मैं तो रोज... परेशान हो गया हूं इस बात को जान कर कि एक आदमी एक प्रश्न पूछता है, उससे भी उसे मतलब नहीं है। थोड़ी देर में मैं पाता हूं, जब मैं उस प्रश्न की चर्चा कर रहा हूं, तब वह कुछ और सोच रहा है। थोड़ी देर में वह कहने लगता है कि मेरा मतलब यह है, फिर वह कहने लगता है कि मेरा मतलब यह है। उसका मतलब कुछ भी नहीं है। उसके फिजूल के शब्द दिमाग में इकट्ठे हो गए हैं, और शब्द प्रश्न बनाने लगे हैं। और कुछ भी मतलब नहीं है।

प्रश्नः मगर जीवन का आत्मा के साथ कुछ लेन-देन है कि नहीं?

अरे, जीवन और आत्मा कोई अलग चीजें हैं कि लेन-देन हो सकता है।

प्रश्नः हां, तो यही तो मैं पूछ रहा हूं कि जीवन क्या है, तो उससे आत्मा है कि नहीं उसका भी पता...

आत्मा से तो कुछ संबंध ही नहीं है न, जीवन काफी हो गया।

प्रश्नः यानी आप आत्मा के अस्तित्व में मानते नहीं हैं।

बड़ा मजा यह है कि जीवन पर्याप्त है, जीवन का अस्तित्व काफी है, अब उसको
और दूसरा नाम देने की क्या जरूरत है।

प्रश्नः हां, मगर जीवन जो है, अभी इसको जो अज्ञान है, हमको ज्ञान है।
आप जो बोलते हैं, मैं समझ सकता हूं, यह पत्थर नहीं समझ सकता।

किसको पता कि नहीं समझ सकता? पत्थर ने तुमसे कहा? कि तुमने पत्थर से पूछा? और तुम समझ सकते हो, यह किसने तुमको कह दिया? अगर तुम समझ लेते तो बात खत्म हो गई होती।

प्रश्नः जी मैं समझ ही रहा हूं।

यह पत्थर शायद ज्यादा समझ गया हो क्योंकि चुप है। तुम तो चुप नहीं हो, तुम्हारा समझना तो बहुत मुश्किल है। यह तो हमारे सब, हम, जिस तरह से दिक्कत में पड़ा है आदमी, यही तो सब रास्ते हैं दिक्कत में पड़ने के। न तुम्हें जीवन से मतलब, न तुम्हें जीने से मतलब। कुछ पिटे-पिटाए शब्द हैं जो हजारों साल से चल रहे हैं, उन शब्दों से मतलब है। आर्य भूमि और आत्मा और फलाना-ढिकाना, इनसे मतलब है। जीने वाले को क्या मतलब इनसे? जीने वाले को क्या मतलब? शब्दों से क्या मतलब? यह जो, जो मैंने कहा न तुमसे, जीवन की... आत्मा वगैरह तो शब्द हैं, परिभाषाएं हैं।

प्रश्नः नहीं, आत्मा आप एक्स वाय जेड कुछ भी कह सकते हो। उससे...

अभी तो जीवन ही काफी है न, उसको क्यों बीच में लाते हो? जीवन काफी नहीं होता क्या?

प्रश्नः कबूल है आपकी बात कि जीवन काफी है उसके लिए।

तो जीवन पर बात कर लेना काफी है। जीवन के अतिरिक्त और क्या हो सकता है।

प्रश्नः यह बात सच है आपका। मगर जब एक इंसान मर जाता है, तो मुर्दा हो जाता है, तो उसमें और जिंदा इंसान में फर्क क्या होता है? यह मैं चाहता हूं आपसे।

अरे!

प्रश्नः यह भी तो फिर एक सवाल पैदा होता है कि कुछ ऐसा कोई द्रव्य चाहिए, मेरा यह कहना है आपको। कि कुछ ऐसा कोई द्रव्य भी तो चाहिए कि जिसकी कुछ प्रापर्टीज हो, कि जिसकी वजह से...

तुमने किसी आदमी को मरते देखा कभी?

प्रश्नः हां जी।

आज तक किसी आदमी को मरते देखा?

प्रश्नः हां जी, हां जी, एक-दो आदमी को देखा है, ज्यादा नहीं।

मरते?

प्रश्नः जी हां, आखिरी वक्त पर, यानी अभी साथ में बैठे हैं; वह कब मरने वाला है, यह कैसे मालूम हो सकता है।

न, मरते भाई! मरते देखा किसी को?

प्रश्नः वह तो मालूम नहीं हो सकता कि कब वह मर गया उसका प्राण।

नहीं पता चलता न कुछ? कुछ पता नहीं चलता कि मर गया कि नहीं मर गया।

प्रश्नः कैसे पता चले।

हूं, और इतना ही पता चलता है कि एक आदमी बोलता था, नहीं बोलता। अरे, मर गया नहीं कहो। मर गया का तो कुछ पता नहीं है। आज तक मेरे हिसाब में तो कोई मरा नहीं। और जो जानते हैं, वे कहते हैंः कभी कोई मरता नहीं।

प्रश्नः सच बात है।

सच बात है यह?

प्रश्नः हरेक चीज के, नहीं तो व्याख्यान दो। हरेक चीज के दो चीज हैं,
दो बाजू हैं। अभी आप कहेंगे कि हाइड्रोजन और आक्सीजन मिक्स हुआ और वाटर बन गया, तो क्या हाइड्रोजन खलास हो गया? एक दृष्टि से देखो तो खलास भी हो गया, एक दृष्टि से देखो तो है ही।

हां, तो तुम तो जानते हो भाई।

प्रश्नः क्योंकि अलग दृष्टि है उसकी।

तो फिर पूछ क्या रहे हो? तुम तो सब पहलू जानते हो। खोज क्या रहे हो?

प्रश्नः आपका क्या अभिप्राय है? मैं आपका अभिप्राय पूछना चाह रहा हूं।

मेरे अभिप्राय को क्या करोगे? मुझसे क्या लेना-देना? तुम जानते हो तो मामला खत्म हो गया।

प्रश्नः नहीं-नहीं, मैं कुछ नहीं जानता, उसके लिए तो मैं पूछने को आया हूं।

अरे! तुम न...

प्रश्नः जानता हूं क्या कि कुछ ऐसी प्रापर्टी चाहिए, कुछ ऐसा...

क्यों, कैसे जान गए? किसने बता दिया और कहां से जान लिया?

प्रश्नः कुछ लोगों ने बताया मुझे ऐसा। जी ज्ञान तो मिलता ही है।

उनको क्यों मान लिया? उनको क्यों मान लिया?

प्रश्नः जी नहीं, माना नहीं है मैंने।

तो फिर?

प्रश्नः आई हैव स्टिल टु बिलीव।

हूं?

प्रश्नः आई एम स्टिल टु बिलीव इट।

फिर तो, पर लगता तो ऐसा है कि मान लिया।

प्रश्नः व्हाट शैल आई बिलीव? बट ऐसा है साब कि जब तक पांच-दस आदमी की अभिप्राय नहीं ले लें और फिर अपनी दिमाग से उसके ऊपर दौड़ाएंगे नहीं, तब तक सत्य कैसे लग सकता है।

तो पांच-दस का लोगे अभिप्राय?

प्रश्नः हां जी।

दुनिया में तीन करोड़ आदमी हैं।

प्रश्नः नहीं, पर जो ज्ञानी हैं उनसे ही लेना है न?

ज्ञानी का कैसे पता चलेगा तुम्हें?

प्रश्नः जी?

ज्ञानी का कैसे पता चलेगा?

प्रश्नः जी, जो व्याख्यान देते हैं, जो लोगों को समझाते हैं, वे सब ज्ञानी लोग हैं।

बस, ज्ञानी हो जाते हैं? फिर तो बड़ी सरल बात है। तो फिर बड़ी सरल बात है।

प्रश्नः तो आपको ज्ञानी समझ कर ही हम आपके पास आए हैं।

गलती कर दी है वह बिल्कुल।

प्रश्नः तो आपको अज्ञानी समझना चाहिए हमें?

वह भी गलती हो जाएगी।

प्रश्नः क्यों?

मुझे तुम समझ कैसे सकते हो? ये मुझे अज्ञानी समझें, यह नहीं कह रहा, न मुझे ज्ञानी... तुम मुझे समझ कैसे सकते हो? तुम अपने को ही नहीं समझते हो, मुझे कैसे समझने का ठेका लोगे।

प्रश्नः ठेका, आपके विचार समझने की बात है न?

नहीं, हमारी सारी कठिनाई यह है कि हमारी सारी बातचीत बिल्कुल चकरीली
और पागलपन की है, सबकी। अब एक आदमी कहता है कि मैं ज्ञानी से पूछने जाता हूं। तुम कैसे तय कर लेते हो? तुमको इतना तो पक्का ही हो गया कि तुम ज्ञानी को तय कर सकते हो। और तुम जब ज्ञानी को तय कर सकते हो तो तुमको ज्ञान की कोई कमी नहीं रह गई। तुम तो ज्ञानी तक का तय कर लेते हो कि कौन ज्ञानी, कौन अज्ञानी। यह जब मैं यह तय कर लेता हूं कि फलां आदमी ज्ञानी है, यह मैं तय कर लेता हूं। तो जब मैं ज्ञानी तक का निर्णय कर लेता हूं--कौन ज्ञानी--तो मुझे इसका तो ज्ञान होना ही चाहिए कि ज्ञान क्या है, तब तो मैं ज्ञानी का तय कर लेता हूं। मैं यह भी तय कर लेता हूं, फलां आदमी अज्ञानी है। तो मुझे यह भी पता है कि यह किस चीज का अभाव अज्ञान है। तो मुझे ज्ञान तो मिल ही गया, तब तो मैं तय करता हूं। और फिर मैं यह भी तय कर लेता हूं कि जो आदमी बोलता है, वह ज्ञानी है।

प्रश्नः यह आप निश्चय-वृत्ति से मेल कर रहे हैं।

अरे, निश्चय-विश्चय-वृत्ति का कोई सवाल ही नहीं है। तुम्हारा ज्ञान तुम्हें दिक्कत दे रहा है। उसकी वजह से तुम सुन ही नहीं पा रहे हो। कहां का निश्चय और कहां का क्या। तय करने वाले तुम कौन होते हो, कैसे तय कर लोगे तुम?

प्रश्नः व्यवहार दृष्टि से। सद्व्यवहार भी है फिर लोग कहते हैं कि यह आदमी ज्ञानी है।

हां, तो लोग ही कहते हैं न। तो इसको थोड़ा सोचो।

प्रश्नः हां जी।

अगर मान लो कि मैंने कह दिया कि वे महाराज जो बैठे हैं ज्ञानी हैं, तो बात यहां सरक आई कि तुम मेरी बात को क्यों मान लेते हो।

प्रश्नः नहीं, पर बहुत से लोग जब कहें।

अरे, बहुत से लोगों का भी क्या सवाल है। सारी दुनिया के लोग कहते थे कि जमीन चक्कर नहीं लगती है।

प्रश्नः वह फिर वही तय होता है। वही तय करने के लिए जी यहां पर आया हूं
न मैं कि आपके विचार क्या हैं?

मैं तुमसे यही कह रहा हूं कि किसी के ओपिनियन से सत्य तय नहीं होता।

प्रश्नः यानी किसी का ओपिनियन जानना ही नहीं चाहिए।

सत्य का कोई संबंध ही नहीं है।

प्रश्नः नहीं पर किसी का ओपिनियन जानना चाहिए या नहीं?

जानो। सत्य तय नहीं होता।

प्रश्नः बस वह जानने की ही बात है न।

सत्य तय नहीं होता। सत्य तय नहीं होता। समझे न। सत्य तय नहीं होता।
दुनिया भर में इतने लोग हैं, वे सभी मानते थे कि सूरज चक्कर लगाता है पृथ्वी का। संख्या उनकी थी मानने वालों की। जिस आदमी ने पहली दफा कहा कि नहीं, ऐसा नहीं होता, वह अकेला आदमी था। लेकिन वह सही निकला, वे सारी दुनिया के लोग गलत निकले।

प्रश्नः हो सकता है यह?

तो ओपिनियन ट्रूथ नहीं है। यह कोई पोलिटिकल मामला नहीं है सत्य का कि तुमने वोट ले लिए कि इतने आदमी कहते हैं कि यह सत्य है, पच्चीस आदमी कहते हैं। और फिर बड़ा मजा यह है, बड़ा मजा यह है कि जब भी कोई आदमी पूछने चला जाता है किसी से... मेरा कहना यह है कि पूछना छोड़ो, जीना शुरू करो। जीने के अनुभव से तुम्हें दिखाई पड़ना शुरू होगा जो सत्य होगा। और पूछने से तुम्हें सिर्फ शब्द मिलेंगे। और शब्द तुम इकट्ठे कर लोगे। और शब्दों के बीच जोड़-तोड़ कर लोगे। और एक फिलासफी बना लोगे। वह फिलासफी बिल्कुल बोगस है, झूठी है। उसका कोई मूल्य नहीं है।

प्रश्नः यानी किसी का भी ओपिनियन जानना नहीं चाहिए।

यह मुझसे पूछोगे, ओपिनियन जानने लगे। नहीं समझे मेरी बात को। यह जब मुझसे पूछोगे, फिर वही की वही बात हो गई खड़ी। मैं यह कह रहा हूं कि ओपिनियन जानने से सत्य नहीं मिल सकता, यह जानना चाहिए। पूछो न पूछो, यह मैं क्यों

कहूं। पूछो तो भी जानो कि इससे कुछ होने वाला नहीं है, नहीं पूछो तो भी जानो कि इससे कुछ होने वाला नहीं है। होगा तो मेरे जीवन से, अपने अनुभव से।

प्रश्नः वह कबूल है।

इतनी जल्दी कबूल तुम्हें हो जाता है और फिर तुम प्रश्न पूछने लगते हो!

प्रश्नः क्योंकि अनुभव से ही होता है। मगर मैंने क्या कहा कि जब ऐसा
है कि बहुत से लोगों के एक ही चीज पर अनेक विचार होते हैं। एक ही चीज पर अगर अलग-अलग इंसान लो तो उसके विचार अलग-अलग होते हैं। तो सब विचारों को जब हम जानें, फिर कुछ अपने भी तरफ दौड़ाएं, तो सत्य लग सकता है कि अपने आप ही लगेगा।

अपने आप ही।

प्रश्नः तो फिर ओपिनियन लेने की जरूरत नहीं हुई, इसका मतलब यह हुआ।

ओपिनियन शुरू कर दिया लेना।

प्रश्नः हां जी?

ओपिनियन शुरू कर दिया लेना फिर।

प्रश्नः ओपिनियन यानी अपना ओपिनियन न, बाहर से किसी का ओपिनियन लेने
की जरूरत नहीं।

कोई जरूरत नहीं।

प्रश्नः कोई जरूरत नहीं?

कोई जरूरत नहीं।

प्रश्नः तो फिर किसी के व्याख्यान की भी जरूरत नहीं?

कोई जरूरत नहीं।

प्रश्नः सुनने की भी जरूरत नहीं, सुनाने की भी जरूरत नहीं?

कोई जरूरत नहीं। कोई जरूरत नहीं।

प्रश्नः फिर आप सुनाते क्यों हैं?

फिर पूछने लगे मुझसे तुम। फिर तुम मुझसे पूछने लगे न। जब यह तय कर लिया, कबूल कर लिया कि कोई जरूरत नहीं, अब मुझसे पूछने की कहां गुंजाइश बचती है।

प्रश्नः क्योंकि आप ही कह रहे हैं कि ओपिनियन लेने की किसी की जरूरत नहीं है।

नहीं समझते, तुम नहीं समझते मेरी बात को। और नहीं समझ सकोगे। और अगर इसी दिशा में चलते गए, तो फिर कुछ भी नहीं समझ सकोगे, वक्त आ जाएगा। समझे न? यह सारी दिशा पागलपन की दिशा है, सारी दिशा। यह जो सब तुम्हारा जो चल पड़ा

हिसाब, उसमें आखिर में सिर्फ विक्षिप्त हो सकते हो और कुछ भी नहीं हो सकते।
साइलेंस की दिशा की तरफ समझ लेनी चाहिए। मैं जाऊं, पूछूं, एक अंधे से पूछूं कि प्रकाश कैसा है, दूसरे अंधे से पूछूं, तीसरे अंधे से, पच्चीस अंधों से पूछूं और सबका ओपिनियन कलेक्ट कर लूं, और फिर अपना ओपिनियन भी जोड़ दूं। अंधा तो मैं खुद भी हूं, नहीं तो मैं प्रकाश को पूछने जाता ही नहीं। अंधा तो मैं खुद भी हूं, नहीं तो मैं पूछने क्यों जाता कि प्रकाश कैसा है, मैं जानता।
तो पहली तो बुनियाद तो यह कि मैं अंधा हूं। अंधे आदमी की दूसरी बुनियाद यह है कि वह पता नहीं लगा सकता कि किसके पास आंख है। एक अंधे का ओपिनियन एक मात्रा में पागलपन है, तो पचास अंधों का पचास गुना। फर्क इतना पड़ जाता कि उसको सेंटिटि मिल जाती, यह कहता कि ठीक, अब पचास आदमी यह कहते हैं तो यह बात ठीक होनी चाहिए। संख्या के बढ़ने से, स्वीकृति मिलने से, इसको अपने अंधेपन की बात को मानने का बल मिल जाता है कि यह ठीक होनी चाहिए, इतने लोग कह रहे हैं। लेकिन बेसिस यह है कि तुम पूछने गए तो तुम्हें पता नहीं पहली तो बात, फिर दूसरी बात तुम जिनसे पूछने गए, तुम पता नहीं लगा सकते कि उनको पता है कि नहीं पता है।
तो मेरा कहना यह है, मेरा कहना यह है, पूछने की यात्रा केवल फिलासफिक है। सिद्धांत वगैरह इकट्ठे करने हों, पंडित बन जाना हो, तो पूछना चाहिए, समझना चाहिए, पढ़ना चाहिए, सीखना चाहिए और उसको पकड़ना चाहिए, और अपना भी उसमें जोड़-तोड़ करना चाहिए। लेकिन अगर जानना हो तो यह बुनियादी बात समझ लेनी चाहिए कि मैं कैसे पहचानूंगा कि कौन सत्य कह रहा है, कौन असत्य कह रहा है। मैं कैसे, कैसे तय करूंगा कि जो इन्होंने कहा... क्योंकि मुझे सत्य पता नहीं है। पता होता तब तो तय कर लेता; तय कर लेता तो जानने की, पूछने की जरूरत न थी। तो यह आदमी की बेसिक डिफिकल्टी है, यह उसकी बुनियादी कठिनाई है कि उसे पता नहीं है और पूछ कर पता लगाना है, और पूछ कर पता लगा नहीं सकता क्योंकि किससे पूछे।
तो इस, मेरा क्या कहना है, मैं क्या कर सकता हूं, तुमसे जो बात कर रहा हूं, या लोगों से कह रहा हूं, मैं यह कह रहा हूं कि मैं तुमसे तुम्हारी बेसिक डिफिकल्टी की चर्चा कर सकता हूं कि यह बेसिक सिचुएशन है हमारी। इस बेसिक सिचुएशन में तुम सोचो कि क्या करने से ठीक होगा, क्या पूछने से, ओपिनियन इकट्ठा करने से, किताब पढ़ने से, क्या होगा? जरूर तुम कोई डिसीजन कर लोगे। लेकिन डिसीजन से कोई संबंध नहीं। तुम्हारे डिसीजन का कोई मूल्य नहीं है। क्योंकि तुम जानते नहीं हो।

प्रश्नः वह गलत भी हो सकता?

हां। और फर्क इतना पड़ेगा कि अगर तुम अकेले सोचते तो तुमको लगता मैं अकेला हूं। पचास आदमियों का ओपिनियन तुम्हारे पक्ष में पड़ गया, तो तुम समझोगे कि अब तो ठीक होने के करीब बात आ गई, तो तुम जड़ हो जाओगे, पकड़ लोगे। मैं चाहता हूं यह तुम्हारा सब तरल हो जाए, इसकी बुनियाद उखड़ जाए, यह तुम्हारा खयाल मिट जाए कि इस तरह सत्य जाना जा सकता है।
नहीं, इस तरह नहीं जाना जा सकता। लेकिन किस तरह जाना जा सकता है?
हम जी रहे हैं, तो हम जीवन के साथ पूरे संतृप्त हो जाएं, हमारे प्राण उससे जुड़ जाएं। और जीवन कोई ऐसी चीज नहीं है कि मैं कहीं जाऊं, उसको गले लगा लूं। वह तो चौबीस घंटे मैं बह रहा हूं उसमें। अभी तुमसे बोल रहा रहा हूं तो जी रहा हूं। अब मैं इस तरह जी सकता हूं कि मैं तुम पर पूरे प्राण लगा दूं, हालांकि इसका कोई मतलब नहीं है। तुमसे मुझे क्या लेना-देना। लेकिन मैं तुमसे बोलूं तो इतनी इंटेंसिटी से कि जैसे मेरा सारा दांव है यह कि मुझे तुम्हें, मुझे जो ठीक दिखाई पड़ता है वह मैं तुम्हें कहूं। तो मैं तुमसे बोल रहा हूं, मैं इस तरह भी बोल सकता हूं--ठीक है, आ गया आदमी तो थोड़ी- बहुत बात करके उसको विदा कर देना है। और वह विदा कर देना ही मुझे आसान है।

मैं तुमसे सहमति भर दूं, झंझट तुमसे छूटी। मुझे तुमसे क्या लेना-देना है, क्या प्रयोजन है।
लेकिन नहीं, मैं तुमसे पूरी तरह जूछ ही लूंगा, मैं तुम पर दांव लगा दूंगा, जैसे कि मेरे लिए जीने-मरने का सवाल है यह। तो इस बोलने में भी इंटेंसिटी खड़ी हो जाएगी, और बोलना मेरा एक लिविंग एक्सपीरिएंस हो जाएगा। मेरा मतलब समझ रहे न? अब तुम भी इस तरह सुन सकते हो कि सुनना तुम्हारे लिए एक दांव हो जाए। तो तुम्हारे लिए भी लिविंग एक्सपीरिएंस हो जाएगा।
लेकिन तुम्हारे लिए लिविंग एक्सपीरिएंस नहीं हो पाएगा, क्योंकि तुम दांव लगा कर नहीं सुन रहे हो। तुम प्रिज्युडिस से सुन रहे हो। तुम विदहेल्ड हो पीछे। तुम सोच रहे हो कि मैंने कल यह पढ़ा था, परसों यह मैंने सुना था, मैंने तो यह तय किया हुआ--निश्चय में, व्यवहार में, आत्मा, फलां- ढिकां, ये सब तुमको पकड़े हुए हैं पीछे। तुम पूरा नहीं कूद गए हो मेरे साथ। तुम खड़े हो, वहां रुका है तुम्हारा माइंड, तुम वहीं से सोच रहे हो। जब मैं बोल रहा हूं तब तुम वही सुन रहे हो--तो अच्छा, यह निश्चय में हुआ कि व्यवहार में हुआ, कि ये क्या कह रहे हैं, यह किस धर्म से मिलती है बात, यह किस शास्त्र में मिलती है, तुम इसमें उलझे हो। तुम्हारा जो सुनना है वह टोटल नहीं हो पा रहा। नहीं हो पा रहा तो चूक गया जीवन का एक अनुभव। मेरे पास घंटे भर तुम थे जीवन का एक अनुभव हो सकता था, वह चूक गया।

प्रश्नः इसमें जो अपनी बात थी उसका कोई खुलासा नहीं हुआ।

खुलासा मैं कर ही नहीं रहा हूं।

प्रश्नः हां जी, अब आपने जो बताया...

मैं तो यही कह रहा हूं कि विदहेल्ड, तुम अभी वह वहीं रुके हो तुम जो पूछे थे घंटे भर पहले।

प्रश्नः आपने जो बात किया मगर जो तत्व की जो अपनी बात चल रही है, वह बात से उसका कोई मेल ही नहीं समझ में आता।

(आगे प्रवचन का ध्वनि मुद्रण उपलब्ध नहीं है।)

उपासना के क्षण
पांचवां प्रवचन

निर्विचार परिपूर्ण शक्ति है

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बीस साल में आप रुपया कमा पाए उतना जिससे आप सुख और शांति से रह सकते हैं। लेकिन बीस साल मन का तनाव और चिंता इस हालत में आपको ला दिया कि अब आपके पास कितना ही रुपया हो आप सुख और शांति से नहीं रह सकते। बीस साल में मन को इतना श्रम करना पड़ा, इतनी चिंता करनी पड़ी, उसकी वह आदत हो गई।

प्रश्नः चिंता करने की?

चिंता करने की, बेचैन होने की। वे रूट्स बन गईं चिंता की। जैसे बैलगाड़ी चलती है तो एक रास्ता बन गया। अब बैलगाड़ी के चकों को उसी में फंस कर चलना पड़ेगा। अब इधर-उधर थोड़ी-बहुत देर चलेगी फिर उसी में आ जाएगी। रट बन गई।
तो बीस साल आदमी चिंता, फिकर; सोया नहीं, पैसा, पैसा, कैसे कमाऊं, कैसे कमाऊं। तो धीरे-धीरे, धीरे-धीरे, धीरे-धीरे उसका दिमाग एक चिंता... स्नायु मस्तिष्क के सब चिंता करने के लिए आदी हो गए हैं। अब वह रुपया कमा पाया, अब। और अब जिसके लिए उसने इतनी चिंता की थी बीस साल। और रुपया कमा कर वह पाता है कि न कोई सुख है, न कोई शांति है। सुख और शांति इसलिए नहीं है कि रुपया आपको कोई शांति नहीं दे सकता, रुपया व्यवस्था दे सकता है, लेकिन बीस साल में आपका मस्तिष्क गड़बड़ हो गया। तो वह आदमी फिर यह कहने लगा कि अरे, रुपये, इसमें कोई सुख-शांति नहीं है। इतना मैंने कमा भी लिया और मैं और अशांत और दुखी हो गया हूं। रुपये में कोई सार नहीं है, इसको छोड़ना चाहिए। यह आदमी... से भूल हो रही है। वह यह नहीं समझ पा रहा है कि यह, यह रुपया तो जरूर... रुपया तो केवल एक सुविधा है, माध्यम है। आपके पास वह है, तो आप जिंदगी को एक व्यवस्था दे सकते हैं। और व्यवस्था के माध्यम से आप शांत भी हो सकते हैं, चैन से भी रह सकते हैं, विश्राम भी ला सकते हैं।
मेरा कहना यह है कि रुपये को कमाने के साथ ही साथ अगर उसने मन की शांति कमाने का भी उपाय किया होता, तो वह तो जिस दिन उसके पास रुपया होता, उस दिन वह उतना सुखी होता, जितना वह गरीब रह कर कभी भी सुखी नहीं हो सकता था। क्योंकि रुपया उसको बाहरी व्यवस्था दे देता और मन की शांति उसको भीतरी व्यवस्था दे देती। और ये दोनों चीजें जिस दिन मिल जातीं उस दिन वह परम शांति को अनुभव करता। लेकिन यह हो नहीं पाया। उसने बाहर की व्यवस्था जुटाने में, जो कि बिल्कुल जरूरी है, भीतर की कोई व्यवस्था जुटाई ही नहीं। और जिस चीज के लिए इतनी मेहनत की, आखिर में पाने के बाद पाया कि उसको कुछ मिल नहीं रहा है, तो ठीक विरोधी रुख पैदा हो गया कि इसमें कोई सार नहीं है, सब असार है, इसको छोड़ कर भागना चाहिए। और इस तरह के लोगों ने समाज के चित्त में हवा पैदा कर दी। जो दरिद्र है, उसको तो रुपये का कोई पता नहीं है कि रुपया शांति लाता कि नहीं लाता। उसको पता ही नहीं कि रुपया क्या लाएगा। जो अमीर है, उसका यह अनुभव है कि रुपये से शांति नहीं आई। तो बुद्ध और महावीर, ये सब अमीर घरों के लड़के हैं। इन्होंने एक हवा पैदा कर दी पूरे समाज में। और जब ये छोड़ कर चले गए, तो दरिद्र को भी दिखाई पड़ा कि जिनके पास सब था, वे छोड़ कर जा रहे हैं, कुछ नहीं है उसमें।
तो जिस चीज में कुछ नहीं है, उसको पकड़ना नासमझी है। लेकिन गरीब का मन
और अमीर के मन में एक फर्क है। अमीर समझ कर जाता है कि रुपये में कुछ नहीं है, तो उसे रुपये का भय नहीं होता। बुद्ध, महावीर को रुपये का भय नहीं है बिल्कुल। वे समझ कर गए हैं कि रुपये में कुछ नहीं है। रामकृष्ण बिल्कुल दरिद्र ब्राह्मण के लड़के हैं। रुपये का कोई अनुभव है नहीं। सुना हुआ है यह कि रुपये में कुछ भी नहीं है, लेकिन मन में तो कामना रुपये की है। वह दरिद्र के लड़के में होनी ही चाहिए कि वह जान ले।

प्रश्नः नॉलेज नहीं है वह।

नॉलेज नहीं है। और आशा है और मन में इच्छा है रुपये की। इधर इच्छा है
और उधर बुद्धि कहती है कि कुछ भी नहीं है। एक द्वंद्व चल रहा है भीतर। इस द्वंद्व में यह हालत हो जाएगी कि छूना भी पाप है। छूने का मन है, पकड़ लेने का मन है। कहीं पकड़ न लें, तो फिर इतना भयभीत अपने को कर लिया है कि छू लेना भी पाप है, छूना भी नहीं है। तो रामकृष्ण को छूना भी पाप है। बुद्ध में वह ऑप्सेशन नहीं है। क्योंकि बुद्ध रुपये को देख कर आया है। सब देखा कर आया है। बुद्ध में स्त्री का ऑप्सेशन नहीं है। क्योंकि बुद्ध और महावीर सुंदर से सुंदर स्त्रियों को भोग कर आए हैं। जितनी देश में सुंदरतम स्त्रियां थीं, बुद्ध के महल में सब उपस्थित थीं। तो स्त्री को छू लेने और नहीं छू लेने में प्रॉब्लम बुद्ध को नहीं है।
अब वह मेरी चेष्टा बड़ी मुश्किल की हो गई है। मेरी चेष्टा यह है कि मेरा कहना है कि रुपये का मूल्य है। उतना मूल्य नहीं है जितना पैसे के पागल को होता है। उतना निर्मूल्य भी नहीं है जितना पैसे के दुश्मन को होता है। पैसा एक तटस्थ साधन है। उसका उपयोग है। उसका समझ हो तो बहुत सदुपयोग है। और अगर उसकी व्यवस्था जुटाने के साथ-साथ मनुष्य भीतर की व्यवस्था भी जुटा ले...

प्रश्नः वह हो सकती है?

बिल्कुल हो सकती है। वह हमारे खयाल में नहीं है। और समाज को आज तक उसकी दृष्टि नहीं दी गई। कभी नहीं दी गई। उसका कारण यह था कि समाज को दृष्टि देने वाले जो लोग थे, वे ये धनी लोग थे। समाज को दृष्टि देने वाला जो वर्ग था, वह धनिकों का वर्ग था।

प्रश्नः और वह उसने उससे पाया कुछ नहीं।

उसने पाया कुछ नहीं है। और उसने यह गलती दे दी। और दूसरा गरीब का वर्ग है। गरीब को पता नहीं है, लेकिन आकांक्षा है उसको कि अच्छा मकान हो, शांति से रहूं, खाने-पीने की रोज चिंता न करना पड़े, यह उसका खयाल है। तो उसकी इच्छा तो कहती है कि पैसा हो, और यह सारे समाज के नेताओं का, और नेता ये सब पैसे वाले लोग हैं, इनका अनुभव कहता है कि पैसे में कोई सार नहीं है, तो वह पड़ जाता है द्वंद्व में। और वह द्वंद्व उसकी जान खाए जाता है कि क्या करूं, क्या न करूं। अगर पैसा कमाने में लगता है तो लगता है पाप कर रहा हूं, कोई सार नहीं है। नहीं कमाने में लगता है तो देखता है कि कष्ट ही कष्ट इकट्ठे होते चले जा रहे हैं। तो उसको हमने एक कांफ्लिक्ट में डाल दिया। और उस कांफ्लिक्ट में आदमी जी रहा है। और उसको तोड़ने का कोई उपाय नहीं सूझ पड़ता। अगर इस गरीब का नेता होना हो तो आपको भी पैसे को गाली देना पड़ेगी। क्योंकि गरीब के मन में पैसे की इच्छा है, तृष्णा है; ईर्ष्या भी है, पैसे वाले के प्रति घृणा भी है। वह खुद पैसा वाला होना चाहता है। लेकिन जिसके पास है उसके प्रति उसके मन में घृणा भी है, ईर्ष्या भी है।
अगर गांधी पैसे को लाद मार दे, तो गरीब उनका चरण छुएगा। वह कहेगा कि यह
है आदमी। क्योंकि पैसे के प्रति जो इसकी ईर्ष्या और घृणा है, ये इसको लाद मारता है, दो कौड़ी का समझता है। यह बात उसको अपील करती है। तो रामकृष्ण पैसे को देख कर चौंक जाते हैं, तो सारा गरीब जो वर्ग है वह प्रभावित होता है। और बड़े मजे की बात है कि पैसे वाला इसलिए प्रभावित होता है कि उसके पास इतना पैसा है, फिर भी अभी इतनी सामर्थ्य नहीं जुटा पाया कि पैसे को लाद मार दे, और जिसके पास कुछ भी नहीं है वह लाद मार रहा है! जरूर अदभुत है यह आदमी। यह हमारा माइंड कैसे काम करता है। गरीब इसलिए प्रभावित होता है कि वह पैसे के प्रति ईर्ष्यालु है। पैसे वाला इसलिए प्रभावित होता है कि अरे, जिसके पास कुछ भी नहीं है, वह लाद मारने की हिम्मत रखता है। वह अदभुत शक्ति

संपन्न आदमी है। और तब सिलसिला जारी रहता है। और उस सिलसिले को तोड़ना कठिन होता चला गया है।
अब मेरे सामने जो बड़ी समस्या खड़ी हो गई है वह यह कि मैं दोनों से राजी नहीं हूं। मैं उस आदमी से भी राजी नहीं हूं जो कि पागल की तरह पैसा इकट्ठा करता चला जाता है। और उसके इकट्ठे करते-करते मर जाता है। मैं उससे भी राजी नहीं हूं जो कि पैसे से भागता है और चिल्लाता है कि उसको बिच्छू ने काट खाया अगर पैसे छू गए तो। ये दोनों एक ही बीमारी के एक्सट्रीम्स हैं। सचाई हमेशा कहीं मध्य में है। सचाई यह है कि अगर समझदारी से पैसे का उपयोग हो, जो कि हो सकता है, क्योंकि समझदारी और पैसे में कोई विरोध नहीं है। मेरा कहना यह है कि समझदारी एक और बात है, पैसा एक और बात है, उसमें कोई विरोध नहीं है। बल्कि सचाई यह है कि पैसा हो तो समझदारी सरलता से आ सकती है, पैसा न हो तो समझदारी बहुत कठिन है आना। क्योंकि समझदारी आने के लिए भी जो व्यवस्था चाहिए वह भी पैसे के बिना नहीं जुड़ सकती है।
यह जो, जो व्यवस्था जुड़ती है समझदारी लाने के लिए... अब कोई हम खाना खाएं, हम कैसा खाना खाते हैं इससे हमारा व्यक्तित्व, हमारा मस्तिष्क सब प्रभावित होता है। अगर ऐसा खाना एक आदमी को मिलता रहे जिसमें कि विटामिंस नहीं हैं, ताकत का कुछ भी नहीं है, उसका मस्तिष्क भी विकसित नहीं होगा। समझदारी आएगी कहां से। खाक। वे जो आदिवासी हैं, जंगली मुल्कों के लोग हैं, इन्होंने संस्कृति क्यों विकसित नहीं की? इनका भोजन डिफेक्टिव है। ये संस्कृति विकसित कर ही नहीं सकते। क्योंकि जितना भोजन स्वस्थ मस्तिष्क को बनाने के लिए चाहिए, वह इनको कभी मिला नहीं। यह कोई ऐसा नहीं कि ये आकस्मिक रूप से वैसे पड़े रह गए हैं। जैसे अफ्रीकन हैं या हमारे जंगल में रहने वाला आदमी है, इसका भोजन बिल्कुल ही अव्यवस्थित है। उस भोजन में जो सार्थक है वह न के बराबर है। तो शरीर का काम किसी तरह चल जाता है, लेकिन मस्तिष्क विकसित नहीं हो पाता।
अमरीका इतने जोर से विकास करता चला जा रहा है, उसके बच्चे इतनी दूर की बातें सोच रहे हैं, उसका कुल कारण यह है कि उसका भोजन ज्यादा कैलोरी का है, वेल प्रवाइटेड है, ठीक विटामिन युक्त है, व्यवस्थित है, साइंटिफिक है। दो सौ वर्षों में अगर अमरीका का यही भोजन रहा और हमारा यही भोजन रहा, तो हमारे बच्चे में और अमरीका के बच्चे में जमीन-आसमान का फासला हो जाएगा, क्योंकि हमारा बच्चा बेसिकली डिफेक्टिव होगा। यानी इस बात की संभावना है कि अगर पांच सौ साल यही स्थिति चलती चली गई, तो बिल्कुल अमरीका एक सुपर ह्यूमन बेस पैदा कर लेगा, जो बिल्कुल और तरह के आदमी होंगे। जिनका सोचना, जिनकी समझ, जिनकी इनसाइट बहुत ही सही होगी, जिसका हम कोई मुकाबला नहीं कर सकेंगे, हम कहीं किसी तल पर खड़े न रह जाएंगे। और इधर हमारे बेवकूफ यही कहे चले जा रहे हैं कि पैसा बेकार है, और वे हमारी जान लिए ले रहे हैं।
रूस के बच्चे हैं, उनको बिल्कुल साइंटिफिक भोजन मिल रहा है। एक-एक हिसाब है कि कितनी कैलोरी, कितना कौन सा विटामिन, कितना खनिज, कितना सॉल्ट, सब साइंटिफिक है। दो सौ वर्षों में जो बच्चा वे पैदा करेंगे वह बच्चा वेलइकुव्ड पैदा हो रहा है माइंड की तरफ से। उसका माइंड जो चीज लाएगा, वह हमारे बच्चे कहां से लाएंगे।
तो यह जो, इसमें सारी व्यवस्था का सवाल तो यह है कि पैसा तो सिर्फ माध्यम है जो बाहर के सारे जीवन की व्यवस्था जुटा देता है। और वह व्यवस्था जितनी सम्यक होगी, उतनी भीतर संभावना बढ़ती चली जाती है। अब एक आदमी को ठीक खाना ही नहीं मिला है, उससे हम कह रहे हैं कि तुम चित्त को शांत करो। यह बिल्कुल पागलपन की बातें कर रहे हैं। एक आदमी ठंड में ठिठुरा जा रहा है, हम उससे कह रहे हैं कि तुम अपने चित्त को शांत करो। अब वह कह रहा है कि चित्त का अभी सवाल नहीं है, अभी सवाल यह है कि मेरा शरीर कैसे शांत हो। और जब शरीर शांत नहीं होता तो चित्त कैसे शांत हो। चित्त तो केवल खबर देने वाला है। चित्त खबर दे रहा है कि शरीर अशांति में है, अगर उसको ठीक कर लूं, तो शरीर मिट जाएगा। तो जब तक शरीर अशांति में है, चित्त खबर देता ही चला जाएगा। वह तो केवल, जैसे कि नीचे एरोड्रम पर से खबर दी जा रही ऊपर हवाई जहाज को कि अभी तुम मत उतारो, अभी यहां बादल हैं, अभी उतारोगे तो मर जाओगे। और वह सुने न,

और कहे कि मैं तो उतारता हूं। ऐसी हालत है। चित्त तो खबर दे रहा है पूरे वक्त कि शरीर इतनी ठंड नहीं सह सकेगा। अगर जल्दी कपड़ा नहीं जुटाते तो खत्म हो जाएगा। अब वह चित्त यह खबर दे रहा है कि तुम कपड़ा जुटाओ, तुम कह रहे हो कि कपड़े-लत्ते से क्या लेना-देना है, अरे शरीर से क्या लेना-देना, ये तो सब बाहरी चीजें हैं। तो शरीर टूटेगा, साथ ही चित्त टूट जाएगा।
गरीब मुल्क का मस्तिष्क विकसित नहीं हो पा रहा है, हो नहीं सकता। गरीब मुल्क में भी जो दो-चार-दस मस्तिष्क पैदा हो जाते हैं, आकस्मिक हैं। आकस्मिक मतलब यह कि कई दूसरे कारणों पर... और यह मस्तिष्कों को अगर पूरा व्यवस्थित जन्म से ही हिसाब मिलता, तो ये कितना कर पाते और क्या कर पाते, इसका कोई हिसाब नहीं लगा सकते।
हमारा तो ऐसा है कि चालीस करोड़, पचास करोड़ लोग हैं, कितनी प्रतिभा हम पैदा कर पाते हैं, वह न के बराबर है। रूस बीस करोड़ का मुल्क है, पचास साल में कितनी प्रतिभा पैदा उसने की, जरा हम आंकड़ा तो देखें।

प्रश्नः बेसिकली फुड है?

बेसिकली फुड है, कपड़े हैं। अब एक आदमी धूप में बैठा काम कर रहा है और
एक आदमी एयरकंडीशन में बैठा काम कर रहा है, दोनों के काम में बुनियादी फर्क पड़ने वाला है। अब तुम कहो कि बाहर से कुछ नहीं होता, तो बेवकूफी की बातें कर रहे हो। सब कुछ बाहर से हो रहा है। और बाहर अगर सब व्यवस्थित हो जाए, तो भीतर कुछ होता है।
तो मेरी दृष्टि, मुझे बड़ी तकलीफ हो गई, मेरी दृष्टि यह हो गई कि मैं यहां किसी से राजी नहीं हूं। वह जो बाहर वाला है, वह सिर्फ इसी की फिकर में पड़ा है कि यह हो जाए, वह हो जाए; उसको भीतर की कोई चिंता नहीं है। यह जो भीतर वाला है, यह भीतर की चिंता की इतनी बातचीत करता है कि बाहर की सब फिकर छोड़ देता है। और ये दोनों चीजें सम्मिलित और एक हैं। और दोनों जब बिल्कुल बैलेंस में होती हैं, तब व्यक्ति की ठीक-ठीक स्थिति बनती है। और ये दोनों अनबैलेंस्ड हैं।
यह एटिट्यूट पहुंचाना लोगों तक इसलिए मुश्किल होता चला जा रहा है कि
वह जो गरीब है, उसको इसमें उसकी प्रशंसा नहीं मिलती जितनी गांधी या रामकृष्ण उसको प्रशंसा देते हैं कि तू तो दरिद्रनारायण है, तू तो भगवान का रूप है। मैं उसको कहता हूं, तू भगवान-वगवान का रूप नहीं है। दरिद्रता जो है बीमारी है। यह कोई नारायण-वारायण का सवाल नहीं है। यह रोग है, इससे छुटकारा पाना चाहिए। मेरी बात से उसको, उसका अहंकार तृप्त नहीं होता। गांधी कहते, तू तो भगवान का रूप है, तू तो दरिद्रनारायण है। तो उसको आदर मिलता है, सम्मान मिलता है। और उसके पास धन तो है नहीं, आदर पाने का वह तो रास्ता है नहीं। पद नहीं, प्रतिष्ठा नहीं। एक ही, गरीबी है कुल उसके पास। अगर गरीबी को आदर देते हो तो उसको आदर मिलता है, नहीं तो खत्म हो गया। और मैं कहता हूं कि गरीबी बीमारी है। तो उसके अहंकार को चोट लगती है। इधर अमीर को मैं कहता हूं कि तुम यह सब पैसा इकट्ठा करते जा रहे हो, इससे कुछ होने वाला नहीं है। तुम बिल्कुल बेवकूफी की तरह से लगे हुए हो। पैसा जरूरी है, लेकिन अकेला पैसा काफी नहीं है, भीतर कुछ और चाहिए। तो उसको भी यह अच्छा नहीं लगता। उसको अच्छा लगता है कि कोई कहे कि तुमने बहुत महल बना लिया, तुमने बहुत अच्छा काम कर लिया, बस काफी है, पर्याप्त है। तुमने राज्य जीत लिया, तुम प्राइमिनिस्टर हो गए। वह उसको, उसको यह अच्छा नहीं लगता कि उसको यह कोई कहे कि नहीं, यह काफी नहीं है, असली चीज छूट गई।
तो वह दोनों के साथ कठिनाई है। और वे दो ही हैं समाज में। इसलिए इस तरह
की बात को पहुंचाना हमेशा कठिन रहा है।

प्रश्नः तो लोगों ने इसी बात को...

हां, इसी बात को। कौन झंझट में पड़ता है। किसकी झंझट में पड़ने की कूवत है? और मैं हर चीज में झंझट में पड़ गया हूं। सूत्र सीधे-सादे उत्तर देकर

निपटारा हो जाता है। मुझे किसी चीज में निपटारा नहीं होता, जब तक कि मैं पूरा आपको समझा न पाऊं। और समझाने के लिए मुझे पूरा ब्योरा देना पड़ता है।
क्योंकि वह सारा ब्योरा जब तक खयाल में न आ जाए कि किस वजह से यह हो रहा है। पूरा समाज रोग ग्रसित हो गया है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं है।)

एक तो यह खयाल में ले लेना चाहिए कि हम धंधे की भी चिंता किसलिए कर रहे हैं? यह हमारे पास स्पष्ट होना चाहिए। इसीलिए कर रहे हैं न कि हम ज्यादा शांति और आनंद से रह सकें? लक्ष्य क्या है? काहे के लिए चिंता कर रहे हैं? कोई धंधे की चिंता धंधे के लिए कर रहे हैं? चिंता इसलिए कर रहे हैं कि मैं कैसे ज्यादा शांति और आनंद से रह सकूं। यह हमारा बेसिक मोटिव बिल्कुल साफ होना चाहिए। यह भूल जाता है रोज-रोज। यह हमें खयाल में नहीं रहता। अगर यह हमारे खयाल में है, तो उसका मतलब यह हुआ कि धंधे की चिंता उस सीमा तक करनी है जहां तक वह शांति और आनंद को नष्ट न करता हो। क्योंकि अगर वह शांति और आनंद को नष्ट करने वाला बन जाए, तो बेसिक मोटिव ही गड़बड़ में पड़ गया।
समझ लीजिए मैं बंबई आया, और बंबई मैं इसलिए आ रहा हूं कि बंबई पहुंच कर मेरा स्वास्थ्य ठीक हो जाए। और बंबई आने के रास्ते में मुझको जहर पीना पड़े। तो मैं कहूंगा कि मैं नहीं जाता। क्योंकि मैं जा इसलिए रहा था कि बंबई पहुंच कर मैं स्वस्थ हो जाऊं। और तुम कहते हो कि पहले तुम्हें जहर पीना पड़े तब तुम बंबई पहुंचोगे। तो मैं वापस जाता हूं। कम से कम जिंदा तो हूं। मैं जहां था ठीक था। मैं इसके आगे नहीं बढ़ता अब।
अगर हमें बुनियादी दृष्टि साफ हो जीवन की कि हमें सुख और शांति और एक आनंद का जीवन उपलब्ध करना है। और उसके लिए हम धंधा भी कर रहे हैं, पैसा भी कमा रहे हैं। तो वह उसी सीमा तक, जहां तक कि हमारी बुनियादी इच्छा को चोट नहीं पहुंचती, जिस क्षण बुनियादी इच्छा को चोट पहुंचती है हम वापस लौटने को हमेशा तैयार हैं, क्योंकि हम धंधे के लिए धंधा कर नहीं रहे हैं। यह अगर दृष्टि में हो, तो आप धंधे का काम करेंगे, विचार करेंगे, लेकिन चिंता नहीं। और विचार और चिंता में यही फर्क है।
समझ लीजिए कि आप एक उलझन में पड़ गए हैं, कि अगर यह काम करते हैं तो दस लाख का फायदा होता है, यह काम करते हैं तो पांच लाख का फायदा होता है। यह काम नहीं करते हैं तो इतने का नुकसान होता है। तो चिंता का क्या मतलब होता है? चिंता का मतलब यह होता है कि बिना कोई हल किए आप भागे चले जा रहे हैं मन ही मन में कि यह करूं कि वह करूं कि वह करूं, क्या करूं, क्या न करूं। इसमें यह हो जाएगा और उसमें वह हो जाएगा। यह तो चिंता हो गई। विचार का मतलब यह होता है कि उठा लीजिए कागज, तीन विकल्प हैं लिख डालिए, कि यह एक विकल्प है, यह ऑल्टरनेटिव है, इसमें इतना लाभ होता है, इतनी परेशानी होती है। दूसरा विकल्प यह है, इसमें इतना लाभ होता है, इतनी परेशानी होती है। तीसरा विकल्प यह है, इतना लाभ होता, इतनी परेशानी होती। हमेशा राइट डाउन कर लीजिए। अगर चिंता से बचना है तो। जो-जो है साफ लिख लीजिए और तौल लीजिए कि इसमें कौन सा सर्वाधिक शांतिपूर्ण, सुविधापूर्ण, आनंदपूर्ण है। क्योंकि वह हमारा लक्ष्य है। फिर आपको नंबर दो का दिखाई पड़ता है, बस बाकी को पोंछ दीजिए और बात खत्म कर दीजिए। यह नंबर दो को कर डालिए। क्योंकि हम, और यह सब रिपोर्ट करने का, इसमें कोई चिंता लेने का सवाल नहीं है। चिंता का क्या सवाल है? चिंता लेने का मतलब यह है कि आप शांति खोने का उपाय करने लगे।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं है।)

चली जा सकती है, चली जा सकती है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं है।)

ठीक है। बिल्कुल ठीक है। जब हमने चार नंबर चुन, देख लिए थे और काकूभाई
ने उनको निर्णय किया, और उनके पास जितनी बुद्धि थी उससे समझ कर उन्होंने नंबर दो चुना। इससे ज्यादा बुद्धि काकूभाई के पास नहीं थी। जो चुना वह हमारे पास इतनी बुद्धि थी। अब नंबर दो में हम गए और नुकसान हुआ। हमको जानना चाहिए कि मेरे पास इतनी बुद्धि थी, उससे मैंने चुना था, उसमें नुकसान हुआ, उससे ज्यादा बुद्धि मेरे पास है नहीं, इसमें चिंता का क्या सवाल है। चिंता का सवाल इसलिए पैदा होता है कि काकूभाई हमेशा इस भ्रम में हैं कि मेरे पास ज्यादा बुद्धि थी, मैं और पहले थोड़ा सोचता और चिंता करता, तो मैं नंबर तीन चुन लेता। वह गलती है आपकी। हमारा अहंकार यह मानने को राजी नहीं होता कि हमारे पास सीमित बुद्धि है। और सबके पास सीमित बुद्धि है। चाहे कितनी ही बड़ी हो। हमारे पास सीमित बुद्धि है, और मैंने अपनी पूरी बुद्धि लगा दी थी। अब इसके बाद उपाय नहीं था; जो मैं कर सकता था, वह मैंने किया। नुकसान हुआ, ठीक है। इससे अन्यथा मैं कुछ कर ही नहीं सकता था। क्योंकि मेरे पास बुद्धि थी, वह इतनी ही थी। और यह मैंने किया, इतना नुकसान हुआ, ठीक है। अब आइंदा मैं देखूंगा कि नंबर दो जैसा कि गलत फिर दुबारा न चुनूं। बात खत्म हो गई है। क्योंकि अब पीछे लौटने का तो सवाल ही नहीं है। अब जो हो गया उसको तो अनकिया नहीं किया जा सकता। वह बात खत्म हो गई है। लेकिन हम क्या करते हैं, अब हम पीछे बैठ कर सोचते हैं कि अगर हमने पहले वाला चुना होता तो बहुत अच्छा होता। अब बेवकूफी की बातें कर रहे हैं। हमने चौथा चुन लिया होता तो बहुत अच्छा होता। उसमें इतना लाभ हो जाता। यह तो झंझट हो गई, नुकसान हुआ। एक बात हमें जानना चाहिए, जो हो गया वह हो गया, अब वह पत्थर की लकीर हो गई। अब उसमें कुछ सेंस नहीं है इधर-उधर सोचने का।

प्रश्नः उसको याद ही नहीं करना चाहिए?

कोई मतलब ही नहीं है न। इसको जानना कि कोई मतलब ही नहीं है अब उसमें।
एक अनुभव हुआ जरूर हमें। अब हमें फिर से अपने चार विकल्प उठा कर देख लेना चाहिए कि अब हमें अनुभव हुआ कि नंबर दो का विकल्प गलत था। नंबर दो को काट डालते हैं। अब तीन बचते हैं। अगर भविष्य में हमें सोचना है तो अब तीन लाइन पर सोचना है, नंबर दो की लाइन गलत हो गई। और एक अनुभव कीमती हो गया कि नंबर दो की गलती अब नहीं करनी है। बात खत्म हो गई।
तो जीवन की हर भूल-चूक अनुभव बना लेनी चाहिए और मुक्त हो जाना चाहिए। करिएगा क्या? और ऐसा जो आदमी करता है वह धीरे-धीरे, धीरे-धीरे ठीक की दिशा में सोचना शुरू कर देता है। चिंता और विचार में यही फर्क है। चिंतित आदमी कभी कुछ नहीं सोचता, सिर्फ कनफ्यूज्ड है, भाग-दौड़ करता रहता है।

प्रश्नः तो विचारित आदमी कुछ प्रोग्रेस कर सकता है?

विचारित आदमी ही प्रोग्रेस करता है। चिंतित आदमी कैसे प्रोग्रेस करेगा? विचारित आदमी बहुत प्रोग्रेस करता है। तो बाहर के जगत में जो भी प्रोग्रेस है वह सब विचार से होती है। और भीतर के जगत में...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं है।)

न, न, न, बिल्कुल विपरीतता नहीं है। जैसे कि हम दिन भर जागते हैं, तो जितना आप दिन में जागेंगे, रात नींद में कठिनाई थोड़े ही होगी, उतनी ही अच्छी नींद आएगी। लेकिन दोनों उलटे हैं। आप कहें कि हम दिन भर जागेंगे तो फिर रात में सोएंगे कैसे? क्योंकि जागना उलटा है, सोना उलटा है। एक आदमी कहे कि हम बहुत मेहनत कर लेंगे तो फिर हम विश्राम कैसे करेंगे? मेहनत उलटी है, विश्राम उलटा है। लेकिन हम जानते हैं कि जितनी मेहनत आप करेंगे उतना ज्यादा विश्राम करेंगे। जितना जागेंगे उतने गहरे सोएंगे। जितनी भूख लगेगी उतना ज्यादा खाएंगे। तो उलटे का जो सवाल है न, पेंडुलम की घड़ी की तरह

माइंड चलता है। अगर आप एक्सट्रीम इस कोने तक गए, फिर वहां से रिलैक्स हो जाइए, तो फट से दूसरे कोने पर, एक्सट्रीम पर पहुंच जाएंगे।
तो विचार बाहर के जगत के लिए और निर्विचार भीतर के जगत के लिए। जागने
और सोने के तरह का संबंध है उनमें। वे विरोधी नहीं हैं, एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। तो जब आप दिन भर आफिस में खूब विचार करिए, मैं नहीं कहता कि आफिस में आप ध्यान करिए, खूब विचार करिए। टाइम तय रखिए कि मैं ग्यारह बजे से लेकर पांच बजे तक विचार की दुनिया में रहूंगा। फिर एक सेकेंड के लिए भी वहां दूसरी चीज का सवाल नहीं, पूरा विचार करिए और पूरी ताकत लगा कर करिए। इतनी जितनी ताकत आप में है, सब लगा दीजिए। पांच बजे तक विचार इतना श्रम कर लेगा कि वह खुद की कहेगा कि अब रिलैक्स हो जाएं। घर आकर आफिस को बंद कर दीजिए फिर दिमाग से कि अब खत्म, अब निर्विचार की दुनिया में आए, अब हम बिस्तर पर लेट कर शांत और ध्यान में जाएंगे। खत्म हो गई वह बात। और वह खत्म हो जाएगी अगर आपने पूरी ताकत से किया तो। क्योंकि जितना हम कर सकते थे छह घंटे, पूरी ताकत लगा कर किया। अब माइंड खुद कहेगा कि रिलैक्स हो जाओ, अब बहुत हो गया। और फिर अब ठीक है आफिस से घर आ गए, तो कल ग्यारह बजे तक बिल्कुल विश्राम। फिर कल ग्यारह बजे दफ्तर जाते हैं तो ध्यान को घर छोड़ जाइए, निर्विचार को। और इनमें विरोध नहीं है। और जितना यह कंपार्टमेंट साफ हो जाएगा, जिसको मैं कह रहा हूं कि दोनों विकसित होना चाहिए बाहर और भीतर, इस तरह विकसित होंगे। जब आप विचार की दुनिया में हैं तो पूरा विचार करिए। जब निर्विचार की दुनिया में हैं तो पूरे निर्विचार हो जाइए। और इन दोनों में बिल्कुल टोटल, होल डूब जाइए। और ये विरोधी नहीं हैं।

प्रश्नः और सोशियल लाइफ ट्रीटमेंट कितना?

हर चीज के लिए ध्यान उतना ही है। हमारे जीवन का लक्ष्य इतना है कि हम आनंद और शांति से जी सकें। तो हर चीज को उस क्राइटेरियन पर तौलते रहिए कि कितनी सोशल लाइफ, जिससे मेरे आनंद और शांति में बढ़ती होती हो, उतनी; उससे इंच भर ज्यादा नहीं। इंच भर ज्यादा हो, वापस लौट आइए। सोशल लाइफ का उपयोग है। अकेले नहीं हैं आप। जिंदगी बड़ी है। और बहुत अच्छे लोग हैं जिंदगी में। बहुत से संबंध हैं, उनका उपयोग है। उतना संबंध बांटिए। लेकिन वह बोझ हो जाए कि हमको जाना-आना मुश्किल है, अब लेकिन चूंकि सोशल लाइफ है इसलिए जा रहे हैं और उदास वहां बैठे हैं और सिर ठोंक रहे हैं कि कहां फंस गए। सिनेमा नहीं जाना है लेकिन पत्नी कहती है कि चलो। तो अब उसके साथ बैठे हैं और वहां गाली दे रहे हैं मन ही मन में कि कहां लिवा लाई। नहीं, इसमें कोई सेंस नहीं रहा।
तो वह तो हमेशा क्राइटेरियन साफ होना चाहिए कि मुझे यह, यह है, उतने दूर तक मैं हमेशा तैयार हूं चलने को। अपने मित्रों को, पत्नी को, बच्चों को, सबको कह रखना चाहिए कि मेरा क्राइटेरियन यह है। मैं इतने दूर तक तैयार हूं, उसके आगे खींचोगे तुम, वह मेरे दुख का कारण है, उसके आगे जाने को मैं तैयार नहीं हूं। इतना साफ होना चाहिए। और अपनी सफाई के साथ जीना चाहिए। तो अगर बिल्कुल साफ हो तो आप धीरे-धीरे, धीरे-धीरे पाएंगे कि इतना सुख है जीवन में कि जिसका कोई हिसाब नहीं है।
लेकिन हम सब कंसिस्ट किए हुए हैं। और सब क्लंजी कर लिया है, सब घोल-मेल
हो गया है। हमें कुछ पता नहीं है कि कहां तक जाना है सोशल लाइफ में। चले गए तो बिल्कुल चले गए, नहीं गए तो बिल्कुल नहीं गए। दोनों हालत में नुकसान होता है। और तब क्या होता है एक अजीब स्थिति पैदा होती है। बहुत सोशल लाइफ में चले गए तो दुख होना शुरू होता है। तो फिर बिल्कुल सोशल लाइफ छोड़ दी, तो दुख होना शुरू होता है। तो फिर कूद पड़े। तो ऐसा एक, एक आदमी सिगरेट पीता है, किसी ने कहा, बिल्कुल छोड़ देनी चाहिए, तो बिल्कुल छोड़ दी। तो तकलीफ हुई। तो फिर कूद पड़ा, तो बहुत ज्यादा पी गया। उससे तकलीफ हुई। तो फिर किसी ने समझाया कि सिगरेट पीने से बहुत तकलीफ होगी। फिर बिल्कुल छोड़ दी। अब बड़े उपद्रव में पड़ गए।

हमेशा उसे देखना चाहिए कि अगर मुझे सिगरेट पीने से सुख मिलता है तो कितनी दूर तक, बस उतनी दूर तक ठीक। फिर दुनिया की बात-वात सुनने की जरूरत नहीं है। और मुझे कितनी दूर से दुख मिलना शुरू होता है, तो उतनी दूर तक ठीक, उतनी दूर से मुझे लौट आना चाहिए। ऐसा प्रत्येक चीज के साथ स्पष्ट निर्णय लेने से आदमी साल-छह महीने में बहुत साफ हो जाएगा। और साफ जिंदगी हो तो उतना ही साफ दिखाई पड़ने लगता है उतनी दूर तक। मगर ये सब शिक्षक और गुरु और ये सब व्यवस्थित होने नहीं देते आदमी को। वे सब खींचते हैं एक-एक दिशा में उसको। और आदमी को सब दिशाओं के बीच जीना है। और सब दिशाओं के बीच एक सिंथेसिस पैदा करनी चाहिए।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं है।)

और ध्यान इस पर ही रखा कि विचार नहीं करना है, तो अंततः ध्यान विचार पर
ही है, और विचार जारी रहेगा। जरूरत इस बात की है कि विचार की जो किरणें हैं वहां से ध्यान हट जाए, उसका फोकस हट जाए, फोकस दूसरी चीज पर चला जाए।
तो हमारे व्यक्तित्व में फोकस हमारा धीरे-धीरे विचार पर ही केंद्रित
हो जाता है जीवन भर का। और कहीं हटता ही नहीं। जैसे कि एक टॉर्च जला रहे हैं हम, और उसमें हमको यह दिखाई पड़ गई खिड़की; टॉर्च हमने दूसरी तरफ घुमाई, खिड़की दिखाई पड़नी बंद हो गई, दरवाजा दिखाई पड़ने लगा। तो ध्यान जो है, अगर ठीक से समझें तो चेतना का फोकस है, उसको किस तरफ लगाए हुए हैं। और चूंकि बचपन से ही हमारा ध्यान विचार की तरफ लगा दिया जाता है, तो फोकस धीरे-धीरे फिक्स्ड हो जाता है। पढ़ना-लिखना, स्कूल-कालेज, फिर धंधा, दुकान, पत्नी, घर-बार, वह पूरे वक्त एक ही केंद्र धीरे-धीरे फोकस हो जाता है।
तो जो टॉर्च मूवेबल थी, कि घूम सकती थी कहीं भी, वह धीरे-धीरे थिर हो गई। तो उसे हटाना हो, तो उसको वहीं लगा कर नहीं हटा सकते। उस फोकस को दूसरी तरफ ले जाइए। जैसे चल रहे हैं तेजी से, तो सारा ध्यान चलने पर ले जाइए। जो शरीर के मूवमेंट हो रहे हैं, गति हो रही है, पैर चल रहे हैं, हाथ हिल रहे हैं, श्वास चल रही है, इस पर सारा ध्यान ले जाइए। एकदम से फोकस माइंड से शरीर पर चला जाएगा और विचार बंद हो जाएंगे। फोकस कहीं बदलना चाहिए और विचार बंद हो जाएंगे। फोकस कहीं बदलना चाहिए।

प्रश्नः समंदर के तट पर ऐसा देख कर सनसेट अच्छा लगता है।

वह अच्छा लगेगा, लेकिन माइंड से यह फोकस जाए। क्योंकि समंदर को भी देखोगे तो तुम सोचोगे कि अहाऽऽ कितना--

प्रश्नः कितनी लहरें हैं, कितनी लहरें उठी हैं।

यह चलेगा। यह चलेगा।

प्रश्नः विचार तो चलते ही आए... चल रहे हैं... भोजन करते वक्त भोजन कर रहा हूं, विचार कर रहा हूं।

अगर इसको सोचा कि मैं भोजन कर रहा हूं, तो विचार है। यानी भोजन करने की
जो कि"या चल रही है, सारा फोकस उस पर है। भोजन करने की कि"या है। जैसे मेरा यह हाथ है, यह मैंने उठाया, अब इसमें दो बातें हैं। या तो मैं सोचूं कि हाथ उठ रहा है, तो हाथ के एक तरफ रहा मेरा फोकस, फिर हाथ उठ रहा है कि विचार चल रहा है। विचार का सवाल नहीं है। यह हाथ उठ रहा है, इसका जो मूवमेंट हो रहा है, सारा ध्यान इस मूवमेंट पर है। इसको मैं विचार नहीं रहा कि हाथ उठ रहा है। हाथ उठने का जो मूवमेंट चल रहा मेरे भीतर, सारा ध्यान मेरा उस पर है। और तब आप देखें एक हाथ को उठा कर, और दोनों का फर्क खयाल में ले लें। फर्क बारीक है। आप इसको सोचें मत की हाथ उठ रहा है, हाथ उठ रहा है इसको अनुभव करें। और तब विचार नहीं बनेगा, तब सारा फोकस हाथ के उठने पर चला जाएगा।

तो जब मैं कहता हूं कि चल रहे हैं आप तो ऐसा आपको सोचना नहीं है कि मैं
चल रहा हूं, क्योंकि आपने अगर यह सोचा, तो फोकस तो यहां हो गया, चलना तो दूर रह गया। चलने की जो गति हो रही है, वह जो गति की कि"या हो रही पूरी की पूरी, उस पूरी कि"या पर फोकस है, सोचना-वोचना नहीं है। तब फोकस हटेगा वहां से। समुद्र पर भी हट सकता है, लेकिन सोचें मत। इसलिए कठिन है। क्योंकि समुद्र पर सोचने की आदत है हमारी। यह समुद्र है, लहरें उठ रही हैं, बड़ा अच्छा है, बड़ा सुंदर है। यह हमारी खराबी क्या हो गई कि हमारी जो सारी ट्रेनिंग है बचपन से, वह प्रत्येक चीज को विचार में परिवर्तित करने की है। फूल दिखा, फौरन मन कहेगा, गुलाब का फूल है, बड़ा अच्छा है।
बचपन से हमारा सारा जो प्रशिक्षण है हमारे जीवन का, वह वस्तुओं को शब्द में परिवर्तित करने का है। और उस वजह से बड़े विचार में हम पड़े हैं, और वह हमारी इतनी पक्की आदत हो गई कि हमने देखा नहीं कि हमने उसको शब्द में बनाया नहीं। अब दूसरी कि"या सीखनी जरूरी है कि हम चीजों को देख सकें, कि"याओं को देख सकें और शब्द में रूपांतरित न होने दें। तो जितनी दूर की चीज होगी उतनी मुश्किल पड़ेगी। जितनी निकट की होगी और आपके शरीर के भीतर होगी उतनी आसान पड़ेगी।
इसलिए बुद्ध ने श्वास पर सारा जोर दिया। क्योंकि निकटतम जो हमारे प्राणों के है वह श्वास है।

प्रश्नः तो उसी को देख कर ध्यान करें?

श्वास को ही ध्यान करें। श्वास नीचे गई, ऊपर गई। यह मैं कह रहा हूं समझाने के लिए। उसका ऊपर जाना, नीचे जाना; ऊपर गई, नीचे गई, यह तो विचार हो गया। जाना-आना उसकी कि"या है। उस कि"या पर सारा फोकस। तो थोड़ी देर में आप पाएंगे कि निर्विचार हो गए। क्योंकि माइंड एक साथ दो काम नहीं कर सकता। तो फोकस एक ही साथ दो जगह नहीं हो सकता। और इसलिए यह होता है कि अभी, अभी एक आदमी आए और एक छुरा लेकर छाती पर खड़ा हो जाए, आपका विचार एकदम बंद हो जाएगा, क्योंकि सारा फोकस छुरे पर हो जाएगा। एक सेकेंड बाद आपको खयाल आएगा कि बचने के लिए क्या करूं। लेकिन एक सेकेंड के लिए सारा कांशसनेस टूट जाएगी पुराने सिलसिले से, क्योंकि इतना बड़ा आघात है सामने कि एकदम से पैटर्न जो है बंधा हुआ टूट जाएगा और आप चौंक कर खड़े हो जाएंगे। आप कार चला रहे हैं, और एकदम से एक बच्चा सामने आ गया, और आप एकदम से ब"ेक मारते हैं, एक सेकेंड के लिए फोकस टूट जाएगा विचार का बिल्कुल। फोकस में कार रह जाएगी, बच्चा रह जाएगा। और यह भी खयाल न रह जाएगा कि बच्चा आया और मर जाएगा, यह भी नहीं। यह भी पीछे, आफ्टर रिफेक्ट होगा। पीछे खयाल आएगा कि मर जाता बच्चा, यह हो जाता। लेकिन उस सेकेंड में सिर्फ मूवमेंट रह जाएगा, और अगर आपने सोचा तो बच्चा मरा। अगर सिर्फ मूवमेंट नहीं रहा, तो बच्चा मर जाने वाला है। क्योंकि उतनी देर में फिर ब"ेक नहीं लगाया जा सकता है। सोचने में जितना मूवमेंट, जितना समय गिर जाएगा वह गया। और इसलिए जब भी आपको कार या ऐसी जगह एक्सीडेंट की हालत में जब आप हों, बाद में आप वह खयाल करेंगे तो आप पाएंगे कि सारी चोट आपकी नाभि पर पहुंचेगी। एकदम से आपने ब"ेक लगाया और गाड़ी रुकी, तो आप पाएंगे, आपकी बॉडी में जो जगह सबसे ज्यादा प्रवाहित हुई वह नाभि हुई। और वह इसलिए होगी कि सारा फोकस नाभि पर चला जाएगा। क्योंकि जीवन की जितनी कि"याओं का संबंध है उनका नाभि से संबंध है। और विचार की जितनी कि"याओं का संबंध है उनका मस्तिष्क से संबंध है।
इसलिए जापान में उन्होंने नाभि के उठने-गिरने पर कनसनट्रेशन को बनाने के लिए कहा कि फोकस नाभि पर ले जाओ। इधर साधना-पथ में मैंने कहा कि फोकस नाभि पर ले जाओ।

प्रश्नः तो जो झेन लोग हैं...

वे कहते हैं कुछ और करने की जरूरत नहीं, बस नाभि पर ध्यान चला गया तो
सब ठीक हो गया। क्योंकि नाभि जो है वह बॉडी के जितने मूवमेंट हो रहा है उस

सबका सेंटर है। तब स्वाभाविक, मां के पेट में सबसे पहले पैदा होने वाली चीज वह है। और मां के शरीर से जुड़ी हुई चीज वह है। मां के शरीर से सारी गति, सारी सोर्सेज नाभि से ही फैलती है। तो नाभि हमारा सेंटर है बॉडी का। माइंड एक नया सेंटर बना लिया है इधर। पशु-पक्षियों में वह नहीं है, सिर्फ नाभि से जी रहे हैं। इसलिए उनका मूवमेंट एकदम प्योर, स्पांटेनियस है।

एक बि "ी बैठी है चूहे को पकड़ने को, सोच-वोच नहीं रही कि चूहा आएगा तो पकड़ लूंगी, चूहा आया और पकड़ा। यह विचार नहीं है उसका, प्योर मूवमेंट है। बस बैठी है, वह सोच नहीं रही कि चूहा निकलेगा तो अपन पकड़ लेंगे। सोचने-वोचने का सवाल नहीं है। नाभि पर सब कुछ गति हो रही है। बैठी है बस। तैयार है बिल्कुल। चूहा आया, वह यह नहीं सोचेगी कि चूहा आया अब मैं पकडूं, यह इतनी फुर्सत नहीं है, चूहा आया कि पकड़ना हुआ।

जापान में एक बहुत प्रसिद्ध कहानी है, झेन फकीर कहते हैं। शायद कभी मैं कहा। एक घर में एक बहुत बड़ा सिपाही था, तलवारबाज था बहुत बड़ा। और वहां बड़ी आदर है सिपाही और तलवारबाज का। वह इतना बहादुर योद्धा था कि उसने सब विजय कर ली, बड़े-बड़े उसने डयुअल लड़े, और आखिर में वह जापान का सबसे बड़ा तलवार चलाने वाला हो गया। वह राजधानी से सम्मानित होकर लौटा। जिस कमरे में वह सोया, उसने देखा कि एक चूहा दौड़ रहा है, उसकी नींद में बाधा डाल रहा है। तो वह गुस्से में उठा, तो वह चूहा अपने बिल में हो जाए। तो उसका क "ोध बढ़ता ही चला गया। वह कोई साधारण आदमी नहीं था, उसने तलवार निकाल ली। जरा सा चूहा और मुझे यानी चिढ़ा रहा है। क्योंकि वह जब लेट जाए, तो वह चूहा बाहर निकले। और वह तो आदमी वह था कि जरा से से चिढ़ जाए और तलवार से जूझ पड़े। इतना सा चूहा और मुझे इतना सता रहा है। तो उसने तलवार खींच ली। जिन तलवारों से योद्धाओं से लड़ा था उससे वह चूहे से लड़ने की कोशिश करने लगा। अब वह चूहा तो मूवमेंट से चलता है। वह तलवार देखे तो वह अंदर हो जाए। तो वह छिपा खड़ा रहा। जब वह चूहा बाहर निकला तो जोर से तलवार मारी, तलवार फर्श पर जाकर लगी, चूहा तो अंदर हो गया, तलवार के चार टुकड़े हो गए।

अब तो उसके क "ोध का ठिकाना नहीं रहा, कि यह तो हद्द हो गई। यानी वह कभी वार नहीं चूका था, किसी आदमी पर उसका वार यानी आखिरी वार था, और एक चूहा! उसको तो, पागल हो गया वह बिल्कुल। और भागा निकल कर बाहर कि, अपने मित्रों से कहा कि हद्द हो गई! मेरी तलवार जो... तो मित्रों ने कहा, तुम बिल्कुल पागल हो, तुम भी चूहे से लड़ने लगे। चूहे की तो एक-एक गति स्पांटेनियस है। वह कोई सोचता थोड़े ही कि तुमने तलवार चलाई इसलिए बच जाओ। और दूसरा आदमी जो तुम्हारे सामने लड़ता था, वह अपना तलवार और ढाल लेकर, वह सोचता था कि तुमने तलवार चलाई तो बचूं। जितनी देर में सोचता था उतनी देर में तुम्हारी तलवार घुस जाती थी भीतर। चूहा सोचता थोड़े ही, वह तो गति करता है। तलवार, यानी अंदर। वह सोचेगा थोड़े ही कि तलवार आ रही है। तो वह जो फासला है, जो डिस्टेंस है, वह डिस्टेंस नहीं है। तुम तलवार से चूहे को नहीं मार सकते। तुमको चूहा मारना है तो बि "ी लाओ। आदमी चूहा नहीं मार सकता। बहुत मुश्किल मामला है उसका मारना। क्योंकि जब तक सोचेगा, वार करेगा, तब तक वह तो मूव कर जाएगा। उसकी गति तो उधर सोच-विचार के लिए तो कंपन नहीं, कंपन सीधे हैं, और इमिजिएट हैं। तुमने गलती की, व्यर्थ तलवार तोड़ ली। तुम सिर्फ एक बि "ी ले आते, वह फौरन उसे खत्म कर देती।

तो कल वह एक बि "ी को पकड़ कर लाया। गांव में जो सबसे अच्छी बि "ी मजबूत थी, जिसने बड़े-बड़े चूहे मारे थे, उसको पकड़ लाया। बि "ी को लाया गया। और उसको जबरदस्ती बांध कर लाया गया, उसके गले में सांकल डाल कर। वह बि "ी ऐसे डरे पहले से ही। उसको सांकल से बांध कर लाए, तो वह घबड़ाई की मामला क्या है? और जब जबरदस्ती उसको अंदर करके दरवाजा बंद कर दिया, जब दरवाजा खुला तो बि "ी एकदम बाहर भाग गई। चूहा-वूहा तो उसने मारा नहीं। तो वह बड़ा हैरान हुआ! तब तो यह शक हुआ कि चूहा कुछ मिरेकुलस है! तलवार भी तोड़ दी उसने और बि "ी को भगा दिया! और बि "ी कुछ भी न कर पाई। जब वह अंदर आया तो वह चूहा झांक रहा था उसमें से, वह देख रहा है। तब तो यह हुआ कि यह चूहा साधारण नहीं है। और वह बहुत घबड़ा गया। और उसने मित्रों को कहा, तो उन्होंने कहा कि भई, अगर ऐसा है, तो राजा के पास एक मास्टर कैट है। वह बि "ी तो श्रेष्ठतम है मुल्क की। वह तो

निर्विचार परिपूर्ण शक्ति है। वह समस्या सामने आई कि वह पकड़ी गई और
वह टूटी। उसके टूटने में उसे कुछ करना नहीं पड़ता। यह इतना ही आटोमैटिक है जैसे बि"ी ने चूहे को देखा और चूहा गया। तो वह जो हमारा सारा फोकस धीरे- धीरे एक ही बात, हमारा पूरा व्यक्तित्व एक ही काम, उस वक्त तो कोई भी तीव" गति पर, और वह शरीर की हो उतने ही फायदे की है। जोर से चल रहे हैं, और धीरे मत चलें। क्योंकि धीरे आप चलेंगे तो फोकस आप नहीं ले जा सकते हैं। तेजी से चल रहे हैं। इतनी तेजी से चल रहे हैं कि सारा व्यक्तित्व चलने में परिवर्तित हो गया है। चल रहे हैं सिर्फ। और अब सारे फोकस को इस चलने पर ले जाएं, यह मत सोचिए कि मैं चल रहा हूं, यह जो चलने की कि"या हो रही है यह क्या है, बस माइंड इस पर ही लगा रहे। तो आप थोड़ी देर में पाएंगे, जयंतीभाई नहीं हैं यहां पर, बस एक चीज चल रही है, तेजी से मूवमेंट हो रहा है और वह मूवमेंट ही थोड़ी देर में रह जाएगा जब फोकस में है, तो मन एकदम शांत हो जाएगा। और वह जो शांति होगी वह बहुत और ही तरह की शांति है। वह आपकी चेष्टा से नहीं आई है, वह सहज आ गई है। इस तरफ से मन हट गया, उधर आ गई है। मगर अधिक लोग वे उसी दिक्कत में पड़ जाते हैं।

प्रश्नः जैसे यह मन हटने वाली बात की वजह, वह विचार वाली बात खड़ी हो जाती है, सबसे बड़ी बात यहीं आकर अटकती है।
प्रश्नः कि आचार्य, माइंड हम लोगों ने डवलप किया है।

बिल्कुल डवलप किया है।

प्रश्नः अच्छा। यह नाभि, असल जो सेंटर वहां है। लेकिन माइंड हम लोगों
ने डवलप किया अपने आप।

माइंड जो है बिल्कुल ह्यूमन अन्वेषण है। और इसलिए साइट्रेक हो गया हमारा व्यक्तित्व। मेरी अपनी समझ यह है कि पशु-पक्षी सभी हमसे ज्यादा आनंद में हैं। आदमी कुछ केंद्र से च्युत हो गया। तो जहां से उसका जीवन गतिमान हो रहा है वहां उसका सेंटर नहीं रहा। उसने एक नया सेंटर विकसित कर लिया है। जो बिल्कुल ही उस जीवन के केंद्र से बहुत दूर है। उसकी जरूरत थी, उस सेंटर की जरूरत थी। जैसे हमारे हाथ-पैर की जरूरत है। और कुछ खास वजह से वह विकसित हुआ। लेकिन धीरे-धीरे हमारा पूरा प्राण ही वहां केंद्रित हो गया, वह गलती हो गई। मस्तिष्क की जरूरत है, विचार की जरूरत है। लेकिन जरूरत वैसी है जैसे कि मेरे पैर की जरूरत है। जब मुझे चलना होता है तो पैर चलते हैं, जब नहीं चलना होता है तो पैर चुप हो जाते हैं। एक आदमी ऐसा हो कि बैठा हो और पैर चलाता रहे और वह कहे कि मेरी तो चलने की आदत पड़ गई है। तो हम कहेंगे इसका दिमाग खराब हो गया। इसका पूरा प्राण पैरों में केंद्रित हो गया आकर। अब पैर चलने का काम नहीं करते, अब ये चलने के सिवाय कुछ करते ही नहीं। बैठा है तो भी टांग चला रहा है।
माइंड के साथ ऐसी भूल हो गई है। माइंड जब आपके सामने एक समस्या हो तो काम करना चाहिए। जब समस्या न हो, तो जैसे पैर नहीं चलने की जरूरत तो बंद पड़े हैं, ऐसा माइंड बंद हो जाना चाहिए। सेंटर हमेशा वापस नाभि पर चला जाना चाहिए। आए माइंड पर काम करे, फिर वापस लौट जाए। उतनी देर में माइंड फिर ताजा हो जाए, फिर तैयार हो जाए। और जब फिर जरूरत पड़े तो फिर उपस्थित, दौड़े और माइंड को फिर भर दे, और फिर आप देख लें, फिर वापस लौट जाएं। जैसे आपने एक प्रश्न किया तो मैंने आपसे बात की, आपका प्रश्न खत्म हुआ, मैं वापस लौट गया। इस कमरे के आप बाहर गए, मैं वापस लौट गया, माइंड का काम खत्म, कोई जरूरत न रही। लेकिन हमारा माइंड रुग्ण हो गया है। जरूरत, गैर-जरूरत पर वह चले चला जा रहा है। कोई नहीं है, कोई समस्या नहीं है, कोई प्रश्न नहीं है और वह चल रहा है, चल रहा है, चल रहा है। तब परिणाम यह होता है कि जब समस्या आएगी तब वह इतना थका हुआ रहेगा कि उसको पकड़ भी नहीं पाएगा, उसकी शक्ति इतनी खोई हुई रहेगी--अब जैसे एक आदमी चौबीस घंटे पैर चला रहा है, और अब चलने का वक्त आ गया, तो वह कहता है कि मेरे तो पैर दुख रहे हैं, मुझसे तो चला नहीं जाता,

क्योंकि मैं तो काफी चल चूका हूं और बैठा है और पैर चला रहा है। तो जब भागने का वक्त आ जाए तो वह गिर पड़ेगा, और जब बैठने का वक्त था तब वह बेवकूफ पैर चला रहा था। माइंड की हमने हालत आदमी ने ऐसी कर ली कि जब उसकी जरूरत नहीं तब आप चला रहे हैं। और जब जरूरत आती तो तब आप पाते हैं कि अब कुछ समझ में नहीं आ रहा कि अब क्या करें, अब क्या करें।
हर वक्त वापस लौट जानी चाहिए एनर्जी। सेंटर पर वापस हो जानी चाहिए।
जब जरूरत होगी तब फिर पुकार ली जाएगी। जैसा आपको रुपये की जरूरत होती है, आप खीसे से निकालते बाहर, ऐसा हाथ में लिए उछालते हुए नहीं फिरते। वापस रख देते हैं खीसे में। एक आदमी ऐसे रुपये उछालते हुए चलने लगे, हम ऐसे चल रहे हैं, माइंड, माइंड, बस वहीं उबल रहा है सब कुछ। और वह बचपन से ही हम दूसरे, दूसरे केंद्रों को विकसित नहीं करते, उससे तकलीफ हो जाती है। बच्चे के बस एक ही केंद्र पर जोर है। स्कूल की शिक्षा एक ही केंद्र की है। पैदा नहीं हुआ बच्चा कि एक ही बात की चेष्टा है। हम इसको, यानी इतने ऑल्टरनेटिव हैं आदमी में, जैसे कि एक घर में एक आदमी रहता हो और बचपन से एक ही दरवाजे से निकलने का उसे ट्रेनिंग दी गई हो। उसे पता ही न हो कि और दरवाजे भी हैं, और जब भी निकलने का सवाल हो बस उसी से। वैसा हमारे व्यक्तित्व में और भी केंद्र हैं, और उनसे निकलने की हमें कोई आदत नहीं। बस एक ही केंद्र से हमें निकलने की और जुड़ने की आदत है। और वह बहुत कृत्रिम केंद्र है। उसकी जरूरत है, और बहुत जरूरत है। लेकिन वह जितना कम चले उतना ज्यादा उपयोगी है। उस जाल में हम पड़ गए हैं वह जो, मामला ऐसा हो गया जैसे कि एक आदमी के दोनों हाथ ही काम करें और सारे व्यक्तित्व की शक्ति धीरे-धीरे, धीरे-धीरे, धीरे-धीरे दोनों हाथों में केंद्रित हो जाए, वह दो हाथ ही रह जाए आदमी, और हाथ के अलावा वह कोई काम न कर सके, और सारा व्यक्तित्व सिकुड़ कर छोटा हो जाए और हाथ बड़े-बड़े लंबे हो जाएं, तो वह जो आदमी जैसा बेढंगा हो जाएगा वैसे हम हो गए हैं। एक माइंड का एक यंत्र एकदम विकसित हो गया है, टू मच फंग्सनिंग है वहां। और बाकी सब केंद्र... और इसके व्यापक परिणाम हुए हैं। इसके व्यापक परिणाम होने ही थे। सबसे व्यापक परिणाम यह हुआ है कि सब चीजों को हम शब्द में परिवर्तित कर लेते हैं। उससे जीवन की जरूरी चीजों को भी हमने शब्द में परिवर्तित कर लिया।
जैसे एक आदमी भोजन कर रहा है, तो भोजन करने से मस्तिष्क का कोई लेना- देना नहीं है। भोजन करने का पूरा यंत्र दूसरा है। मस्तिष्क से कोई भी लेना-देना नहीं है। सिवाय इसके कि मस्तिष्क आपको खबर देता है कि भूख लगी है। मस्तिष्क से आप उठ कर चौके तक जाते हैं या खाना इकट्ठा करते हैं, बस इससे ज्यादा जरूरी काम नहीं, जरूरी काम मुंह का है, जीभ का है, लार का है, गले का है, पेट का है, आमाशय का है, इस सबका है, भोजन का जरूरी काम है। लेकिन हमने भोजन, हमारी चूंकि आदत बन गई हर चीज को विचार में बदलने की, हमने भोजन को भी विचार में बदल लिया। जब आप बैठे हैं तब आप भोजन के बाबत सोच रहे हैं कि क्या खाना चाहिए, खाएंगे तो कितना आनंद आएगा, ये सब शब्द हैं। और जब आप खाना खाने बैठे हैं, तब आपको खाने को कितनी त"ीनता से खाने की कि"या करनी चाहिए, उसका कोई सवाल नहीं है। तब आपका मस्तिष्क दूसरे धंधे कर रहा है। तब उस खाने को पूरा आप खा नहीं पा रहे, कितना चबाना चाहिए उतना चबा नहीं पा रहे। जो आदमी खाते वक्त जितना सोचेगा उतना कम चबाएगा, उतना जल्दी वह गटकता चला जाएगा। जितना कम सोचेगा उतना पूरा चबाएगा। जानवर बिल्कुल परफेक्ट चबाएगा, उसमें रत्ती भर कमी नहीं होने वाली है। जितना चबाना हो उतना ही चबाएगा। उतना चबाएगा तो ही गटके का, उसके पहले गटकने का सवाल नहीं है उसे। क्योंकि वह कोई दूसरा काम कर नहीं रहा है, सिर्फ खाना ही खा रहा है। तो ऐसा कभी नहीं है कि एक जानवर को यह हो जाए कि डाक्टर यह कह दे कि इसने कम चबाया हुआ खा लिया। वह कम चबाया हुआ तो भीतर ले जाता ही नहीं। सारा यंत्र काम कर रहा है, पूरे परफेक्शन में अपने। जब वह पूरा चब जाता है तब गले से नीचे उतरता है। जब पूरी लार मिल जाती है तब वह गले के नीचे उतरता है।
तो जानवर को खाने में जो आनंद आ रहा है वह हमको नहीं आ रहा। क्योंकि खाने का आनंद लेने वाला जो यंत्र है वह फंक्शन ही पूरा हमारा नहीं कर पा रहा। और हम आनंद लेना चाहते हैं सोच कर, और सोच कर खाने से कोई संबंध नहीं

है। तो एक आदमी बैठा-बैठा सोच रहा है कि इतनी अच्छी-अच्छी चीजें खाऊंगा, बड़ा आनंद आएगा। और सोचने से आनंद का उस खाने का कोई संबंध नहीं है। ऐसी स्थिति सेक्स की हो गई है, कि आदमी सोच रहा, सेक्स को भी कनवर्ट कर लिया उसने सोचने में। तो वह सोच रहा है। कामुकता की तस्वीरें सोच रहा है। संबंध नहीं है अनुभव का, उससे कुछ लेना-देना नहीं है। तो वह यह सब सोचने में लगा हुआ है। लेकिन बेसिक सेक्सुअल एक्ट के वक्त वह पाएगा कि कुछ वह नहीं पा रहा है, कुछ आनंद नहीं है, कोई अर्थ नहीं है। वह बड़ी परेशानी हो गई। जब सोचता है तो बड़ा रस मालूम होता है। जब कि"या में उतरता है तो बात अलग होती, कोई रस नहीं है वहां। और जब कि"या में रस नहीं पाता, तो फिर और सोच-सोच कर रस लेने की कोशिश करता, क्योंकि कि"या में रस मिला नहीं, तो सोच-सोच कर। और जितना सोचता है उतना कि"या की तरफ जाता, और जब कि"या में जाता तब फिर पाता है कि रस नहीं। सेक्स का आनंद पशु-पक्षी ले रहे हैं, आदमी नहीं ले रहा। और इसलिए आदमी फिर दूसरी चीजें ईजाद कर रहा है--एक घर में नंगी तस्वीर लटकाए हुए है। सब्स्टीट्यूट खोज रहा है। एक चित्र देख रहा है नंगा, अील, एक कहानी पढ़ रहा है नंगी, अील, यह सब्स्टीट्यूट खोज रहा है। जैसे खाने में सब्स्टीट्यूट खोज रहा है। खाना अगर वह ठीक से खाए, तो न मिर्च की जरूरत है उसमें, न मसाले की जरूरत है। क्योंकि ठीक से चबाया गया और ठीक से खाया गया इतना स्वादपूर्ण है, लेकिन वह ठीक से खा नहीं रहा। और स्वाद चाहिए। तो सब्स्टीट्यूट ला रहा है वह। तो वह कह रहा है फिर मिर्च डालो। तो मिर्च जबरदस्ती उसके मुंह में जाकर लार को निकाल देती, जबरदस्ती। जो चबाने से निकलनी चाहिए थी, वह फोर्सफु"ी मिर्च जाती है और तेज असर करती है और लार फेंक देता है मुंह। तो जब वह बिना मिर्च के खाता है, वह कहता है, कोई स्वाद नहीं आ रहा। क्योंकि लार जो चबाने से निकलनी थी, जब वह तीस-पैंतीस दफे चबाता, तो लार आटोमैटिकली निकलती है, और स्वाद आता। लेकिन उतनी फुर्सत नहीं है। न उसका फिकर है उसे, न खयाल है। चिंतन में लगा हुआ है वह। तो अब वह एक जबरदस्ती करवा रहा है। सेक्सुअल एक्ट के साथ भी वही हो गया, कि सेक्सुअल एक्ट अपने आप में उसे आनंदपूर्ण नहीं रहा। तो सब्स्टीट्यूट खोज रहा है। और सब्स्टीट्यूट बढ़ाता चला जा रहा है।
लोग समझते हैं कि जिस समाज या जिस संस्कृति में गंदी फिल्में बनती हों, गंदी किताबें लिखी जाती हों, गंदे पोस्टर, गंदे चित्र बनते हों, गंदे गीत गाए जाते हों, तो वह समाज बहुत सेक्सुअल है, यह बात बिल्कुल गलत है। यह इस सबका बढ़ता हुआ प्रचार इस बात का सबूत है कि समाज ने सेक्स के बेसिक एक्ट को खो दिया है। जो रस उसे सेक्सुअल एक्ट से मिलना था वह उसको नहीं मिल रहा है। वह सब्स्टीट्यूट ईजाद कर रहा है।
एक आदिवासी है जंगली, उसके सामने तुम नंगी औरत की तस्वीर रखो, वह कहेगा कि किसलिए? क्या है? क्या मतलब है? यानी इसका मतलब क्या है? क्योंकि जो बुनियादी कृत्य है यौन का उसने इतना रस पाया है कि तुम्हारी नंगी तस्वीर कोई मतलब नहीं रखती। यानी वह ऐसे ही है कि जिस आदमी ने भोजन का पूरा आनंद लिया है उसके सामने भोजन की तस्वीर ले जाकर रखो तो उसको क्या आनंद आएगा। एक भूखा आदमी है, उसके सामने तुम अच्छी भोजन की एक तस्वीर ले जाकर रखो, उसको बड़े गौर से देखेगा और कहेगा, बड़ी प्यारी है। मेरा मतलब समझे न? अब यह, अगर यह आदमी कहता है कि बड़ी प्यारी है, बड़ी सुंदर लग रही, बड़ी अच्छी मालूम होती, मैं तो इसको अपने घर में लटकाऊंगा। तो इसका सबूत, उसका मतलब यह है कि आदमी भूखा है, इसे भोजन का कभी आनंद नहीं मिला। नहीं तो वह कहता कि यह काहे के लिए बनाई। ठीक वही हालत है, अगर सेक्स का एक्ट पूर्ण और आनंद से भरा हुआ है, तो नंगी तस्वीर और अील किताबें, वह आदमी कहेगा, ये किसलिए लिखी हैं? इनकी जरूरत क्या है? और ये इतनी व्यर्थ मालूम होंगी, इतनी बेवकूफी से भरी हुई मालूम होंगी, जिसका कोई हिसाब नहीं।
लेकिन हम उलटी बात समझ रहे हैं, सारी दुनिया में लोगों को यह खयाल है
कि जिस समाज में, जितनी नंगी तस्वीरें लटकी हैं, जितनी औरतों को अर्द्धनग्न करके घुमाया जा रहा है, वह समाज उतना सेक्सुअल है। यह बात उलटी है। वह समाज उतना कम सेक्सुअल है और बेसिकली इंपोटेंट होता जा रहा है। वह समाज बेसिकली इंपोटेंट होता चला जा रहा। इधर वह नंगी तस्वीरें लटका रहा

है, अील किताबें लिख रहा है, गंदी फिल्में बना रहा है और उधर जाकर वह चिकित्सक से पूछ रहा है कि मैं इंपोटेंट अनुभव कर रहा हूं। अब यह जरा इसको सोचने जैसा है क्योंकि यहां तो यह सब कर रहा है, यह बड़े मजे की बात है। और वह उधर चिकित्सक के पास जा रहा है कि मैं क्या करूं। मैं तो बिल्कुल निःसत्व मालूम होता हूं। स्त्री के पास जाकर निःसत्व हूं। तस्वीर, फिल्म में बड़ा मुझे रस आता है। सपने मुझे बहुत अच्छे लगते हैं। सपने में स्त्री को भोगता हूं, लेकिन स्त्री के पास जाता हूं, बिल्कुल निःसत्व हूं।
सारी अमरीका में आज युवक के सामने जो, युवती के सामने, युवती फि"जिड है, कल्पना करती है, लेकिन जब प्रेमी के पास जाती है तो पाती है कि कोई रस नहीं है। वह बिल्कुल स"त है, मजबूत है, वह रिलैक्स नहीं है। बिल्कुल फि"जिड है, वह बिल्कुल निःसत्व मालूम पड़ती है कि कुछ नहीं है। और यह सब बढ़ता चला जा रहा है। यानी मेरा कहना यह है कि अगर अील किताबें बनती हों, अील चित्र बनते हों, तो समझ लेना चाहिए, समाज बेसिकली इंपोटेंस हो रहा है, सेक्सुअल नहीं। क्योंकि अगर समाज पूरा सेक्सुअल है तो इनकी कोई जरूरत नहीं है।
जब भी कोई कल्चर इंपोटेंट होने लगता है... जब पोटेंट कल्चर होता है तब जिंदगी की असलियत से संबंध होता है, वह औरतों को प्रेम करता है न कि नंगी तस्वीरों को। और जब समाज निःसत्वहीन हो जाता है, तब वह नंगी तस्वीरों को प्रेम करता है। या फिर औरतों को भी वह तभी प्रेम करता है जब वे तस्वीरों जैसी मालूम पड़ें, औरतों जैसी नहीं। वह नंगी तस्वीरों से आइडेंटिटी उनकी हो जाए कि तस्वीर जैसी थी वैसी औरत मालूम पड़ने लगे नंगी, तो वह उसे अच्छी लगती है। और वह तस्वीर की तरह थी। वह सड़क पर चलती हुई एक औरत को देख कर बहुत खुश हो जाता है, लेकिन घर की बैठी पत्नी कुछ खुशी नहीं देती। बाहर की सड़क की औरत तस्वीर है। घर की पत्नी जिंदा औरत है, वह बिल्कुल मतलब नहीं रखेगा उसका।
इधर मैं जितना इस पर सोचा, मैं इतना हैरान हुआ हूं, इतना हैरान हुआ हूं
कि अमरीका या ऐसा मुल्क कहीं न कहीं निश्चित बुनियादी रूप से इंपोटेंस पर पहुंच गया।
हमारी स्मृति में साफ हो जाए कि हम जिस चीज को साहित्य में, संस्कृति में, कला में, बाहर की दुनिया में खोजना शुरू करते हैं, वह वही चीज है जो हमने वास्तविक दुनिया में भोगनी बंद कर दी है। अगर हम वास्तविक दुनिया में उसको भोग सकें, तो हम कभी काल्पनिक चर्चा में उसकी पड़ने वाले नहीं हैं। अगर एक पुरुष स्त्री को वस्तुतः भोग सके, तो कभी गंदी तस्वीर, गंदी फिल्म और गंदी किताब पढ़ने को नहीं जाएगा। क्योंकि वे इतनी शैडोई मालूम पड़ेंगी, वे इतनी छाया जैसी लगेंगी, अनसब्स्टेंशियल, कि जिसका कोई मतलब नहीं। जिसने असली स्त्री को जाना है, वह अपने घर में एक नंगी स्त्री की तस्वीर टांगने के लिए तैयार नहीं होगा। वह कहेगा, यह क्या पागलपन है। यह इतनी ना-कुछ है, जिसका कोई मतलब नहीं है। एक आदमी नंगी तस्वीर टांगे है घर में, और एक गंदी किताब में लेकर पढ़ कर फोटो देख रहा है, वह इस बात का सबूत है कि असली स्त्री को जानने में वह असमर्थ हो गया है या असली स्त्री को जानने की उसने कला खो दी है। या असली स्त्री से परिचित होने के लिए जितना जीवंत व्यक्तित्व चाहिए वह उसके पास नहीं रह गया। इसलिए अब वह सब्स्टीट्यूट खोज रहा है।
तो जब भी कोई समाज जीवंत नहीं रह जाएगा, तब वह गैर-जीवंत रूपों में जीवन की तृप्ति खोजने के उपाय करेगा। और यह सब तरफ, सब तरफ यही होगा। वस्त्र अगर बहुत अच्छे होते जाते हैं किसी समाज में, और सुंदर से सुंदर वस्त्र की तलाश शुरू होती है, तो बुनियादी मतलब इसका यह है कि शरीर असुंदर हो रहा है, अस्वस्थ हो रहा है। क्योंकि जब शरीर स्वस्थ हो, शरीर पर अपनी चमक हो, शरीर की अपनी गति और जीवंतता हो, तब आप कपड़ों की फिकर नहीं करते। कपड़ों की फिकर सब्स्टीट्यूट है। जब शरीर दीन-हीन हो जाता है, हड्डी-हड्डी हो जाता है, शरीर उघाड़ा देख कर खुद को भय लगने लगता है, तब हम अच्छे कपड़ों में उसे छिपाते हैं। अच्छे कपड़े से हम वह काम लेना चाहते हैं जो शरीर की चमकती चमड़ी ने दिया होता। जब चेहरे उदास हो जाते हैं, फीके और निस्तेज हो जाते हैं, तब हम पाउडर है और लाली है, उस पर थोपते हैं। उस लाली को हम

पूर्ति खोज रहे हैं जो कि चेहरे पर रही होती, तो चेहरे को सुंदर बनाती, लेकिन वह नहीं है। तब हम एक रंग लाकर बाजार से चेहरे पर पोत रहे हैं। जब कोई रंग लाकर बाजार से पोतने लगे, तो किस बात की खबर है? वह इस बात की खबर है कि जो लाली होनी चाहिए थी चेहरे पर वह खो गई है। और सब चीज के मामले में यही सच है।
तो इसलिए मेरा आधारभूत खयाल यह है कि अगर समाज में लोग अच्छे कपड़े पहनने पर अति उत्सुक हो गए हैं तो आप गाली मत दीजिए। अच्छे सुंदर कपड़ों से इसका कोई संबंध नहीं है। आप फिकर करिए कि शरीर कहीं रुग्ण हुआ जा रहा है, इसलिए आदमी सुंदर कपड़ों में उत्सुक हुआ है। नहीं तो स्वस्थ आदमी, जैसा कि जंगली जानवर का शरीर है, उसको आप कपड़े पहना दें, वह बहुत बेहूदा लगने लगेगा। और हमारे आदमी को हम नंगा खड़ा कर दें, तो वह बहुत बेहूदा लगेगा। हजारों साल पीछे या आज भी जो ठीक जंगली अवस्था में रहने वाला आदमी है, उसके शरीर की अपनी चमक है, अपनी गति है, अपनी जीवंतता है। उसके मूवमेंट का अपना-- उसको देखना भी एक सुख है; उसका उठना, बैठना, चलना। वह सारा शरीर हमने खो दिया। अब हमें कोई पूरक चाहिए कि हम उसको ऊपर से ढांक लें और व्यवस्था दें।
यह जो समाज की सारी, सारी रुग्णता, एक ही बात से पैदा हो रही कि वह जहां आधारभूत रूप से हमें होना चाहिए वहां हम नहीं हैं, तब हम सबका विचार में जाकर परिपूरक और सब्स्टीट्यूट खोजते चले जाते हैं। वह टूट जाना चाहिए। सर्वाधिक नुकसान पहुंच रहा हो मनुष्य की जाति को, तो वह समाजवादी दृष्टिकोण से परेशान है। और सर्वाधिक नुकसान इसी बात से पहुंच सकता है कि जो बात हमें सर्वाधिक सीधे-सीधे अपील करती हो, तो नुकसान पहुंच भी नहीं सकता। जो बात एकदम ओबियस मालूम होती हो कि बिल्कुल ठीक है, वही हमें सबसे ज्यादा नुकसान भी पहुंचा सकती है। और समाजवाद ऊपर से देखने पर इतना ठीक मालूम पड़ता है कि कोई वजह नहीं मालूम पड़ती कि वह क्यों ठीक न हो। और पूंजीवाद ने जैसी स्थितियां ले ली हैं सारी दुनिया में, उससे वह ऐसा लगता है कि जितनी जल्दी हट जाए तो अच्छा। लेकिन समाजवाद पूंजीवाद का ही सघन रूप है, और इसके रोगों को समाप्त नहीं करता बल्कि केंद्रित करता है। इस पर कोई दृष्टि नहीं है स्पष्ट। क्योंकि समाजवाद पूंजीवाद का दुश्मन है नहीं, बाइ-प्रोडक्ट है, वह पूंजीवाद से पैदा होने वाली संतान है। और पूंजीवाद के सारे रोग उसमें हैं, पूंजीवाद की सारी भलाइयों को छोड़ कर। क्योंकि पूंजीवाद के साथ जो स्वतंत्रता है, जो मानव की गरिमा है, जो व्यक्तित्व का अर्थ है, वह उससे सब खो जाने वाला है। और मानव की गरिमा और व्यक्तित्व तभी तक है, एक-एक व्यक्ति की, जब तक एक-एक व्यक्ति के पास पूंजी की सामर्थ्य है। जिस दिन व्यक्ति के पास पूंजी की सामर्थ्य नहीं, उसके पास कोई सामर्थ्य नहीं। उसके ऊपर जितना उसका पूंजी पर बल है...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बचेगा नहीं, क्योंकि मनुष्य का व्यक्तित्व कुछ चीजों से जुड़ कर बना हुआ है। और उस सब, सबसे ज्यादा जो मूल्यवान उसके व्यक्तित्व को बनाने में बात है, वह यह है कि उसके पास कुछ अपना है। व्यक्तित्व कोई एब्स्ट्रेक्ट चीज नहीं है। यह मकान है, अगर यह मेरा अपना है, तो मेरे व्यक्तित्व में एक चीज जुड़ती है। ये कपड़े जो मैं पहने हूं, अगर मेरे अपने हैं; यह जो बात मैं कह रहा हूं, अगर यह मेरी अपनी है, तो मेरे एक व्यक्तित्व को बल देती है। अगर यह उधार है, किसी की है, किसी से ली हुई है, तो मेरा व्यक्तित्व उतना ही निःसत्व हो जाता है।
तो यह बात उनके समझ में आ गई, बहुत ठीक से समझ में आ गई कि अगर मनुष्य
के हाथ से उसकी व्यक्तिगत संपदा का अधिकार छीन लिया जाए, तो हमने करीब-करीब जो भी उसके पास था, सब छीन लिया। अगर यह केंद्र के या स्टेट के पास सब इकट्ठा हो जाए, तो स्टेट आपके शरीर की नहीं आपकी आत्मा की भी मालिक हो गई, आपके मन की भी, आपकी बुद्धि की भी, आपके विचार की भी। उससे इंच भर आप इधर-उधर होते हैं कि सिवाय मौत के आपको कुछ नहीं बचता। क्योंकि आप खड़े भी नहीं

हो सकते हैं, गए आप। हमारे मुल्क में संयुक्त परिवार था, या जिन मुल्कों में भी संयुक्त परिवार था, सभी जगह था, जितना संयुक्त परिवार था, संयुक्त परिवार के भीतर एक-एक व्यक्ति की कोई गरिमा नहीं थी, हो नहीं सकती थी। सौ आदमी थे घर में, और घर में एक आदमी के पास घर की सारी संपदा की मालकियत थी, बाकी लोग हमेशा उसकी तरफ देख कर ही जी सकते थे। और जरा विरोध उससे, तो उनका अस्तित्व गया। सारे मुल्क में पंचायत, गांव, बड़े मूल्यवान थे। एक-एक व्यक्ति की कोई हैसियत न थी। अगर एक व्यक्ति ने जरा समाज और संप्रदाय और व्यवस्था से आना-काना की, उसका हुक्का-पानी बंद। वह जी भी नहीं सकता। उसका जीना दूभर हो गया। वह कुएं पर पानी नहीं भर सकता। वह भोजन में सम्मिलित नहीं हो सकता। जैसे-जैसे, जैसे-जैसे व्यक्तिगत संपदा बढ़ी, वैसे-वैसे एक-एक व्यक्ति की अपनी व्यक्तिगत गरिमा पैदा हुई।
स्त्रियों की गरिमा आज तक इसीलिए पैदा नहीं हो सकी क्योंकि स्त्री के पास कोई व्यक्तिगत संपदा नहीं रही। स्त्रियों की कभी गरिमा बन भी नहीं सकती जब तक उनकी भी अपनी व्यक्तिगत संपदा न हो। सारी दुनिया में स्त्री गुलाम है और गुलाम रही। और तब तक रहेगी जब तक पति से भिन्न उसकी अपनी व्यक्तिगत संपदा और हैसियत नहीं है।

प्रश्नः आर्थिक?

हां। अगर उसकी व्यक्तिगत हैसियत, संपदा नहीं है, तो वह हमेशा लचर है, उसकी सब स्वतंत्रता बकवास है। वह जानती है बहुत गहरे में कि पति सब कुछ है क्योंकि संपदा पति के पास है। पश्चिम में जो स्त्री की स्वतंत्रता आनी शुरू हुई वह स्त्री की व्यक्तिगत संपदा बनने से आनी शुरू हुई। उसके पास जब अपनी संपदा हुई खड़ी, उसका एक व्यक्तित्व बनना शुरू हुआ। अगर हम मनुष्य से संपदा छीन लेते हैं, उसका स्वप्न छीन लेते हैं और राज्य के हाथ में सब दे देते हैं, सबको हम व्यक्ति शून्य कर देते हैं, तब हम एक भीड़ रह जाते हैं और मनुष्य नहीं रह जाते। और इसके कितने दुष्परिणाम मनुष्य के ऊपर होंगे, उसकी कल्पना भी करनी कठिन है। कितनी संस्कृति पर होंगे उसकी कल्पना करनी भी कठिन है। और बड़ा मजा यह है कि इस स्टेट पर जो भी हावी हो जाए, वह कितना शक्तिशाली हो जाता है, वह उसी अनुपात में शक्तिशाली हो जाता है जिस अनुपात में व्यक्ति में निःसत्व हो जाता है। यहां एक-एक व्यक्ति की शक्ति तो छीन जाती है और कुछ आदमियों के हाथ में वह सारी शक्ति इकट्ठी हो जाती है। फिर वे कुछ भी कर सकते हैं।
स्टैलिन ने रूस में कोई पचास लाख से लेकर अस्सी लाख लोगों तक की हत्या की। माओ इससे बड़ा हत्यारा सिद्ध होगा, जिस दिन आंकड़े साफ होंगे। जब तक स्टैलिन के आंकड़े साफ नहीं थे, तब तक कोई सवाल नहीं था। और इस तरह हत्या चली कि हत्या नियम बन गई, अपवाद नहीं। वह किसी भी तरह के आदमी को मार डालने में कोई अड़चन नहीं रही। मिटा डालने में कोई अड़चन नहीं रही। उधर माओ बहुत जोर से वह सारी व्यवस्था कर रहा है।
और इस तरह का जो आयोजन है, उसके पीछे जो दलीलें जीतती जाती हैं, वह हमें एकदम अपील करती मालूम पड़ती हैं। क्योंकि दलीलें इस संबंध की नहीं होतीं, वे बिल्कुल दूसरे संबंध की। क्योंकि गरीब है, गरीब की गरीबी मिटनी चाहिए, कोई भी यह नहीं कह सकता कि नहीं मिटनी चाहिए। अमीर है उसके पास बहुत संपदा इकट्ठी हो गई, कोई भी नहीं कह सकता कि इतनी संपदा किन्हीं लोगों के पास इकट्ठी होनी चाहिए। शोषण है, शोषण नहीं होना चाहिए, इसके लिए कोई, कोई इनकार नहीं करेगा। यह तो मिटना चाहिए। तो समाजवाद की सारी दलीलें अर्थपूर्ण हैं। और सारे परिणाम अनथकारी हैं। और यह, यह इतनी उलझन में खड़ा कर दिया आदमी को, क्योंकि दलील एक-एक अर्थपूर्ण हैं। और दलील पर, एक-एक दलील पर आप खड़े होकर लड़ने का कोई उपाय नहीं है। दलीलें सब ठीक हैं।

उपासना के क्षण
छठवां प्रवचन

मन के पार

न सुख है, न इतना दुख है और जितना है वह बहुत ध्यान देने योग्य नहीं है। लेकिन हम उसे बहुत बड़ा करके देखते हैं। दोनों को जाग कर देखिए तो दोनों खत्म हो जाते हैं।

प्रश्नः जागना ही सबसे बड़ी चीज है।

हूं।

प्रश्नः पहला ही आपका प्रवचन मैंने सुना, वह राजकुमार वाली बात थी, तलवार से, लकड़ी की तलवार से। बहुत बढ़िया इंट्रेस है। वह पहला प्रवचन। गुरु से किसी भी वक्त मार पड़ सकती है। हर वक्त चैतन्य रूप है, हर वक्त चेतन है।
आज भी यही बात का और सिलसिला था, लेकिन यही बात थी।

लाओत्सु एक जंगल में एक पहाड़ी के पास रहता था। धूल में बैठा हुआ है। कनफ्यूशियस मिलने आया। तो कनफ्यूशियस से उसने यह भी नहीं कहा कि बैठ जा, लाओत्सु ने। तो कनफ्यूशियस ने कहाः कम से कम इतना शिष्टाचार तो रखिए, कि मुझसे कहिए कि मैं बैठ जाऊं। उसने कहा कि मैं सोचता था कि तू बूढ़ा हो गया तुझे अक्ल आ गई होगी। तू अभी ये रंग-बिरंगे कपड़े पहन कर और नवाब बना हुआ है, लाओत्सु ने उससे कहा। मैं सोचता था तू बूढ़ा हो गया तुझे कुछ अक्ल आ गई होगी। लाओत्सु ने कहाः तू ये अभी तक मंत्री-वंत्री के कपड़े पहन कर अभी तक बच्चा बना हुआ है। इसलिए फिर मैंने कहा, क्या कहना इससे बैठना।
फिर वह कनफ्यूशियस कहने लगा कि आपका क्या खयाल है? क्या नियम होने चाहिए?
तो उसने कहा कि जब तक नियम होंगे तब आदमी झूठा होगा। हम तो उस आदमी को चाहते हैं जिसका कोई नियम नहीं, जो स्वभाव है।

प्रश्नः वह नियम क्या है?

वह वैसा ही है जैसा है। उसके रिफरेंसेस फिर बहुत हैं। चारों तरफ से उसका शिष्य उसमें बहुत रिफरेंस हैं। और फिर तो पूरे चीन में फैले हुए हैं। और सच बात यह है कि इन सबके साबित होने का कोई मतलब नहीं है इन सारी बातों का। लेकिन वह ऐसा फिगर है लाओत्सु। फिर उसके बाबत कथाएं जोड़ी जाती रहीं, जोड़ी जाती रहीं। और वह फिर एक, जिसको कहें मिथ बन गया। और उसके यहां कोई यह सवाल नहीं है। यह कोई सवाल नहीं है।

प्रश्नः कितने साल पहले हुए?

लाओत्सु हुआ कोई, वह उसी वक्त जब बुद्ध और महावीर थे। वह उस वक्त दुनिया में, सारी दुनिया में कुछ बड़े अदभुत लोग हुए, एक ही साथ। और मेरा ऐसा खयाल है कि यह भी जैसी कि समुद्र में लहरें उठती हैं न; तो कुछ छोटी लहरें, कोई एक बड़ी लहर उठती इस कोने से उस कोने तक, ऐसी ह्यूमन कांशसनेस में कभी लहरें उठती हैं। तो एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक, सब जगह पीक छू लेती है। तो वहां सुकरात हुआ, प्लेटो, अरस्तू, उसी वक्त। उधर महावीर, बुद्ध। और महावीर, बुद्ध के वक्त छह और अदभुत लोग थे हिंदुस्तान में, जो इसी कीमत के लोग थे। लेकिन वे इतने अदभुत थे, उन्होंने कोई संप्रदाय नहीं बनाए, इसलिए खो गए। इसी कीमत के। बल्कि कई मामलों में इनसे भी अदभुत रहे होंगे। कुबुद कात्यायनी एक व्यक्ति था, अजित केशकंबली एक व्यक्ति था, मक्खली गोशाल। गोशालक का तो बहुत उल्लेख महावीर के उसमें आता है। ये आठ लोग थे एक साथ, बिहार में ही थे और आठों के आठों। और उधर चीन में लाओत्सु,

कनफ्यूशियस, च्वांगत्सु, वे सारे लोग थे। और यह सारी दुनिया में बेल्ट की तरह एक लहर उठी। और उस पीक पर जो उन्होंने छुआ है, उनका फिर मुकाबला नहीं हुआ पीछे। बहुत लोग हुए।
तो ह्यूमन कांशसनेस में कभी लहरें आती हैं। हमको ऐसा लगता न ऊपर से देखने में कि मैं अलग, आप अलग, हम अलग, मगर हमारी कांशसनेस इतनी इकट्ठी है कि जब लहर आती है, मुझे जब लहर आएगी, तो मेरे साथ बहुत से लोगों को छू लेगी, जिनका हमें पता भी नहीं चलेगा।

प्रश्नः अगर यह ऐसा होता है कि पूर्णता पाने से लोग--जैसा आपने बताया मक्खली गोशाल ने कुछ नहीं बताया, ऐसा कोई ने बताया भी न हो, ऐसा भी होता है, उसका बताने का मन भी नहीं होता।

अनेक लोग। अनेक लोग। अनेक लोग। असल में बताना एक बात है और जानना बिल्कुल दूसरी बात है।
बुद्ध से किसी ने पूछा, बुद्ध के साथ दस हजार भिक्षु चलते थे। किसी ने बुद्ध से पूछा कि आप इतने दिन से सिखा रहे हैं तीस वर्षों से, ये दस हजार भिक्षु सुनते हैं, इनमें से कुछ आप जैसे हुए कि नहीं?
बुद्ध ने कहाः बहुत।
तो उसने कहाः लेकिन उनका अभी पता नहीं चल रहा।
तो बुद्ध ने कहाः वे चुप हैं, मैं बोलता हूं।
और यही फर्क जैनों में तीर्थंकर और केवली का फर्क है। केवली तीर्थंकर
की केवली है, लेकिन तीर्थंकर टीचर भी है साथ में। और केवली सिर्फ केवली है, वह कुछ बोलता नहीं, वह टीचर नहीं है। बस इतना ही फर्क है। महावीर जैसे बहुत लोग हुए हैं, लेकिन महावीर तीर्थंकर हैं।

प्रश्नः अभी भी भारत में ऐसे लोग बहुत होंगे।

हमेशा हैं। लेकिन होता क्या है न, कि अब जैसे कि एक--अब वह मीरा जैसी किसी मैया को ज्ञान मिल जाए, तो वह गाएगी, नाचेगी और प्रकट करेगी, क्योंकि वह जो ट्रैनिंग है उसके माइंड की वह नाचने-गाने की है, वह ज्ञान उसका नाच-गाने से ही निकलेगा पीछे।
अगर कोई आदमी टीचर है, और माइंड उसका टीचर का है, और अगर वह ज्ञान को उपलब्ध हो जाए, तो वह ज्ञान टीचिंग्स से बहेगा। लेकिन एक आदमी टीचर नहीं है, एक आदमी नाचने वाला नहीं है, एक आदमी कवि नहीं है और वह ज्ञान को उपलब्ध हो जाए, तो उसका ज्ञान रुका रह जाए, उसके बहने का कोई निकास नहीं है। तो अनेक लोग चुप रह जाते हैं।

प्रश्नः व्यक्त करने का मन नहीं है उनका?

नहीं-नहीं, मन का सवाल नहीं है, व्यक्त करने का माध्यम नहीं होता।

प्रश्नः शक्ति आ जाती है इसका माने यह है कि जो कल्पना के जो-जो बुद्ध हैं वे भगवान हुए।

भगवान का कुछ लेना-देना नहीं है उसका। जो उस समय पैदा होगा, यह बिल्कुल होगी है। और उसी से ऐसा लगने लगेगा कि भगवान से शक्ति मिल रही है। वह तुम्हारी अपनी शक्ति है। तुम्हारा अपना विल-फोर्स।

प्रश्नः अच्छा यह चारित्र्य के बारे में इसका कुछ कहा जाता है, उसके बारे में आपका, उसका डेफिनिशन क्या है? कैरेक्टर स्टीक। संयम करना, शायद उसका नाम चारित्र्य है। किसी औरत के सामने नहीं देखना उसका नाम चारित्र्य है। कोई अलग-अलग लोग अलग-अलग बात करते हैं चारित्र्य के बारे में। इसके बारे में आपका क्या निर्णय है?

मेरी बात समझ लीजिए।... को चारित्र्य थोड़े ही कहता हूं। और जो स्त्री
के सामने देखने से डरता है वह चरित्रहीन है।

प्रश्नः रामकृष्ण जी स्त्री को देखने में न करते हैं।

चरित्रहीनता है, चरित्रहीनता है। इतना भय किससे? इतना भय किस बात से?

प्रश्नः और आजकल अभी ऐसा ही किया जाता है न, कि अभी ये लड़के-लड़कियां साथ में घूमती हैं, तो बोले कि भई, आपने कल उसकी बात बोली कि हमारा समाज रोज नीचे चला जा रहा है।

कोई नीचे नहीं जा रहा है। जागरूक आदमी जिस तरह से जीता है वह चरित्र
है और सोया हुआ आदमी जिस तरह से जीता है वह चरित्रहीनता है। जागरूक आदमी जो भी करेगा वह चरित्र है। इसलिए असली सवाल भीतर जागे हुए होने का है। तो जागा हुआ आदमी न किसी से डरता है, न भागता है, न स्त्री का पीछा करता है। ये सोए हुए आदमी के दोनों लक्षण हैं। सोया हुआ आदमी या तो स्त्री का पीछा करेगा और या स्त्री से भागेगा। वह दोनों हालत में स्त्री को मानता है।

प्रश्नः अगर यहां हम ध्यान करते हैं, तो कभी-कभी प्रकाश के बिंदु ऐसे यूं चले आते दिखते हैं।

हां, बिंदु आते हुए मालूम पड़ेंगे।

प्रश्नः वह कल्पना है कि वह क्या है प्रकाश के बिंदु?

नहीं, वह कल्पना भी नहीं है। वह कल्पना भी नहीं है। वह असल में हमारी
जो इंद्रियां हैं उनके बहुत सूक्ष्म अनुभव संगृहीत होते हैं। जैसे आंख के स्नायुओं में प्रकाश के सूक्ष्म अनुभव संगृहीत हो जाते हैं। तो जैसे पीछे के स्नायु रिलैक्स होंगे, वे सूक्ष्म बिंदु प्रकाश के वहां से रिलीज होंगे। कान के अनुभव, कान के, अब उसमें, एक तो कान यहां ऊपर दिखाई पड़ रहा है, यह असली कान नहीं है। असली कान तो भीतर का यंत्र है जो सूक्ष्म... है। वहां ध्वनि के बहुत से अनुभव संगृहीत हैं, सूक्ष्मतम तरंगें संगृहीत हो गई हैं। तो जब वे रिलैक्स होंगी तो बहुत ध्वनियां बजेंगी भीतर। जिसको कि साधु-संन्यासी समझते हैं कि अनहदनाद हो रहा है। कुछ नहीं हो रहा है। तो जो वे कान के संगृहीत अनुभव हैं वे संगृहीत अनुभव रिलीज हो रहे हैं।

प्रश्नः मैं आपसे यही बात करता हूं, मैं जब ध्यान करता हूं तो पीछे एक जैसे कि कोई मशीन चल रही, वैसी एक आवाज चलती रहती है। कभी-कभी डिस्टघबग होती है।

हूं-हूं, बस उसको सबको देखना है। प्रकाश के बिंदु हों, ध्वनियां हों, सुगंध आ सकती है।

प्रश्नः सुगंध आ सकती है?

वह तो नाक का अनुभव है सूक्ष्म। बहुत अदभुत सुगंध आ सकती है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, वे तो जब जैसे इंद्रियां भीतर से रिलैक्स होना शुरू होती हैं तो... अनुभव रिलीज होते हैं। जिनका आपको पता भी नहीं कि ये अनुभव भी हमारे पास हैं। तो उन सबको देखना है, उसमें कुछ मूल्यवान नहीं है मामला। वह तो

जैसा नहीं है कि बहुत ऊंचा। लेकिन एक बात तय है कि वह ध्यान गहरा जाता तभी यह सब होना शुरू होता है।

प्रश्नः बिंदु मैं देखता हूं...

हां, उनको बढ़ा कर देखें, शांति से देखते रहें। वे धीरे-धीरे, धीरे-धीरे विलीन हो जाएंगे।

प्रश्नः मैं तो यह ध्वनि से इतना घबड़ा गया हूं कि वह आती रहती है।

तो जब वह आए तो उसके प्रति जागरूक हों, उससे बहुत फायदा होगा। उससे बहुत फायदा होगा।

प्रश्नः जैसे हम कुकर रखते हैं, तो उसके ऊपर से सींऽऽ...

मैं समझ गया, सन्नाटे की आवाज आ रही है।

प्रश्नः सिद्धियां होती हैं

सब हो सकते हैं। सब मानसिकता हैं।

प्रश्नः कोई अंदर की...

बहुत अंदर की बात नहीं है। बहुत अंदर की बात तो नहीं, लेकिन ऊपर की बात
भी नहीं, बीच की बातें हैं। शरीर से आत्मा तक जाने का जो मार्ग है, वहां बीच में मन की बड़ी सूक्ष्म शक्तियां हैं, जिनका हमें पता नहीं। जैसे मन शांत होता है वे शक्तियां जगती हैं। अपने आप भी जग सकती हैं कभी। साधारणतया अपने आप नहीं जगतीं। फ्रेंकली चेष्टा करें तो जग सकती हैं।
जैसे कि शरीर है हमारा, हमें याद नहीं। राममूर्ति हैं, तो उसने शरीर
की कुछ शक्तियां जगा लीं जो हमारे शरीर में भी हैं। राममूर्ति के पास कोई विशेष शरीर नहीं है, शरीर तो यही है, स्ट्रक्चर यही है, सब मामला यही है। ये ही फेफड़े हैं, यही हार्ट है, ये ही हाथ हैं, ये ही पैर हैं। लेकिन निरंतर चेष्टा करके इन सबकी शक्तियां सूक्ष्मतम बढ़ा लीं। तो वह कार के नीचे लेट जाता, छाती पर से कार निकल जाती। और वह हाथी को छाती पर खड़ा कर सकता है। और ट्रेन के इंजन को भी पीछे पकड़ ले तो आगे बढ़ना मुश्किल है। यह शरीर की सूक्ष्मतम शक्तियों का विकास है।

प्रश्नः तो वह तो कसरत से किया होगा।

हां, तो इसी तरह माइंड की सूक्ष्म शक्तियों की कसरतें हैं, और उनसे सिद्धियां हो जाती हैं। माइंड की सूक्ष्म शक्तियों की कसरतें हैं।

प्रश्नः यहां तक कि वह शरीर से बाहर निकल कर दूसरे शरीर में जाता है,
ये सब बातें।

हां-हां, ये बिल्कुल, इसमें जरा भी कठिनाई नहीं है। जरा भी कठिनाई नहीं है। बल्कि शरीर को राममूर्ति जैसा बनाना थोड़ा कठिन मामला है।
क्योंकि शरीर बहुत स्थूल माध्यम है। उसके साथ ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है।
माइंड बहुत सूक्ष्म माध्यम है। उसके साथ कम मेहनत करनी पड़ती है।

प्रश्नः माइंड चंचल बहुत है।

चंचल उसका शक्ति है। चंचल होना उसकी शक्ति है। चंचल न हो तो तुम बुद्धू हो गए।

प्रश्नः मैं तो मानता हूं कि मन आरक्षण छोड़ता है, मन का तो यह शांत होना स्वभाव है शायद, ऐसा लगता है।

बिल्कुल स्वभाव है।

प्रश्नः क्योंकि आरक्षण छोड़ देता है।

और चंचलता उसकी शक्ति है। अगर वह चंचल न रहे तो तुम डेड हो गए। ईडियट
का चंचल नहीं रहता, पता है? जितना बुद्धिमान आदमी उतना चंचल मन होता है।
वह चंचलता तो उसकी गति है, डाइनामिज्म है उसके भीतर।

प्रश्नः तो ये शक्तियां जब चंचलता रुकती है तब आ जाती होगी।

हां, चंचलता को रोक कर या चंचलता को एक ही बिंदु पर लगा कर केंद्रित करते हैं। वह चंचलता ही है। वह उसमें चंचलता में फर्क नहीं पड़ता। फर्क इतना ही पड़ता है कि जैसे कि एक आदमी इधर से कूद कर उधर गया, उधर से कूद कर इधर गया, एक आदमी कूदता फिर रहा है एक स्थान से दूसरे स्थान पर, और एक आदमी एक ही स्थान पर कूद रहा है। कूदना दोनों का जारी है। लेकिन एक आदमी एक ही स्थान पर कूद रहा है, कूदना जारी है, स्थान नहीं बदल रहा है, कूद रहा है, एक ही जगह खड़े होकर कूद रहा है। जिसको तुम एकाग्रता कहते हो वह एकाग्रता नहीं है, वह चंचलता एक ही बिंदु पर है, माइंड एक ही जगह कूद रहा है। जैसे कह रहा कि राम, राम, राम, राम, माइंड का कूदना जारी है। अगर राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर ऐसा कहे तो उनको लगेगा कि बदल रहा है। वह कहता, राम, राम, राम, तो हमको लग रहा बदल नहीं रहा, लेकिन बदल रहा है पूरे वक्त। एक राम से दूसरे राम पर जाने में उतनी ही छलांग है जितनी राम से बुद्ध पर जाने में। जो जंप है वह उतना ही है। जो गैप जो है वह उतना ही है। लेकिन वह एक ही शब्द की वजह से एक ही जगह कूद रहा है, जगह नहीं बदल रहा है, कुलान जारी है। तो माइंड तो पूरे वक्त ही कूदता है। जब तक है तब तक कूदता ही है। तो अगर उसको एक जगह कुदाया जाए, तो उस जगह की शक्तियां जगनी शुरू हो जाती हैं जिस जगह पर है। उसके सेंटर से सब, सारी शक्तियों के।

उपासना के क्षण
सातवां प्रवचन

उपासना का मतलबः पास बैठना

उपासना का मतलब होता हैः उसके पास बैठना। और जितना द्वैत होगा उतनी आसन से दूरी रहेगी। उतनी उपासना कम होगी। जितना अभेद होगा उतने ही उसके निकट हम बैठ पाएंगे। उपवास का भी वही अर्थ होता है, उपासना का भी वही अर्थ होता है। उपवास का मतलब होता हैः उसके निकट रहना। उसका मतलब भी भूखे मरना नहीं होता।
तो उसके निकट हम कैसे पहुंच जाएं?
और अगर उसकी निकटता में थोड़ी भी दूरी रही तो दूरी रही। तो उसके निकट
तो हम वही होकर ही हो सकते हैं। कितनी भी निकटता रही, तो भी दूरी रही। निकटता भी दूरी का ही नाम है। या कम दूरी का नाम ज्यादा दूरी का नाम। तो ठीक निकट तो हम तभी हो सकते हैं जब हम वही हो जाएं। तो यह तो हम जितना साक्षीभाव में जाएंगे, उतना ही हम वह जो द्वैत है उसको छोड़ते हैं और वह तो एक है, वह जो मैं ही हूं, उसमें बैठते हैं। जिस दिन यह पूरा हो जाएगा उस दिन साक्षीभाव भी विलीन हो जाएगा। क्योंकि साक्षीभाव में भी द्वैत की अंतिम सीमा बाकी है। जिस दिन यह पूरा हो जाएगा उस दिन यह सवाल भी नहीं कि मैं साक्षी हूं। क्योंकि किसका साक्षी हूं और कौन साक्षी, वे दोनों ही गए। वह तो जब तक हम दृश्य से मुक्त होने की कोशिश कर रहे हैं तब तक द्रष्टा पर जोर देना है। जैसे ही दृश्य से मुक्त हो गए, द्रष्टा भी गया। फिर तो वही रह गया। न वहां कोई दृश्य है, न वहां कोई द्रष्टा है। और यही उपासना का वास्तविक अर्थ होगा।
लेकिन हमारी कठिनाई क्या हो गई है कि हमेशा जो भी कहा जाएगा वह थोड़े दिन में जड़ हो जाता है। और फिर उसकी निषेध करने की जरूरत पड़ जाती है। और तब ऐसा लगता है कि ये कोई चीज तोड़ने के लिए कह रहे हैं, कोई चीज छोड़ने के लिए कह रहे हैं। लेकिन हर बार निषेध फिर मूल पर पहुंचाता है। और निषेध से फिर मूल पर वापस पहुंचना पड़ता है। और नहीं तो बीच में बहुत जाल खड़ा हो जाता है, उसको फिर तोड़ने की जरूरत पड़ जाती है। निषेध की भाषा में सिर्फ इसलिए बोलना पड़ता है कि विदेह की भाषा में बोलने पर सारा क्रियाकांड चलता है।

प्रश्नः फैलाव होता है।

फैलाव होता है।

प्रश्नः निषेध में तो फैलाव है ही।

फैलाव होगा। इसलिए निषेध करना अंतिम वहां तक ले जाना है जहां सब निषिद्ध हो जाए। वह द्रष्टा भी निषिद्ध हो जाए। और उसके निकटतम जो द्वैत है वह साक्षी का है। अद्वैत से जो निकटतम द्वैत है वह साक्षी का है। यानी जो इसको हम आखिरी मजबूरी कहें। बस इसको कहना चाहिए न्यूनतम बुराई है। यह भी बुराई है, यह भी जानी चाहिए। बस यह आखिरी बुराई है। और अगर इससे दूर हम दृश्य को पकड़ते हैं तो हम बहुत दूर फासले पर हैं। फिर दृश्य से द्रष्टा पर आना पड़े। और द्रष्टा से फिर पीछे जाना पड़े। तो जितना कम से कम पकड़ें जिसे हम छोड़ सकें उतना अच्छा है। उसी खयाल से की जाती है। पूरी उपासना है, उसमें कहीं कोई कमी नहीं है।

प्रश्नः आप तो सर्वत्र घूमते ही हैं, लेकिन मुझे तो उलटी शघमदगी महसूस करता हूं या हम लोगों की स्थिति हम देखते हैं, तो सचमुच सबकी जिज्ञासा, सुनने वालों की जिज्ञासा जगती जरूर है।

बिल्कुल जगती है। यह तो प्रत्येक की जगती है। जो बिल्कुल अकारण भी आकर खड़ा हो गया हो, मनोरंजन के लिए भी आकर खड़ा हो गया हो, ऐसे रास्ते से निकलता भी खड़ा हो गया हो, उसमें भी कुछ होता है।

प्रश्नः सत्संग की बड़ी महिमा है।

हां, कुछ न कुछ होता है। कुछ न कुछ होता है। लेकिन जिसको बड़ी जलती हुई जिज्ञासा कहें, बहुत थोड़े से लोग होंगे। इसीलिए तो इतनी मेहनत करने पर भी बहुत ज्यादा परिणाम नहीं दिखता। नहीं तो एक गांव में एक आदमी भी ठीक जिज्ञासु हो तो पूरे गांव की हवा बदल जाती है।

प्रश्नः बदल जाती है।

बदलनी ही है। क्योंकि वह ऐसा ही जैसे कि हजारों बुझे दीये रखे हों और
एक दीया भी जल जाए, तो भी उस जगह क्रांति हो गई। और उस एक जले हुए दीये को देख कर हजारों बुझे दीयों के प्राणों में प्यास जगनी शुरू हो जाती है कि हम कैसे जलें?
थोड़े से लोग चाहिए। कोई बहुत लाखों लोगों की जरूरत नहीं है। एक-एक गांव में एक-एक आदमी ठीक ऐसा हो जो कि सच में ही जिज्ञासा से भरा है, तो बड़ा क्रांति का केंद्र बन जाए। बहुत कम लोग, लेकिन कुछ लोग हैं। और कुछ लोग हैं इसीलिए कोई धारा टूटती नहीं है। और नहीं तो, पूरी धारा तो विपरीत चली गई, वह कभी की टूट गई होती। यानी पूरा का पूरा जन-मानस तो बिल्कुल ही विपरीत चला गया है। कुछ थोड़े से लोग हैं जो सूत्र को कायम रखे हुए हैं और किसी न किसी तरह उसको आहुति देकर सूत्र को बनाए रखे हैं।

प्रश्नः अब देखिए आप तर्क के संबंध में रात को कितना बोले हैं, हद्द
कर दी आपने, लेकिन आज सैकड़ों तर्क फिर सामने आने वाले हैं, चर्चा करने वाले। लोग समझे नहीं इसका मतलब। तर्क में फर्क पड़ने वाला नहीं है।

नहीं, कोई फर्क नहीं पड़ने वाला।

प्रश्नः और दूसरी बात इन लोगों पर खास करके इसमें ही अपना वह मानते हैं कुछ विशेषता।

कुछ नहीं सिर्फ व्यायाम है। ठीक है, व्यायाम करने के लिए अच्छा है, इससे ज्यादा कोई मतलब नहीं।

प्रश्नः और जिनका साधन के संबंध में...

विरोधाभास का है सदा। या तो लोग यह समझेंगे कि उनको समझाया जाए कि पैर पड़ो, फिर वे समझेंगे।

प्रश्नः या मत पड़ो।

या यह समझ जाएंगे कि मत पड़ो, तो यह भी समझ जाएंगे कि मत पड़ो। लेकिन एक आदमी पैर पड़ते वक्त पैर पड़ ही नहीं रहा, यह उन्हें कभी नहीं दिखाई पड़ सकता। वह कुछ और ही कर रहा है, इसका उन्हें पता भी नहीं। यह उन्हें पता भी नहीं चल सकता। वह उनकी कल्पना के बाहर है। लेकिन उन्हें और बातें समझ में आती हैं, जैसे उनको गुस्सा आ जाए, और क्रोध आ जाए, तो वे किसी का सिर तोड़ने को तैयार हो जाते हैं, किसी के सिर पर जूता मारने को तैयार हो जाते हैं। तो उनको कभी खयाल नहीं आता कि किसी के सिर पर जूता मारने से क्या होगा? लेकिन वे अपना एक भाव प्रकट कर रहे हैं। अब किसी को किसी से प्रेम हो जाता वह उसको गले

लगा लेता है, वह कभी नहीं सोचता कि गले लगाने से क्या होगा। हमारे भीतर जो भाव उठते हैं उनकी अभिव्यक्तियां हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

उसके भीतर क्या हो रहा है यह सवाल है, पैर का सवाल नहीं है। उसके भीतर कहीं कोई बात उठी है कि वह जानता भी नहीं है और उसका सिर पैर से जुड़ गया है। उसे क्या मिल रहा है, क्या नहीं मिल रहा है यह किसी दूसरे का समझने का मामला नहीं है। लेकिन उसकी देखादेखी अगर कोई किसी के पैर में सिर रख रहा हो, तो उसे कुछ भी नहीं मिल रहा है।
मैं एक सूफी कहानी पढ़ रहा था। एक सूफी फकीर हुआ, जुन्नैद। वह एक कहानी कहता था। एक माली है और एक बगीचे में अंगूर लगा रहा है। माली की उम्र कोई साठ साल की है। और जो अंगूर वह लगा रहा है वह उस जाति का है जिसमें तीस साल बाद फल आएंगे। तो गांव का सम्राट वहां से निकला है। उसने घोड़ा रोक दिया और उसने कहा कि बूढ़े यह क्या कर रहा है? यह अंगूर तो तीस साल बाद आएगा और तू तो तब तक होगा भी नहीं। तेरी उम्र क्या है? साठ साल की उम्र है।
तो उसे बूढ़े माली ने कहा कि मालिक, हमने बहुत से उन वृक्षों के फल खाए जिन्हें हमने नहीं लगाया था। और जिन्होंने लगाया था वे अब नहीं हैं उनके फल खाने को। तो हम अगर ऐसे वृक्ष न लगा जाएं जिनके फल वे खाएं जो हमसे पीछे हैं, तो कर्तव्य पूरा न हुआ। सभी फल हम अपने खाने के लिए नहीं लगाते।
तो राजा ने कहाः ठीक, तेरी हिम्मत और तेरे साहस से हम खुश हैं। और अगर
तू जिंदा रहे और मैं भी जिंदा रह जाऊं, तो पहले फल इस वृक्ष के मुझे पहुंचना देना।
तीस साल वह माली जिंदा रह गया और राजा भी। उसने, पहले जो अंगूर आए वे सम्राट को भेजे। सम्राट के पास जब अंगूर पहुंचे और खबर पहुंची कि उस माली ने भेजे हैं जिससे आपने कहा था कि ये फल तू नहीं खा सकेगा। तो सम्राट ने कहा कि जितने अंगूर जितने वजन के हैं उतने हीरे-जवाहरात भर कर टोकरी में वापस पहुंचा दो। वह आदमी हिम्मत का है और जानदार है।
यह खबर तो पूरे गांव में फैल गई कि एक माली ने अंगूर के गुच्छे भेजे और उत्तर में साधारण अंगूरों के लिए राजा ने हीरे-जवाहरात भेजे। दूसरे दिन तो सारे गांव के लोग अंगूर लेकर खड़े हो गए टोकरियां भर-भर कर। और एक औरत जो सबसे पहले पहुंची, उसने कहा कि जाओ, पहुंचा दो ये अंगूर राजा को और कहो कि हीरे-जवाहरात भर दे। हमारे साथ ज्यादती नहीं होनी चाहिए, जब एक आदमी को दिए गए।
राजा उठा सुबह तो देखा कि सारे महल के आस-पास लोग खड़े हैं अंगूर लिए हुए। राजा ने सिपाहियों से कहाः इन सबको भगा दो। और इनसे कहना, पागलो, पहले यह तो पूछ लेते कि किसके अंगूरों के बदले में उत्तर दिया गया है। सिर्फ अंगूर का उत्तर नहीं दिया गया है। किसके अंगूर? और पीछे राज क्या है? वह तो पूछ लेते। कि तुम बस अंगूर लेकर आ गए।
तो वह पैर छूने से उत्तर भी मिलता है। लेकिन किसके पैर छूने का? वह बिना देखे जब कोई किसी के पैर में सिर रख देगा तो पाएगा कुछ भी नहीं मिलता। वह जाकर कहेगा, फिजूल की मेहनत है, और नासमझी है। और तब दो स्थितियां हो जाती हैं। मेरे सामने बहुत बड़े प्रॉब्लम हैं। मेरे सामने बड़े सवाल हैं, जो और लोगों के सामने सवाल नहीं है। मेरे सामने सवाल यह है कि मैं जानता हूं कि पैर छूने का अपना रस और आनंद है। और यह भी मैं जानता हूं कि पैर छूने की अपनी मूढ़ता और मूर्खता है। ये दोनों बातें मैं जानता हूं। इसलिए अब मेरे सामने बड़ी मुश्किल है। यानी मैं यह जानता हूं कि सौ में से निन्यानबे लोग तो सिर्फ म.ूढतावश पैर छुए चले जा रहे हैं। वे किसी का भी छुए चले जा रहे हैं। इनको रोका जाना जरूरी है। और यह भी मैं जानता हूं कि सौ में एक आदमी भी है जिसको रोका जाना बिल्कुल ही अनुचित है। और इसीलिए दोनों बातें कहने से बड़ी मुश्किल, उलझन हो जाती है कि मैं क्या कह रहा हूं, मेरा क्या मतलब है। उससे बहुत कठिनाई हो जाती है। बहुत कठिनाई हो जाती है। और इसलिए मैं कहता हूं कि रोकना चाहिए पैर छूने से। जो नहीं रुकेगा वह ठीक है। ऐसे सवाल

यह है कि जो रुक जाएगा वह भी ठीक है। क्योंकि वह रुक जाएगा इसलिए कि उसके लिए बेकार था। और जो नहीं रुकेगा उसके लिए कोई अर्थ था, इसलिए वह तुम्हारी मानेगा नहीं।
मैं बंबई में एक मीटिंग में माटुंग्गा में कहा कि पैर छूने के लिए मैं मना करता हूं, कोई मेरे पैर न छुए। मैं मंच से उतरा और एक महिला ने आकर कहा कि हम आपकी बात मानने से इनकार करते हैं। उसने पैर छुआ। वह दूसरे दिन मेरे पास आई और उसने कहा कि आपको क्या हक है कि आप हमें रोकें? मैंने उससे कहाः कोई हक नहीं। मुझे क्या हक हो सकता है। मुझे क्या हक हो सकता है। लेकिन मैंने कहाः इतना कोई दावा तो करे, तो वह हकदार हो जाता है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, इतना कोई दावा तो करे न। तब ठीक है, फिर बात खत्म हो गई। हां, फिर तुम्हारी मालकियत, तुम्हारी मौज है, इसमें क्या बात है।

प्रश्नः बात है तो पात्रता की है।

दावा की पात्रता भी हो। लेकिन दूसरा रुक गया है। उसका कोई दावा नहीं था, वह किसी को देख कर छू रहा था। वह ठीक है, वह भी छुटकारा उसका हो गया।

उपासना के क्षण
आठवां प्रवचन

जीते-जी मरने की कला

प्रश्नः शरीर में कुछ सूक्ष्म शरीर जैसा भी है या नहीं?

एक ही रास्ता है कि जीते-जी शरीर और शरीर की चेतना अलग हो सके। मरने पर
तो होती ही है। लेकिन फिर, फिर कोई, फिर कुछ हमारे पास जानने का उपाय नहीं रह जाता। हमारे पास तो एक ही उपाय है कि उसके पीछे केंद्र हैं। और कोई व्यक्ति भावुक... शरीर के बाहर होने को अनुभव कर सके। यह जो अनुभव है, बहुत बार आकस्मिक रूप से हो जाता है, और बहुत लोगों को। सामान्य अनुभव हैं ऐसे ही ये। बहुत असामान्य नहीं हैं। बहुत लोगों को कभी आकस्मिक रूप से हो जाता है--किसी गहरी बीमारी में, कभी कोई गहरी चोट लगने पर, कभी कोई एक्सीडेंट में, कभी कोई बहुत गहरे आघात में, कई बार अनायास यह घटना घट जाती है। प्रयास से भी घट सकती है। और रास्ते भी हैं उस प्रयोग को कर लेने के। लेकिन इससे इतना ही सिद्ध होता है कि इस शरीर के भीतर ठीक इस शरीर जैसा सूक्ष्म शरीर भी है। इससे आत्मा अभी सिद्ध नहीं होती। जैसे इस शरीर के बाहर निकलने के यह अनुभव की बात है, यह भी जो दूसरा निकल जाता है, यह भी एक शरीर ही है। और ठीक इस शरीर जैसा ही, लेकिन अत्यंत सूक्ष्म कणों से निर्मित--ईथरिक। उस शरीर के बाहर भी निकलने का उपाय है, और तब जो अनुभव होता है वह अशरीरी अनुभव है, वह आत्मा का अनुभव है।
यानी यह शरीर है, इसके भीतर एक और शरीर है, और उस शरीर के भीतर जिसे हम आत्मा कहें, वह है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां-हां, बिल्कुल ही। तो यह ईथरिक बॉडी का अनुभव तो एक्सीडेंटल भी हो जाता है। लेकिन उसके बाहर का अनुभव कभी एक्सीडेंटल नहीं होता है। जो फर्क कर रहा हूं, इसके बाहर निकलने का--तो कभी तो कोई आप कार से गिर पड़े हैं एक्सीडेंट में तो भी हो सकता है। कभी-कभी रात सोने में भी हो जाता है। और कुछ स्वप्न तो निश्चित ही ईथरिक बॉडी की यात्रा के होते हैं, सब नहीं, कुछ। कुछ स्वप्न तो ईथरिक जर्नी होती है आपकी। बॉडी बाहर ही चली गई होती है। ये सबके सब आकस्मिक भी हो सकते हैं, या थोड़े से प्रयास से हो सकते हैं। इसमें कोई बड़े प्रयास की भी जरूरत नहीं है।
सिर्फ उन बिंदुओं को जानने की जरूरत है जहां से यह बॉडी और ईथरिक बॉडी जुड़ी हुई है। उन्हीं बिंदुओं का नाम चक्र है। इसलिए चक्र इस बॉडी के हिस्से नहीं हैं। सिर्फ कांटेक्ट फील्ड हैं। इस बॉडी और उस बॉडी के बीच जहां कांटेक्ट हो रहा है, उन स्थानों का नाम चक्र है।

न-न, यह जो सेंटर का कांटेक्ट है इस बॉडी और उस बॉडी के बीच, उनको ही योग चक्र कहता है। और उन सेंटर्स को जोड़ने वाली जो जिसे फील्ड कहना चाहिए, उस फील्ड को कुंडलिनी कहता है। सामान्य मनुष्य के भीतर ये दोनों बॉडियां कई स्थानों पर एक-दूसरे को छू रही हैं। यह समझिए कि पांच पॉइंट पर ये दोनों बॉडी छू रही हैं। ये जो पॉइंट हैं, ये कहीं शरीर को काटने से पता नहीं चल सकते हैं। क्योंकि सिर्फ कांटेक्ट फील्डस हैं। कोई चीज नहीं है वहां।

प्रश्नः जस्ट ए फील्ड ऑफ मैग्नेटिक।

फील्ड ऑफ कांटेक्ट दोनों के बीच का। इसीलिए कोई शरीर को काटने से वह चक्रों का कोई पता नहीं चलता है कि वे कहां हैं--वह चल भी नहीं सकता।
ये जो चार या पांच या सात जो कांटेक्ट फील्ड हैं, ये सब अगर आपस में जुड़ जाएं, यानी इनको जोड़ने वाली जो मैग्नेटिक फोर्स है, वह आपस में भी जुड़ जाए, तो कुंडलिनी का अनुभव हो जाता है। कुंडलिनी के अनुभव का कुल मतलब यह

है, कि यह जो अलग-अलग कांटेक्ट हो रहा है, इनके कांटेक्ट होती जगह में जो शक्ति इकट्ठी हो गई है, पांचों में, सातों में, वह अगर जुड़ जाए, और उसके जोड़ने के मेथड्स हैं। और इन पांचों के कांटेक्ट को या सातों के कांटेक्ट को अलग करने के उपाय भी हैं। तो इन उपायों के द्वारा बहुत आसानी से दोनों शरीर अलग हो सकते हैं। अलग होते ही, इतना तो तय हो जाता है कि इस शरीर के मरने से ही सब कुछ नहीं मर जाता है।

प्रश्नः इट इ.ज जस्ट पॉसिबल सब पीपल्स हू हैव बीन ट्राई टू... टू बॉडी फॉर एग्झिस टू... केन नॉट बी यूनाइटेड।

हां, यह खतरा है कभी, यह कभी खतरा है, यह कभी खतरा है। और कई बार ऐसा हो सकता है कि इस कोशिश में इनको वापस न जोड़ा जा सके। लेकिन आमतौर से, आमतौर से ऐसा खतरा नहीं है। कुछ कारणों में यह हालत हो सकती है कि अगर बॉडी ऐसी हालत में हो, कि उसके कुछ हिस्से अगर बिल्कुल खराब हो गए हों या अब काम न कर सकते हों, और कांटेक्ट के हटते ही वे डिसइंटीग्रेट होने शुरू हो जाएं तो वापस जुड़ना मुश्किल हो जाएगा। और इसीलिए हठयोग ने शरीर पर इतना जोर दिया। शरीर को पूरा का पूरा इतना साधने की जो चेष्टा की गई, वह इसीलिए कि दूसरे शरीर के अलग हो जाने पर शरीर के अस्तव्यस्त होने का कोई डर न हो। तो वापस जुड़ जाने में अड़चन नहीं है।
और जो जान कर शरीर को अलग करता है, इस शरीर से उस शरीर को बहुत जान कर अलग करता है, उसे तो बहुत कठिनाई नहीं है। क्योंकि वह जिस माध्यम से अलग होता है, उसी के विपरीत माध्यम से जुड़ जाता है। लेकिन जब आकस्मिक कभी हो जाता है, जैसे मेरा जो अनुभव है वह आकस्मिक ही है। और तब एक...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, अब तो मैं, अब तो मैं बहुत प्रयोग किया, उसके बाद बहुत प्रयोग किया। अब तो कोई सवाल नहीं है। अब तो सब साफ है। न केवल मुझे साफ है, बल्कि आपको, आपके शरीर को भी जान कर साफ कह सकता हूं, कि यह करने से हो सके। तो बहुत कठिनाई का सवाल नहीं है। लेकिन पहला अनुभव जो मुझे हुआ, वह मेरे प्रयास से नहीं था। यानी उसके लिए मुझे कोई खयाल भी नहीं था। और ध्यान के गहरे प्रयोगों में कभी-कभी आकस्मिक रूप से किसी को भी हो सकता है। किसी को भी हो सकता है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, जरा भी नहीं, जरा भी नहीं, जरा भी नहीं। इसलिए इसको मैं कोई, न तो जरूरी है और न करने का कोई मूल्य है बड़ा।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, कुछ तथ्य इतने साफ हो जाते हैं उस अनुभव से कि काम करने में--

प्रश्नः फियर ऑफ डेथ इ.ज गान।

फियर ऑफ डेथ बिल्कुल ही चला जाता है। और जैसे ही एक बार यह अनुभव हो जाए, तो आपके पुराने जन्मों में उतरने की बड़ी सुविधा हो जाती है, जो बिना इस अनुभव के नहीं हो सकती।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, गोइंग बैक टु नहीं है, गोइंग बैक टु नहीं है। न, गोइंग बैक टु नहीं है। कोई भी मनुष्य मनुष्य से नीचे नहीं जा सकता है, ऊपर जा सकता है। लेकिन

मनुष्य ही रहते हुए कई बार मुक्त हो सकता है। नीचे तो नहीं जाता, पीछे नहीं जाता।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, जरा भी नहीं, जरा भी नहीं संभव है। बिल्कुल भी संभव नहीं है।

प्रश्नः हाउ इट इ.ज... दैट मैन कम्स बैक ए.ज ए ह्यूमन बीइंग।

हां, उसके कारण हैं। उसके कारण हैं। असल में हमारा जो एस्ट्रल माइंड है, वह जो एस्ट्रल बॉडी है, उसका जो माइंड है। अब इसका मतलब हुआ, दो बॉडी हो गई। और जो इस बॉडी के साथ जुड़ा हुआ शरीर है, ठीक ऐसा ही उस बॉडी के साथ जुड़ा उसका माइंड है, जो इस ब्रेन के साथ कांटेक्ट फील्ड बनाए हुए है। वह जो एस्ट्रल माइंड है--हम जैसे रात को सोए हैं, आप रात को सोए हैं, भूखे सोए हैं, तो रात भर आपके माइंड में भोजन का खयाल घूमता रहेगा। सुबह उठते से जो पहला खयाल आएगा वह भोजन का आएगा। और जो पहला काम आपका शरीर करेगा वह भोजन की तलाश करेगा।
इस शरीर में रहते हुए आपके एस्ट्रल माइंड ने जो भी डिजायर नहीं पूरी
कर पाया है, अनफुलफिल्ड रह गई हैं, अननोन रह गई हैं, वह डिजायर्स उसका पीछा करती रहेंगी। मरते वक्त उसे गहरी नींद से ज्यादा नहीं कोई अर्थ है मरने का, मरते क्षण में वह सारी डिजायर, जो इस माइंड ने चाही थीं और पूरी नहीं हो पाईं, वे उसके साथ खड़ी हो जाएंगी। जैसे रात सोते वक्त--दिन भर में जो चाहा था नहीं हो पाया, वह आपको साथ खड़ा हो जाता है। और वह जो डिजायर थी, वह फिर इस माइंड को, मनुष्य की बॉडी को पकड़ाने की चेष्टा करेगी। क्योंकि वह डिजायर मनुष्य की बॉडी में ही पूरी हो सकती है।

प्रश्नः इ.ज इफ फियर ऑफ हैल एंड हैवन...

हां, मैं बात करूंगा।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

यह जो, तो अगर मनुष्य जीवन में कुछ अतृप्त वासनाएं और तृष्णाएं रह गई हों, तो चेतना वापस मनुष्य जीवन पर लौटती रहेगी। जब तक कि या तो उन वासनाओं से छुटकारा न हो जाए, उनसे मुक्ति न हो जाए, तब तक वह वापस लौटती रहेगी। माइंड हमेशा वहीं लौट जाता है जहां डिजायर है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बहुत दिन तक रहेगी। रहेगी। और उसका कारण, उसका सिर्फ इतना ही है कि रिलीजस एक्सपीरिएंस जो भी हैं, जो भी हैं उनको जब तक साइंटिफिक एक्सपेरिमेंटेशन सिद्ध नहीं करेगा तब तक कांफ्लिक्ट जारी रहेगी। फिर रिलीजस एक्सपीरिएंस एक बात है और रिलीजस इंटरप्रिटेशन बिल्कुल दूसरी बात है।
मुझे एक अनुभव हुआ, उस अनुभव की मैं क्या व्याख्या करता हूं, वह गलत हो सकती है। और कल साइंस से सिद्ध हो सकता है कि वह व्याख्या गलत थी। और व्याख्या के गलत होते से ही मेरा अनुभव भी गलत हो जाएगा। लेकिन व्याख्या बिल्कुल और बात है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

मेरा मतलब यह... हां, एक और बात, एक आदमी इस कमरे में आया, उसे एअरकंडीशंड का कोई पता नहीं है। वह इस कमरे में आया। बाहर सब गर्म था।

दूसरा कमरा गर्म था। इस कमरे में आया, यह कमरा ठंडा था। उसके अनुभव में कोई झूठ नहीं है। क्योंकि उसने इस कमरे को ठंडा पाया। लेकिन उसे एअरकंडीशन का कोई पता नहीं है। और वह आदमी इसको एक चमत्कार मान कर जाता है। वह उसकी व्याख्या है। वह एक चमत्कार मानता है कि वहां एक साधु ठहरा हुआ है, कमरा इसलिए ठंडा है।

प्रश्नः यह इंटरप्रिटेशन है।

इंटरप्रिटेशन है यह। लेकिन कमरे के ठंडे होने में उसकी कोई गलती नहीं है। और कल अगर वह गलत सिद्ध होगा और वैज्ञानिक उसको गलत सिद्ध करेगा कि किसी साधु के ठहरने से कोई कमरा ठंडा नहीं हो सकता, तो वह आदमी गलत सिद्ध हो जाएगा। और गलत सिद्ध होते से ही उसके सामने बड़ी मुश्किल खड़ी हो जाएगी, क्योंकि उसका अनुभव है कि कमरा ठंडा था।
लेकिन कमरा क्यों ठंडा था, इसके बाबत उसे कुछ भी... मेरा मतलब आप समझ रहे न? इतना अनचार्टर्ड मामला है कि वहां जब एक आदमी जाकर कुछ अनुभव करता है, तो अनुभव तो है, लेकिन अनुभव को वह रिलेट करता है, इंटरप्रीट करता है, लौट कर कुछ कहता है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां-हां, यह संभावना है। यह संभावना इसीलिए, जैसे क्रिश्चियंस हैं, मोहम्मडंस हैं, वे यह बात नहीं। उनका भी अनुभव यही है, लेकिन उनकी व्याख्या बिल्कुल और है। हिंदुओं और जैनों की व्याख्या भी यही है, बौद्धों की व्याख्या भी यही है, लेकिन फिर भी बौद्ध आत्मा को मानने को राजी नहीं है, उस तरह से जैसा हिंदू और जैन।

प्रश्नः उनका एक्सपीरिएंस बिल्कुल सेम है।

हां, और उनका एक्सपीरिएंस बिल्कुल एक है। बौद्धों का अनुभव बिल्कुल वही है जो जैनों का है, या हिंदुओं का है। लेकिन बुद्ध आत्मा को मानने को तैयार नहीं हैं। और अनुभव में जरा भी फर्क नहीं है।
तो अब साइंस के साथ कांफ्लिक्ट तब तक बनी रहेगी जब तक कि हम उस सारी चीज का उसका पूरा का पूरा साइंटिफिक सर्वे नहीं हो जाता उस एक्सपीरिएंस का। और साइंटिफिक सर्वे हो जाने के बाद बहुत सी बातें जो हम मानते थे कि सही हैं, वे गलत होंगी। लेकिन अनुभव गलत नहीं होगा, सिर्फ अनुभव की नई व्याख्या शुरू होगी। नई व्याख्या शुरू होगी।
अब जैसे मेरा कहना, जैसे बाइबिल की बात है, बाइबिल की बात है कि बाइबिल कहती है कि पृथ्वी ही सेंटर है सारे युनिवर्स का। और मैं मानता हूं कि यह किसी गहरे अनुभव की बात है, यह झूठ नहीं है, अभी भी। यानी अभी यह तीन सौ साल में...

प्रश्नः इंटरपलेशन बाय हि.ज फॉलोअर्स।

न, न, न, जरा भी नहीं, जरा भी नहीं। इंटरपलेशन नहीं कहता मैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, यह मैं नहीं कह रहा हूं। मैं यह कह रहा हूं कि यह जो बात है, यह बात कोई और ही अर्थ रखती है। यह बात यह अर्थ नहीं रखती है कि सूरज और चांद और तारे सब इसका चक्कर लगा रहे हैं, यह अर्थपूर्ण नहीं है। यह बात बहुत मैटाफिजिकल है और कुछ और ही अर्थ रखती है। जहां तक जीवन का संबंध है, अर्थ सेंटर है। जहां तक जीवन का संबंध है, वहां अर्थ सेंटर है।

प्रश्नः मोर लाइट आन दि सरफेस।

हां, यानी जो लोग जीवन में बहुत गहरे प्रविष्ट हुए हैं, उनका जो अनुभव
है वह यह है कि किसी प्लेनेट पर कोई लाइट नहीं है। और जो लोग जीवन में बहुत गहरे प्रविष्ट हुए हैं, उनका यह भी अनुभव है कि प्रत्येक प्लेनेट की भी अपनी सोल है। यह जो जैसे कि एक-एक बॉडी की अपनी सोल है, ऐसा प्रत्येक प्लेनेटिक बॉडी है और बॉडी की, उस प्लेनेट की अपनी सोल है, जैसे अर्थ की अपनी सोल है।

प्रश्नः एनिमल्स सोल।

हां, एनिमल्स की तो सोल है ही। इस जमीन की, चांद की। तो जो लोग जीवन की
इस दिशा में बहुत गहरे काम किए, उनका यह अनुभव है कि अर्थ की अपनी सोल है।
सब प्लेनेट की अपनी सोल है। और सोल की दृष्टि से, उस लिविंग एनटायटी की दृष्टि से अर्थ सेंटर है और सूरज और चांद सब उसके आस-पास रिवाल्व हो रहे हैं। यह जो खयाल है, इस खयाल का गैलीलियो से कोई विरोध का मामला नहीं।

प्रश्नः इसका कांटेक्ट नहीं।

हां, इससे कोई कांटेक्ट ही नहीं है। लेकिन यह जो खयाल है, इसका जो इंटरप्रिटेशन होने वाला था, वह यही होने वाला था, कि यह पृथ्वी का सूरज चक्कर लगा रहा है। और जब गैलीलियो ने यह खोज की कि यह बात तो झूठ है, सूरज का चक्कर तो पृथ्वी ही लगा रही है, तो इन दोनों बातों में कांफ्लिक्ट खड़ी हो गई और धर्म का जो व्याख्याकार था वह एकदम हार गया। हार गया, क्योंकि यहां तो फैक्ट सामने थे, तुम्हारे पास तो कोई फैक्ट थे नहीं।
लेकिन कभी दो-चार सौ वर्षों में जब कि हम लिविंग एनटायटीज के बाबत हमारी दृष्टि और गहरी हो जाएगी, तो मैं यह मानता हूं कि गैलीलियो और जीसस क्राइस्ट के दृष्टिकोण में बुनियादी फर्क है और जीसस का दृष्टिकोण गैलीलियो से कहीं भी कटता नहीं है। वह बात ही और है।

प्रश्नः द डाइमेंशंस आर डिफरेंस।

हां, डाइमेन्शंस अलग हैं। और तब यह कांफ्लिक्ट जारी रहेगी। अब जैसे
कि अगर मैं कहूं कि चक्र हैं सात शरीर में, तो कहूंगा, शरीर में, और फौरन फिजियोलॉजिस्ट कहता है कि हम तो शरीर को पूरा एक-एक इंच जांच चुके हैं, वहां तो कोई चक्र-वक्र कुछ भी नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां-हां, यही कह रहे हैं वे, वे यही कह रहे हैं। और जहां तक वे कह रहे हैं, जितनी दूर तक वे कह रहे हैं, कोई गलत नहीं कह रहे हैं। लेकिन उसके आगे भी कुछ हो सकता है, जो उनके कहने में नहीं आ रहा है फिलहाल। और किन्हीं विज्युलाइज के कहने में आता है, और विज्युलाइज के साथ तकलीफ यह है कि वे कुछ कोई प्रमाण नहीं दे सकते हैं।
अब जैसे कि मैं अगर कहूं कि मुझे कोई एक अनुभव हुआ। या समझ लें कि एक आदमी को किसी से प्रेम हो गया है, और वह कहता है कि मुझे प्रेम का अनुभव हो रहा है, और अगर फिजियोलॉजिस्ट कहे कि कहां तुम्हें प्रेम का अनुभव हो रहा है? हम तुम्हारे पूरे शरीर को काट-पीट कर जांच कर लें, तो हम तुम्हारे पूरे शरीर में कहीं नहीं पाते हैं कि कहीं भी तुम्हें प्रेम का अनुभव हो रहा है। न तुम्हारे हृदय को कुछ पता चलता है, न तुम्हारे फेफड़े को कुछ पता चलता है, न कहीं पता चलता है।

प्रश्नः साइकोलॉजी में भी नहीं?

मेरी बात आप नहीं समझे न। फिजियोलॉजी की बात मैं कह रहा हूं। फिजियोलॉजी, अगर आप कहें कि मुझे प्रेम अनुभव हो रहा है और मेरे भीतर कुछ घटना घट रही है, जो कल तक जब तक मुझे प्रेम नहीं हुआ था, नहीं घटी थी, तो फिजियोलॉजी अगर आपकी जांच-पड़ताल करे, तो आप सिद्ध नहीं कर सकते कि आपको कोई प्रेम का अनुभव हो रहा है। क्योंकि वह कहेगी, जब तुम्हें प्रेम का अनुभव नहीं हो रहा था, तब जितने तत्व तुम्हारे शरीर में थे और जिस तरह का तुम्हारे शरीर का स्ट्रक्चर था, ठीक स्ट्रक्चर वही का वही है, तत्व वही के वही हैं। प्रेम के अनुभव से तुम्हारे शरीर में जब प्रेम नहीं हो रहा था, तो कोई फर्क नहीं पड़ा है। इसलिए कोई नई चीज तुम्हारे शरीर में हो रही है, यह हम नहीं मान सकते। मेरा आप मतलब समझ रहे न? फिजियोलॉजी यह कहेगी। तो वह कहेगी कि यह तो कुछ हो नहीं रहा। तुम भ्रम में हो। या इल्युजरी है। या तुम किसी और चीज की व्याख्या कर रहे। वह और तरह से व्याख्या करेगी। वह कहेगी कि हो सकता है जिसको तुम प्रेम वगैरह कह रहे हो, वह कुछ भी नहीं है, सिर्फ तुम्हारे शरीर में कोई नये हॉरमोन आ गए हैं और उनकी वजह से जो हलचल मच गई है, तुम समझ रहे हो कि प्रेम हो रहा है! सिर्फ नये हॉरमोन का यह हलचल है, इसमें कुछ प्रेम-व्रेम जैसी कोई चीज नहीं है। और यह हो सकता है कि उनकी बात भी सही हो और यह भी हो सकता है कि यह बात भी सही हो कि यह जो प्रेम का अनुभव हो रहा हो, हो सकता है कि हॉरमोन अलग करने पर यह अनुभव न हो।

प्रश्नः... मीडियम हो।

हां, मीडियम हो, सिचुएशन हो। हॉरमोन एक सिचुएशन पैदा कर रहे हों, जो कि हॉरमोन के हट जाने पर न हो।
जैसे कि मैं यहां बोल रहा हूं। लेकिन मेरा बोलना एक बात है और अगर बीच में वेव क्रिएट न होने का इंतजाम कर दिया जाए, यहां वैक्यूम कर दिया जाए, तो आप तक मेरा बोलना न सुनाई पड़े, सिर्फ ओंठ हिलते रहें। तो आप कहें कि बोलना कुछ भी न था, बीच की वेव थी, तो गलती हो गई।

प्रश्नः लाइफ एनर्जी।

हां, लाइफ एनर्जी। तो कठिनाई क्या है कि साइंटिफिक जो मेथड हैं अब तक,
वे जो भी मैटीरियल है उसको पकड़ लेते हैं। ठीक भी है। लेकिन जो भी इम्मैटीरियल है, वह पकड़ के बारह छूट जाता है। वह किसी अनुभव में आता है, तो आज अनुभव कांफ्लिक्ट में पड़ेगा। लेकिन धीरे-धीरे साइंस विकसित होती चली जाती है, और जैसे-जैसे साइंस विकसित होती है, रिलीजस एक्सपीरिएंस को प्रकट करने की भाषा भी विकसित होती जाती है। क्योंकि हमारे पास नई भाषा का सारा उपाय होता चला जाता है। सच तो यह है कि जो भी रिलीजस अनुभव हुए हैं, दुनिया में जो बड़े रिलीजस अनुभवी लोग हुए हैं, वे सब प्रि-साइंटिफिक एज में हुए हैं। उनकी सारी लैंग्वेज पोएट्री की है। उसका कारण है कि पोएट्री की ही लैंग्वेज थी, कोई दूसरी लैंग्वेज थी नहीं दुनिया में। लैंग्वेज थी पोएट्री की और जो रिलीजस अनुभव हुए, उनको पोएट्री की लैंग्वेज का उपयोग करना पड़ा।
इधर अब एक नई लैंग्वेज मैथेमेटिक्स की प्रकट हो रही है, विकसित हो रही है। सौ, दो सौ, चार सौ वर्षों में जब मैथेमेटिक्स एक लैंग्वेज बन जाएगी, पूरी लैंग्वेज बन जाएगी, तो एक सुविधा होगी कि जो लोग रिलीजस एक्सपीरिएंस की बात करें, वे फिर गणित की भाषा में कर सकें, फिजिक्स की भाषा में कर सकें, साइकोलॉजी की भाषा में कर सकें। आज साइकोलॉजी की भाषा में कुछ कहना संभव हो गया है। लेकिन साइकोलॉजी की कोई भाषा नहीं थी आज से दो सौ साल पहले।
तो मैं जो कह रहा हूं वह यह है कि अनुभव एक बात है, व्याख्या बिल्कुल दूसरी बात है। हम चारों आदमी एक ही जगह जाएं और चार व्याख्याएं लेकर लौट सकते हैं, और एक ही अनुभव हुआ हो।

प्रश्नः... आलवेज फियर इ.ज ए सोल एक्झिस्ट ऑर नॉट।... रि-इनकारनेशन... इंटरप्रिटेशन।

रि-इनकारनेशन।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, क्योंकि बुद्ध उसका ऐसा इंटरप्रिटेशन करते हैं कि सोल का एक्झिस्टेंस खतरे में पड़ जाता है। इस अर्थ में जैसा दूसरों के लिए है। बुद्ध जो कहते हैं, वे कहते हैं कि सोल जैसी कोई एनटायटी नहीं है, सिर्फ एक स्ट्रीम है, एनटायटी नहीं है। जैसे हमने रात एक दीया जलाया और सुबह हम कहते हैं, वही दीया हम बुझा रहे हैं, तो बुद्ध कहते हैं, यह झूठ है। वह दीया तो प्रतिक्षण बुझता रहा और नई ज्योति आती रही। ज्योति बदलती रही, फ्लेम बदलती चली गई। वही फ्लेम नहीं है जो आपने शाम को जलाई थी, जो सुबह आप बुझाते हैं, उसी फ्लेम की संतति है, उसी फ्लेम की संतान है। कंटिन्युटी है उसकी, लेकिन फ्लेम यह बिल्कुल दूसरी है। इस फ्लेम को पता भी नहीं है कि सांझ जो फ्लेम जली थी वह क्या थी। यह उसी की स्ट्रीम है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न-न, मेरा मतलब समझे नहीं आप। अगर हम पूछें कि वेदर फ्लेम इ.ज देयर ऑर नॉट, तो बुद्ध कहेंगे, फ्लेम इ.ज देयर, बट फ्लेम इ.ज कांस्टेंटली चेंजिंग, फ्लेम इ.ज ए कांस्टेंट कंटिन्युटी।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, यह हिंदू और जैन नहीं मानने को तैयार हैं।

प्रश्नः बट वेदर सोल इ.ज देयर।

न, न, न। नहीं समझे। इन दोनों में बुनियादी फर्क हो जाएगा। अगर आपने कहा कि सोल बदलती है, तो जैन और हिंदू कहेंगे, फिर सोल है ही नहीं। उनका कहना यह है कि फिर एनटायटी नहीं रही कोई, सिर्फ कंटिन्युटी रही। और कंटिन्युटी कोई एनटायटी नहीं है। यानी जैन और हिंदुओं का कहना यह है कि अगर...

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं समझे आप।

प्रश्नः... सोल इ.ज डाइनामिक।

न-न, कितनी ही डाइनामिक हो। अगर कंटीन्युटी है तो कंटीन्युटी टूट सकती है। और कंटिन्युटी, बुद्ध कहते हैं, टूट जाएगी। इसलिए निर्वाण के बाद सोल नहीं बचेगी। इसलिए बुद्ध यह कहते हैं कि निर्वाण का मतलब ही यह है, निर्वाण का मतलब यह होता हैः दीये का बुझ जाना। निर्वाण शब्द का भी यह मतलब हैः सी.जेशन।

प्रश्नः एक्झिस्टेंस हैज गॉन।

हां, एक्झिस्टेंस हैज गॉन।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

और ये सारी की सारी हिंदू व्याख्याएं हैं बौद्ध की। बुद्ध का जो कहना है, बुद्ध का तो कहना यह है, बुद्ध का कहना यह है, और इस अर्थों में बुद्ध का कहना बड़ा साइंटिफिक है और आने वाली साइंटिफिक एज में बुद्ध का इंटरप्रिटेशन बहुत अपील करने वाला है, और अपील कर रहा है।

प्रश्नः दिस इ.ज व्हेरी डिसअपाइटिंग।

डिसअपाइटिंग नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न-न, यही तो, हमारी जब धारणा पक्की हो जाती है तो डिसअपाइटिंग हो जाता है। मेरा कहना यह है, बुद्ध का कहना यह है कि यह सारी की सारी, जैसे कि हम, कोई भी एक चीज को ले लें। कंटिन्युटी का मतलब यह है कि कुछ चीजों से मिल कर बनी है, जैसे कि आक्सीजन और हाइड्रोजन से मिल कर पानी बना हुआ है। पानी कोई एनटायटी नहीं है। पानी कोई सत्ता नहीं है बुद्ध के हिसाब से, पानी सिर्फ संयोग है। और अगर हाइड्रोजन और आक्सीजन अलग हो जाएं तो पानी नहीं हो गया।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां-हां, तो इसलिए मार्क्स और बुद्ध में बहुत निकटता है, एकदम निकटता है। और चीन के मार्क्सिस्ट हो जाने के बुनियाद में बुद्धिज्म है। हिंदुस्तान के कम्युनिस्ट होने में बाधा है, भारी बाधा है, एकदम भारी बाधा है, और उसका कारण है कि हिंदू की जो व्याख्या है, जैन की जो व्याख्या है, वह बिल्कुल ही और है। बुद्ध की जो व्याख्या है, वह मार्क्स के निकटतम है। अगर दुनिया में मार्क्सिज्म आया, तो जो धर्म बच सकता है उसके बाद में वह बुद्धिज्म हो सकता है, न क्रिश्चिएनिटी, न इस्लाम, न हिंदू, न जैन। मार्क्सिज्म के बाद अगर दुनिया में किसी धर्म के बचने की संभावना है तो बुद्ध की है।
मैंने तो अभी मार्क्स और बुद्ध पर एक लेक्चर दिया, तो भारी उपद्रव हुआ। एक लेक्चर दिया।

प्रश्नः कहां?

अभी जबलपुर में, एक सीरिज दिया तीन लेक्चर की--मार्क्स और बुद्ध। तो मेरा तो कहना ही यह है कि बुद्ध समय के पहले आ गए। मार्क्स के बाद बुद्ध की सार्थकता है, उसके पहले नहीं है। और जिस दिन दुनिया मार्क्स को पूरी तरह समझ ले और स्वीकार कर ले, उसके बाद तो बुद्ध की स्वीकृति अनिवार्य है। बुद्ध से फिर बचा नहीं जा सकता। क्योंकि मार्क्सिज्म की स्वीकृति के बाद जो भी खोज-बीन होगी, वह बुद्धिज्म में ले जाने वाली है। और उसका कारण यह है, उसका...

प्रश्नः बुद्धिज्म इ.ज ए एस्थेटिक व्यू ऑफ लाइफ।

न, न, न। यह और दूसरी बात है। यह और दूसरी बात है। इस संबंध में नहीं जो मैं कह रहा हूं, इस संबंध में नहीं। इस संबंध में नहीं है। पच्चीस एस्पेक्ट हैं न बुद्ध के तो। पच्चीस एस्पेक्ट हैं बुद्ध के। कुछ मामलों में बिल्कुल ही मेल नहीं पड़ेगा, लेकिन बहुत बेसिक मामलों में बहुत गहरा मेल है।

प्रश्नः हि.ज व्यूज अबाउट मैरिज एण्ड लीगल पॉथ, दिस इ.ज गोइंग टु एस्थेटिक लाइफ। एण्ड मार्क्सिज्म इग्नोर द मैरिज।

न, न, न। पच्चीस बातों में भेद पड़ेंगे। और पच्चीस बातों में भेद पड़ने चाहिए, क्योंकि दो हजार साल का फासला है। क्योंकि जो भी बड़े से बड़ा आदमी भी जो कहता है, वह चाहे कितनी ही दूर की बात कहे, तो भी जिस समाज में वह जीता है, जिन धारणाओं में जीता है, जिन लोगों में जीता है, वह उसी के फार्म में सारी बात कहेगा। और बिल्कुल स्वाभाविक है कि वे सारी बातें उसमें हावी होंगी। वह बच नहीं सकता। और फिर वह अकेला कह कर चला जाता है, फिर पीछे से ट्रेडीशन बननी शुरू होती है, वह हजार बातें जोड़ती है--जोड़ती चली जाती है। जहां तक बुद्ध का व्यक्तित्व है, वह एस्थेटिक नहीं है, बिल्कुल एंटी- एस्थेटिक है, लेकिन भारत का पूरा व्यक्तित्व एस्थेटिक है। और बुद्ध के पीछे जो लोग इकट्ठे हो रहे हैं, वे सब एस्थेटिक परंपराओं से आ रहे हैं। और बुद्ध की जो व्याख्या और शास्त्र-निर्माण करने वाले हैं, वे सब ब्राह्मण हैं। अब यह बड़े मजे की बात है। महावीर और बुद्ध का सब शास्त्र-निर्माण ब्राह्मणों ने किया है। और महावीर और बुद्ध दोनों ब्राह्मण-विरोधी हैं। लेकिन इनकी जो भी शिष्य-परंपरा है, वे सब ब्राह्मण हैं। और इसलिए अनिवार्यरूपेण गड़बड़ हो जाने वाली है। क्योंकि वह कोई आपका थोड़े ही खयाल पूरा, माइंड आता है ब्राह्मणों का पीछे से साथ में। बुद्ध की शक्ल देखें, यह आदमी एस्थेटिक नहीं मालूम पड़ता। और बुद्ध की पूरी की पूरी जो धारणा--वे एक धारा में गए थे तपश्चर्या की--लेकिन वापस लौट आए।

प्रश्नः बट दैन ही लेफ्ट हि.ज वाइफ एंड चिल्ड्रन...

हां, हां, हां। यह कोई जरूरी रूप से एस्थेटिक होना नहीं होता। यह कोई जरूरी रूप से एस्थेटिक होना नहीं होता। यह तो हमारी व्याख्या है। यही मैं कहता हूं, कि हमारी व्याख्या पर निर्भर करता है कि क्या व्याख्या होती है। हम क्या व्याख्या करते हैं। एक आदमी स्त्री को इसलिए छोड़ सकता है कि स्त्री सुखद थी और वह सुख नहीं लेना चाहता है, तब तो एस्थेटिक है। और एक आदमी इसलिए स्त्री छोड़ देता है कि सुख ले लिया गया, अब कोई सुख नहीं है, तब वह कोई एस्थेटिक नहीं है। या हालत उलटी भी हो सकती है, एक आदमी स्त्री से इतना परेशान है, इतना दुख भोग रहा है कि छोड़ दे, तो एस्थेटिक नहीं है, हैड्रोनिस्ट है। यानी स्त्री छोड़ देने से कुछ तय नहीं होता न। एक स्त्री से मैं इतना परेशान हो सकता हूं कि छोड़ने में मुझे सुख मालूम पड़े। दुनिया समझेगी कि मैंने स्त्री छोड़ कर बड़ा दुख झेला। आखिर जहां तक मेरी समझ हुई, मैं तो सुखी हुआ उसको छोड़ कर। और साथ रहता तो एस्थेटिक हो जाता। मेरा मतलब समझे न? हम क्या व्याख्या करते हैं इस पर निर्भर करे।

प्रश्नः बट मैनी फॉलोअर्स अगेंस्ट द मैरिज।

न-न, मैरिज करना, नहीं करना, जरूरी रूप से एस्थेटिज्म नहीं है। सच बात
तो यह है कि अगर कोई ठीक से देखे और कोशिश करे, तो जैसा मैरिज का फार्म चलता रहा है अब तक, वह एक तपश्चर्या है, जैसा मैरिज का फार्म चलता रहा है अब तक, वह एक तपश्चर्या है, वह एस्थेटिज्म है। शादी करनी मतलब एक भारी कष्ट से और दुख से गुजरना, जैसी मैरिज रही है अब तक। सुख-वुख नहीं है, पूरा दुख है और सतत दुख है। और हो सकता है कि कोई आदमी जो सुखी रहना चाहता है इसलिए शादी न करे कि हम क्षमा चाहते हैं। वह सिर्फ बुद्धिमानी का लक्षण हो। आप मेरी बात समझे न?
और मेरी अपनी मान्यता यह है कि अभी तक शादी सुख नहीं है। अभी तक शादी सुख नहीं है। अभी तक शादी निश्चित दुख रही है। और दुख है। हां, एक दुनिया बनानी चाहिए हमें, जहां शादी भी सुख हो, लेकिन वहां शादी का हमें पूरा रूपांतरण कर देना पड़े, पूरी शादी बदल देनी पड़े। वह फ्रेंडशिप से ज्यादा

नहीं रह जाएगी, तो ही सुख हो सकती है। और जिस दिन सेक्स फन से ज्यादा नहीं होगा, तब तक सुख नहीं हो सकता।

उपासना के क्षण
नौवां प्रवचन

प्रयास रहित प्रयास

हमारा व्यक्तित्व कोई एकदम सरल चीज नहीं है, बहुत जटिल है। बहुत हिस्से हैं, बहुत पहलू हैं। और एक पहलू देखता रहे और दूसरा पहलू रोता रहे, यह भी संभव है। जैसे हम लोग कहते हैं तो ऐसा नहीं है--सजग है पूरी तरह से, साक्षी है पूरी तरह से। उसका अर्थ यह है कि उसकी पूरी चेतना जागी हुई है। लेकिन उसमें फियर रहेगा। वह मन का हिस्सा है। पुराने अनुभव हैं वे मिट गए। मिट नहीं गया, वह मौजूद है। सिर्फ वह हावी नहीं रह गया साक्षी के ऊपर। जैसे कि कल तुझे चोट लगी थी हाथ में और घाव बन गया। उसमें दर्द हो रहा है। और तू साक्षी है। इसका यह मतलब नहीं कि दर्द मिट जाएगा साक्षी होने से। साक्षी होने से दर्द और तेरे बीच में एक फासला हो जाएगा। तो ही तू यह जानेगी कि दर्द हो रहा है, लेकिन कहीं, समव्हेयर। मैं दर्द से घिरा हूं ऐसा नहीं, मैं दर्द हूं ऐसा नहीं, दर्द कहीं हो रहा है, किसी बाउंडरी लाइन पर दर्द हो रहा है।
जैसे कि हम यहां बैठे हैं, रोड से एक ट्रक जा रहा है, उसकी आवाज आ रही है, तो हम ऐसा नहीं कहते कि मैं आवाज हूं, हम कहते हैं कि वह आवाज आ रही है। वह आवाज वहां है। ट्रक और हमारे बीच आवाज का संबंध है, लेकिन हम आवाज नहीं हैं। इधर हाथ में दर्द हो रहा है, उस दर्द और हमारे बीच एक संबंध है, लेकिन दर्द हम नहीं हैं। तो यह जो प्रतीति होगी, वह जीवन की प्रत्येक संवेदना, किसी परिधि पर हो, और हम कहीं अलग कोने पर खड़े हुए हैं, बीच में कहीं खड़े हुए। यह अगर हमें दिखाई पड़ता रहे, तो दर्द मिट जाएगा ऐसा नहीं, सिर्फ उतना दर्द मिट जाएगा, जो आइडेंटिफिकेशन से पैदा होता है। वह उससे पैदा होता है कि मैं दुखी हूं, मैं दुखी हूं। इससे जो दर्द पैदा होता है वह मिट जाएगा। दर्द निपट जितना है उतना रह जाएगा। फैक्चुअल जितना है उतना रह जाएगा।
और हमारे दर्द में दस प्रतिशत सत्य है और नब्बे प्रतिशत सपना है बिल्कुल, जिसको हम पैदा किए हुए हैं। पैदा किए हुए हैं, बनाए हुए हैं, वह विदा हो जाएगा। और तब कोई व्यक्ति ऐसा कह सकता है कि मैं देख रहा हूं कि राम के हाथ में बड़ी तकलीफ हो रही। राम से मतलब, वह एक पूरी पर्सनैलिटी के लिए उपयोग कर रहा है राम का, जिसको तुम जानती हो। यह फर्क समझ लेना। जैसे राम को भूख लगी है, राम से मेरा मतलब वह सारा व्यक्ति जिसको तुम जानते हो। लेकिन इस व्यक्ति में कुछ और भी है जो नहीं, जिसको तुम जानते ही नहीं हो। जिसको सिर्फ मैं ही जानता हूं, जिसको कोई और जान ही नहीं सकता। और जब भी तुम मेरे संबंध में जानोगी तो मेरे संबंध में ही जानोगी, मुझे नहीं जान सकती हो। अब जैसे अबाउट मी। तो अबाउट मी जो कुछ है जाना हुआ, उस सबके इकट्ठे जोड़ को राम कहते हैं। वह हमारा व्यक्तित्व है। लेकिन खतरा यह है कि जो आदमी साक्षी नहीं है, वह यह जो अबाउट मी है इसको ही स्वयं समझ लेता है कि यह मैं हूं। और तब उसकी पीड़ाओं का अंत नहीं रह जाता।
साक्षी के सामने कोई मन का धारा नहीं रह जाती। लेकिन व्यक्तित्व तो
है अपनी जगह पर, पैर में कांटा गड़ेगा तो पता चलेगा। बल्कि मेरा कहना है साक्षी को तुमसे ज्यादा स्पष्ट पता चलेगा। क्योंकि उसके अनुभव की जो तीव्रता है वह बहुत तीव्र हो जाएगी, वह कुछ भी तीव्र अनुभव करेगा। इसलिए साक्षी दुख का अनुभव भी तुमसे हजार गुना ज्यादा करेगा। सुख का अनुभव भी तुमसे हजार गुना ज्यादा करेगा। स्वाद का अनुभव भी तुमसे हजार गुना ज्यादा लेगा। भूख भी लगेगी तो तुमसे हजार गुना ज्यादा भूखा होगा। क्योंकि तुम्हारा जो उलझाव है वह उलझाव नहीं होना चाहिए जो बिल्कुल साफ है, इसलिए साफ दर्पण है, उसमें चीजें और साफ दिखाई पड़ेंगी। एक दर्पण है जिस पर कि सब लीपा-पुता है, न मालूम क्या-क्या लीपा-पुता है, उसमें चीजें उतनी साफ नहीं दिखाई पड़ेंगी।
तो उसकी संवेदनशीलता बढ़ जाएगी साक्षी से, बहुत बढ़ जाएगी। लेकिन संवेदनशीलता के बढ़ जाने पर भी वह यह जान रहा है कि चीजों के पीछे एक आईना है, वह जान रहा है कि चीजें वहां कहीं हैं--यहां सिर्फ प्रतिफलन हो रहा है,

रिफ्लैक्शंस भर हो रहे हैं। ऐसा साक्षी जानता है कि घटना घट रही, हम जान रहे हैं। और तब अंतिम घटना में मृत्यु में भी वह इसी तरह खड़ा रहेगा कि राम मर रहे हैं और हम जान रहे हैं। राम, मतलब वह व्यक्ति जो कि सब लोगों ने जिसको राम समझा हुआ था। वह हाथ, वह पैर, वह आंख, वह श्वास, वह सौंदर्य, वह सब जा रहा है। वह धन, पैसा, वह व्यक्तित्व, वह इज्जत, आदर, वह सब जाते दिखाई देगा। फिर वह मरते वक्त कह सकता है कि राम मर रहे हैं और हम देख रहे, जैसा तुम देख रहे लोगों को। क्योंकि तुम इधर बाहर से देख रही हो राम को, वह इधर भीतर से देख रहा है राम को, और राम बीच में बना हुआ एक एंग्जायटी है। वह एक बीच में बनी एंग्जायटी है, वह है। और उसे पूरे साक्षीभाव से देखने पर, वह जितना फासले पर पहुंची है उतने ही फासले पर मुक्त है।
हम दोनों के बीच में एक व्यक्तित्व भी खड़ा हुआ है। तेरा भी खड़ा हुआ है। कि जब दो व्यक्ति मिलते हैं तो चार मिलते हैं, दो नहीं।

प्रश्नः दो सब्जेक्टिव हैं और दो ऑब्जेक्टिव हैं।

हां, वे दो तो हैं, और दो दोनों के बीच में जो खड़े हैं बीच में। और अक्सर मुलाकात उन दोनों में होती रहती है, ये दोनों को तो पता भी नहीं चलता, ये अलग ही रह जाते हैं। इनकी अक्सर मुलाकात हो नहीं पाती। क्योंकि जब ये दो हटें बीच से, तभी वे जो रियल आथेंटिक पर्संस हैं उनका मिलना हो, वह नहीं हो पाता।
तू मुझसे मिलने आई, तो एक पुष्पा की तेरी भी एक धारणा है कि पुष्पा को कैसे उठना, कैसे बैठना, कैसी बात करना। उसी धारणा से तू चलेगी, तो एक धारणा की पुष्पा बीच में खड़ी रहेगी निरंतर। और मेरे व्यक्तित्व की जो इमेज है, उन दोनों में बातचीत होगी। और हम दोनों कभी बात नहीं कर पाएंगे। यह तो हम तभी कर सकते हैं जब दोनों की इमेज हट जाए, दोनों साक्षी हों, दोनों इमेज को एक तरफ हटा दें, तब व्यक्तियों का मिलना होता है। और प्रेम में इसीलिए इतना सुख आता है क्योंकि प्रेम के किसी क्षण में इमेज हट जाती है और सीधे व्यक्ति आमने-सामने एनकाउंटर में पड़ जाते हैं। और कोई मतलब नहीं होता। क्योंकि जिससे हम प्रेम करते हैं उसके लिए हम सब आवरण हटा देते हैं।
ये वस्त्र जो हम पहने हुए हैं ये ही आवरण नहीं हैं। जब तक कैसे भी वस्त्र पहने हों। इसलिए प्रेम में हम नग्न हो जाते हैं। हम कोई आवरण नहीं रखते, हम जैसे हैं वैसे हैं। क्योंकि हम जानते हैं कि हमें प्रेम करता है वह वैसा ही स्वीकार कर लेगा जैसे हम हैं। जो हमें प्रेम नहीं करता, उससे हमें डर है कि हमें वैसा ही स्वीकार करेगा जैसे हम हैं? न, वह हमें जैसा स्वीकार करे वैसे बन कर हम पोज बनाते हैं। और वे पोज धीरे-धीरे थिर होते चले जाते हैं, थिर होते चले जाते हैं। आखिर में तुम खुद ही भूल जाते हो कि तुम्हारा पोज था तुम न थे। जो मिल कर चला गया वह पुष्पा न थी पुष्पा का सिर्फ पोज था। जो आया और मिला और गया। पुष्पा आई ही नहीं।
साक्षीभाव हो तो ये पोज हमें दिखाई पड़ने लगते हैं कि ये पोज हैं। तो कभी यह भी हो सकता है कि साक्षी कह सकता है कि छोड़ो-छोड़ो इसको, चलो मुझसे मिलो, उसको जाने दें, वह जो बीच में निरंतर खड़ा है। प्रेम की किसी गहरी झलक में कभी हटता है। और ऐसा लगता है कि अब धीरे-धीरे प्रेम में भी मन हटता है। संस्कृतियां जितनी मजबूत होती चली जाती हैं, आदमी जितना आगे बढ़ता जाता है, पोज मजबूत होता चला जाता है। क्योंकि पूरा कल्चर, पूरी सोसाइटी, पूरी सभ्यता पोज पर खड़ी है, पोज पर खड़ी है। भीतर के आदमी से कोई संबंध नहीं है। और हम सब एक-दूसरे को दबा कर ऐसा आग्रह भी करते हैं कि तुम जैसा हम चाहते हैं वैसे, ऐसे नहीं जैसे तुम हो।

प्रश्नः डर लगता है।

हां। लेकिन जैसे तुम हो उसी से संबंध हो सकता है। जैसे तुम नहीं उससे कोई संबंध नहीं हो सकता, क्योंकि वह तुम हो ही नहीं। वह तो सिर्फ एक्टिंग

है, उससे क्या संबंध होने वाला। लेकिन हम सब ऐसा कर रहे हैं, सब ऐसा कर रहे हैं।

प्रश्नः भयभीत होने की जो बात है न यह... भयभीत हो रहा हूं उसको देख रहा हूं। भयभीत, तो वहां जाने का मन नहीं होता है न।

न, न, न। यह व्यक्तित्व ही है, यह व्यक्तित्व ही है। यह चला गया। यह व्यक्तित्व ही--

प्रश्नः तोड़ा गया।

न, भयभीत या प्रेम या घृणा या क्रोध--सब, सब हमारे एक तल की घटनाएं हैं। जैसे समझ लो कि एक आदमी आया और तुम्हें तलवार से मार रहा है, इसमें दो स्थितियां हैं, अगर तुम यह मानती हो कि तुम अपने इस व्यक्तित्व के साथ एक हो, तो तुम्हें लगेगा कि मुझे मार डाला, मुझे मारे डाल रहा है। तब तुम्हारे भय का जो--भय तो होने ही वाला है, तब तुम्हारे भय का संवेदन तुम्हारे पूरे व्यक्तित्व को तुम्हें सबको घेर लेगा। तुम्हारे पीछे कुछ भी न बचेगा जो भयभीत नहीं हो गया। सब भयभीत हो जाएगा। फिर एक साक्षी बचती है। कोई उस पर तलवार उठाता है, तो साक्षी में भी कुछ तो मरेगा ही, तलवार कुछ तो काटेगी ही। और जो कटेगा वह भयभीत क्यों होने वाला है। गर्दन हटना चाहेगी कि कट जाएगी। लेकिन साक्षी यह देखेगा कि गर्दन हटती है, राम हटते हैं। वह यह देख रहा है, वह उसे तो पक्का ही पता है।
जैसे समझो कि एक आदमी यहां आकर घर में आग लगा दे, यज्ञपि हम घर नहीं हैं, फिर भी घर में आग लगा दे, तो घर में तो आग लगेगी ही, और एक भय व्याप्त हो ही जाएगा। लेकिन इस मकान में दो तरह के आदमी हो सकते हैं। एक आदमी चिल्लाने लगे कि मुझे आग लगा दी गई है और भागने लगे, वह यह न कहे कि मकान को आग लगा दी गई है। अगर उसने इस मकान के साथ अपनी आइडेंटिटी इतनी ज्यादा कर ली हो कि यह मकान वही हो गया हो, तो वह ऐसा चिल्लाएगा कि मुझे आग लगा दी गई है। साक्षी यह कहेगा, मकान में आग लग गई है। मेरा मतलब समझी न तुम?
हमारा एक मकान भी है जहां हम रह रहे हैं, वही हमारी पर्सनैलिटी है। और
एक "हम" भी है जो रह रहा है। लेकिन जो "हम हैं" उसका हमें कोई पता नहीं है। उसका हमें कोई पता नहीं है। उसका हमें पता ही नहीं है कि वह कौन है जो रह रहा है। और उसका हम पता भी नहीं लगाते हैं। हम अपने मकान को साज-संवार लेते हैं, उसको रंग-रोगन कर देते हैं। क्योंकि मकान दिखाई पड़ता है। सड़क पर निकलने वाले को मकान दिखाई पड़ता है, आप दिखाई नहीं पड़ते हैं। और हमारे व्यक्तित्व का मकान ऐसा है कि उसे हम, वह ऐसा मकान नहीं जिसको हम कहीं छोड़ कर चले जाते हैं, वह सदा हमारे साथ है। इसलिए हम व्यक्तित्व को ही पहले संवार लेते हैं। क्योंकि वही दिखाई पड़ता है। दूसरे की आंख में वही पकड़ में आता है। और तो कुछ पकड़ में आता नहीं। इसलिए भीतर का जो आदमी है अक्सर बिल्कुल कच्चा रह जाता है, उससे कुछ हो ही नहीं पाता। क्योंकि बाहर के रंगों में उनसे काम चल जाता। कोई जरूरत नहीं रहती उसके कुछ करने की। लेकिन जिस दिन यह पता चलेगा कि हमने दूसरे को दिखाने के लिए तैयारी की थी लेकिन हम तो इसमें चूक गए भीतर, हम कुछ खो गए। उसी दिन से धर्म की शुरुआत होती है। धर्म की शुरुआत मेरी दृष्टि में व्यक्तित्व के प्रति जाग जाने से होती है। वह जो हमने पर्सनेलिटी बना ली है उसकी समझ से होती है। और एक दिन ऐसा लगने लगता है कि कब तक मकान पोतते रहेंगे। और भी एक मजे की बात है कि जिस दिन यह खयाल आता है कब तक मकान पोतते रहेंगे? यह जो मकान को कितना ही पोतो और लोग तुम्हारे मकान की कितनी ही प्रशंसा करें, तब भी तुम जानते हो तुम्हारा उनसे कोई संबंध नहीं हुआ। वे मकान की ही प्रशंसा कर रहे हैं। इसलिए अक्सर यह होता है, अक्सर यह होता है।
मुझे कितने लोगों ने नहीं कहा होगा। कोई स्त्री मेरे पास आएगी और मुझे कहेगी कि, और जो भी मेरे पास आता है, ऐसा मुझे लगता है कि वह मेरे शरीर को ही प्रेम कर रहा है। लेकिन, और तब एकदम मन वितृष्णा से भर जाता है।

क्योंकि बहुत गहरे में हमको पता ही है कि भीतर हमारे कोई और भी है। हां, यह हो सकता है कि शरीर के द्वारा हम उसे प्रेम करें, तब स्थिति बहुत अन्यथा हो जाएगी। तब शरीर उसका ही एक्सटेंशन है फैला हुआ, बाहर तक आया हुआ। लेकिन हम पोर्च में नहीं बैठ गए हैं। हम आकर मकान को ही देखते नहीं रह गए हैं, मकान के मालिक से भी हमने कोई संबंध जोड़ा है। और अगर हमने मकान को देखा भी है तो सिर्फ इसलिए कि वह इस मालिक का मकान है। इससे ज्यादा उससे कोई मतलब न रहा। समझ में आई न तुम्हें?
लेकिन हमारा, हमारा परिचय शरीर से ज्यादा नहीं होता, व्यक्तित्व से ज्यादा नहीं होता। और दूसरा इतना भयभीत है कि वह कभी अपने को पूरा खुला नहीं छोड़ता। क्योंकि हमने इतने नियम, इतने अनुशासन, इतनी व्यवस्था आदमी के लिए मानने के लिए कही है कि जिसका कोई हिसाब नहीं। हमको सब समझाया गया है कि अगर मेरा नारायण से प्रेम है तो मुझे इन पर कभी क्रोध नहीं करना चाहिए। अब यह कैसे हो सकता है। सच बात तो यह है कि जिससे मेरा प्रेम है उस पर ही मैं क्रोध कर सकता हूं, और किस पर क्रोध करूंगा। लेकिन सिखावन यह है कि जिससे प्रेम है उस पर क्रोध मत करना। तो क्रोध को मैं पी जाऊंगा और दबा जाऊंगा और प्रेम को दिखाता रहूंगा। तो फिर मेरा प्रेम झूठा हो जाएगा। वह आथेंटिक और प्रामाणिक नहीं रह जाने वाला। क्योंकि प्रामाणिक प्रेम में वह भी आता है।
वह मित्र पूछते थे न कि कई बार ऐसा लगता है कि यह आदमी अपनी प्रेयसी को
या प्रेमी को प्रेम करता है या उसको सता रहा है। अब, हां, तुम्हें खयाल ही नहीं हो सकता, तुम्हें खयाल नहीं हो सकता। लेकिन अगर प्रेम हो तो ही खयाल में आ सकता है। और हो सकता है कि एक प्रेमी अपनी प्रेयसी के मांस में और लहू में अपनी अंगुलियां निपोड़ दे या अंगुलियां डाल दे। देखने वाले को तो यही लगेगा कि यह कैसा दुष्ट टार्चर कर रहा है, सैडिस्ट है, क्या है, यह क्यों सता रहा है, यह भी कोई प्रेम है। लेकिन अगर उन दोनों के बीच प्रेम है, वह घटना घटी है, तो वह प्रेयसी समझ पाएगी।
तो उसे पकड़ने की भीतर तक कोशिश है उसकी और शरीर तक रहने का उसका मन नहीं है। आप मेरा मतलब समझे न? हालांकि बड़ी असहाय कोशिश है, बड़ी हेल्पलेस। वह खो नहीं सकता। हम भीतर जाकर उसको पकड़ नहीं सकते। कितना ही गहरा शरीर में हाथ चला जाए, तो भी हड्डी-मांस ही हाथ में आने वाला है। लेकिन प्रेम के किसी क्षण में यह हो सकता है, यह हो सकता है। वह यह कह रहा है कि मकान नहीं, मुझे तुम तक आना है और यह मकान बार-बार बीच में आ जाता है। यह जो मकान है, यह बार-बार बीच में आ जाता और मुझे यहीं से लौट जाना पड़ता है। नहीं, इससे मैं राजी नहीं हूं।
तुम हैरान होओगे कि ऐसी भी घटनाएं हैं कि कभी किसी प्रेमी ने अपनी प्रेयसी को पहली ही रात में गर्दन दबा कर मार ही डाला। और बाहर से देखने पर यह घटना बिल्कुल ऐसी लगेगी कि यह तो हत्यारे के हाथ पड़ गई। यह क्या हुआ।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

लेकिन जरूरी नहीं है ऐसा, यह हो सकता है। इसने इतना प्रेम किया हो कि
वह शरीर के एक्सप्लोरेशन तक उसकी बात नहीं होती है कि वह शरीर के अंग की जांच-पड़ताल कर ले, वह शारीरिक ज्योग्राफी की जांच-पड़ताल कर ले। वह इतना प्रेमी रहा हो कि वह बिल्कुल भीतर चला जाना चाहा हो। और उसने कहा, तो आओ इस मकान पर, मैं तुम तक आना चाहता हूं। यह बड़ी असहाय चेष्टा है। संभव भी नहीं होती। यह कोई उपाय भी नहीं है। लेकिन यह हो सकता है। और अगर उस प्रेयसी को प्रेम रहा होगा तो मरते वक्त उसने वह शांति अनुभव की होगी, जो तुम अपनी प्रेयसी को पचास साल सेवा करके भी शांति नहीं दे सकते। क्योंकि किसी व्यक्ति ने उसे भीतर तक पहुंचने की कोशिश की है। तो मेरी दृष्टि में तो सेक्स ही असल में दूसरे व्यक्ति के भीतर प्रवेश की चेष्टा है और कुछ भी नहीं। वह उतने दूर तक जहां तक दूर तक हम इसके भीतर अंतस्तल में भी खोज कर आ सकते हैं। इसलिए प्रेम से भी सेक्स आ सकता है। लेकिन बड़ा बहुत और होगा, बहुत भिन्न होगा, बहुत ही भिन्न होगा। तो वह भी एक आंतरिक स्पर्श से

ज्यादा नहीं है। उस व्यक्ति के अंतर्तम तक स्पर्श की चेष्टा है। यानी उस व्यक्ति के शरीर से हम सहमत नहीं होना चाहते, हम और भीतर, और भीतर, और भीतर जाना चाहते हैं। मेरा मतलब समझ रहे हैं न?
यह जो पीड़ा है, यह जो सफरिंग है प्रेम की, यह बड़ी, उसकी कठिनाई बहुत है। लेकिन चूंकि हम न प्रेम करते कभी, न हमने कभी प्रेम को जाना है। हम सब प्रेम का पोज कर रहे हैं। इसमें न तो प्रेम इस तरह जग जाता, और फिर हमने सब नियम तय किए हुए हैं। यानी प्रेम में भी हमने नियम तय किए हुए हैं कि कैसे प्रेम करना। इसके लिए हमने सब इंतजाम किया। वह सब हमने फाल्स कर दिया, सब झूठा हो गया। और इस झूठ से बड़ी पीड़ा है, और बड़ी तकलीफ है।
और मेरा अपना अनुभव यह है कि जिसे हम प्रेम करते हैं अगर हम उसे क्रोध
न कर पाएं, तो हम प्रेम कर ही नहीं पाए। बल्कि कई बार तो ऐसा होगा कि तुम्हारे क्रोध की झलक में ही वह एक दफा अनुभव करेगा कि प्रेम था। क्योंकि इतने दूर से प्रेम करना पराए के लिए संभव ही नहीं है।

प्रश्नः यह साक्षी जो है इसके लिए बार-बार ये दोनों बातें आ जाती हैं
न।

वे इसलिए आ जाती हैं कि तुम दो शब्दों में एक फर्क नहीं कर पाते। एक शब्द तो अनुभव है, एक शब्द अनुभूति है। अनुभूति से तुम कभी अपने को अलग नहीं कर सकते हो क्योंकि तुम अलग होते ही नहीं हो। अनुभव से तुम अलग हो ही, तुम कभी एक होते ही नहीं हो। यह फर्क समझ लेना चाहिए।
मैं एक फूल को देख रहा हूं, और फूल के सौंदर्य में डूब गया हूं। जब मैं डूबा हुआ हूं तब मुझे जो हो रहा है वह अनुभव नहीं है, वह अनुभूति है। वहां फूल और मैं दो चीजें ही नहीं हैं।

प्रश्नः वहां यह नहीं कहूंगा कि मैं फूल का अनुभव कर रहा हूं।

न। यह तुम बाद में कहोगे जब अनुभूति अनुभव बन गई होगी। अनुभूति जब मर जाती है तो अनुभव बन जाती है। अनुभव का मतलब हैः अतीत। अनुभूति का मतलब हैः अभी, यहीं, इसी क्षण।

प्रश्नः अनुभूति की याद अनुभव है।

हां, अनुभूति की याद अनुभव है। वह अपाक मेमोरियल जैसी है। और जब मेमोरियल है तब तुम अलग हो गए फौरन। तो अनुभव से तुम सदा अलग हो।
जैसे, आज तुम कहते हो कि मैं कभी बच्चा था। इस बचपन की अनुभव से तुम अब बिल्कुल अलग हो, इससे तुम कैसे एक हो सकते हो। वह तो स्मृति हो गया। अब तुम बिल्कुल अलग हो। लेकिन जब तुम बच्चे थे, थे ही, और जब तुम बचपन की एक अनुभूति थी तब तू अलग नहीं थी।

प्रश्नः नहीं, तब वहां कोई साक्षी भी नहीं था, आप साक्षी की बातें भी कहते हैं।

साक्षी बनना है मन का। अनुभूति में मन होता ही नहीं। जो कठिनाई है, अनुभूति में मन होता ही नहीं। अनुभव ही मन है। असल में हमारे सब अनुभवों के जोड़ का नाम मन है। मन के साक्षी होना है। मन का मतलब हैः दि डेड पास्ट। वह जो अब नहीं है, था। या मन का मतलब हैः जो अभी नहीं है और होगा। अनुभूति में तो तुम साक्षी का कोई सवाल ही नहीं है। अगर अनुभूति में तुम साक्षी हुए तो अनुभूति उसी वक्त खंडित हो जाएगी, नष्ट हो जाएगी, समाप्त हो जाएगी; अनुभव बन जाएगा फौरन। यानी मैं यह कह रहा कि साक्षी तुम अनुभव के ही हो सकते हो। अगर अनुभूति में भी तुमने साक्षी होने की कोशिश की--जैसे मैं किसी को प्रेम कर रहा हूं और मुझसे गले आकर लग गया है, अगर मैंने इस वक्त साक्षी होने की कोशिश की तो गले लगने की घटना पास्ट हो जाएगी उसी वक्त।

उसी वक्त यह फिर अनुभूति नहीं रह जाएगी, यह अनुभव हो गया। यानी वह आदमी लग नहीं चुका गले, वह बात खतम हो चुकी है। अब भला हम गला एक-दूसरे का पकड़े हैं।
अगर तुम्हें यह पता चल गया कि हां मैं प्रेम कर रहा हूं, तो यह अनुभव हो गया। बात खत्म हो गई।

प्रश्नः मुझे अभी ऐसा लगा कि आप साक्षी होने को कह रहे हैं। इतने समय
से आपने ऐसी ही बात की।

नहीं, बिल्कुल भी नहीं। जो मैं कह रहा हूं वह मैं यह कह रहा हूं कि मन
के साक्षी तुम्हें होना है। और मजा यह है कि तुम करीब-करीब मन ही रह गए हो, अनुभूति तो होती नहीं, अनुभव ही हो रहे हैं। जब तुम अनुभूति में होते हो तब भी तुम वहां नहीं होते, कहीं और होते हो। जैसे एक फूल के पास तुम खड़े हो, तब तुम फूल के पास खड़े नहीं होते, हो सकता है तुम उन फूलों के पास खड़े हो गए हो जिनके पास तुम कभी खड़े हुए थे।
एक आदमी कहता है, यह गुलाब का फूल बड़ा सुंदर है, उससे कोई पूछे कि यह गुलाब का फूल बड़ा सुंदर है, ऐसा कह रहे हो। तो गुलाब के फूल सुंदर होते हैं यह धारणा और यह अनुभव बीच में आ रहा है। तो हो सकता है वह एक गुलाब के फूल के बाबत बात ही नहीं कर रहा। वह गुलाब के फूलों के बाबत उसके मन का एक अनुभव है उसकी बात कर रहा है। और हो सकता है उसे रोक कर कहो कि जरा देखो भी तो है भी कि नहीं।
एक्सपीरिएंसन अनुभूति को कह रहा हूं और एक्सपीरिएंस अनुभव को कह रहा हूं। तो जब अनुभूति मरती चली जाती है, वह इकट्ठी होती चली जाती है।
जैसे सांप चल रहा है, चलते वक्त सांप और चलना एक ही चीज है, दो चीजें नहीं हैं। यानी ऐसा नहीं है कि सांप कोई है जो चल रहा है। ऐसा है कि जो चलने की क्रिया हो रही है वही सांप है। अभी इतना ही एक, लेकिन पीछे एक रेखा छूट गई है सांप की, वह जो चला है जिस रास्ते पर। फिर लौट कर देखता है, वह रेखा के साथ एक नहीं है, बिल्कुल अलग है।
सांप के ऊपर केंचुली चढ़ी है, जुड़ी है उसके चमड़े से, तो सांप और केंचुली
दो चीजें नहीं हैं, एक ही चीज है। फिर केंचुली छूट गई है और सांप बाहर हो गया। अब वह किसी ओर से देख रहा है केंचुली को, अब केंचुली बिल्कुल अलग ही हो गई है। केंचुली की तरह है अनुभव हमारा। और मजा यह है कि अनुभव के साथ क्योंकि सुविधापूर्ण व्यवहार किया जा सकता है--क्योंकि वह डेड होता है, मरा हुआ होता है, तुम उसको जैसा चाहो उठा कर बैठा सकते हो। अनुभूति के साथ तुम ऐसा व्यवहार नहीं कर सकते। क्योंकि अनुभूति इतनी जीवंत है कि वह तुम्हें भी बहा ले जाती, तुम होते ही नहीं वहां खड़े। तो इसलिए हमने धीरे- धीरे अनुभूति की फिकर ही छोड़ दी, हम अनुभव में ही जीने लगे। सुविधापूर्ण है। मेरा मतलब समझे न? सुविधापूर्ण है।
आज में विजय को प्रेम करूं, तो पता नहीं कि वह क्या उत्तर आएगा, वह कोई पता नहीं है। उसका कोई पता नहीं कि क्या उत्तर आएगा। उत्तर बिल्कुल ही अनिश्चित है। तो मैं अनुभव में जीता हूं, मैं कहता हूं, कल प्रेम किया था, कल जो उत्तर आया था बड़ा अच्छा था, बड़ा... था। मैं उस अनुभव में जी रहा हूं जो कल आया था। और वही अपेक्षा कर रहा हूं जो वही आज भी आए।
तो तुम, ध्यान रहे, अनुभूति के लिए पुनरुक्ति का तुम कल्पना भी नहीं
कर सकते हो, सिर्फ अनुभव की पुनरुक्ति की कल्पना हो सकती है। और जो आदमी अनुभव को रिपीट करना चाहता है उसकी अनुभूति मरती चली जाती है, क्योंकि अनुभूति का रिपीटीशन नहीं हो सकता।
सच बात यह है कि मैंने अगर किसी को आज प्रेम किया है तो फिर ठीक ऐसा ही प्रेम इस पृथ्वी पर अब दुबारा मैं उसे नहीं कर सकूंगा, कर ही न सकूंगा। क्योंकि मैं भी बदल जाऊंगा, वह भी बदल जाएगा, सब बदल जाएगा। लेकिन मैं भी अपेक्षा करूंगा कि बड़ा आनंद आया, यही प्रेम फिर से करूं। वह भी अपेक्षा करेगा कि बड़ा आनंद आया कि यही प्रेम फिर से हो। तब हम अनुभव, स्मृति को दोहराते रहेंगे। और तब... हो जाएगा, तब एक झूठ हो जाएगा हमारे चारों तरफ खड़ा हुआ, जो सच नहीं है। और फिर उस झूठ में हम एक बुरी तरह घिर जाएंगे। तो उसे

करो तो रस नहीं आता, न करो तो झंझट होती है। क्योंकि लगता है कि शायद करने से रस आ जाता। एक जाल बुनता चला जाता।
अनुभूति में जो जीता है उसे तो साक्षी होने का भी सवाल नहीं है। यानी मैं तुमसे यह कह रहा हूं, जो अनुभव में जीता है उसे साक्षी होने का सवाल है। और इसीलिए सवाल है कि साक्षी के द्वारा वह अनुभव से मुक्त हो जाएगा। और जिस दिन साक्षी के द्वारा अनुभव से मुक्त हो जाएगा उस दिन साक्षी की भी कोई जरूरत नहीं रह जाती। वह तो रोज जीएगा। ऐसा भी नहीं कि देख रहा हूं, जान रहा हूं, यह कोई जीने का ढंग नहीं होता। यह जीने का ढंग नहीं हो सकता। क्योंकि तुम देखोगे, जानोगे, तो तुम जीओगे कैसे। तब वह सिर्फ जीएगा। तब वह ऐसा भी नहीं कहेगा कि राम को भूख लगी है, ऐसा भी नहीं कहेगा। तब वह भूख ही हो जाएगा। वह कहेगा कि मैं भूख हूं। वह ऐसे ही कहेगा। अनुभूति में तो वैसा ही आएगा। इसलिए साक्षी के भी ऊपर यात्रा है। साक्षी जो है सिर्फ मैथडोलॉजी है वह हमारा जो मृग का जाल बुना हुआ उसको तोड़ने के लिए। इधर सब टूट गया वह जाल, तो साक्षी को विदा कर देना पड़ेगा।
इधर मैं निरंतर सोचता हूं कि दो में साक्षी की बात है, डुआलिटी में साक्षी तक तो ले जाया जाता, नहीं तो बड़ा कठिन होता ही नहीं।

प्रश्नः एक तरफ से आप बात कर रहे हैं, जैसे गुरजिएफ का स्टॉप प्रयोग है।

हां-हां, कोई भी।

प्रश्नः बहुत ही टेंशन रहता था वह स्टॉप की जगह दो मिनट तक।

रहेगा, रहेगा, रहेगा। साक्षी, तुम अनुभव में जीते हो इसलिए। अगर कोई कहे कि मैं अनुभूति में जीता हूं, साक्षी का कोई सवाल ही नहीं, क्योंकि अनुभूति में दो नहीं होते। हो ही नहीं सकते। अगर मैं इस चांद की रोशनी में खड़ा हूं और अनुभूति कर रहा हूं, तो चांद भी दूसरा नहीं रह जाता, दूर और पास का तो सवाल ही नहीं है, चांद भी दूसरा नहीं है। सब चीजें ओवरलेपिंग हो जाती है। ऐसा नहीं रह जाता कि चांद की रोशनी चांद से आ रही है और मुझ तक आ रही है; ऐसा हो जाता है कि चांद की रोशनी भी आती है और मैं भी चांद तक जाता हूं। और ये दोनों बातें इतनी घुल-मिल जाती हैं कि कौन आ रहा है और कौन जा रहा है, इसका कोई फर्क नहीं रह जाता। वहां चांद और यहां मैं, ऐसा नहीं रह जाता, चांद और मैं और एक लंबा विस्तार दोनों का। और एक ही घेरे में दोनों हैं, जहां दो का कोई सवाल नहीं है।
असल में तो परम जो योग है वह तो साक्षी के आगे है। पर फिलहाल जो यात्रा करनी हो वह तो साक्षी की है। क्योंकि अगर हम अनुभव वाले व्यक्ति को कहें कि तुम साक्षी भी मत होओ, तो वह अनुभव के साथ ही अपने को एक समझ लेगा। और वह अनुभव के साथ एक समझ लेने से तो हम दुख उठा रहे हैं, बहुत दुख उठा रहे हैं। उसे तोड़ देना है।
असल में सब डिवाइसेस हैं। आगे-पीछे हैं, झूठी हैं। कठिनाई यह है कि एक झूठी बीमारी पकड़ रखी हो तो सच्ची दवाई का, उसका क्या किया जाए? झूठी बीमारी पकड़ी हो तो झूठी दवा उपयोग करनी पड़ेगी। और झूठी बीमारी में अगर सच्ची दवाई दी तो दोहरी बीमारी हो जाने वाली, क्योंकि दवा भी बीमारी लाएगी। झूठी बीमारी पर झूठी दवा से ही ठीक करने का उपाय है।
साक्षी जो है वह संसार नाम की जो हमारी एक झूठी बीमारी है उसको दूर करने का उपाय है। वे दोनों दूर हो जाती हैं, तो न कोई साक्षी है, न कोई साक्ष्य है; न कोई दिखाई पड़ रहा है, न कोई देखने वाला है, तब होना है, वह एक्झिस्टेंशियल है, वह सिर्फ अस्तित्व मात्र है। पर वह साक्षी के बहुत आगे की बात है। असल में साक्षी तो संसार की ही बात है। वह उसी तल पर है, उससे कुछ भी भिन्न नहीं है। सब दवाइयां बीमारी के तल पर होती हैं। स्वास्थ्य नहीं होता बीमारी के तल पर, न दवाई के तल पर, वह दोनों के बहुत बियांड होता है। दवाई और बीमारी एक ही तल पर होती हैं। दो तल पर होंगी तो

उनका तालमेल ही नहीं हो पाएगा। सब दवाइयां बीमारी के ही स्तर की होती हैं। और इसीलिए बीमारी को काट पाएंगे। लेकिन कटते से दोनों के बियांड हो जाएगी बात, और वह जो अतीत रह जाता है वह स्वास्थ्य होगा। जो एकदम से नहीं दिखाई पड़ता। सब धर्म संसार के तल पर होते हैं। जो संसार की स्थिति होती है धर्म उसी तल पर होता है, उससे भिन्न नहीं होता। क्योंकि वह उसी स्थिति को काटने के लिए तो वह आया है। अगर इस कमरे में आग लग गई हो और मैं दूसरी मंजिल पर जाकर पानी छिड़कूं, तो मैं पागल हूं। यानी अगर इस कमरे में आग लगी तो पानी मुझे इसी कमरे में छिड़कना पड़ेगा। समझ रही न तुम?
तो जिस तल पर आदमी खड़ा है--अनुभव के तल पर, वहां साक्षी का प्रयोग करना पड़ेगा। अनुभव से छुटकारा हुआ कि साक्षी से भी छुटकारा हो गया। सभी दवाइयों से छुटकारा हो जाता बीमारी से छुटकारा होने पर।
लेकिन कुछ ऐसे बीमार होते हैं--बीमारी तो चली जाती है, दवा लिए चले जाते हैं। और तब दवाई बीमारी बन जाती है। क्योंकि उनको दवा से बीमारी गई न, तो दवा भी बीमारी बन जाती है, वे उसको पकड़ लेते हैं। तो अब ऐसे लोग हैं जो साक्षी का प्रयोग कर रहे हैं, और उनके अनुभव तो विदा हो गए, लेकिन वे साक्षी को सम्हाले चले जाएंगे। क्योंकि उनको यह डर लगता है कि इसी से तो हुआ है। अब यह दूसरी बीमारी हो गई। साक्षी भी बीमारी हो गई।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

रूप-रेखा में जरा भी फर्क नहीं होता, जरा भी फर्क नहीं होता। सूक्ष्म शरीर की रूप-रेखा बिल्कुल वही होती है जो इस शरीर की है। सिर्फ एक स्वस्तिका, मद्धम, धुआं-धुआं, ठोस नहीं।

प्रश्नः साफ नहीं।

साफ नहीं। दिखाई तो भी है कि उस शरीर का जो रूप है, उसकी वजह से इस शरीर
को यह रूप मिल रहा है।

प्रश्नः वह पहले आता है।

हां, वह उसके पहले आता है, उससे यह स्थूल बनता है। वही माडल है, वही ढांचा है। उसके ऊपर बाकी सारा यह फैलाव है।

प्रश्नः अपने अंदर कुछ रेखा और प्रकाश...

बिल्कुल, वह एक जोड़ दोनों के बीच है। दोनों के बीच एक जोड़ है। वह जोड़ टूट जाए तो फिर इस शरीर में वापस लौटना असंभव है। दोनों के बीच एक, दोनों को जोड़ने वाला एक संबंध है। और वह नाभि से ही है। और इसलिए नाभि से ही मां के पेट में बच्चा जुड़ा होता है। तो नाभि जो है वह ओरिजिनल सोर्स है, जहां से जीवन हममें प्रवेश करता है। इधर शरीर वाला जीवन भी नाभि से प्रवेश करता है। इधर आत्मा वाला जीवन भी नाभि से ही प्रवेश करता है।

प्रश्नः इसलिए नाभि पर ध्यान लगाना चाहिए।

हां, नाभि पर ध्यान लगाने का बड़ा ही मूल्य है। उससे ज्यादा अच्छा सेंटर नहीं है बॉडी में ध्यान के लिए। क्योंकि वहां से निकटतम शरीर और आत्मा, वह कहना चाहिए सेतु, जहां ब्रिज है, जहां से तत्काल फासले शुरू होते हैं।

प्रश्नः नाभि, साधना में यह कहां तक उपयोगी है?

क्या?

यह नाभि?

उपयोगी तो वहीं तक है जहां तक तुम नाभि के आगे नहीं निकल जाती हो। सब सीढ़ियां वहीं तक उपयोगी हैं जब तक तुम उनके आगे नहीं निकल जाती हो। शरीर के आगे निकली कि फिर नाभि-वाभि का कोई उपयोग नहीं रह जाता, क्योंकि वह शरीर का आखिरी पड़ाव है। आखिरी पड़ाव है। पहला पड़ाव भी है, आखिरी पड़ाव भी वही है। तो जैसे ही उस पड़ाव के पीछे हट गई हो फिर कोई उपयोग नहीं रह जाता, फिर कुछ मतलब नहीं है, कोई प्रयोजन नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

असल में जो ये सारी बातें हैं न, होता क्या है कि जो अनुभव होता है उस अनुभव को प्रकट करने का बड़ा कठिनाई है। क्योंकि उस अनुभव को प्रकट करने के लिए बहुत प्रतीक और सिंबल खोजने पड़ते हैं, बहुत प्रतीक और सिंबल खोजने पड़ते हैं। असल में जब वह, जिनको हम चक्र कहते हैं, जब वे पूरी गति में होते हैं, चक्र पूरी गति में होता है, तो करीब-करीब उसकी स्थिति फ्लावर जैसी मालूम पड़ती है। फ्लावर-व्लावर नहीं होता, लेकिन जब भीतर अनुभव होता है तो ऐसा ही लगता है जैसे कोई चीज भीतर खुल गई है। अब खुल जाना जो है, वह फ्लावर की खास खूबी है। फ्लावर का मतलब यह है कि खुल जाना, फ्लावरिंग है। समझे न?

प्रश्नः खिलना।

हां, खिलना। तो भीतर एक अनुभव होता है, जब कोई सेंटर पूरी तरह से खिलता
है तो ऐसा लगता है जैसे कोई बौड़ी थी और वह खिल कर फूल बन गया। अब इसको कैसे कहो बाहर, तो बाहर उन्होंने प्रतीक बना लिया है कि कमल खिल गया। फिर अब जैसे कि वह कमल ऐसा उलटा लटका हो, तो जो पहला अनुभव चक्रों का आता है वह ऐसा ही आता है जैसे फूल उलटा लटका हो।

प्रश्नः कली की तरह।

हां। उलटा लटका हो। बंद। और जब वह खिलता है तो न केवल खिलता है बल्कि
वह उठ भी जाता है। वह खिल रहा है। वह दूसरा अनुभव जो होता है--जैसे ही चक्र सक्रिय होता है तो वह धीरे-धीरे-धीरे ऊपर उठ कर खिल जाता है।

प्रश्नः जैसे कि यह सिंबल है कि यह खिला हुआ कमल है, फूल खिला है।

वे सारे के सारे सिंबल्स जो हैं, हमारी कठिनाई यह है कि अनुभव जैसे होते हैं उन अनुभवों को बताने के लिए कोई भी उपाय नहीं है, इसलिए हम कुछ उपाय खोजते हैं। समझी न? या समझ लो कि कोई कहे कि वहां सुर्ख कमल खिला हुआ है, लाल कमल खिला हुआ है। लाल-वाल कमल वहां नहीं खिलता, लेकिन एक कमरे में अगर सब चीजें लाल पोत दी गई हों, सब चीजें लाल पोत दी गई हों, तो उस कमरे में आपको थोड़ा भिन्न मालूम पड़ेगा बजाय कमरे में सब चीजें हरी पोती गई हों। इस कमरे में तुम आई हो, तो सब लाल पूता हुआ है, खून के रंग में सब पोत दिया है, तो इस कमरे के भीतर आकर कुछ भिन्न लगेगा। इस कमरे को बिल्कुल हरा पोता गया, तो भिन्न लगेगा। तो वह जो फीलिंग होगी इस कमरे के भीतर आने की वह लाल नहीं है। लेकिन चारों तरफ लाल अगर पूता हुआ है, तो एक पर्टिकुलर फीलिंग होगी जो हरे रंग में नहीं होने वाली है। हरे रंग में दूसरी फीलिंग होगी। समझी न तू?
तो जो कमल खिलता है उस वक्त अगर ऐसी फीलिंग होती है जैसी फीलिंग कि लाल चीजों से घिर कर हो जाए, तो वह एक--जिसको अनुभव हुआ वह कहेगा कि लाल कमल खिला। अब यह लाल कमल में गलती हो जाएगी। क्योंकि लाल कमल नहीं खिला है

कहीं कोई, लेकिन फीलिंग ऐसी होगी जैसे कि लाल रंग से घिर गए हों। अब सब रंगों का अलग स्थिति है।
तुम जंगल में जाती हो और हरा विस्तार देख कर तुम जो आनंदित होते हो, हरे का उसमें कुछ संबंध है। थोड़ा कल्पना करो कि ये सब वृक्ष लाल हैं और सब पत्तियां लाल हैं और सब फूल लाल हैं और सारा का सारा टेसू का जंगल है, तो तुम्हारे मस्तिष्क पर बड़ा खिंचाव का असर पड़ेगा। रिलैक्शन नहीं होगा, टेंस हो जाएगा। मेरा मतलब समझ रही तू? लाल रंग का परिणाम टेंस होगा। हरे रंग का परिणाम रिलैक्शन होगा। इसलिए सभी क्रांति वाले लोग लाल झंडा चुन लेते हैं, वह अकारण नहीं है। वह जो रंग है वह अकारण नहीं है। इस्लाम ने हरा झंडा चुना, क्योंकि इस्लाम शब्द का मतलब शांति होता है। शांति नहीं आई उससे वह दूसरी बात है, लेकिन झंडा हरा चुना। हरा चुनने का कुल कारण इतना था कि सबसे ज्यादा शांतिदायी रंग वही है, सबसे पीसफुल। इस्लाम शब्द का मतलब भी होता हैः पीस। शब्द का भी। उसका मतलब भी शांति होता है। इसलिए वह हरा रंग चुन लिया। उसको चुनने का कारण था।
तो भीतर तुम जब जाओ, तो भीतर बहुत सी घटनाएं घटनी शुरू होती हैं, जिनको
कि कैसे प्रकट करो। उनको प्रकट करना मुश्किल है।
जापान में उन्होंने हाइकू विकसित किए हैं--कविता का एक रूप है। हाइकू, नारायण पढ़ते हो? हाइकू पढ़ने चाहिए। मेरे हिसाब से कवि के दिलों में जब काव्य विकसित होगा, तो हाइकू जैसा हो जाएगा। तो वह जब तुम महाकाव्य पढ़ते हो, तो महाकाव्य में मुश्किल से दस-पांच पंक्तियां उस काव्य की होंगी, बाकी तो सब कचरा होगा। हो ही नहीं सकता। तो जिस काव्य--इतनी गहरी अनुभूति है कि कोई रामायण में थोड़े ही हो सकता है कि रामायण में काव्य होगा। इतने बड़े ग्रंथ में वह हो नहीं सकता। उसमें तो पुनरुक्ति और शब्दों का खेल और जाल और तुकबंदी होगी।
हाइकू का मतलब है कि हमने सब छोड़ दिया सिर्फ काव्य बचा लिया। वह दो- तीन-चार पंक्तियों में पूरा हो जाएगा। सब नॉन-एसेंशियल हटा दिया, सिर्फ काव्य ही बचा लिया बस, वह एसेंशियल जिसको छोड़ ही नहीं सकते।
अब हाइकू बड़े अजीब होते हैं, और बड़े--लेकिन उनकी फीलिंग का भी मैं खयाल बना कर ही कह रहा हूं। अब एक हाइकू है, अब क्या करे कवि, अब जिसको यह अनुभव हुआ वह बड़ी मुश्किल में पड़ गया, वह क्या करे! वह कहता हैः "एक छोटा सा तालाब है, एक मेंढक का आना, छप-छपाक कूद जाना, सब शांति है।" इसका मतलब क्या हुआ? एक तालाब, एक मेढक का आना, छप-छपाक कूद जाना, सब शांति है, टोटल साइलेंस है। अब किसी ने अगर कभी किसी तालाब के किनारे मेढक को कूदते देखा है, और फिर सब ओर सब शांत हो जाना।
तो जिस फकीर ने यह हाइकू लिखा है, वह कहता है, ऐसा ही हुआ। जब हम उस किनारे पर पहुंचे, परमात्मा के किनारे पर पहुंचे, ऐसा ही हुआ। एक आदमी का आना, छप-छपाक, सब शांति है। वह क्या करे! तो उसने एक चित्र भी बनाया--वह एक मेढक का बैठना और एक तालाब। मगर अब वह बड़ी कठिनाई है। वह ठीक कह रहा है, वह कह रहा है कि सब शांत हो गया। न मेढक का फिर कोई पता है, न कोई आवाज है, न कुछ है। सिर्फ सरोवर रह गया और सब शांति है।
अब मैं मानता हूं कि जब भी काव्य विकसित होगा, तो वह हाइकू के करीब आता चला जाएगा। अगर बड़ी-बड़ी कविताएं होती हों मुल्क में, तो समझना की काव्य नहीं है। छोटी-मोटी, बड़ी कविता लिखनी मुश्किल है। तो तुकबंदी उसमें होने ही वाली है, उसमें तुम फैलाव का... इतना ही काव्य, उतना बहुमूल्य, तो उतने ही छोटे हैं।
जापान में एक फूल होता है, वह बिल्कुल सामान्य फूल है। जो ऐसे ही सड़क
के किनारे या कहीं भी हो जाता है। ऐसे ही नदी के किनारे, ऐसे ही वह उग आता है। कुछ नाम है उसका। एक फकीर का एक हाइकू है कि एक फकीर निकल रहा है, सड़क पर खड़ा हो गया है। नजिना या कुछ ऐसा नाम है उस फूल का। तो उसकी चार-पांच पंक्तियां हैं। वह कहता हैः "चौंक कर खड़ा हो जाना, नजिने का दिखाई पड़ना जिंदगी में पहली बार, अरे, तुम भी थे? वह उससे पूछता है, लेकिन तुम इतने ज्यादा थे कि देख नहीं पाया।" तो नजिना इतना सामान्य फूल है कि उसे कभी किसी ने देखा ही नहीं, क्योंकि जंगल में वह खिलता ही नहीं, वह तो उगता ही

रहता है, उगता ही रहता है। तो वह यह कहता है कि मुझे पता ही नहीं था कि नजिना का फूल भी होता है। क्योंकि वह इतना ज्यादा था, उसे पता ही न चला। फिर वह हाइकू का दूसरा हिस्सा, जिसमें वह कहता है, ऐसा ही हुआ परमात्मा के साथ। तुम इतने ज्यादा थे, तुम इतने सब तरफ थे कि पता ही नहीं चला। एक दिन जब जाना तो पूछा, अरे तुम भी थे नजिने के फूल? बड़ा सामान्य फूल--तो तुम भी थे? लेकिन नजिने का फूल तो कितना ही हो, फिर भी थोड़ा ही है, परमात्मा तो इतना, इतना है कि वह ठस-ठस कर वही है। उसको कहने का कोई उपाय नहीं है कि वह न हो। वह कहने लगा कि नजिने के फूल को जब पहली दफा पहचाना तब मुझे खयाल आया कि अरे बड़ी भूल हो गई। जो सामान्य है वह भूल जाता है, जो निकट है वह भूल जाता है। अब उसने कहा जो दूसरी बात जो कहना चाहता है कि अरे परमात्मा तुम भी थे, तुमको कभी जाना न, नजिने के फूल, वह परमात्मा को नजिने का फूल कह रहा है। अब यह आदमी क्या करे। पर इसने समझा दिया, इसने बात समझा दी कि इतना कॉमन फ्लावर है, इसे कोई देखता ही नहीं। वह कौन काहे के लिए देखेगा। अन्य कॉमन को कोई देखता है।
कई दफे मैं सोचता हूं कि जिसको हम कुरूपता कहते हैं, वह सिर्फ कॉमननेस है। और जिसको हम सौंदर्य कहते हैं, वह सिर्फ अनकॉमन है, और कोई मतलब नहीं है। और कोई भी मतलब नहीं है। वह जो कॉमन है वह इतना ज्यादा है, वह दिखाई नहीं पड़ता। जो अनकॉमन है वह दिखाई पड़ता है। अब परमात्मा से ज्यादा कॉमन क्या होगा, क्योंकि वह बिल्कुल दिखाई नहीं पड़ता ही नहीं, पड़ता ही नहीं, पड़ता ही नहीं। वह कहता है कि मैं तीस साल से इसी रास्ते पर निकलता, कितनी बार नहीं गुजरा इस पुल के पास से, और तुम हमेशा-हमेशा खिले थे। वह बारह ही महीने खिलता है फूल, वह कभी ऐसा नहीं कि कभी-कभी खिलता हो। तुम हमेशा-हमेशा खिले थे। क्या हुआ कि मैं तुमको देख नहीं पाया? और आज छिटक कर रुक जाना और तुम्हारा दिख जाना।
ये तो जो कठिनाइयां भीतर की हैं वे कठिनाइयां ऐसी हैं कि उनको जब कोई जाने तो उनको कैसे कहे? और जब वह कहने चले तो वह प्रतीक लाएगा। और प्रतीक लाए, तो मुश्किल शुरू हो गई, कठिनाई शुरू हो गई। और फिर कोई आए तो फिर बहुत मुश्किल हो जाएगी।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं)

वे हैं न, कलर्स हैं। क्योंकि हर सेंटर के पास तुम्हें भिन्न अनुभव होगा। बहुत भिन्न अनुभव होगा।

प्रश्नः माइंड में एक्झिबीशन है या रियलिटी है?

न-न, रियलिटी है, बिल्कुल रियलिटी है, बिल्कुल रियलिटी है। असल में हमें कोई भी प्रतीति हो तो हम उसको इंद्रिय की भाषा में कैसे लाएं? प्रतीति होती है इंद्रिय की भाषा के बाहर। और सब भाषा इंद्रिय की हैं। सब शब्द इंद्रिय के हैं, उसी ने बनाए हैं। हम कैसे, हम कैसे उसको लाएं? उसको लाना बहुत कठिन है। तो हम राक्षस को काले रंग में पेंट कर लेते हैं, और क्या करें!

प्रश्नः रास्ता ही नहीं दूसरा।

हां, कोई रास्ता नहीं है। वह ऐसा जरूरी नहीं कि राक्षस काले ही हों, गोरे भी बहुत राक्षस हो सकते हैं। लेकिन जो, हम उसको पेंट जब करेंगे, तो हम उसे काला ही पेंट करेंगे। तो जो काले रंग के साथ हमारा एक भय का अनुभव है, और कुछ मतलब नहीं ज्यादा। अंधेरे के साथ, काले के साथ भय का एक अनुभव है। अंधेर में जाएं या काले में जाएं, भयभीत हो रहे हैं। तो किसी आदमी के पास अगर हमें भय मालूम होने लगे, तो वह कितना ही गोरा हो, उसको हम काला ही पेंट करेंगे। मेरा मतलब समझ रहे तुम? एक आदमी की रियलिटी से संबंध नहीं है, हमारी जो फीलिंग हो रही है, हमको ऐसा लग रहा है कि जैसे अंधेरे से घिर गए।

अब रावण कोई काला आदमी था ऐसा नहीं है, मैं सोचता हूं, उस जमाने के सुंदरतम लोगों में से एक था। लेकिन वह जिनसे झगड़ा चल रहा था उनके लिए बिल्कुल अंधेरा जैसा हो गया था।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

असल बात यह है, वहां कोई कलर थोड़े ही है। मैं तुमसे जो कह रहा हूं तुम नहीं समझ पा रही हो। वहां कोई कलर नहीं है।

प्रश्नः प्रोजेक्शन है।

न, प्रोजेक्शन भी नहीं है, वहां एक अनुभव है। और अनुभव को प्रकट करने
के लिए कलर लाना पड़ता है। समझी न? तो फर्क पड़ेगा। डिफाइनेबल हो।
एक रेगिस्तान में रहने वाला आदमी जिसने हरियाली देखी ही नहीं। एक रेगिस्तान में रहने वाला आदमी जिसने हरियाली देखी ही नहीं। जिसने वहां जलता हुआ रेगिस्तान ही देखा। अगर इसको वह अनुभव हो तो इसको हरे रंग का अनुभव नहीं हो सकता वहां। इसको तो रेगिस्तान से संबंधित कोई अनुभव होगा। इसको रात का अनुभव होगा, तारों का अनुभव होगा, यह हो सकता है। ठंडी रेत का अनुभव होगा, यह हो सकता है। यानी यह कहे कि ठंडी रेत है, तारे हैं।
अब इस्लाम में तारों का जो इतना उपयोग है उसका और कोई मतलब नहीं, क्योंकि दिन तो बड़ा बेहूदा है, रात ही भर अच्छी है। इस मुल्क में हम रात की बहुत फिकर नहीं करते, दिन इतना सुंदर है कि हमारा बहुत-कुछ सूरज के उगने के साथ जुड़ा हुआ है। हम सूरज को भगवान बनाए हुए हैं। रेगिस्तान का आदमी सूरज को भगवान नहीं बना सकता। वह कैसे बनाएगा? मेरा मतलब समझी न तुम? वह तो एक-एक अनुभव की बात है। अब जिस आदमी ने कभी आकाश को छूते दरख्त नहीं देखे, ऐसी जमीन पर आए जहां छोटी झाड़ी होती है, उसके लिए कोई अनुभव होगा तो वह आकाश के छोटे दरख्तों में प्रकट होना बहुत मुश्किल है। लेकिन किसी दूसरे को हो सकता है कि जो आकाश के छोटे दरख्तों के पास जो रहा है, वह उसकी कोई अनुभूति हो, उसमें प्रकट कर सकता है। क्योंकि प्रतीक तो हम बाहर की दुनिया से लाते हैं। और इसलिए दुनिया भर के सब धर्मों में रंगों, प्रतीकों, सबका फर्क पड़ गया है।
अब ऐसे मुल्क हैं जहां कमल का फूल ही नहीं होता, करोगे क्या। वहां के आदमी को कमल के फूल का पता ही नहीं है। तो वह कैसे अनुभव कर ले कि चक्र जो है वह कमल का फूल है। कमल का फूल तो होना चाहिए कम से कम। बाहर वह कोई और कुछ चुनेगा, वह अपना उसका चुनाव होगा, वह हम नहीं जानते कि वह क्या चुनेगा।
वह उसकी दुनिया में जो कमल के फूल के निकट पड़ता होगा वह उसको चुन लेगा।
लेकिन मूढ़ तो लड़ जाएंगे, वे तो झगड़े पर खड़े हो जाएंगे।
तो इतना सख्त नहीं होना चाहिए, काव्य के साथ सख्त नहीं होना चाहिए।
क्योंकि काव्य कोई गणित नहीं है। और इतने भिन्न-भिन्न अनुभव होते हैं।
अब जैसे कि, अब जिसने भी पूछा है जिसका मामला है, कि जो धर्म रेगिस्तान में पैदा हुए उनका परमात्मा बहुत क्रुद्ध है और बहुत बदला लेने वाला है। जो भी धर्म। जैसे कि यहूदी या मुसलमान, उनका परमात्मा बिल्कुल आग की लपट है। जरा गड़बड़ की तो भून कर रख दूंगा, वह ऐसी घोषणा करता है। वह ऐसी घोषणा करता है कि भून कर रख दूंगा, उधेड़ दूंगा, गांव बरबाद कर दूंगा, आग फैला दूंगा, वह ऐसी बातें करता है। उन्हें कोई भगवान से लेना-देना नहीं है, लेकिन वह जो आदमी रेगिस्तान में रहता है उसका सबसे बड़ा भय यही है, वह इसी भाषा में सोच सकता है। वह इसी भाषा में सोच सकता है। वह कभी जाकर नहीं कहता, जैसा कि समझो कि हिंदुस्तान का है, वेद का ऋषि है--अगर भगवान उसका नाराज होता है तो वह जैसे बिजली कोंदती है उस तरह प्रकट होता है। वहां रेगिस्तान में कहां बिजली कोंदेगी। तो उसका जो भगवान है वह बिजली उत्ताप है, वह डरवा देगा बिजली कोंदा कर। इतना पानी गिराएगा, इतना पुर लाएगा कि डूब जाओगे, बरबाद हो जाओगे। लेकिन अगर रेगिस्तान का भगवान कहे कि इतना पानी लाऊंगा, तो लोग बड़े प्रसन्न हो जाएंगे कि क्या बात कर रहे हैं आप, यह

तो बहुत ही अच्छा, आप नाराज हो जाएं और पानी ले आएं। तो भगवान तो कुछ कर नहीं रहा है। लेकिन रेगिस्तान में रहने वाले के अपने अनुभव ही प्रकट होंगे। अपने अनुभव ही प्रकट होंगे।
अब वह रेगिस्तान में जो-जो लोग होंगे, उनकी अपनी दृष्टियां बन जाएंगी, अपनी धारणाएं बन जाएंगी। और उन दृष्टियों और धारणाओं के हिसाब से वह सारा का सारा सिंबल होगा, प्रतीक होगा, किताब होगी। एक जंगल में रहने वाली कौम का और किताब होगी, और प्रतीक होगा। नदी पर रहने वाली कौम का और प्रतीक होगा। समुद्र के किनारे रहने वाली का और प्रतीक होगा। और हम कभी उनमें तालमेल न बिठा पाएंगे। और मैं कहता हूं, तालमेल बिठाना भी क्यों। अगर इतनी समझ से उठी हो तो खयाल में आ जाएगा कि तालमेल बिठालने की कोई जरूरत नहीं है, कोई जरूरत नहीं है।

अभी मैं लुधयाना था, तो किसी व्यक्ति ने एक प्रश्न लिख कर भेजा। कुछ प्रश्न आए थे, जिसमें एक प्रश्न पूछा था, उसने पूछा था कि मैंने सुना है कि जो ज्ञान को उपलब्ध हो जाता है वह सागर की भांति शांत हो जाता है। तो मैंने उसको कहा कि मालूम होता है तुमने सागर नहीं देखा। तुमने सागर नहीं देखा। तो उसने कहाः मैंने नहीं देखा। तो मैंने कहा कि तुम सागर की भांति शांत, तुमको खयाल नहीं सागर का, सागर और कहां शांति। वहां तो तुमुल-नाद चलता है पूरे समय। वहां तो उसमें... चल रहा है पूरे समय, वहां कहां शांति। तुम कहां से सीखे हो? उसने कहाः मैंने सागर देखा ही नहीं। पहले तुम्हें सागर की भांति शांति... तुमको थोड़ा सोच कर पूछना चाहिए, ऐसा नहीं हो जाता।
होता क्या है कि वे हमारे सारे प्रतीक तो हम जहां हैं, जो हमने जाना है, जो हमने देखा है वहां से आते हैं। वहीं से आते हैं। और हमको खयाल में भी नहीं रहता, दूसरे प्रतीक तो हमें खयाल में भी नहीं रहते। और वह उनकी वजह से बहुत भेद पड़ता है।
अनुभव वही है, अनुभव में कोई भेद नहीं है। अनुभव वही है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

उतने जोर से चल रहा है कि कोई नहीं चलता, लेकिन...

प्रश्नः बहुत चल रहा है तो अच्छा लगता है न।

बहुत चल रहा है, लेकिन उसके चलने का विस्तार इतना बड़ा है कि कहीं खयाल में न आता है, बहुत चल रहा है।
जिंदगी को गणित की भांति से--हम ऐसा सोचते हैं कि जिंदगी कोई गणित की भांति है, कोई सीधी रेखा है। यानी हम ऐसा सोचते हों कि कभी एक रास्ते पर चले हों, वह रास्ता कभी बाएं मुड़ता है, कभी दाएं मुड़ता है, तो हम कहते हैं, यह रास्ता कैसा है। पहले तो बाएं मुड़ा था, फिर दाएं मुड़ गया और फिर बाएं मुड़ने लगा, यह रास्ता कैसा है। एक रास्ता तो ऐसा होता है कि सीधा ही सीधा चला जाता है, कहीं मुड़ता ही नहीं। कोई रास्ता ऐसा होता है कि हजार मोड़ लेता है, फिर भी कहीं जाता है। वह भी जाता है कहीं, सीधा रास्ता भी जाता है, वह भी जाता है। जिंदगी में कोई रास्ता सीधा नहीं है, हो भी नहीं सकता। और जिस दिन हो जाएगा उस दिन जिंदगी झेलना मुश्किल हो जाएगी, बहुत घबड़ाने वाला हो जाएगा।
तुम एक कल्पना करो एक सीधे रास्ते की कि मन के इस कोने से उस कोने तक आर-पार जाता हो। बिल्कुल सीधा हो जिस पर कोई मोड़ न हो। जिस पर सब दरख्त एक ही रंग के हों, एक ही ऊंचाई के हों, एक ही ढंग के हों। जिसमें सब तरफ एक से पेट्रोल पंप आते हों, और जिस पर दिन-रात गाड़ियां दौड़ती रहती हों--मैं वह इनसे कह रहा हूं, यह रास्ता मन के लिए घबड़ाने वाला हो जाएगा। जिंदगी ने बड़ी तरकीब रखी है कि तुम्हें कभी भी वह मोनोटोनस और घबड़ाने वाली न हो जाए। जिंदगी में सब विरोधों का उपयोग किया है। और मैं जो बात कर रहा हूं, मेरी दृष्टि में अब तक जिनको हम धार्मिक शिक्षक कहते रहे हैं उन्होंने भी गणित

के साथ तालमेल बिठालने की कोशिश की है, जिंदगी के साथ तालमेल बिठालने की कोशिश नहीं की है। तो अगर वे एक बात पकड़ लेते हैं तो फिर उस संदर्भ की ही बात पकड़ते चले जाते हैं। उससे विपरीत और भिन्न का वे निषेध करते चले जाते हैं।
लेकिन मेरा मानना ऐसा है कि जिंदगी इतनी अदभुत है कि जिसका हम विरोध
कर रहे हैं वह भी किसी अर्थों में उससे जुड़ा ही होता है जिसका हम समर्थन कर रहे हैं। यानी जब हम यह कहते हैं कि कोई तकलीफ नहीं है, उनका फिर कोई मेथड नहीं है। जब हम यह कहते हैं कि कोई विधि नहीं है पहुंचने की परमात्मा तक। अगर हम बहुत गौर से देखें, तो यह भी एक विधि है, यह भी एक विधि है। यह भी पहुंचने की विधि है। जिसका नाम नो-मेथड होगा। वह निगेटिव मेथड होगा। इसमें झेन फकीरों ने बहुत अच्छा किया। वे कहते हैं, एफर्ट लेस एफर्ट। वे बिल्कुल उलटे शब्दों का... लेकर आते हैं। वे कहते है, एफर्ट लेस एफर्ट, प्रयत्न रहित प्रयत्न। अब तुम कहोगे कि दोनों बातें किससे कह रहे हो? तो वे कहते हैं कि दोनों... पड़ी हुई हैं। क्योंकि बहुत लोग हैं जो कोई भी प्रयत्न नहीं कर रहे हैं नहीं पहुंचने के। और बहुत लोग हैं जो प्रयत्न कर रहे हैं और नहीं पहुंचे हैं, अब हम क्या करें?
अगर हम यह कहें कि कोई प्रयत्न की जरूरत नहीं है, तो लोग कहते हैं, फिर ठीक है, तो हम कर ही कहां रहे हैं प्रयत्न। तो हम पहुंच जाएंगे? तो वह झेन फकीर कहता है, तुम न पहुंचोगे। फिर एक आदमी कहता है कि हम तो बहुत प्रयत्न कर रहे हैं। और झेन फकीर कहता है, तुम भी न पहुंचोगे। तब सवाल उठता है कि फिर पहुंचेंगे कैसे? तो वह यह कहता है कि तुम ऐसा भी कर सकते हो, तुम इफर्ट ऐसे करो जैसे कि नहीं कर रहे हो। इसको समझना बड़ा मुश्किल हो जाएगा। वह यह कहता है कि तुम इस तरह चलो जैसे नहीं चल रहे हो। इस तरह चलो कि चलना भी हो रहा है और कोई नहीं भी चल रहा है। इस तरह बोलो कि जैसे नहीं बोल रहे हो। उधर बोलना भी हो रहा है और भीतर एक अबोला भी बैठा हुआ है। तुम इस तरह खाना खाओ जैसे कि उपवास कर रहे हो। या खाना भी खा रहे हो लेकिन फिर खाने का कोई पागलपन भी नहीं है। मेरा मतलब समझे न तुम? तो जब विरोधी... और जिंदगी ऐसी ही है, कि यहां अगर तुम दोनों विरोधियों के बीच में कोई सेतु नहीं खोज पाए, तो तुम कहीं से भी भटक जाओगे।
गुरजिएफ का शिष्य भी भटकता है, क्योंकि वह एक मेथड को पकड़ लेता है। वह
यह कहता है कि यह मेथड करेंगे तो सब हो जाएगा। जिंदगी इतनी बड़ी है कि किसी मेथड से नहीं हो सकता। कृष्णमूर्ति का भक्त भी भटकता है, वह कहता है कि मेथड न पकड़ो और सब हो जाएगा। जिंदगी इतनी बड़ी है कि मेथड को न पकड़ो तो भी कुछ नहीं होता।
और जो मैं कह रहा हूं, वह बुनियादी रूप से इन दोनों से भिन्न है। मैं
यह कह रहा हूं कि मेथड को कुछ ऐसे पकड़ो जैसे कि मेथड न हो।
हेरिगन गया जापान, तो वहां वह धनुर्विद्या सीखता था। तीन साल सीख कर परेशान हो गया, फिर उसके गुरु ने कहा कि तुम जाओ, तुमसे यह नहीं हो सकेगा, क्योंकि हम थक गए, परेशान हो गए तुम्हारे साथ। हम तुमसे कहते हैं कि तीर इस तरह चलाओ जैसे कि नहीं चला रहे हो। और तुम जब भी तीर चलाते तो तीर चलाते हो। वह हेरिगन कहता है, मेरा निशाना पूरा लगने लगा, निशाना एक नहीं चूकता, सौ प्रतिशत निशाने मारता हूं, अब और क्या चाहिए?
वह उसका फकीर गुरु कहता है कि जब निशाने से हमें मतलब नहीं, तुम एक न मारो; हमारा गोल निशाने पर नहीं, तुम पर है। वह यह कहता है कि हमारा निशाना तुम पर है। वह कहता है, जब मेरा निशाना ठीक लग जाता है तो फिर मेरे पीछे क्यों पड़े हो! और गुरु कहता है कि मैं तुझे सर्टिफिकेट भी न दूंगा, तू बिल्कुल असफल हो गया। तेरा निशाना लग जाता है यह सच, लेकिन तेरी नजर निशाने पर है, हमारी नजर तुझ पर है। निशाना तो लग रहा है, तू चूका जा रहा है। हमें निशाने से क्या मतलब है। हम तो तुझे यह सिखाना चाहते हैं कि धनुष ऐसे भी चलाया जा सकता है कि जिसमें कि तू चलाने वाला नहीं है, धनुष चलता है, इट हैपंस। हैपनिंग होनी चाहिए। हां, धनुष उठ गया है, धनुष चढ़ गया है, धनुष चल गया है, तू बीच में क्यों आ जाता है बार-बार? वह आदमी कहता है कि मैं नहीं आऊंगा तो धनुष उठेगा कैसे? धनुष चढ़ेगा कैसे? आप कैसे पागलपन की

एब्सर्ड बातें करते हैं आप? मुझे तो आना ही पड़ेगा। और गुरु कहता है, जब तक तू आता रहेगा, जब तक यह डूइंग होगी, हैपनिंग न होगी। तब तक यह कृत्य होगा, एक घटना न होगी। और हमें तेरे तीर से कोई मतलब नहीं है। यह तो तू पश्चिम में सीख सकता था। यह चलाना, निशाना लगाना कहीं भी सीख सकता था। हम तो कुछ और सिखाना चाहते थे, हम तो ऐसा सिखाना चाहते थे कि तीर चले, तुझसे चले और फिर भी तू न हो, तेरी गैर-मौजूदगी हो, तेरी प्रेजेंस न हो। तू नहीं होना चाहिए, बीच-बीच में तू क्यों आ जाता है बार-बार, यह तीर काफी है।
आखिर वह घबड़ा गया, उसने कहा कि कम से कम इतना सर्टिफिकेट तो मुझे दे दें कि मैं जर्मनी में दिखा सकूं कि हां मैंने किसी से आर्चरी सीखी थी। उसने कहाः मैं नहीं दे सकता हूं। इतना ही लिख सकता हूं कि यह आदमी तीन साल मेरे पास था, लेकिन सफल नहीं हो पाया। निशाना इसका लगने लगा, निशाने में बड़ा कुशल हो गया, लेकिन वह कुशलता नहीं आ पाई जिस कुशलता के लिए हम यहां बैठे हैं जानने के लिए।
आखिरी दिन आ गया और उसने कहा कि कल मैं जाऊंगा, जाते वक्त आऊंगा, आशीर्वाद दे दें और मैं चला जाऊंगा। वह दूसरे दिन सुबह गया, वह दूसरे विद्यार्थियों को वह गुरु सिखा रहा है मैदान में। वह जाकर बेंच पर बैठ गया। आज सीखने का कोई सवाल ही नहीं, आज आखिरी दिन, आज विदाई है। क्षमा मांगने आया है कि भूल हुई, तीन साल आपको तकलीफ दी, कुछ हो नहीं सका। आज वह बेंच पर बैठा हुआ है चुपचाप, आज उसे चलाने का कोई सवाल नहीं है। आज वह है ही नहीं। आज वह एफर्ट जो चलाने का तीन साल से था और वह अहंकार कि मुझे चला कर जीत कर जाना ही है, सफल होकर जाना है, वह कोई भी नहीं है, आज सब टूट गया, सब खत्म हो गया। वह बेंच पर बैठा है चुपचाप, दूसरे शिष्य चला रहे हैं। फिर वह एक शिष्य को उसका गुरु उठा कर तीर चलाना सिखाता है। वह कहता है, ऐसे चला। वह तीर उठाता है, वह तीर फेंकता है, वह तीर चलता है, और अचानक उस हेरिगल को दिखता है कि अरे, यह बात मुझे अब तक दिखाई क्यों न पड़ी? यह आदमी बिल्कुल मौजूद नहीं है। वह जाता है, वह गुरु के हाथ से धनुषबाण ले लेता है, खींचता है, चला देता है, और गुरु उसकी पीठ ठोंकता है। सर्टिफिकेट लिख कर रखा था वह फाड़ देता है। वह कहता है, वह काम हो गया। तीर चला, चलाया नहीं गया। तू आया ऐसे जैसे न हो, तू था ही नहीं, बस इतनी तो मेहनत थी। और मैं सोचता था शायद आखिरी-आखिरी दिन हो जाए। क्योंकि जब तक तू कोशिश में लगा है, तब कैसे होगा। तो जब हम यह कहते हैं, जब मैं यह कहता हूं, मैं निरंतर दोनों की बात कर रहा हूं। मैं निरंतर दोनों की बात कर रहा हूं और उस खयाल से कर रहा हूं कि मैं यह कहता हूं कि मेथड जरूरी है और मेथड से कोई कभी पहुंचता नहीं। तो मैं इनसे कह रहा हूं कि मेथड जरूरी है और मेथड से कोई कभी पहुंचता नहीं। साधना जरूरी है और साधना से कोई कभी सिद्ध नहीं हुआ। अभ्यास जरूरी है और अभ्यास से तुम कुछ न पा सकोगे।
और जब मैं यह कहता हूं तो मेरा मतलब यह है कि अभ्यास करना लेकिन अभ्यासी को छोड़ देना। जब मैं यह कहता हूं तो मैं यह कहता हूं, तुम प्रयास करना, लेकिन वह जो प्रयास की वजह से अहंकार भीतर घनीभूत हो जाता है वह न हो, तो प्रयास रहित प्रयास हो जाएगा, एफर्ट लेस एफर्ट हो जाएगा। और इसलिए मुझे दोनों ही बातें करनी पड़ेंगी। क्योंकि मेरा अनुभव यह है कि दोनों बातें हमेशा हो चुकी हैं लेकिन वह एक-एक तरफ से हुई है। तो कृष्णमूर्ति जो कह रहे हैं वह नया नहीं है।

प्रश्नः बुद्ध ने वही कहा है।

चुकता वेदांत वही है।

प्रश्नः और बुद्ध का विचार वही है।

हां, बुद्ध का भी वही है। चुकता वेदांत वही है। वह यही कहता है कुछ करने को है ही नहीं। सिर्फ जानने को है। इसमें वेदांत योग को नहीं मानता, कहता है, यह क्या नासमझियां कर रहा है, उलटा-सीधा यह कर रहा, इससे कोई मतलब

नहीं है। सिर्फ ज्ञान काफी है। जानना काफी है, करना कुछ भी नहीं है। यह भी प्रयास हो चुका, यह लंबा प्रयास है। उपनिषद से लेकर अब तक निरंतर चल रहा है।

प्रश्नः बुद्ध ने यह सब करके छोड़ दिया।

हां-हां।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

बुद्ध दोनों प्रतिभाओं में गए, वे पहले... और दूसरी तरफ भी प्रयास चल रहा। जैसे झेन है, योग है, पतंजलि है, ये सब के सब प्रयास में लगे हैं कि मेथड से होगा, यह करेंगे तो होगा। बुद्ध ने दोनों किया। पर यह उनकी तरफ से जैसे कि पहले यही समझ में आता है बात कि कुछ करेंगे तो ही होगा। यही समझ में आती पहले बात, नहीं करेंगे तो कैसे होगा। तो उन्होंने यह कोशिश करके देखा, नहीं हुआ। और जो हेरिगल के साथ हुआ वही बुद्ध के साथ हुआ। तो वे सब कोशिश करके थक गए और हार गए और एक दिन उन्होंने तय किया कि अब नहीं होता तो छोड़ो, जाने तो, समझो कि नहीं होगा, उसी रात हुआ। वह टेंशन तो चला गया न, करने वाला भी। छह-सात साल में पहली दफा सोए वे। छह-सात में सोए ही नहीं क्योंकि वह बेचैनी कि हो, हो, हो, हो, हो, हो, वह पकड़े रही। उस रात वे सोए, उन्होंने कहा कि नहीं होता, जाने दो। और न होने की घटना भी उनको इस तरह खयाल आई कि वह--निरंजना में मैं भी था उस नदी के किनारे पर जहां वे नहाने उतरे थे-- बोधगया के पास एक नदी बहती है, निरंजना। वे उसमें स्नान करने उतरे। देह से कृशकाय हो गए हैं तपश्चर्या कर-कर के। तो नदी की धार तेज है और वे एक जड़ को पकड़ कर वृक्ष की रुके हैं लेकिन चढ़ते नहीं बनता।
छह साल अपने को जो भी कष्ट दिए जा सकते हैं मेथड के नाम पर वे उन्होंने दिए। उपवास किया जा सकता है, शीर्षासन किया जा सकता है, आसन, जो भी शरीर को किया जा सकता था वह सब कर लिया। और शरीर ऐसा कृश हो गया है कि वह चढ़ते नहीं बनता। अचानक उन्हें खयाल होता है कि एक साधारण सी नदी निरंजना इसको मैं पार नहीं कर पाता। साधारण सा घाट निरंजना का इस पर में चढ़ नहीं पाता। इतने बड़े जीवन की नदी और इतने बड़े जीवन के घाट, अपने बस के बाहर है। इतनी कम शक्ति लेकर यह न होगा। यह नहीं होगा। यह नहीं हो सकता है। आकर वृक्ष के नीचे टिक कर बैठ गए हैं वे और आज उन्होंने सोच लिया है कि अब यह करना भी छोड़ देते हैं, यह पाना भी छोड़ देते हैं, अब यह नहीं होगा, यह बात खतम हो गई। शायद यह हो ही नहीं सकता है।
उस रात वे शांति से सो गए, क्योंकि अब करने को कुछ न बचा था। उस क्षण की
आप कल्पना करिए जब करने को ही कुछ न बचे। तब भी आप तो होंगे ही। एक आदमी धन कमा रहा है, वह कुछ कर रहा है। एक दिन धन छोड़ देता है, वह संन्यासी हो जाता है, वह कहता है, हम भगवान को कमाएंगे, वह भी कुछ कर रहा है। अब वह चिंता जारी है, इससे भी ज्यादा है। क्योंकि धन तो कमाया जा सकता है, ऐसा कोई कठिन नहीं है मामला। लेकिन यह धर्म के कमाने का कुछ दिखाई नहीं पड़ता, कहां कमाया जाए। अब वे भी हार गए हैं। जिसको कहना चाहिए बुद्ध टोटल फ्रस्ट्रेशन में हैं उस जगह। पहला फ्रस्ट्रेशन टोटल नहीं था, आधा था। यह था कि धन-वन सब बेकार हो गया, लेकिन अभी परमात्मा पाया जा सकता है, अभी आत्मा पाई जा सकती है, मोक्ष पाया जा सकता है। वह फ्रस्ट्रेशन आधा था। अभी आधा पाने की आशा थी। अभी अहंकार आधा मरा था, आधा जिंदा था। वह अभी कह रहा था कि यह पा लेंगे, इसमें कुछ नहीं है, इसमें जान भी नहीं है, हम दूसरा पा लेंगे। आज वह भी मर गया है। यानी एक अर्थ में गौतम सिद्धार्थ नाम का आदमी जो था वह निरंजना के घाट को पार करते वक्त मर गया। उसको कुछ भी न बचा पाने को। और आदमी बचता है पाने की आशा में। वह जो होप की अपील है वही हमारा अस्तित्व है, कि पा लेंगे, पा लेंगे, पा लेंगे, पा लेंगे। क्योंकि उसको पाने में ही लगता है कि हम हैं, हम हैं, हम हैं। जितना पा लेते हैं उतने ज्यादा हैं, जितना नहीं पाते उतना

ही कम हैं। लेकिन उस दिन बात ही खत्म हो गई। इस आदमी का मामला टोटल ही हो गया।
वह वृक्ष के नीचे टिक कर बैठ गया। एक गांव की लड़की आई है, वह खीर चढ़ाने
आई वृक्ष को। वह वृक्ष पीपल का है और वह देवता का वृक्ष माना जाता है। तो वह लड़की आई है सांझ को, सूरज ढल गया और पूर्णिमा का चांद निकला है। और उसमें वह कृशकाय, परम थका हुआ, अल्टीमेटली फ्रेस्ट्रेटेड आदमी बैठा है। वह मूर्तिवत बैठा है, क्योंकि हाथ-पैर भी हिलाने का मन नहीं रहा। क्योंकि कुछ करने को ही नहीं बचा है। सब बात ही खत्म हो गई। अहंकार ही खत्म हो गया। मूर्तिवत टिका बैठा है, कृशकाय, पीला। रात की चांद की रोशनी में उसे ऐसा लगा है कि जैसे पीपल का देवता प्रकट हुआ। वह तो खीर चढ़ाने आई पीपल के देवता को। कोई दूसरा दिन होता तो वे कह देते कि नहीं लूंगा। क्योंकि उनका तो नियम था इतना लेना है, इतने वक्त लेना है। अब कोई नियम न रहा। अब यह रात भी है, दिन भी है, कोई दूसरा दिन होता तो पूछते की तू कौन है। आज यह भी नहीं पूछते कि वह शूद्र लड़की है या कौन है, क्या है। वह क्या लाई है, वह खाने योग्य है कि नहीं है। अब कोई साधना-संयम नहीं है। और ऐसे थाली रख दी खीर की और कहती है कि इसे स्वीकार करें। अस्वीकार करने का भी मन नहीं रह गया है। तो वे चुपचाप उस खीर को ले लेते हैं। अस्वीकार करने का भी नहीं है। वे स्वीकार कर, कुछ बोलते ही नहीं हैं, वे चुपचाप उस खीर को ले लेते हैं। भूख हैं, थके हैं, खीर ले लेते हैं और सो जाते हैं। पहली दफे सोए हैं वे कई वर्षों के बाद। कोई पांच बजे सुबह उनकी नींद खुलती है, आंख खुलती है, आखिरी तारा डूब रहा है। और उन्हें मिल गया जो मिलना था। वह इस क्षण में आकर मिला है कि वे टोटल रिलैक्स थे, कुछ कर नहीं रहे थे। लेकिन यह स्थिति भी आ सकी है वह करने की वजह से।

प्रश्नः तो सारी नाटक थकाने के लिए है?

हां। अगर मेरा मतलब समझोगे तो यही स्थिति तुम्हारी भी हो जाएगी कि तुम आज जाकर पीपल के वृक्ष के नीचे लेट जाओ और किसी से खीर मंगवा लो और खीर लेकर आराम करो, सुबह पांच बजे आंख खोलो और कहो कि हो जाए, तो नहीं होगा। क्योंकि वह जो पीछे जो हुआ है, वह जो मेथड हार गया है, तो नो-मेथड जीता है। तो मैं जो सारी बातें करता हूं कि मेथड की पूरी बात करता हूं और इसको जान कर कि तुम मेथड से जिस दिन हारोगे उस दिन तुम्हारा अहंकार भी टूटेगा, उस दिन घटना घट सकती है। घटेगी तो तभी जब मेथड न रह जाएगा, उसके पहले तो नहीं घट सकती।

प्रश्नः लेकिन यह थकावट की...

बिल्कुल ही। हो टोटल। लेकिन होता क्या है कि तुम मुझसे थकोगे तो उनके पास जाओगे, उनसे थकोगे उनके पास जाओगे, उनसे थकोगे उनके पास जाओगे। यह मेथड से थकोगे दूसरा मेथड पकड़ोगे, उससे थकोगे तीसरा पकड़ोगे, लेकिन उपाय नहीं। एक दिन ऐसा आएगा कि मेथड ए.ज सच से तुम थक जाओगे। गुरु ए.ज सच से थक जाओगे। आखिर में तुम पाओगे कोई नहीं दे सकता, कुछ नहीं मिल सकता, कुछ है ही नहीं पाने को, नहीं-नहीं, यह क्या पाना, किसको पाना। यह जो परम विफलता। समझ में आई न? परम विफलता। अल्टीमेट फेल्योर जिस दिन तुम्हें आएगा उसके बाद ही अल्टीमेट सक्सेस है, उसके पहले नहीं है, उसके पहले नहीं है। लेकिन अब तुम क्या करोगे, दोनों विरोध को एक साथ ले जाना पड़ेगा। इधर मैं मेथड की बात करता रहूंगा और पूरे वक्त मेथड को इनकार करता रहूंगा। ऐसा ही जारी रहेगा। पूरे वक्त तुमसे कहूंगा, यह करो, यह करो, यह करो और पूरे वक्त यह कहूंगा कि करने से कभी कुछ हुआ नहीं, कभी कुछ होगा नहीं। तब मुझे समझने में कठिनाई हो जाती है।
गुरजिएफ को समझना आसान है, क्योंकि गुरजिएफ कहता है, मेथड से होगा।
कृष्णमूर्ति को भी समझना आसान, क्योंकि वह कहता है, मेथड से नहीं होगा।

मुझे समझने में थोड़ी कठिनाई, क्योंकि मैं कहता हूं, मेथड करना पड़ेगा और मेथड से होगा नहीं।

प्रश्नः एक्चुअली आपकी भाषा...

हां, इसलिए थोड़ी सी दिक्कत तो होगी, थोड़ी दिक्कत तो होगी। लेकिन ऐसा
ही है करोगे क्या। ऐसा ही है करोगे क्या।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

विदाउट थॉट हो सकता है।

प्रश्नः आई डोंट अंडरस्टैंड वॉट इ.ज दि डिफरेंस।

हां, दोनों में फर्क है। विचाररहित हो सकता है, विचारशून्य नहीं। विचाररहित हो सकता है कभी-कभी। वह विचाररहित होने का कुल कारण इतना है कि अगर, एक तरह की नननेस भी है माइंड की। समझे न? यह फर्क समझो। तुम बैठे हुए और चल नहीं रहे हो, तुम भी नहीं चल रहे हो। और एक दूसरा व्यक्ति बैठा है, वह भी नहीं चल रहा है, लेकिन वह पैरालाइज्ड है, वह भी नहीं चल रहा, और दोनों तुम बैठे हुए हो। लेकिन मैं कहूंगा, वह बैठा हुआ नहीं है, उसको बैठना पड़ रहा है। तुम बैठे हुए हो। वह पैरालाइज्ड है। हालांकि दोनों के पैर एक से मालूम पड़ रहे हैं, वह भी बैठा, तुम भी बैठे। कोई नहीं देख कर कह सकता कि कौन बैठा है। तुम बैठे हो क्योंकि तुम चल सकते हो। वह चल ही नहीं सकता, इसलिए बैठने का भी क्या मतलब है कहने का। मेरा मतलब समझे न? उसको मैं बैठा हुआ भी नहीं कहूंगा। वह सिर्फ नहीं चल सक रहा है।
तो मस्तिष्क में एक ही स्थितियां जो हैं, जब कि सब तुम्हारा ब्रेन जो है--ब्रेन, माइंड नहीं, तो तुम्हारा ब्रेन थक जाता है, और एक तरह की नननेस पकड़ लेती है। जैसे किसी की मृत्यु हो गई और तुम अचानक थक गए कि तुम पड़े रह गए, तुम्हारा ब्रेन काम ही नहीं कर पा रहा, इसलिए इतना काम नहीं कर रहे हो। इसलिए नहीं कि एक न काम करने की स्थिति में पहुंच गए हो तुम। इसका मतलब यह कि ब्रेन सिर्फ पैरालाइज्ड हो गया। और कई दफे हो जाता है। किसी दुख में, किसी बड़ी स्थिति में, किसी भी ऐसे एक्सीडेंट में कि जो अनपेक्षित है, जिसका तुम्हें कभी पता नहीं था कि होगा।
अभी यहां एक कुत्ता आ जाए और तुमसे कहे कि कहो प्रभु, क्या हाल है? एकदम तुम्हारा ब्रेन रुक जाता है, मन भूल जाता है। एक कुत्ता आकर कहेगा कि कहो प्रभु, क्या हाल है? यह सुनते से एकदम तुम नन हो जाओगे, यह होगा विदाउट थॉट, यह होगा विदाउट थॉट। विचार-रहित हो जाएगा एक क्षण में। इतनी चोट लगी कि विचार ठहर गया।
जिसको हम विचार शून्य कह रहे हैं, थॉटलेसनेस कह रहे हैं, वह बड़ी और बात है। उसका मतलब यह नहीं है कि मस्तिष्क थक गया। मस्तिष्क पूरा सजग है, पूरा सक्रिय है, कोई एक्सीडेंट नहीं हुआ, कोई चोट नहीं लगी, लेकिन भीतर से वह जो चिंतन की धारा थी, उसको तुमने विदा कर दिया।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

वह बड़ी और बात है। वह बड़ी पाजिटिव स्थिति है। यह बड़ी निगेटिव स्थिति है। एक आदमी बैठा है, आराम कर रहा है, यह बड़ी पाजिटिव स्थिति है। ऐसा नहीं कि वह नहीं चल सकता है; नहीं, वह चल चुका है और चलेगा। आराम कर रहा है। एक आदमी पैरालाइज्ड पड़ा है, वह आराम नहीं कर रहा है, वह... बेचारा आराम कर रहा है। वह सिर्फ नहीं चल पा रहा है, नहीं उठ पा रहा है, आराम क्या खाक करेगा, आराम तो वह करता है जो चल सकता है। तो जो थॉट करने की हालत है, हम विचार कर सकते हैं, नहीं कर रहे हैं।

प्रश्नः कर सकते हैं लेकिन नहीं कर रहे हैं।

नहीं कर रहे हैं। वह तो बात और है। लेकिन कर ही नहीं सकते। इसलिए नहीं करने की बात और है। इन दोनों में बुनियादी फर्क है।

प्रश्नः फर्क है लेकिन बात तो एक ही होती है न।

न, बात एक ही नहीं होती है।

प्रश्नः व्हेन यू आर थॉटलेसनेस... थॉटलेसनेस विलिंगली विचार शून्य हो जाना।

हां-हां।

प्रश्नः उतना भी माइंड का ब्रेक देते हैं तो वह बिल्कुल जंक हो जाता है।

उन्होंने बड़ा अच्छा सवाल उठाया सुबह, उन्होंने कहा कि स्वीडन जैसे मुल्क में जहां सब तरह का सुख है और सब तरह की व्यक्ति को स्वतंत्रता है, अधिकतम स्वतंत्रता है जीवन में।

प्रश्नः खासकर टेक्सास में।

खासकर टेक्सास में। और एक तरह से सुखी समाज है। कोई दीनता नहीं है। फिर वहां सुसाइड रे.ज बहुत ज्यादा है। लोग ज्यादा से ज्यादा मर रहे हैं, आत्मघात कर रहे हैं। अपनी तरफ से मर रहे हैं, कोई मार नहीं रहा है। तो उन्होंने यह सवाल उठाया कि यह क्या मामला है? और हिंदुस्तान के और संन्यासी भी उठाते हैं, वे भी यह कहते हैं कि हम ज्यादा शांत और आनंदित हैं। क्योंकि देखो हमारे यहां सुसाइड कम है। वे ज्यादा दुखी और पीड़ित हैं, उनके यहां सुसाइड ज्यादा है।
यह बात बिल्कुल ही गलत है। असल में आत्मघात का सवाल भी सिर्फ सुखी आदमी को ही उठ सकता है, दुखी आदमी को कभी भी नहीं। इसे थोड़ा समझ लेना। आत्मघात का जो सवाल है, दुखी आदमी मरने की सोच ही नहीं पाता, जीने की ही सोचता है निरंतर। दुखी आदमी निरंतर यह सोचता है कि मैं कैसे जीऊं, कैसे जीऊं, कैसे जीऊं। न मकान है, तो मकान कैसे बनाऊं। कपड़ा नहीं, कपड़ा कैसे लाऊं। पत्नी नहीं, पत्नी कैसे उपलब्ध करूं। दुखी आदमी को अनुभव होता है कि इतने दुख में हूं और अगर ये सब चीजें मुझे मिल जाएं--पत्नी मिले, मकान मिले, कार मिले, धन मिले, तो मैं जी पाऊं। दुखी आदमी का पूरा का पूरा माइंड अपने दुख को मिटाने में लगता है। मेरा मतलब समझे न? और दुख को मिटाना है तो जीना पड़ेगा, नहीं तो मिटाओगे कैसे? दुख आज तो मिट नहीं सकता, उपाय करने पड़ेंगे, प्रयास करने पड़ेंगे--धन कमाना पड़ेगा, प्रेम करना पड़ेगा, मकान बनाना पड़ेगा, तब दुख मिटेगा।
तो गरीब कौमें और दुखी कौमें आत्मघाती नहीं होती हैं। जानवरों के लिए आत्मघाती नहीं है। क्योंकि उसे चौबीस घंटे जीने के इंतजाम में ही गुजर जाते हैं। मरने की सुविधा कहां, फुरसत कहां। सुबह से निकलता है एक जानवर, वह दिन भर बेचारा किसी तरह रोटी-रोजी जुटा ले अपनी, इसमें गुजर जाता है। मरने की फुरसत कहां। जब जीने की फुरसत नहीं मिल पाती तो मरने की फुरसत कहां। एक मजदूर सुबह निकलता है, दिन भर थका-मांदा रात लौटता है, सो जाता है, सुबह फिर निकल जाता है। मरने के लिए फुरसत चाहिए। मरना जो है वह लास्ट लक्.जरी है सुखी आदमी की। यानी मरने के लिए सुविधा तो चाहिए न। तो असुविधा है।
और गरीब आदमी नहीं मर सकता, आत्महत्या नहीं कर सकता। अगर आत्महत्या
कम रखनी हो तो दुनिया को गरीब रखना चाहिए। और आदमी को परेशान रखना चाहिए।

वह परेशानी में उलझा रहे, उलझा रहे, उलझा रहे, उसको फुरसत न मिले जीने की, मरना तो बहुत बाद की बात है। वह तो मरने का खयाल उसको आता है जो जी चुका है। अब जो आदमी सब तरफ से सुखी हो गया और जी रहा है और जी लिया, अब वह क्या करे। उसके सामने पहले सवाल उठता था--मैं क्या करूं? वह सब जो मिलना था वह मिल गया। और सुख इतना बोरिंग है जितना दुख कभी भी नहीं है। सुख इतना उबाने वाला है जितना दुख कभी भी नहीं है। सुख बहुत उबाने वाला है, बहुत ही घबड़ाने वाला है। तुम करो क्या, करो क्या, करो क्या, सब सुख है--अच्छा खाना है, अच्छी पत्नी है, अच्छा मकान है, अब क्या करो, अब क्या करो। अब बड़ी मुश्किल हो गई, अब कहां जाओ। क्योंकि अब इससे अच्छा मकान नहीं हो सकता, इससे अच्छी पत्नी कहां से लाओ, क्या करो। यह बोर्डम पैदा करता है। सब सुख बोर्डम पैदा करता है।
कोई जानवर बोरिंग हालत में नहीं पाओगे, ऊबा हुआ, कि कोई कुत्ता बोर्डम में बैठा है। हमेशा रस-मग्न है। बोर्डम का कोई सवाल नहीं है। गांव का आदमी भी बोर्डम में नहीं पाओगे। जितनी बुद्धि विकसित होगी, सुख विकसित होगा, बोर्डम आएगी। बोर्डम जो है बड़ा ह्यूमन क्वालिटी है। नॉन-ह्यूमन... नहीं हो सकती है। तो वह होता नहीं, जितना बुद्धिमान, सुखी, विचारशील आदमी पाओगे, उतना बोर पाओगे। हर चीज उबाने लगेगी, हर चीज घबड़ाने लगेगी। सब मिल गया, अब क्या करे। ऐसी हालत में पहली दफा उसे खयाल, पूछेगा वह, वह पूछेगा कि जिंदगी का अर्थ क्या है? दुखी आदमी कभी नहीं पूछता। वह पूछता नहीं मीनिंग क्या है, वह मीनिंग साफ है उसे कि रोटी-रोजी नहीं, मकान नहीं, स्त्री नहीं, मीनिंग साफ है बिल्कुल। सुखी आदमी को सब मिल गया, वह पूछता है, जिंदगी का मीनिंग क्या है? उसको खाना मिल गया है, पत्नी मिल गई है, मकान मिल गया है, धन मिल गया है। अब आराम से, आराम से कुर्सी पर बैठा हुआ, वह पूछता है, वॉट इ.ज द मीनिंग? जीऊं किसलिए? कल फिर सुबह उठने पर मिलेगा, चाय मिलेगी, पत्नी मिलेगी, कल फिर इसी कुर्सी पर बैठेंगे, ऐसा पच्चीस साल से बैठे हैं। जीने का मतलब क्या है? किसलिए हम जीएं, यह तो बताओ? क्योंकि यह तो रोज-रोज रिपीट हो रहा है। अब इससे घबड़ा गया। तो जीने का प्रश्न जब उठने लगता है, तब दूसरा प्रश्न सुसाइड का उठता है। तो फिर मर ही क्यों न जाऊं।
और एक मजे की बात है कि जिसे सब कुछ मिल गए हैं, सब सेंसेशंस मिल गए हैं, वह एक सेंसेशन और उपयोग करना चाहता है, मर कर भी देखना चाहता है। वह लास्ट सेंसेशन है। यह सिर्फ लक्.जरीअस एफर्ट कर सकते हैं। यह आखिरी सेंसेशन है। वह कहता है कि ठीक है, पैदा हम अपनी तरफ से नहीं हुए, पता नहीं कैसे पैदा हुए। जवान अपनी तरफ से नहीं हुए, पता नहीं कैसे हुए, हम मर तो अपनी तरफ से... एक डेफिनेटल एक्ट। कम से मर मर ले सकता हूं। इसमें कोई न भगवान बाधा डाल सकता है, न कोई दुनिया की ताकत लगा सकती है। पैदा होने में मेरा कोई हाथ नहीं है, जवान होने में कोई हाथ नहीं है, बूढ़े होने में कोई हाथ नहीं है, लेकिन मैं मर सकता हूं। यह इसको भी जरा देखें, यह खेल आखिरी है। आमतौर से हम दूसरे को मरते देखने में शर्म अनुभव करते हैं। लेकिन सुखी आदमी अपने को मरते भी देखना चाहता है। आखिरी सुख आदमी को सुसाइडल बना देता है। और अगर आखिरी सुख में हम नये तरह के दुख न खोज पाए, तो दो सौ वर्षों में आदमी अपने को खत्म कर लेगा।
इसलिए बहुत बुद्धिमानी पुराने सुख खोजने पर नये दुख खोजने की है। उन लोगों को रोटी मिल गई है, तो कविता तो नहीं मिली है, तो कविता का नया दुख फौरन पैदा होना चाहिए, नहीं तो मुश्किल हो जाएगी। वे पुराने राजा-महाराज इसलिए नये दुख पैदा करने को कहते थे। संगीत चाहिए, काव्य चाहिए, नृत्य चाहिए, वे सब पैदा करने। वे नये दुख थे कि फलानी नृत्यकी नहीं उपलब्ध हो रही, वह दूसरे राजा के पास है। अब क्या हो गया कि हमने सब चीजों को कमर्सलाइज्ड कर दिया, क्लेक्टिव कर दिया। अब जो कोई आनंद है--एक नृत्यकी को नचा देते हैं तो सारा मुल्क देख लेता है। अब कोई हेमामालिनी पर किसी का कब्जा थोड़े ही है, सब देख लेते हैं। तो फिर प्रॉब्लम खत्म हो गया। फिर मतलब यह है कि, लेकिन एक जमाना वह था कि हेमामालिनी को मैं नचा सकता हूं, आप नहीं नचा सकते। दुखी और मरे जा रहे। एक राजा मरा जा रहा है कि फलाने के दरबार

में हेमामालिनी नाच रही है। अब हर गरीब आदमी के दरबार में नाच रही, कोई सवाल नहीं है उसका। समझे न?
तो वह जो नये दुख पैदा करने पर बड़ा प्रॉब्लम हो जाएगा। अब हम कैसे पैदा करें। वे हो जाएंगे। जैसे कोई चांद पर जाने लगेगा, कोई मंगल पर जाने लगेगा, एक करोड़ रुपये की टिकट होगी, एक आदमी खरीद सकेगा, और जिसके पास एक करोड़ नहीं वह दुखी हो जाएगा कि चांद पर कैसे जाऊं। सुसाइड कम हो जाएगा इससे। मेरा मतलब समझे न? पुराने सब दुख हम खत्म किए दे रहे हैं और नये दुख पैदा नहीं कर पा रहे हैं, तो प्रॉब्लम खड़ा हो जाएगा एकदम।
नये दुख पैदा करने पड़ेंगे। यह मैं कह रहा हूं कि जिंदगी के चलने में सुख और दुख दोनों पैरों की जरूरत है। लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता है, तुम कहोगे कभी-कभी ऐसा होता है कि बहुत दुखी आदमी भी अपने को समाप्त कर लेता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि बहुत दुखी आदमी भी अपने को समाप्त कर लेता है। वह भी इसलिए समाप्त नहीं करता कि बहुत दुखी है, वह भी इसलिए समाप्त करता है--ध्यान रहे, इन दोनों में फर्क नहीं है, इससे जरा बारीक है--एक बहुत सुखी आदमी अपने को समाप्त करता है क्योंकि आगे सुख की कोई संभावना न रही, कल किसलिए जीए। एक बहुत दुखी आदमी इसलिए अपने को समाप्त करता है कि उसे भी कल सुख पाने की कोई आशा न रही, कोई संभावना न रही।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, वे बेसिक एक ही पॉइंट पर, एक ही जगह खड़े हो गए हैं दोनों। वह अति दुख के कारण उस जगह आ गया है कि उसकी सब आशा पूरी हो गई, वह कहता, अब कोई सुख तो मिलना नहीं, तो अब जीना किसलिए। सुखी आदमी कहता है, अब सब सुख तो मिल गया, अब तो कुछ सुख मिलना नहीं है, अब जीना किसलिए। अब मेरे हिसाब में इनमें फर्क नहीं है दोनों में। दुख की अति पर भी आदमी ऊब जाता है, क्योंकि फिर दुख ही दुख रह जाता है। फिर सुख के पाने की आशा भी अगर न रही, आशा भी अगर रही तो नहीं मरेगा अभी। अगर आशा भी न रही तो... गया, बात खत्म हो गई, वह मर जाएगा।
लेकिन दुख के अति पर पहुंचना बहुत मुश्किल है, क्योंकि आदमी की क्षमता दुख सहने की अनंत है। इसलिए बहुत कम दुखी लोग एक्सट्रीम पर पहुंच पाते हैं, आशा बनी ही रहती है। आशा मिटती ही नहीं। दुख के एक्सट्रीम पर बहुत कम लोगों को पहुंचाया जा सकता है। समझे न तुम? और यह भी तुम्हें ध्यान रहे कि जिन दुखों को आमतौर से लोग दुख समझते हैं वह गरीबों के दुखों के कारण कभी कोई नहीं मरता। तुमने कभी नहीं देखा हो कोई भूख की वजह से सुसाइड करे, बहुत मुश्किल है। कोई बीमारी की वजह से सुसाइड करे, बहुत मुश्किल है। हां, प्रेम की वजह से कोई सुसाइड कर सकता है। असल में प्रेम जो है, तो वह भी संपत्ति और सुख की ही लक्.जरी है, वह भी। यह उनकी वजह से कोई सुसाइड नहीं कर सकता। कभी भी अगर तुम्हें आगे कल नये के होने की संभावना मिट जाए, तो मृत्यु तुम्हें पकड़ लेगी। तब तुम मृत्यु में ही नये की संभावना खोजने लगोगे।
तो मेरा मानना है कि रोज हमें नये सुख बनाने चाहिए। लेकिन नये दुख और
नई दिशाएं खोजनी चाहिए--एडवेंचर की, आशा की। और उन दोनों तत्वों को जो समझ लेता है, उन दोनों तत्वों को जो समझ लेता है, वह एक तीसरे तरह का आदमी हो जाता है। उस आदमी की कोई प्रॉब्लम नहीं है। जरा देखना, इन दोनों तत्वों को जो आदमी समझ लेता है वह बिल्कुल तीसरे तरह का आदमी है, उसके लिए प्रॉब्लम ही नहीं है।

प्रश्नः अभी आपने कहा कि जीना मेरे हाथ में नहीं, जवान होना मेरे हाथ में नहीं, लेकिन मरना--जैसे समझो कि... नहीं--अभी आपने बात की--कि चलो यह भी मैं कर लूं। और भगवान बाधा नहीं डाल सकते। तो इसका मतलब कि हम क्या करते हैं--समझो कि एक आदमी प्रेट्रोल डाल कर जलने की कोशिश करता है, या कोई पांचवें मंजिल से उड़ी मार कर मरने की कोशिश करता है, फिर भी नहीं मरता है।

हां, तो उसका कुल मतलब इतना है कि वह ढंग से कोशिश नहीं की। इसमें कोई बाधा नहीं डाल रहा है।

प्रश्नः ऊपर से जंप मारने से ज्यादा कोशिश क्या हो सकती है।

उसका मतलब यह नहीं कि कोई बाधा डाल रहा, उसका मतलब यह कि जो तुमने किया
वह मेथडोलॉजिकली चूक हो गई कहीं पर। उसका मतलब है कि मेथडोलॉजिकली चूक हो गई। यानी उसके मेथड की चूक। कोई बाधा नहीं डाल रहा है, कोई बाधा नहीं डाल रहा है। तुमने मेथड में कोई गलती कर ली। तुम इस ढंग से कूदे कि बच गए, इतना ही मसला है।

उपासना के क्षण
दसवां प्रवचन

सफलता नहीं, सुफलता

मैं सीढ़ियां चढ़ रहा हूं, तो मुझे एक सीढ़ी पर पैर रखना पड़ता है ताकि मैं वहां रहा आऊं कम से कम जहां था। और एक पैर उठाता हूं वहां पहुंचने के लिए जहां मुझे पहुंचना है। जब मैं वहां पहुंच जाता हूं तब मैं दूसरा उठाता हूं, क्योंकि यह पैर अब आश्वस्त हो गया है, एक जगह मिल गई है। अब मैं दूसरा उठा लेता हूं, नहीं तो अधर में हो जाऊंगा। अधर का डर इतना ज्यादा है कि दोनों एक साथ नहीं उठा सकता, नहीं तो गिर जाऊंगा। और दोनों एक साथ उठाऊंगा, तो यह भी डर है कि जहां था हो सकता है उससे भी पीछे गिर जाऊं। इसलिए उसको तो मैं पकड़े रहता हूं।
अगर मेरे पास दस हजार हैं तो दस हजार को मैं बचाता हूं और मुझे बीस हजार चाहिए तो मैं बीस हजार के लिए कदम उठाता हूं। दोहरे काम करता हूं। दस हजार को प्रिजर्व करता हूं और बीस हजार की आकांक्षा करता हूं। यह दोनों एक साथ चलेगा।
यानी इसको ठीक से समझा जाए तो बिल्कुल गणित तो ठीक है। जिसे चलना है उसे अपने को खंडित करना पड़ता है। और जो अपने को खंडित करेगा वह चलेगा, और जब चलेगा तो एक पैर जो उठ रहा है उससे विपरीत पैर खड़ा रहेगा, प्रतीक्षा करेगा, तो तुम खड़े हो जाओ तो मैं चलूं। जिसको हम प्रेम कर रहे हैं उसको हमें घृणा भी करनी पड़ेगी। जब प्रेम थक जाएगा तो हम घृणा करेंगे, जब घृणा थक जाएगी तो हम प्रेम करेंगे। तो जिससे हम प्रेम करेंगे उससे हम लड़ेंगे चौबीस घंटे। वे दोनों कदम, जब लड़ लेंगे तब फिर दया आ जाएगी कि क्या कर लिया। पश्चात्ताप पकड़ेगा, फिर प्रेम कर लेंगे। जब फिर प्रेम कर लेंगे तो फिर उपद्रव शुरू हो जाएगा, थोड़ी देर में हम फिर लड़ लेंगे। इसलिए पूरी जिंदगी करना और न करना, डूइंग और अनडूइंग का खेल है। एक ही काम को करेंगे फिर उसी को अनडन भी करना पड़ेगा, फिर उसको मिटाना भी पड़ेगा।
यह सारी बात समझ में आ जाए, इसे कुछ करने का नहीं है सवाल, यह सिर्फ समझ में आ जाए कि ऐसा है। तो फिर बात साफ है। और अगर मुझे दुख और द्वंद्व में रहना है तो गति करनी चाहिए। और अगर मुझे निर्द्वंद्व हो जाना है तो गति की फिकर छोड़नी चाहिए। उस हालत में न तो आदमी प्रेम करता है, न घृणा को इकट्ठा करता है; न आदर देता, न अनादर को इकट्ठा करता है; वह दोनों नहीं करता है। तब भी कुछ होता है, फिर कुछ होता है जब वह कुछ भी नहीं करता, फिर कुछ होता है। और इसलिए वह हमेशा तीसरी बात है। वह जो होती है, वह जो बैठे-बैठे होती है, वह फिर टोटल होती है, क्योंकि उसमें बंटने की जरूरत नहीं रहती। चलेंगे तो बंटते हैं, अगर बैठे रहेंगे तो बंटते नहीं, तब हम टोटल होते हैं। जैसे मैं अभी बैठा हूं, तो न मेरे बाएं पैर में कोई फर्क है, न मेरे दाएं पैर में, वे दोनों एक हैं, वे मुझमें इकट्ठे हैं। मैं उठा कि उनमें फर्क शुरू हुआ।
सब गति डाइलेक्टिकल है, यह जो मॉस और हीलिंग का जो खयाल है न, वह बिल्कुल ठीक है, सब गति डाइलेक्टिकल है। उसे वे कहते हैं कि जब पूंजीवाद बन रहा है दुनिया में, तो साथ बुरी की ताकतें इकट्ठी1 इधर अमीर धन इकट्ठा कर रहा है, उधर गरीब की ताकतें इकट्ठी होती जा रहीं, एक ही साथ। अमीर जितना अमीर होगा, गरीब उतना क्रोधित होगा। और गरीब मजबूत होता जा रहा है। इधर अमीर मजबूत हो रहा, उधर गरीब मजबूत हो रहा। बहुत जल्दी वह वक्त आ जाएगा कि गरीब अमीर पर हावी हो जाए। वह दूसरा कदम है, उसी के साथ तैयार हो रहा है, उसी के साथ तैयार हो रहा है।
समाज की, व्यक्ति की, जीवन की सब प्रक्रियाएं डाइलेक्टिकल हैं। और ध्यान जो है वह नॉन-डाइलेक्टिकल है। और इसीलिए जो लोग भी डाइलेक्टिस में सोचते हैं, वे लोग परमात्मा को नहीं मान पाते। मार्क्स नहीं मान सका उसका कुछ कारण इतना है1 वह यह नहीं मान सकता कि कोई ऐसा भी हो सकता जिसमें विरोध नहीं है।

प्रश्नः डाइलेक्टिकल माने द्वंद्व।

द्वंद्व, द्वंद्व, सब द्वंद्व हैं। यानी सब विकास विरोध के द्वारा होता है।

प्रश्नः विरोध, कंपेरिजन से विरोध...

विरोध से होगा। विरोध से ही होता है। विरोध से ही सारा होता है।

प्रश्नः ऐसे ही जैसे आदमी धंधा, रोजगार, विवाह, कुटुंब सब चला सकता है। सपोज कि दोनों...

हां-हां, बिल्कुल चलता रहेगा, चला सकने का सवाल नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

असल में, असल में, जो आदमी दो हजार रुपया आपसे ले गया है, उसमें पीड़ा दो हजार जाने की नहीं, क्योंकि कभी दो हजार आप दान भी कर देते हो, तब पीड़ा नहीं होती।

प्रश्नः बना कर ले गया।

नहीं, आपको पीड़ा यह है कि मुझे बुद्धू बना कर ले गया। मेरे अहंकार को चोट पहुंच गई। दो हजार तो दान भी देते, तब पीड़ा नहीं होती, खुशी होती है कि मैंने दो हजार दान दिए। क्योंकि कोई मुझे बना कर नहीं ले गया, मैंने दिए। और एक आदमी बना कर ले गया। और आपको पक्का पता नहीं है कि दान वाला भी बना रहा कि नहीं बना रहा। उसका आपको पता नहीं है। दान वाले की तरकीब ऐसी हो सकती है कि वह भी बना रहा है। वह भी बना रहा है। मगर उसमें आपको वह इतना सुख दे रहा है कि दान तुमने दिया। चोर इतना समझदार नहीं, संन्यासी समझदार है, बस और कोई फर्क नहीं है। चोर जो है वह समझदार नहीं है, वह बेचारा रात घुस कर घर में से ले जा रहा है, और आपको तकलीफ दे जा रहा है। तो एक दूसरा आदमी आ रहा है वह सेवक है, संन्यासी है, महात्मा है, फलां है, ढिकां है, वह कहता है कि1 और वह आपके अहंकार को तृप्ति करके ले जा रहा, यानी आपसे लेकर जा रहा है वह भी, लेकिन वह आपके अहंकार को तृप्ति दे जाता। पीछे आपको सुगंध दे जा रहा कि हां मैंने दिए। पीड़ा इसकी नहीं है कि कोई आपसे दो हजार ले गया। दो हजार की पीड़ा नहीं है, पीड़ा कुछ और है।
तो मैं जो कह रहा हूं, जो आदमी सहज जी रहा है उससे चाहे कोई दान में ले जाए और उससे चाहे कोई चोरी में ले जाए। वह इतना ही कहेगा कि दो हजार अपने पास थे और अब नहीं है। न तो वह दान में अकड़ जाएगा और न वह चोरी में एकदम दुखी हो जाएगा। क्योंकि इतना ही कहेगा कि दो हजार थे और अब नहीं है। इतना सेंसुअल होगी उसकी समझ। और इसमें किसी से क्या कहना है कि कोई ले गया कि कोई समझा कर ले गया, कि कोई दबा कर ले गया, इससे किसी से कोई प्रयोजन नहीं। ऐसा आदमी का जो जीना है वही जीना धार्मिक जीना है।

प्रश्नः ऐसा जीना मुश्किल है।

मुश्किल हम समझते हैं, मुश्किल हम समझते हैं ईश्वर बाबू। मुश्किल हम समझते हैं इसलिए मुश्किल हो जाती। नहीं तो सब तरह का जीना संभव है। जिस जिंदगी में अंत में मृत्यु सभी कुछ मिटा देती है, उसमें किसी भी तरह का जीना संभव, उसमें सब पॉसिबिलिटीज खुली हुई है। यानी मैं यह कहता हूं, जब हम कहते हैं कि कठिन है, तो उसका मतलब यह है कि एक जीने का खास ढंग हम कहते हैं कि यह कठिन है1 यानी मेरे पास हो सकता है बहुत बड़ा मकान न हो, हां, यह हो सकता है। लेकिन बिना मकान के जीना कठिन है यह किसने कहा। यह हो सकता है कि मेरे पास बहुत बड़ी गाड़ी न हो, यह हो सकता है। लेकिन बहुत बड़ी गाड़ी न हो तो

जीना कठिन है, यह किसने कहा। न, हम जब कहते हैं, जीना कठिन है तो हमारी जीने की एक व्याख्या, और हमारे जीने का एक मकसद है कि ऐसा जीना। ऐसा जीना कठिन हो जाएगा। लेकिन पूछना यह है कि ऐसे जीने में सुख मिल रहा है या ऐसे जीवन के कठिन हो जाने पर भी सुख मिल सकता है? पूछना कुछ और है, जानना कुछ और है।

प्रश्नः नहीं, इसमें भूल जाए तो...

नहीं-नहीं, जब आप कहें कि भूल जाना चाहिए, तब तो नहीं भूल सकेंगे आप। न,
यह मैं नहीं कर रहा हूं। मैं यह नहीं कह रहा हूं, लेकिन जानना चाहिए कि ऐसा हुआ, ऐसा हुआ।
कल मैं मर जाऊंगा, कल बूढ़ा हो जाऊंगा, तब मैं क्या कहूंगा, किसको कहूंगा, किसने मुझे चिट किया। कल मैं बूढ़ा हो जाऊंगा और जवानी चली जाएगी, किसने मुझे चिट किया। नहीं, लेकिन बूढ़ों को कहीं न कहीं शक बना रहता है कि जो अब जवान हैं इन्होंने चिट कर दिया, इसलिए बूढ़ा जवान पर नाराज रहता है। मां जवान बेटी पर नाराज रहती है, उसे कहीं बहुत गहरे लग रहा कुछ चिटिंग हो गई, इसलिए लड़की अब जवान हो गई और मैं बूढ़ी हो गई। हालांकि इसको साफ कोई कह नहीं रहा है कहीं, इसे कोई साफ नहीं कह रहा। मेरा मतलब समझे न? लेकिन कौन उसको चिट कर रहा है। कौन किसको चिट कर रहा है। और चूंकि अंत में सब छीन ही जाता है, चाहे आप चिट करें और चाहे चिट किए जाएं। यह एक बड़े मजे की बात है। अभी मैं एक घर में ठहरा था, तो घर के बच्चे1 रात को मैं मीटिंग से लौटा1 तो घर के बच्चे मोनोपॉली खेल रहे थे, वे व्यापार खेल रहे थे। और भारी शोरगुल मचा हुआ था। और उसमें कोई चिल्ला रहा था कि इसने मुझे धोखा दे दिया और इसने... और वे पूरे गंभीर थे, पूरे गंभीर थे। व्यापार चल रहा था पूरा, वे पूरे गंभीर थे। वे पूरे गंभीर थे, और पूरे लड़े जा रहे थे और बिल्कुल ही झगड़े की हालत थी। तो मैं वहां से निकला, तो उस कमरे में से तो, मैं भी वहां रुक गया और मैंने पूछा कि किसने किसको धोखा दे दिया, तो उन्होंने कहा कि आप निपटारा करवा दें, इसने यह धोखा दिया है, यह चाल गलत चला जान कर।
तो मैंने उनसे कहा कि यह खेल कितनी देर चलने वाला है? तो उन्होंने कहाः अब तो बारह बज गए, बस अब खत्म होने के करीब है। तो मैंने कहाः खत्म हो जाने के बाद जिसने धोखा दिया और जिसने धोखा खाया उनमें क्या फर्क होगा? उन्होंने कहाः कोई फर्क नहीं होगा। तो मैंने... तब अचानक उन बच्चों को एकदम खयाल आया और वे सब हंसने लगे। उन्होंने कहा कि तब तो कोई फर्क नहीं होगा। जब आखिरी हिसाब में कोई फर्क नहीं रह जाता...

प्रश्नः खयाल नहीं है।

हां, तो हमें आखिरी हिसाब का कोई खयाल नहीं है। और आखिरी हिसाब चूंकि सबको बराबर कर जाता है, इसलिए क्या फर्क पड़ता है इससे कि कौन... नहीं, इसलिए सवाल असल में यह नहीं है कि किसने धोखा दिया, किसने धोखा खाया, सवाल यह है कि वह आखिरी हिसाब है उसके पहले कौन सुख से जीया, कौन दुख से जीया, असली सवाल यह है। और मेरा मानना यह है कि वे अगर दस-आठ बच्चे खेल रहे थे, तो बारह बजे तो खेल बंद हो गया, सब दुकानें बंद करके वे जा चुके हैं, लेकिन जिसने सोचा था कि मैं धोखा खा गया, उसकी रात में फर्क पड़ जाएगा, उसकी नींद में फर्क पड़ जाएगा। जिसने सोचा था कि मैं धोखा दे आया, उसकी नींद भी तकलीफ की हो जाएगी। यानी अभी ये खेले खेल में खेले थे न, तो अब सवाल असल में यह है कि हम जब रहे खेल में तब हम सुखी रहे, अगर हम तब सुखी रहे तो खेल के बाद भी सुख की धारा छूट जाएगी। यह सारी पूरी जिंदगी में हम, हम ऐसी जिंदगी बनाएं यह मूल्यवान नहीं है, मूल्यवान यह है कि जिंदगी ऐसी हो कि आनंद दे जाए। और उसकी मैं बात कर रहा हूं। वह हमेशा नॉन-डाइलेक्टिकल होगी, उसमें द्वंद्व नहीं होगा, उसमें विरोध नहीं होगा। उसमें चीजें जैसी हैं हैं।
अब एक आदमी आता है और वह मुझसे कहता है कि ईश्वर बाबू आपके खिलाफ यह कह रहे थे। तो मैं कहता हूं कि कह रहे होंगे। वे ईश्वर बाबू हैं उनको जो ठीक लगता वह कह रहे होंगे। एक आदमी कहता कि फलां आदमी आपको भगवान मानता। मैं

कहता हूं, वह उसकी समझ है, वह मानता होगा। कोई कहता है, आपको कोई आदमी साधु नहीं मानता, शैतान मानता है। मैं कहता हूं, वह उसकी समझ होगी। इसमें मैं कहां आता हूं।

प्रश्नः यानी वह रिएक्शन खो देगा।

हां। इसमें मैं कहां आता हूं। यह मैंने सुन ली बात है। और मैंने कहा
कि तुमने भी मेहनत की और खबर पहुंचाई, कृपा है। उससे ज्यादा कोई बात नहीं है।

प्रश्नः उसके कारण रिएक्शन होता है।

हां, उसके कारण। उसके कारण ये नहीं हैं कि उस आदमी ने कहा कि मैं शैतान हूं इसलिए रिएक्शन आया। मैं मनवाना चाहता हूं लोगों को कि मैं शैतान नहीं हूं इसलिए रिएक्शन आया, उसके कहने से नहीं। जो सारी तकलीफ है हम कुछ और कारण खोजते हैं जो असली कारण नहीं हैं। मैं अपने मन में मानता हूं कि ईश्वर बाबू को दुनिया में जाकर कहना चाहिए कि मैं भगवान हूं। तब महीपाल जी ने खबर दी कि वे तो कह रहे थे कि आप कुछ भी नहीं। तब तकलीफ शुरू हुई। तकलीफ का कारण ईश्वर बाबू नहीं हैं, तकलीफ का कारण मैं ही हूं। क्योंकि मैं यह मान रहा था कि यह करना चाहिए जो नहीं किया गया और उलटा किया जा रहा है, तब मैं दुखी हो गया। क्योंकि यह कभी मैंने माना ही नहीं था। यह कभी मैंने माना नहीं था, मैं जो हूं वह हूं। कौन क्या कहता है यह मैंने कभी हिसाब नहीं रखा है और चाहा नहीं है, तो आप कौन क्या कह रहा है इससे क्या तकलीफ बनती है। कोई तकलीफ नहीं बनती।
तो हमारे एक्सपेक्टेशंस जो हैं, हमारी अपेक्षाएं हमारी तकलीफ का कारण बनती हैं, दूसरों का व्यवहार नहीं। जैसे मैं यहां आया, तो मैं अगर मान कर आया हूं कि अब मैं जब जाऊं तो आपको उठ कर नमस्कार करना चाहिए। और नहीं किया गया नमस्कार और आप सब बैठे रहे, तो मैं दुखी हो सकता हूं। आपके नमस्कार न करने से नहीं, वह मैं सीढ़ियों पर तैयारी कर रहा था कि आप नमस्कार करें। अचानक फ्रस्ट्रेशन हुआ है, वह नहीं किया गया है। लेकिन अचानक सीढ़ियों से चढ़ते हुए यह सोच कर नहीं आया था कि आप नमस्कार करें, तो जैसा कमरा था वैसा मैं स्वीकार करूंगा, क्योंकि इससे क्या मतलब, मेरी कोई अपेक्षा न थी।
इसमें लोग बैठे थे तो स्वीकार करूंगा, खड़े हुए थे तो स्वीकार करूंगा।
नमस्कार करेंगे तो स्वीकार करूंगा, नहीं करेंगे तो स्वीकार करूंगा। क्योंकि इस कमरे को कैसा व्यवहार करना चाहिए इसका तय करके मैं नहीं आया हुआ था।
तो जिंदगी में जो लोग कैलकुलेशन से चलते हैं वे दुखी होते चले जाते हैं, क्योंकि उनका सब हिसाब पहले तय है कि क्या होना चाहिए, क्या नहीं होना चाहिए, क्या नहीं होना चाहिए।

प्रश्नः टोटल सरेंडर जो आप कहते हैं, दुनिया वाले तो यह कभी मानने वाले नहीं हैं। नहीं तो आदमी जैसा था, जैसा समझो पागल दिखता है थोड़ा, सभ्य नहीं है। इससे भी ज्यादा खतरनाक कर दोगे।
विवेक से, थोड़ी बुद्धि से काम करे तो ठीक है, नहीं तो सब जगह फेल्योर
ही होगा।

यह जो हमारी तकलीफ है न, हमारी तकलीफ यह है कि हम यह मान कर चल रहे हैं
कि सक्सेस हो जाएगी, इसलिए फेल्योर का डर है। मैं जो कह रहा हूं वह यह कह रहा हूं कि हम यह समझ कर चल रहे हैं कि एक तो सफलता होनी चाहिए ही। और हम कभी यह नहीं सोच रहे हैं कि सफलता विफलता के बिना कैसे हो सकती है। क्योंकि सफलता और विफलता, मैं कह रहा हूं कि एक ही मन के दो पैर हैं। जो आदमी सफल होगा वह रोज विफल भी होगा और रोज सफल भी होगा। आज इलेक्शन जीतेगा,

कल हारेगा। आज लोग प्रशंसा करेंगे, कल निंदा करेंगे। आज ऊपर होगा, कल नीचे होगा।
वह लाओत्से कहता था कि कभी ऐसी जगह चढ़ना ही मत जहां से गिरना पड़े। लेकिन हमारी इच्छा यह होती है कि ऐसी जगह चढ़ जाएं जहां से सब गिर गए हों और हम न गिरें, हमारी इच्छा यह होती है। बल्कि हम ऐसी जगह चढ़ जाएं जहां कभी कोई न चढ़ पाया हो। हमारी जो इच्छा है वह यह है कि हम ऐसी जगह चढ़ जाएं जहां कभी कोई न चढ़ पाया हो। जहां जो भी चढ़ा हो गिर गया हो, और वहां मैं न गिर पाऊं, तो सफलता है। सफलता का और कोई मतलब नहीं है। लेकिन जहां कभी कोई न चढ़ पाया हो, हम सोचते हैं कि लोगों कि कमजोरी रही होगी कि वे न चढ़ पाए, लेकिन बात यह है कि जहां कभी कोई न चढ़ पाया हो वह उस जगह की खूबी है कि वहां चढ़ा नहीं जा सकता।
आदमी करोड़ों वर्ष से है, सब आदमी ने वहीं चढ़ने की कोशिश की है। वह जिस पॉइंट पर हम पहुंचना चाहते हैं वह सुई की नोक है, जिस पर खड़ा नहीं हुआ जा सकता। लेकिन छलांग लगा कर सुई की नोक का छोटा सा अनुभव तो लिया जा सकता है गिरने के पहले, खड़ा तो नहीं हुआ जा सकता। जैसे एक आदमी छलांग लगाता है जमीन पर, तो हवा में आ तो सकता है, रुक नहीं पाता, वापस जमीन पर पहुंच जाता है। लेकिन एक भ्रम आ जाता है कि जब थोड़ी देर रुक सका तो ज्यादा देर क्यों नहीं रुक सकता हूं। दिमाग तो कहता है कि थोड़ी देर तो रुक ही गया था। और अगर अच्छी तरह से छलांग लगाई जाए और ज्यादा देर रुक सकता हूं। और जरा ज्यादा ताकत बढ़ाई जाए, तो और ज्यादा देर रुक सकता हूं।
लेकिन जंपिंग का स्वभाव ही ऐसा है कि1 वह सिर्फ भ्रम होता है, आपके पहुंचने और लौटने के बीच में जरा भी गैप नहीं है। आप रुकते एक सेकेंड नहीं हैं, लेकिन सिर्फ भ्रम होता है। जब आप जमीन पर उचकते हैं, तो जब आप ऊपर गए, और जब आपने नीचे आना शुरू किया, इन दोनों के बीच क्षण भर भी आप नहीं ठहरते। या तो आप जाते रहते हैं या आते रहते हैं, बीच में कभी नहीं रुकते जहां कि जिसको आप सफलता कह सकें। पुरानी विफलता और नई विफलता के बीच में छलांगें लगती रहती हैं। यानी जो मैं यह कह रहा हूं वह यह कह रहा हूं, एक विफलता और दूसरी विफलता के बीच में छलांग लगती रहती है। और वह जो बीच में छोड़ा था, आपको भ्रम पैदा होता है कि था, असफल हो गया था, वह आपको होता है भ्रम कि वह निकल गया हाथ से, इसलिए दूसरी छलांग लगानी पड़ती है। और सफलता यानी क्या? यानी सफलता का क्या मतलब है?
इधर मैं एक अलग शब्द का प्रयोग करता हूं, उसको मैं कहता हूंः सुफलता। सफलता नहीं, सुफलता। यानी फलवान हो जाना ही काफी नहीं है, अच्छे फलवान होना जरूरी है। फल ही लग गए और कड़वे हुए तो क्या मानी है। सफल होना काफी नहीं है, सुफल होना काफी है। और सुफल बड़ी और बात है। और मैं मानता हूं कि सुफल तभी लगते हैं जब कोई सफल होने की चेष्टा नहीं करता और विफल होने की फिकर नहीं करता, तब सुफल लग जाते हैं जीवन में। सफल होने की चेष्टा न हो, विफल होने की भीति न हो, तब सुफल संभावना बनती है। और जब हम यह कहते हैं कि यह हो नहीं सकता, तब हमारा सब कहने का कारण सिर्फ इतना ही है कि हम मान कर चल रहे हैं कि कुछ जो हमने बना रखा ढांचा, यह होना चाहिए। यह नहीं हो सकेगा, यह नहीं हो सकेगा, यह तो नहीं हो सकेगा। और आप क्या समझ रहे हैं कि करके आप इसको कर लेंगे।
यानी मैं यह कह रहा हूं, वह तो मैं समझ गया कि मेरी बात मान लेंगे तो शायद यह नहीं हो सकेगा, लेकिन क्या आप सोचते हैं कि जो आप कर रहे हैं वह करके आप कर लेंगे, तो वैसा भी नहीं हो सकेगा। असल में यह तो हो ही नहीं सकेगा। लेकिन इसमें यह भ्रम रहेगा कि हमने कोशिश की, उसमें यह रहेगा कि हमने कोशिश ही नहीं की। यानी बस इतना ही फर्क पड़ेगा। यह सफलता तो होने वाली नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

उसका कुल कारण, उसका कुल कारण इतना है, उसका कुल कारण इतना है कि आमतौर
से गैर-समझ में साहस होता है, और समझदार में साहस नहीं होता, तकलीफ यह है।

यह भी जिंदगी के पैराडाक्सेस में से एक है। गैर-समझदार में साहस होता है, समझदार में साहस नहीं होता। तो गैर-समझदार गैर-समझ की चीजों में ताकत लगा कर लगा रहता है, करता रहता है जोश में। और समझदार समझता बहुत है लेकिन कर नहीं पाता, वह ताकत नहीं लगा पाता। समझ के साथ साहस बड़ी जरूरी है। और साहस ऐसा मामला है कि कोई सोचता हो कि हममें होगा तभी तो हम करेंगे। ऐसा नहीं है साहस। साहस ऐसी चीज है कि आप करेंगे तो ही होगा। यानी यह जो, यह जो कठिनाई है, एक आदमी कहे कि नदी में मैं उतरूंगा तब जब मैं तैरना सीख लूंगा। तो ठीक है, यह कभी नहीं होने वाला। नदी में पहली बार तो बिना तेरे जाने ही उतरना पड़ेगा। और वह जो घबड़ाहट पैदा होगी नदी में बिना तेरे जाने उतरने से, उसी से तैरना निकलता है। उसी से तैरना निकलता है।
अभी मैं आया तो एक मित्र साथ थे, करोड़पति हैं। तो वे मुझसे कहने लगे कि आपकी बातें समझ में आती हैं, लेकिन एक मुझे बड़ी कठिनाई, आप कहते हैं, सब मनुष्यों को प्रेम किया जाना चाहिए। और मैं तो किसी भी मनुष्य को देखता हूं तो मुझे ऐसा लगता है कि वह सिर्फ मुझसे रुपया घसिटने आया हुआ है, तो मैं कैसे प्रेम करूं, मैं तो प्रेम नहीं कर सकता, मैं तो प्रेम नहीं कर सकता। तो जो मैंने आपसे कहा मैंने उनसे वह कहा। मैंने कहा कि वह आपसे कितने रुपये ले जा सकता? कोई करोड़पति तो रुपया खींचने आपके पास आता नहीं, कोई गरीब आदमी आता है1 कोई स्कूल का मास्टर है, कोई पढ़ने वाला विद्यार्थी है, किसी की पत्नी बीमार है, ऐसे कोई आता आपके पास। वह आपसे कुछ तो ले जाएगा, क्योंकि उस गरीब आदमी की ले जाने की हिम्मत भी तो गरीब ही होती है। तो कोई करोड़ रुपये तो ले नहीं जाएगा आपसे। आप दे भी दो तो भी घबड़ा कर वहीं मर जाएगा, ले जा नहीं सकता। दस-पचास रुपया आपसे... । तो मैंने उनसे कहाः एक प्रयोग करें। उन्होंने कहाः क्या? मैंने कहा कि अब जो आदमी आए आपके पास, एक सात दिन का प्रयोग करें, कि वह आपसे पच्चीस मांगे आप उसको पचास दे दें, और देखें क्या हुआ। उन्होंने कहाः कितना हर्जा हो जाएगा। मैंने कहाः कोई खास हर्जा नहीं, सिर्फ सात दिन करके देखें।
वे सात दिन बाद मेरे पास आए और मुझसे कहने लगेः मैं चकित हो गया, कि जैसा मैं झंझट में पड़ जाता, फिर वैसा वह आदमी झंझट में पड़ गया। उसने पच्चीस मांगे बहुत हिम्मत करके, मैंने उसको पचास दे दिए, मैंने कहाः ये ले जाओ, और जब जरूरत हो तो आ जाना। तो वह एकदम मुश्किल में पड़ गया। उसने कहाः नहीं, आप क्या कह रहे हैं! नहीं-नहीं, पचास नहीं, मुझे पच्चीस चाहिए। नहीं, तुम पचास ले जाओ। और उन्होंने कहा कि और मैं पहली दफा अनुभव कर पाया कि उसने क्या मुझे चिट किया। वह जो तकलीफ थी वह यह थी कि पच्चीस में से झटक न लेंगे, आप तो मुझे पचास दिए। तो वह तकलीफ तो गई, वह तकलीफ तो रही नहीं। और वे कहने लगे कि मैं इतना हंसा पीछे उस आदमी की परेशानी देख कर कि वह कैसी मुश्किल में पड़ गया। उसने दरवाजे तक लौट-लौट कर मुझे गौर से देखा कि बात क्या है। यानी मैं पच्चीस ही मांगने आया हूं इस आदमी ने पचास दे कैसे दिए! उन्होंने कहा कि मैं इतना शांति से सोया उस रात कि मैं कभी सोया ही नहीं था। और मुझे बार-बार हंसी आई इस बात पर, और तब उन्होंने कहा कि मुझे खयाल आया कि जब कोई मुझसे पच्चीस मांगने आता है और किसी तरह दस-पांच मैं उसको देता हूं या नहीं देता हूं या पच्चीस देता हूं, तो जिस तरह की संतोष की नींद वह सोता होगा और मैं ऐसा असंतुष्ट रह जाता हूं, आज हालत उलटी हो गई। आज वह आदमी रात भर सो नहीं पाया। बार-बार मुझे खयाल आया कि मामला क्या है, मैंने पचास दे कैसे दिए! तो मैंने उनसे कहा कि अब वह आदमी दुबारा आए तो आप मुझे बताना। वह छह महीने हो गए, उन्होंने कहा कि वह आदमी दुबारा नहीं आया। वह आदमी दुबारा नहीं आया।
हम जो, हम जो, मेरा कहना यह है कि हम प्रयोग ही नहीं करते जीवन में।
और मैं यह कहता हूं कि प्रयोग से हम डरते हैं, और डरने का क्या है हमारे पास, खो क्या जाएगा। यानी सबसे बड़ी कठिनाई है कि एक दफे हम यही पक्का पता लगा लें कि खोने को क्या है हमारे पास जो खो जाएगा। और ऐसा क्या है जिसको हम बचा कर बचा लेंगे आखिर में। वह कुछ बचने वाला नहीं है। तो सिर्फ नासमझ बचाने की कोशिश में लगे हैं।

यानी मैं यह पूछता हूं, पुर आ गया है और सारा गांव डूब रहा है, और कुछ लोग अपने घर का सामान अपने सिर पर लिए हुए उस पुर में तेरे चले जा रहे। वे कहते हैं, कुछ बचा लेंगे। मैं अगर बिना कुछ सामान लिए चला जा रहा हूं तैरता हुआ, तो वे मुझसे कहते हैं, तुम मूढ़ हो, तुम बिल्कुल पागल हो, अरे कुछ बचा लो, पुर आ गया। और मैं उनसे कहता हूं कि जब सागर में पहुंचना सुनिश्चित हो गया है, पुर ही पुर है और जमीन पानी से डूबी है, तो तुम नाहक उतना बोझढोए जा रहे हो इतनी देर और। यानी मतलब यह है कि कम से कम मैं तो हलके होने का मजा ले ही रहा हूं, तुम वह मजा भी नहीं ले पा रहे हो। जब कि यह पक्का है कि यह सागर में नदी गिर ही जानी है और तुम और तुम्हारा सामान दोनों गिर जाने हैं। अंत में कौन पागल था, तय करना जरा मुश्किल है। लेकिन चूंकि अधिक लोग अपना-अपना सामान बचाए हुए, इसलिए मैं ही पागल लगूंगा। इसलिए मैं ही पागल लगूंगा। जहां जिंदगी मौत में ही समाप्त हो जानी है...

प्रश्नः सोच-समझ हो जिंदगी में, आखिरी में तो नष्ट होती है।

हूं, हूं।

प्रश्नः लेकिन मैं आपको बताऊं, सारा दिन कितना कोई आदमी पंद्र्रह हजार का एक मकान बेच दिया, उसने बारह हजार दिया, हमने कब्जा दे दिया, तीन हजार नहीं दिया। अब एक पंद्रह दिन का समय 1 और मेरे पास मैं नहीं है, छोड़ दें, दे दूंगा। ऐसा करते- आधीदुनिया अपने को भी पागल गिनने में कह देगी।े

कोई हर्जा नहीं है, कोई हर्जा नहीं है।

प्रश्नः समाज के साथ जीना बड़ी मुश्किल है।

न, न, न, यह हमारा खयाल ही गलत है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हम कभी समझ नहीं पाते हैं, हमारी जो सारी तकलीफ है वह यह है, हमारी सारी तकलीफ है वह यह है कि हम यह कभी सोच ही नहीं पाते हैं कि जब एक पैसा बिना लिए हुए जमीन पर आते हैं, तो जो भी हम दे रहे हैं, ले रहे हैं और जब बिना एक पैसा लिए विदा होना पड़ता है, तो जो भी हम ले रहे हैं, दे रहे हैं वह सिवाय खेल से ज्यादा मूल्य का नहीं है। उस खेल में किसने धोखा दिया है और किसने ज्यादा पैसे बना लिए और किसने नोट इकट्ठे कर लिए हैं और किसके पास कम पड़ गए हैं, यह जहां तक खेल के भीतर देखने का संबंध है बड़ा मीनिंगफूल है, लेकिन जहां-जहां खेल के ऊपर से देखने का संबंध है, वहां बड़े हंसने योग्य है। और चूंकि हम खेल के भीतर ही खड़े होकर इसकी सार्थकता देखने की कोशिश करते हैं, इसलिए तकलीफ हो जाती है।
समझो कि कुछ लोग फुटबाल खेल रहे हैं या वालीबाल खेल रहे हैं, और वे यहां से गेंद को वहां फेंक रहे हैं और वहां से गेंद को यहां फेंक रहे हैं। और वे भारी गंभीर हैं और जान दांव पर लगाए हुए हैं। और भीड़ बिल्कुल उत्सुक खड़ी है कि अगर एक हार गया तो गोली चल जाए, कि लकड़ी चल जाए, कि हत्या हो जाए, कुछ भी हो सकता है। कुछ भी हो सकता है। इतनी गंभीरता है। और खेल के भीतर जो भी सम्मिलित हो गया है वह इतना ही गंभीर है और इतना ही उत्तेजित है। और एक आदमी खेल के बाहर खड़े होकर देखे तो वह बहुत हैरान होगा कि एक गेंद को इस तरफ से उस तरफ फेंकना उस तरफ से इस तरफ फेंकना, इसमें ये लोग इतना रस क्यों ले रहे हैं। इस खेल के बाहर, खेल के भीतर तो बड़ा अर्थपूर्ण है, हार है और जीत है। और हार और जीत इस पर है कि गेंद इस तरफ गई कि उस तरफ गई, इस सब पर हार-जीत निर्भर है। लेकिन खेल के बाहर अगर कोई घड़ी भर को खड़े होकर देखे, तो उसे सच में ऐसा लगे कि बड़ा पागलपन मालूम हो रहा है। बहुत पागल मालूम हो रहा

है। नहीं, लेकिन वे भी गेंद को नहीं फेंक रहे हैं, गेंद के साथ अहंकार चल रहा है। गेंद तो सिर्फ बहाना है और निमित्त है। बाहर से तो इतना ही दिख रहा है कि गेंद इधर से उधर जा रही है। लेकिन गेंद के साथ अहंकार जुड़ा हुआ है। गेंद सिर्फ निमित्त है। घोषणा करेगी गेंद इस बात की कि किसका अहंकार जीता और किसका हारा। लेकिन अगर अहंकार की गेंद के भी वहां खड़े होकर कोई देखे कि समझ लो कि मैं हार गया और तुम जीत गए, फिर क्या है। तो चीजें बहुत एब्सर्ड मालूम पड़ेंगी कि बड़ी एब्सर्ड चीजें हैं।
यानी मामला ऐसा है, मैं लाओत्सु का निरंतर कहता हूं न, वह कहता है कि
एक आदमी मुझे हराने आया, तो मैं जल्दी से लेट गया चित। मैंने कहाः चित हो जाऊं न। वह आदमी तब खड़ा ही था। मैंने कहाः मैं चित्त हो जाऊं न, आ जाओ मेरी छाती पर बैठ जाओ। वह आदमी जरा परेशान हो गया। मैंने कहाः जल्दी से बैठ जाओ और जीतने का तुम मजा ले लो ताकि मैं अपने काम में लग जाऊं। अगर वह आदमी लाओत्सु के ऊपर बैठ गया है तो म.ूढ मालूम पड़ा होगा। पागल कौन था? यानी सवाल यह है कि इसमें पागल कौन था। हो सकता है उसने बाहर जाकर लोगों को कहा होगा कि कुछ नहीं मैं अभी चित करके चला आ रहा हूं। लेकिन पागल कौन था? और अगर कहीं कोई आखिरी हिसाब है इस दुनिया में, तो उस दिन लाओत्सु हंसता देखा जाएगा और वह आदमी रोता हुआ देखा जाएगा। क्योंकि उस आखिरी हिसाब में पता चलेगा कि इस आदमी ने बड़ा पागलपन किया। और यह आदमी अदभुत समझ का आदमी है, यह कह रहा है कि जल्दी से करो क्योंकि इसमें देर लगेगी, नाहक तुम कोशिश करोगे, मैं रोकूंगा, बहुत देर-दार हो जाएगी और समय खराब होगा, मेरा काम भी अटकेगा। तो मैं जल्दी से लेटा जाता हूं, तुम मेरे ऊपर बैठ जाओ और तुम खबर कर देना कि चित्त करके आ गए। लेकिन तब उस आदमी को मजा भी न रहा, क्योंकि यह आदमी खुद चित हुआ जा रहा, चित करने में मजा था। उसको करने में मजा था, कि कर दिया न। वह करने में मजा था, ऊपर बैठ जाने का मजा था, तो इसने बिठा लिया तो सब बेमानी हो गया।
मैं जो कह रहा हूं, निश्चित ही मैं जो बात कह रहा हूं वह अंततः बिल्कुल
ही पागलपन की है। इस दुनिया में जिसको कि पागलों ने बनाया और उनका जो खेल है और उसके नियम हैं, उसमें बिल्कुल पागलपन की बात है।
अभी मैं एक कहानी पड़ता था, पीछे कभी कहा भी। एक पागल आदमी एक सड़क के किनारे बैठा हुआ है। डंडी बांध रखी है और धागा बांध रखा है और मछलियां पकड़ रहा है सड़क पर बैठा हुआ। कोई पानी-वानी नहीं है। तो जो भी उधर से निकलता है तो वह उसको समझता है कि पागल है। कि यह क्या कर रहे हो, तो वह कहता है, मछलियां पकड़ रहा हूं। तो वह आदमी हंसता है और वह कहता है, कितनी पकड़ीं अब तक? तो वह कहता, तुम भी बड़े पागल, अरे, कहीं सड़क पर मछलियां पकड़ी जातीं! क्योंकि वह जो आदमी, वह यही काम कर रहा सुबह से। वह सुबह से यही काम कर रहा है। और सांझ को वह कहता है कि मैं यह देख रहा हूं कि यहां से एक भी समझदार आदमी निकलता है जो कुछ न पूछे। एक आदमी नहीं निकलता। जो भी निकलता है वही पूछता हैः क्या कर रहे हो? वह कहता है, मछलियां पकड़ रहा हूं। तो कितनी पकड़ी अब तक? क्योंकि वह आदमी इसको पागल सिद्ध करने की कोशिश में है, तो वह कहता है कि अरे बड़े पागल हो, कहीं सड़क पर मछलियां पकड़ी जातीं। और तब वह आदमी उदास होकर चला जाता है, जो भी आता है।
खेल के भीतर के नियम हैं और खेल के बाहर खड़े होने की क्षमता है। मैं धार्मिक या संन्यासी उसे कहता हूं जो खेल के बाहर खड़े होकर खेल को देख लेता एक दफा। एक दफे भी खयाल में आ जाए खेल के बाहर से बात, तो आप दूसरे आदमी हो गए। तब खेलिए या न खेलिए वह सब अलग मामला, उससे कोई मतलब नहीं, बिल्कुल दूसरे आदमी हो गए।
कठिनाई जो आपको मालूम हो रही है इसलिए मालूम हो रही है कि आपके मन का
एक हिस्सा यह बात समझ लेता है कि ठीक है और आपके मन का दूसरा हिस्सा अभी भी ठीक माने जा रहा है कि वह खेल के नियम ठीक हैं नहीं तो सब गड़बड़ हो जाएगा। दोहरे हिस्से हो जाते हैं। इससे सब गड़बड़ हो जाती है। लेकिन इधर मैं सोचता हूं कि अगर कभी भी कोई हिम्मत करके, तो फिर यह इतने आनंद का अनुभव होता है कि जिसका कोई हिसाब ही नहीं है, जिसका कोई हिसाब ही नहीं है, कोई हिसाब ही नहीं है। यानी चूंकि ले क्या जाओगे।

अभी मैं, एक मजा हुआ, खंडवा मैं आया, तो... खो गए। तो एक छोटी ट्रेन इंदौर जाती है, उसमें मैं बैठा, वह कोई घंटे भर से छूटेगी। एक आदमी आया, अकेला ही था मैं, तो उसने आकर खिड़की के पास आकर कहा कि मैं बड़ी तकलीफ में हूं। तो मैंने कहा कि तुम तकलीफ मत सुनाओ, तुम यह बोलो, मैं क्या कर सकता हूं? तो उसने मुझे गौर से देखा। क्योंकि तकलीफ सुनाना खास जरूरी बात, तभी वह आपको झंझट में डाल देता है। वह बता रहा है कि मेरी पत्नी बीमार है, और फिर आप उसको मना नहीं कर सकते कि हम चार आने न देंगे। जब आप उसकी कहानी सुन लेते हैं, आप फंस जाते हैं, खेल के भीतर आ जाते हैं। जब उससे आप उसकी पूरी कहानी सुन लेते हैं, वह बताता है कि मेरी पत्नी बीमार है, और बच्चा भूखा मर रहा है, और मैं बड़ी मुसीबत में पड़ा हुआ हूं। तो या तो आप यह कहिए कि यह सब झूठ है। जो कि एक दुखी आदमी से कहना अत्यंत कठोर मालूम पड़ता है। और या फिर अब आप अगर मान लेते हैं कि ऐसा है, तो फिर उसको कुछ देना जरूरी हो जाता है। मैंने उससे कहाः तुम तकलीफ मत सुनाओ, तुम यह बोलो मैं क्या कर सकता हूं? उसने मुझे गौर से देखा। उसने कहाः मैं तो तकलीफ भी सुनाता हूं तब भी मुश्किल से कोई कुछ करता है, आप बिना तकलीफ सुने! तुम यह बोलो कि मैं क्या कर सकता हूं? तो उसने बड़ी हिम्मत करके कहा कि मुझे एक रुपया दे दें। मैंने कहाः तुम्हारी हिम्मत बहुत कमजोर है। इतनी सी तकलीफ है जो एक रुपये से पूरी हो जाएगी? नहीं-नहीं, तकलीफ तो बहुत बड़ी है, तकलीफ तो बहुत बड़ी है। फिर तुम एक रुपया क्यों मांगते, मैंने कहा, तुम ठीक से मांग लो। तो उसने मुझे देखा, वह समझा शायद मैं मजाक कर रहा हूं, कि बात मजाक की हो गई। एक रुपया बहुत था। एक गरीब आदमी, एक भिखारी और क्या मांग सकता था। बहुत उसने हिम्मत आखिरी कर ली थी। एक रुपये का भी पक्का भरोसा तो नहीं था उसे। रुपया मांगेगा तब दो आने मिल सकते हैं इसकी संभावना रही होगी। उसने बहुत ही हिम्मत की, उसने कहा, अच्छा आप नहीं मानते हैं तो दो रुपया दे दें। उसने मुझसे कहा कि आप नहीं मानते हैं तो दो रुपया दे दें। तो मैंने उसको दो रुपया दे दिया। वह कुछ बड़ी बेचैनी में चला गया।
वह पांच-सात मिनट बाद वापस आया, कोट उतार आया, टोपी रख आया। मैंने कहाः
यह अजीब आदमी है, वह तो वापस आ गया, कोट-टोपी बदल कर आ गया। नीचे रख आया होगा। आकर उसने कहा कि मैं बड़ी तकलीफ में हूं। मैंने कहाः तुम तकलीफ की बात ही मत करो। तुम तो यह बताओ कि मैं कर क्या सकता हूं तुम्हारे लिए? तब तो उसने मुझे ऐसे देखा कि मैं निपट पागल हूं। हद्द हो गई, यानी यह आदमी है कैसा! मतलब अभी इससे दो रुपये ले गए हैं। तो तुम यह बात बताओ कि मैं तुम्हारे लिए कर क्या सकता हूं?
उसने कहाः आप मुझे पांच रुपये दे दें। वह बहुत हिम्मत बढ़ा कर आया है। मैंने उसे पांच रुपये दे दिए और कहा कि जाओ। अब उसकी बड़ी मुसीबत हो गई। अब मुसीबत यह हो गई कि यह आदमी, अब इसको छोड़ना इतनी जल्दी ठीक भी नहीं है और अब जाना भी उसे बड़ा मुश्किल होने लगा। लेकिन वह फिर आया, अब वह पीली पगड़ी रख कर आ गया। और उसने कहा कि मैं मेरी टिकट खो गई। मैंने कहाः तुम टिकट-विकट की बात ही मत करो। उसने कहा कि मुझे जाना है। मैंने कहाः उससे मुझे कुछ मतलब नहीं, तुम यह बताओ मैं तुम्हारे लिए कर क्या सकता हूं? तो उसने कहा कि आप आदमी हो कि क्या हो, आप पागल तो नहीं हो, आप मुझे पहचाने नहीं? मैंने कहाः मैं तो इस परेशानी में पड़ा था कि मालूम होता है तुम मुझे पहचान नहीं पा रहे, बार-बार दूसरा आदमी समझ कर आ रहे। उससे मैंने कहा कि मैं यही सोच रहा हूं, मैं भी यही सोच रहा हूं कि यह आदमी मालूम होता है भूल जाता है और बार-बार मेरे पास आ जाता है। मैंने उससे कहाः फिर भी तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूं? उसने कहाः कुछ मुझे नहीं करवाना है, मुझे कुछ भी नहीं करवाना। कुछ और तुम्हें चाहिए? मुझे कुछ भी नहीं चाहिए।
लेकिन उस आदमी ने कहा कि अब मैं किसी को धोखा नहीं दे सकूंगा। क्योंकि मैं खुद ही धोखा खा गया। और बूढ़ा आदमी था। उसने कहा कि मैं किसी को धोखा नहीं दे सकूंगा, मैं खुद ही धोखा खा गया।
और क्या बनता और बिगड़ता क्या है। वह आदमी सात रुपये ले गया, उससे क्या
बन और बिगड़ गया। और मेरे पास होते तो दुनिया का क्या भला हुआ जा रहा था, और उसके पास है तो क्या बुरा हुआ जा रहा है। यह अंत में हो क्या रहा है।

प्रश्नः हर आदमी कुछ करे न, हमको बुद्धू बना कर गया इसलिए दुख होता है।

हां, तो वह जो, वह जो तकलीफ है न, वह जो तकलीफ है, वह जो तकलीफ है, जिंदगी
ही तुम्हें बुद्धू बना रही, तुम्हें खयाल में नहीं। जन्म मिल जाता है कोई तुमसे पूछता नहीं, मौत आ जाती है कोई तुमसे पूछता नहीं। जिंदगी ही बुद्धू बना रही, बना रहा तो भगवान ही बुद्धू बना रहा है। जहां कुछ भी पता नहीं वहां बुद्धू हम हैं। अब इसमें और अगर एकाध आदमी भी थोड़ा-बहुत सहायता बंटा रहा, तो इसमें हर्ज क्या है। जहां हमें कुछ भी पता नहीं है वहां बुद्धिमान होने की बात ही पागलपन है। तुम्हारे पेट में खाना कौन पचा रहा है, कौन खून बना रहा है, क्यों बना रहा है, किसलिए बना रहा है, कुछ भी पता नहीं। किसलिए आकाश है, किसलिए चांद-तारे हैं, किसलिए जमीन है, किसलिए नदियां बहती हैं, फिर बादल बनती हैं, कुछ भी तो पता नहीं है। जहां कुछ भी पता नहीं वहां एक आदमी और मुझे थोड़ा धोखा दे गया और दो रुपये ले गया, तो इसको भी मैं क्यों परेशानी या कारण बना लूं। मतलब बुद्धू तो मैं हूं, क्योंकि हमें कुछ भी तो पता नहीं है, बुद्धिमानी है कहां। नहीं, लेकिन असल कारण यह है कि हम छोटी- छोटी चीजों में बुद्धिमान होकर यह खयाल पैदा कर लेना चाहते हैं कि नहीं, बुद्धिमान हम हैं। और ये बड़े सवाल ही चारों तरफ से घेरे खड़े हैं, जिनका कोई उत्तर नहीं है। उनकी तरफ आंख नहीं उठाते, छोटे-मोटे खेल के भीतर उत्तर बना लेते हैं और समझ लेते हैं कि हम बुद्धिमान हैं।
असल में चूंकि हम बुद्धू हैं इसलिए बुद्धू होने की बात खुल न जाए इससे
हम चौबीस घंटे डरे रहते हैं। वह है बात। वह असली है। क्योंकि अज्ञानी हम हैं वह असलियत है। इसलिए कोई उसको जरा सा भी उकसा देता है, उखाड़ देता है, तो हम फिर परेशान हो जाते हैं और हम उस पर टूट पड़ते हैं। हालांकि वह बेचारा कुछ नहीं कर रहा है, वह सिर्फ इतना ही कर रहा है कि आपका कपड़ा उठा कर कह रहा है कि इसके नीचे चमड़ी है, और वह कुछ भी नहीं कर रहा है। वह चमड़ी है, चाहे कपड़ा वह उठाए और चाहे न उठाए। जिस दिन हमें यह समझ में आ जाए कि जहां जीवन का क ख ग भी पता नहीं है वहां और क्या, क्या मतलब है। यानी अज्ञान की चूंकि स्वीकृति नहीं है हमारे मन में कि हम अज्ञानी हैं, इसलिए कोई अज्ञानी सिद्ध कर दे तो पीड़ा होती है। लेकिन अज्ञान की स्वीकृति हो जाए तो फिर क्या पीड़ा है। इतना ही हम कहेंगे कि भई तूने ठीक किया, हम अज्ञानी थे, तूने और बताया कि अज्ञानी हैं। तेरी बड़ी कृपा है, तूने हमको जाहिर कर दिया कि हम अज्ञानी हैं। ऐसी प्रतीति और ऐसी स्वीकृति धार्मिक आदमी का जन्म बनती, नहीं तो धार्मिक नहीं बन सकता आदमी।

प्रश्नः तो ऐसा धार्मिक बन कर फिर बाद में जीना पड़ेगा।

तो जीएंगे कब तक, ऐसे भी कब तक जीएंगे, ऐसे भी कब तक जीएंगे। न भी बने धार्मिक तो भी कब तक जीएंगे।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां-हां, गिन लेंगे, गिन लेंगे। और कौन कह सकता है कि जिसको सब लोग गिनते हैं जो अपने को खुद भुलवा देता है, वह आदमी बुद्धिमान है या नहीं यह कौन कह सकता है। कौन कह सकता है।

प्रश्नः और जो आपके लिए भी बुरा कहे और हमें दुख लगता है।

नहीं लगना चाहिए।

प्रश्नः पर हमारे अहंकार को चोट लगती है।

तुम्हारे अहंकार को चोट लगती है। मेरे को बुरे कहने से तुम्हारा कोई सवाल नहीं है।

प्रश्नः मगर हमको चोट लगती है।

तुम्हें चोट लगती है कि हम जिसको इतना अच्छा मानते हैं, तो मतलब यह आदमी हमको बुद्धू सिद्ध कर रहा है कि वे बुरे हैं। तुम्हारी तकलीफ तुम्हारी, मुझसे उसका कुछ लेना-देना नहीं, मैं कहीं आता नहीं उसमें। यानी जिसको हम कहते हैं कि इतना अच्छा आदमी है, उसको ये कह रहे हैं कि लंपट है। यह हमको गलती किए जा रहा है आदमी। हम जिसको कहते हैं गुरु कहिए, तो यह कहता है कि वह आदमी सुनने योग्य नहीं है बिल्कुल। हम कहते हैं चरण छूने योग्य है, यह आदमी कहता है देखने योग्य नहीं है। तो यह आदमी हमारी बुद्धि पर शक किए जा रहा है, यह हमको कह रहा है कि तुम बुद्धू हो, तुम किसके पास पड़े हो जो किसी काम का नहीं, उसके पास तुम जा रहे हो। मुझसे कुछ लेना-देना नहीं है। मुझे लेकर बीच में फंसा मत लेना, वह तुम्हारी लड़ाई आपसी है, उससे मुझसे कुछ संबंध नहीं है।
मगर तुम्हें तकलीफ हो जाती है। और तुम सिद्ध करने में लग जाओगी। और उस सिद्ध करने में जैसे वह मुझे बड़ी-बड़ी गालियां देगा वैसी बड़ी-बड़ी तुम मेरी प्रशंसा करोगी। वह प्रशंसा भी तुम ईजाद करोगी क्योंकि जिसको तुमने पूजा है उसकी प्रशंसा तुम्हें ईजाद करनी पड़ेगी। सब भगवान भक्त बनाते हैं। क्योंकि भक्त को बिना भगवान बनाए बड़ी मुश्किल पड़ जाएगी, वह उसको सिद्ध करना पड़ता है कि हां, हमारा गुरु बिल्कुल भगवान है, महात्मा है, परम महात्मा है, यह है, वह है। उसको बेचारे को सिद्ध करना पड़ता है। क्योंकि अगर वह नहीं निकले, जो पैर छुए थे, वह सब, उसका क्या होगा। उसके लिए रेशनेलाइज करना पड़ता उसे। और जितना वह अकड़ता है, उसको पता नहीं कि जितना वह जोर से भगवान सिद्ध करेगा, उतना जिसको कि भगवान उसे नहीं मानना है, वह उतनी भूलें खोज कर ले आएगा। और तुमने जो भगवान खड़ा किया है उसमें भूलें बहुत जल्दी मिल जाएंगी, क्योंकि वह भगवान तुम्हारा खड़ा किया हुआ है, उसमें भूलें बहुत मिल जाएंगी। तुमने तो कह दिया कि हमारे भगवान को पसीना ही नहीं निकलता। अब गर्मी पड़ेगी और पसीना निकलेगा, तो वह जो विरोधी है, वह देख कर चला जाएगा, वह कहेगा, सब अफवाह है, भगवान नहीं, पसीना निकलते देखा है। बस खत्म हो गया मामला। और तुमने इसलिए कहा था कि भगवान की देह से कहीं पसीना निकलता है। तो महावीर की देह से पसीना नहीं निकलता, कितनी ही धूप पड़े पसीना नहीं निकलता। क्योंकि साधारण देह थोड़े ही है कि पसीना निकल आए उससे।

प्रश्नः तो ऐसा जीने का कोई मार्ग हो सके, जिसे टोटल सरेंडर तक जीए तो चेतना जाग्रत हो, किसी से ऐसी भूल ही न होए।

यह भी हमारा सोचना कि भूल हो ही नहीं, हमारे अहंकार की अपेक्षा है। भूल होगी। स्वीकृति का मतलब यह नहीं है कि भूल न हो। वह स्वीकृति कहां गई।
ताकत लगाएंगे कि भूल न हो जाए, फिर सरेंडर कैसे हो। सरेंडर तो वही कर सकता है जो कहता है कि हमें पता ही नहीं क्या भूल है और क्या ठीक है, और हमें पता ही नहीं है कुछ। वह यह कहता है कि हमें ये पैर प्यारे लगे तो हमने सिर रख दिया। अब पता नहीं ये हैं या नहीं, यह हमें कुछ पता नहीं, हमको लगे प्यारे। और तुमको प्यारे नहीं लगे, बात खत्म हो गई। तुमको ऐसा लगा कि इसके सिर पर लट्ठ मार दें, तो तुमने लट्ठ मार दिया। यह तुम्हारा लगना था, यह हमारा लगना था। और हमें कुछ पता नहीं कि तुम ठीक हो कि हम ठीक हैं। मेरा मतलब समझे न? हमें इसका पक्का ही पता होता तब तो कुछ निर्णय हो जाता। वह निर्णय नहीं हो पाता।
ईसाई मानते हैं कि जीसस भगवान का बेटा है। यहूदी मानते हैं कि लंपट, आवारा है, इसको सूली के सिवाय कोई रास्ता नहीं इसको सुधारने का। लेकिन यह ईसाई की मान्यता है और वह यहूदी की मान्यता है, और जीसस का कोई पता नहीं कि वे कौन हैं। कोई पता नहीं। उसका पता हो भी नहीं सकता। उसका कोई पता नहीं हो

सकता। ऐसा, यानी मेरा कहना यह है कि हम अपने अज्ञान को अगर स्वीकार करते नहीं, भूल करने को तो स्वीकार कर ही लेते हैं, उसमें कोई कठिनाई ही नहीं है। भूल हमसे हो ही सकती है। और जो आदमी भूल को स्वीकार ही कर लेता है कि हो ही सकती है, वह झगड़े में नहीं पड़ता। वह कहता है हो गई होगी, हो सकता है। और तब एक सरलता आनी शुरू होती है। और वह सरलता द्वंद्व नहीं पैदा करती है। वह सरलता द्वंद्व पैदा नहीं करती। और निर्द्वंद्व चित्त हुए बिना कोई शांति नहीं है।

प्रश्नः काम-धंधे में बड़ी दिक्कत है, ऐसा हो ही नहीं सकता।

अब मैं यह पूछता हूं कि अभी दिक्कत नहीं हो रही है?

प्रश्नः अभी भी हो रही है।

नहीं, तो फिर सवाल यह है कि अगर अभी न हो रही होती, अगर अभी न हो रही होती, दिक्कत बिल्कुल न हो रही होती, तब तो सवाल ही न था। दिक्कत हो रही है। और वह दूसरा प्रयोग तो कभी किया नहीं। जिन्होंने किया वे तो कहते नहीं होती। मैं कहता हूं कि नहीं हुई है दिक्कत।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं, मेरा मतलब नहीं समझे आप। मैं जो कह रहा हूं, आप जो कर रहे हैं उसमें दिक्कत हो रही है। नहीं हो रही तब तो सवाल ही नहीं उठता, बात ही खत्म हो गई है। फिर तो मुझसे पूछने का कोई प्रश्न ही नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, नहीं है बात। दिक्कत तो हो रही है। और मैं जो कहता हूं कि यह भी एक जीने का ढंग है। वह आप कहते हैं उसमें बहुत दिक्कत हो जाएगी। और उसका आपको कोई पता नहीं, क्योंकि आप जीए नहीं। और मैं तो कहता हूं कि उसमें कभी दिक्कत नहीं होगी।
मैं नौकरी पर था, जिस दिन मैंने नौकरी छोड़ी तो मैंने घर खबर की कि वह नौकरी छोड़ आया हूं। तो घर के लोग बड़े परेशान हुए। उन्होंने कहाः तुम यह क्या करते हो! सड़क पर खड़े हो जाओगे। मैंने कहाः नौकरी देकर तब भी सड़क पर ही खड़ा था। तुम भूखे मर जाओगे। तो मैंने कहा कि मरना होता ही है। और मरने के बाद क्या पता चलता होगा कि भूखे मरे कि खाकर मरे। सो मर ही जाऊंगा, इससे कोई ऐसी चिंता की बात नहीं है। ठीक है। मैंने कहाः वह तो छोड़ ही दी है। मैंने कहाः उसका तो अब कोई उपाय ही नहीं है।
वे बड़े चिंतित हुए, बड़े परेशान हुए कि हम क्या इंतजाम करें, क्या हम इंतजाम करें? मैंने कहाः तुम अपना इंतजाम करो, वही ठीक है। यानी मेरी तुम क्यों फिकर करते हो। अब मैं गैर-इंतजाम के जीकर देखना चाहता हूं। और मैं इतना हैरान हुआ हूं कि जब तक नौकरी पर था और व्यवस्था कर रहा था, तब हजार चीजें थीं, जो व्यवस्था नहीं हो सकती थीं। और जब से वह मैंने छोड़ दिया, फिर मैंने व्यवस्था भी छोड़ दी। इसलिए जो हो जाता है वह मेरी व्यवस्था है, जो नहीं होता उसका मुझे सवाल ही नहीं है।
अभी कोई, मुझसे एक बहन मिली और उसने कहा कि मैं कुछ पूछना चाहती हूं, आप... तो नहीं होंगे। मैंने कहाः पूछो। उसने कहा कि कई दफा मुझे ऐसा लगता, आपकी कई जरूरतें पूरी न हो पाती हों, तो मैं कुछ कर सकूं। मेरी जो जरूरत पूरी हो जाती तभी मैं समझ पाता हूं कि जरूरत थी। क्योंकि मेरे पास पूरा करने का तो कोई उपाय ही नहीं है। तो जब जरूरत... तब मुझे पता चलेगा कि अरे यह जरूरत थी। इस कमरे में यह कुर्सी भी होनी चाहिए थी। जब कुर्सी आ जाती तभी मुझे पता चलता। और जब नहीं आती तब मैं समझता हूं कि नहीं है कुर्सी। तो

गैर-कुर्सी के कमरे में जीता हूं, कुर्सी आ जाती है तो कुर्सी वाले कमरे में जीता हूं। कमरा है तो कमरे में जी लूंगा, कमरा नहीं तो बाहर जी लूंगा। मेरा कहना यह है, और यह जो एक दफा खयाल आ जाए न, तो कठिनाई सिर्फ इसमें
ही नहीं है, सिर्फ कठिनाई इसमें ही नहीं है। बाकी कठिनाई सत्य है। और बराबर किसी भी दिन दुनिया को अगर अच्छा बनना है और अच्छे आनंद से जीना है तो कुछ ऐसे ही जीना पड़ेगा।
वे एक मित्र एक किताब दे गए थे1 ए कोआन। वह एक बहुत अदभुत है वह किताब।
वह आपके पास है, उसे देखना चाहिए। वह "कोआन" का प्रयोग बड़ा मीनिंगफूल है। ठीक संन्यासी को जैसा होना चाहिए वैसा है। अब एक आदमी ने जो वह "कोआन" ही है, तो वह सब छोड़ दिया है। वह पैसा-वैसा नहीं रखता, वह कुछ नहीं रखता। वह सड़क पर चला जाता है और आपके जूते में गंदगी है, तो वह कहता है, रुकिए, जरा मैं आपका जूता साफ कर दूं। और पैसे नहीं लेता हूं। पैसे नहीं लेता हूं। मगर जूता गंदा है तो मैं साफ कर देता हूं। और मैं फुरसत में हूं। और मुझे कोई काम नहीं है। अगर आप नाराज न हों, तो थोड़ी देर रुक जाइए, मैं जूता साफ कर देता हूं। वह आपका जूता साफ कर देता। अब आप बड़ी बेचैनी में पड़ जाते हैं। आप उसे कहते कि चलो चाय तो पी लो। वह कहता है, मैं चाय ले चुका हूं। मैं दो जूते और साफ कर चुका हूं। अब मैं तुम्हारे लिए क्या करूं? वह कहता है, कुछ करने की बात नहीं है। कभी जूता गंदा हो तो मैं इधर उपलब्ध होता हूं, मैं जूता साफ कर देता हूं। वह आदमी दिन भर जूते साफ करता रहता है, किसी घर, दुकान में कचरा साफ कर देता है। कहीं थक जाता है तो किसी से पूछ लेता है, यहां लेट जाऊं, रात सो लूं न। कोई उसे खाने के लिए बुला कर ले जाता है, कोई उसके लिए कपड़े दे देता है। न वह कपड़े इकट्ठे करता है, न वह खाना इकट्ठा करता है।
और आज जापान में ऐसी "ए कोआन कम्युनिटीज" कई हैं। हर गांव में दस-पच्चीस लोग जो "कोआन" ही हैं। जो यही काम करते हैं। उनको आप खबर कर आते हैं कि हमारे घर बरात आने वाली है। वे कहते हैं, हम आ जाएंगे, हम बड़े फुरसत में हैं, हमें कोई काम नहीं है। वे आदमी दिन भर काम करते हैं, सांझ जाने लगते हैं, आप उनसे कहते हैं, खाना तो खा जाओ, तो वे कहते हैं, आपकी कृपा है। खाना खा लेते हैं, धन्यवाद देकर चले जाते हैं। नहीं कहते, वे चुपचाप चले जाते धन्यवाद देकर कि आपने हमें काम दिया, आपकी बड़ी कृपा है। हम बड़े खाली बैठे हैं। हम बिल्कुल निकम्मे आदमी हैं। उसमें बड़े से बड़े घरों के लड़के भी जाकर प्रयोग किए और हैरान रह गए हैं कि जिंदगी तब भी चलती है। और जिंदगी एक और अनूठे ढंग से चलती है। जिसका कोई, कोई कैल्कुलेशन नहीं है, कुछ पता नहीं कि कल सुबह क्या करना पड़ेगा, जो बन सकेगा वह आदमी कर देगा।
कठिनाई नहीं है, कठिनाई नहीं है, मगर हमें चूंकि खयाल नहीं है कि वह भी
हो सकता है।

प्रश्नः यह सब उसने क्यों किया, मुझे समझाने के लिए, मूल मैं हूं।

वह मुझे मालूम है।

प्रश्नः इतना फर्क तो है न घर पर, वे तो ऐसा कहते कि उसका, उसका था वह
ले गया। उसमें भी आप... हम सब बोलते हैं उनको कि आप ऐसी गलती करते हैं, आप ऐसी गलती कर रहे हैं। समाज उनको बहुत यह बोल रहे।

मैं समझा।

प्रश्नः जैसा आप बोलते कि जैसे समझो ऐसा वे जो काम करते हैं करने दो।
कुछ तो अपने से उलटा भी काम करे। कोई गंदा करने के लिए बता दिया।... तो पीछे उलटा काम भी आ जाएगा, तो वह करके नहीं लाएगा। उलटा काम भी बता सकता है कोई।
उलटा काम करता है।

हां-हां, यह जो बात है न, यह जो बात है, यह जो बात है न, कोई अगर उससे बोल देता है कि किसी की औरत उठा लाओ। कोई अगर उससे बोलता है कि जाकर फलां घर में चोरी कर लाओ। तो "ए कोआनी" का जो मतलब है वह यह नहीं कह रहा है कि आप जो कहेंगे वह मैं कर दूंगा। वह यह कह रहा है कि मैं फुरसत में हूं और यह काम कर सकता हूं, अगर आप करवा लेते हैं तो धन्यवाद। वह आपका कोई नौकर नहीं है। क्योंकि आप तो उस पर कोई मालकियत कर ही नहीं सकते, क्योंकि वह आपसे कुछ लेता नहीं है।

प्रश्नः वह तो सच्चा करने के लिए।

हां, मुझसे आप चोरी करवा सकते हैं, आप कहते हैं दस हजार रुपये दूंगा आप चोरी कर आओ। मैं जब, मैं कहता हूं, मैं कुछ लेता ही नहीं हूं, आप मुझसे चोरी कैसे करवा सकते हैं। जो कुछ ले सकता है उससे चोरी करवा सकते हैं। यह हो सकता है कि चोर के दाम कम-ज्यादा हो सकते हैं। कि एक पुलिसवाला है, तो उसका पांच रुपया दाम, उससे चोरी करवा लो। राष्ट्रपति है, तो उसका पांच लाख दाम है। बस दाम का फर्क है। दाम बढ़ाते जाओ और आप पाओगे कि वह जगह आ गई जहां यह आदमी भी चोरी कर सकता है। लेकिन "ए कोआनी" से तो आप चोरी करवा नहीं सकते। क्योंकि वह यह कहता है कि आपसे मुझे कुछ लेना ही नहीं है। यह तो मेरी मौज है कि आपका जूता साफ कर दिया। और धन्यवाद मैं देता हूं आपको क्योंकि आपने बड़ी कृपा की कि आप दो क्षण रुके और मुझ निकम्मे आदमी को थोड़ा सा काम दे दिया। और मुझे बड़ा आनंद आया, जूता अच्छा साफ हो गया न, अब आप जाइए।
वह आपका मालिक है, वह आपका नौकर नहीं है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

मेरी आप बात समझ लें। वह आपका नौकर होता तब तो आप उससे कुछ करवा सकते।
वह किसी का नौकर नहीं है, उससे आप यह भी नहीं कह सकते कि कल तुम इस गांव में रुकना, तो कौन उसको रोक सकता है। वह अगर आज सांझ आकर घर में ईंट आकर रख गया है, मकान में नौकरी कर गया है, दिन भर आकर ईंटें जमा गया है, मेहनत कर गया है, तो आप यह नहीं कह सकते कि कल भी आ जाना। वह कहेगा कि कल की कल देखी जाएगी कल सुबह। निकम्मा रहा, बेकाम रहा और मौज आई तो आ जाऊंगा। पर आप...
अभी मैं जालंधर था, तो वहां एक संन्यासी मेरे पास आया। वह अदभुत आदमी है। वह मुझसे बहुत दूर से, कोई सौ मील पैदल चल कर आया। उसके पास कुछ पैसे- वैसे नहीं थे। वह सौ मील चल कर आया। तो उसने आकर मुझे कहा कि मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गया हूं। क्या मुश्किल? उसने कहाः मैं बड़े आनंद में था, और आनंद यह था कि मैं भीख मांग लेता था, खा लेता था, और मैं मास्टर था पहले स्कूल का, तो किसी के घर में पूछ लेता था कि बच्चे वगैरह हों तो मैं घंटे, दो घंटे पढ़ा जाऊं, क्योंकि खाली हूं। तो ऐसे मैं गांव में दस-पांच बच्चों को पढ़ा आता था जब मुझे मौज होता था, उससे कुछ मैं लेता नहीं था। बस गांव में भीख मांग लेता था। तो सारा गांव मुझे भीख दे ही देता था जिसके घर भी जाता। क्योंकि सब लोग मास्टरजी कहते कि वे मास्टर जी आ गए, और वह भीख मांग लेता। तो गांव में एक जमींदार है उसने मुझसे से कहा कि तुम अब बूढ़े हो गए हो, तुम कहां यहां-वहां फिरते हो, मेरे घर के बच्चों को पढ़ाना और यहीं रहने लगो। तो मैं उसके घर रह गया। उसके बच्चों को पढ़ाता। फिर वह कहने लगा कि जाकर फलाना काम कर आओ, तो मैं वह काम भी कर देता। फिर एक दिन उसे कोई झगड़ा-फसाद हो गया, और उसने मुझसे कहा कि अदालत में चल कर गवाही दो। तो मैंने कहाः वह मैं नहीं दूंगा। तो उसने कहा कि तू नमकहराम है। तो मैंने कहाः अरे, तू बड़ा पागल! मैं नमकहराम! मैंने तुझसे कभी कुछ लिया नहीं, तेरे सब काम करता रहा। उससे गवाही दिलवानी चाही कि नहीं, यह ऐसा मामला नहीं है, पक्ष में गवाही दे दो। तो उसने कहा कि मैं नमकहरामी हूं, तू बड़ा पागल आदमी है। मतलब मैं नमकहराम हूं? क्योंकि मैंने तो मेरे से कभी कुछ लिया नहीं। हां, इतनी भूल हो गई कि मैं स्थाई रूप से तेरी रोटी खाता रहा। हालांकि तेरी रोटी से मैंने बहुत ज्यादा काम कर दिया। इतनी मुझसे गलती हो गई। तो मैं जाता हूं। और मैं जैसा

अलग घर में रोज मांग लेता था, अलग घर में रोज सो जाता था; नहीं तो झाड़ के नीचे सो जाता था, वैसे सो जाऊंगा।
तो वह मुझसे पूछने आया था, कि मैं वहीं से चला आ रहा हूं। अब आपका क्या खयाल है? मैंने कहाः ठीक ही तुझे अनुभव हुआ है। मैंने कहाः इन दोनों हालतों में तुझे क्या फर्क लगा? उसने कहा कि वह साल भर के पहले जो मेरा आनंद था वह बात ही और थी। जब से मैं उसके घर रहने लगा तो उससे बड़े उपद्रव हो गए। क्योंकि उसने धीरे-धीरे टेकन फॉर ग्रांटेट हो गया वह, कि यह सब करेगा अब। बच्चों को भी पढ़ाएगा, और वह पानी भी ले आओ। वह उसने भूल की, उसको नौकर मान लिया। क्योंकि वह उसको खाना देता है और रहने की जगह देता है।
तो मैंने उससे कहा कि यह तो बिल्कुल उसको छोड़ आना था, और छोड़ ही देना चाहिए। क्योंकि यह सवाल नहीं है, वह कोई नौकर नहीं है आपका। और ऐसी जिंदगी भी संभव है। और संन्यासी का मतलब ही यह था। संन्यासी का और कोई मतलब न था। संन्यासी का मतलब यह था कि वह एक ऐसी जिंदगी जीया जो उससे बनता है वह कर देता है। आपको अच्छा लगता है आप दो रोटी खिला देते हैं बात खत्म हो जाती है। वह असल में संन्यासी का मतलब हैः नो इस्टैब्लिश्मेंट का जो दिमाग है कि वह इस्टैब्लिश नहीं करता। कल के लिए इंतजाम नहीं करता, जी लेता है। और कुछ आश्चर्य तो नहीं है कि पूरा गांव इस ढंग से जीए, क्यों न जी सके। यह अभी भी हम क्या कर रहे हैं। समझ लो कि एक गांव है जिसमें पांच सौ आदमी हैं। मैं आपके जूते साफ करता हूं तो आप मुझे चार आने देते हैं। कोई मेरा कपड़ा धोता है तो मैं उसको चार आने देता हूं। यानी हम कर क्या रहे हैं, अभी भी क्या कर रहे हैं। अभी भी हम यही तो कर रहे हैं न। मगर बहुत चक्कर से यह होता है। यह सीधा भी हो सकता है। एक गांव में पांच सौ आदमी हैं उनको मेहनत को भी चाहिए, खाने को भी चाहिए। वह जाकर खेत पर भी काम कर आता है, कोई बाजार में काम कर आता है, कोई यह काम कर आता है, कोई वह काम कर आता है। और इस सबसे काम से संपत्ति तो पैदा होती है।
तो इधर मेरी एक दृष्टि और निरंतर बनती जाती है, जिसे मैं कहता हूं, पीरियाडिकली संन्यास, कि हम सावधिक संन्यास लें। कितना ही सुविधापूर्ण आदमी तीन महीने के लिए अनइस्टैब्लिश हो जाए और तीन महीने घूम आए जाकर छुट्टी लेकर घर से और तीन महीने जीकर देखे। उसकी, उसकी पुलक और है। और ऐसे ही मैं सोचता हूं...

प्रश्नः एसेंशियल होती जा रही।

हां, करीब-करीब। लेकिन इसकी भी और मनःस्थिति है। और दूसरा मुझे खयाल पकड़ता है कि ऐसी छोटी कम्युनिटिज भी1 जैसे कि पचास आदमी एक फार्म पर रहते हैं, गांव पर निकल जाते हैं, वे काम करके लौट आते हैं। गांव वाले खाना दे देते हैं, वे कुछ कर देते हैं, वे अपना पूरा कर लेते हैं वहां जाकर। और वह कम्युनिटी भी बदलती है। पचास आदमी तीन महीने के लिए आए हैं, वे चले गए हैं, पचास दूसरे लोग आ गए हैं, वे वहां रहे हैं। आश्रम का मतलब यह होना चाहिए कि वहां एक... इसके आनंद की हमें अभी कल्पना नहीं हो सकती कि इसका आनंद क्या हो सकता है। यानी ऐसी हालत में जीना जहां कल की कोई सुरक्षा का सवाल नहीं है। कल जो होगा होगा। नहीं होगा नहीं होगा। कल का कुछ पता नहीं है। हमें खयाल ही नहीं हो सकता उस जीने का क्या मतलब हो सकता, उसकी फ्लावरिंग क्या है, वह हमें पता नहीं है।
इसलिए जब आप यह कहते थे न, कठिन है, तो आपको खयाल में नहीं। संभव नहीं,
तब आपको खयाल में नहीं है कि आप क्या कह रहे हैं। वह बिल्कुल संभव है और जरा भी कठिन नहीं है। और उसके छोटे-छोटे प्रयोग करके देखना चाहिए। उसमें ऐसा बनता-बिगड़ता क्या है। यानी अगर आप तीन महीने के लिए चले जाते हैं और करके आ जाते हैं कि हमारा... कहां जाते। और तीन महीने ऐसे जीकर देखते हैं। आप बिल्कुल इतने समृद्ध आदमी होकर लौटेंगे जिसका हिसाब नहीं। क्योंकि कुछ अनुभव हैं जो सिर्फ गरीब को ही हो सकते हैं। कुछ अनुभव सिर्फ गरीब को ही हो सकते हैं। कुछ अनुभव सिर्फ उसी को हो सकते हैं जो बिल्कुल असुरक्षा में जीता है, जो सुरक्षित को हो ही नहीं सकते। और जिसको हम फ्रीडम कहते हैं

न, स्वतंत्रता जिसको कहते हैं, वह ऐसा अनुभव है जो उसी को हो सकता है जो इनसिक्योरिटी में रहता है। वही, वही सिर्फ मुक्त-भाव का थोड़ा अनुभव। और एक दफे तीन महीने का ऐसा प्रयोग करते हैं, तो फिर आप हैरान होंगे कि यह तो जिंदगी में भी किया जा सकता है। क्योंकि यह क्यों इतना जोर से मैं कहता हूं, इसलिए जोर से कहता हूं कि अंततः चूंकि खोने को कुछ भी नहीं है। इसलिए खोने का इतना डर क्या। और चूंकि एक दफा सभी खो जाएगा, इसलिए बचाने का इतना पागलपन क्या। अगर कोई बचा कर बचा लेता होता तो हम सोचते कि बात है। कोई बचा कर भी नहीं बचा पाता है। खेल के बाहर खड़े होकर देखने की बात है। और खेल के भीतर तो ठीक है वह, खेल के भीतर तो ठीक है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

उसको कुछ मत करिए, नींद आ जाए तो नींद को स्वीकार कर लीजिए, उसको अस्वीकार मत करिए, उसको स्वीकार कर लीजिए। नींद भी बड़ी आध्यात्मिक है, जितना जागना आध्यात्मिक है; उससे कम आध्यात्मिक नहीं है नींद।

प्रश्नः ऐसा।

हां। नींद में कोई पाप नहीं है। वह उतनी आध्यात्मिक है जितनी कि जागरूकता।

प्रश्नः नींद में लेकिन भान तो रहती नहीं।

भान की भी इतनी क्या फिकर, इतना फिकर करने की जरूरत नहीं भान की। नहीं
तो चिंता बन जाएगी।

प्रश्नः अच्छा।

हां, भान नहीं रह जाएगा, चिंता हो जाएगी। न चिंता, इतनी फिकर करने की जरूरत नहीं है। नींद आए तो नींद में चले जाइए। आंख खुल जाए और जागरण आ जाए तो जागरण में चले जाइए। इन दोनों पहलुओं को एक साथ स्वीकार कर लीजिए।

प्रश्नः अच्छा।

हां, नहीं तो नींद से लड़ेंगे, तो वह जो आप जो कह रहे हैं न, स्तब्धता रह जाती है, वह नींद से लड़ने की वजह से हो रहा है। आप नींद से लड़िए मत, ताकि ये दोनों चीजें एक-दूसरे में न घुस जाएंगे, नींद नींद में रहे, जागना जागना में रहे। अगर दोनों एक-दूसरे में घुस जाएंगे तो स्तब्धता आ जाएगी जिसमें कुछ समझ में नहीं पड़ेगा।

प्रश्नः लेकिन ऐसा अभ्यस्त हो रहा है तो वहां जाने के लिए मना करता है, मन दुखता है कि नींद नहीं आनी चाहिए।

न, वह सुनी हुई बात है। मन-वन नहीं है, वह संस्कार है। किताबों में लिखा है नींद तामसिक है, फलाना, ढिकाना। नींद से ज्यादा आध्यात्मिक क्या हो सकता है। तो वह किताबों में लिखा हुआ है।

प्रश्नः ब्रह्म है।

तो अज्ञान भी ब्रह्म है और ज्ञान भी ब्रह्म है। उसमें अज्ञान कौन अलग
से आएगा, कहां से आएगा। ब्रह्म ही अज्ञानी भी है।

प्रश्नः लेकिन हम सोते ही हैं, तो ऐसी दशा है।

बहुत, इतनी स्वीकृति चाहिए। इसी को आस्तिकता कहता हूं मैं। नींद है
तो नींद है, जागना है तो जागना है। और भान रहा तो भान रहा और न रहा तो न रहा। इन दोनों के भाव को जब स्वीकार करेंगे तब जो भान आएगा वह बात ही अलग है, उसका आपको पता नहीं है। तब वह भान नींद में भी बना रहेगा और जागने में भी बना रहेगा। लेकिन वह भान आएगा जब टोटल एक्सेप्टिबिलिटी होगी। नींद भी स्वीकार है, पाप भी स्वीकार है, बुराई भी स्वीकार है, सब स्वीकार है, जो हो रहा हो रहा। वह सब ब्रह्म ही तो कर रहा है। आप उसमें बाधा कैसे डाल पाएंगे। न डाल पाएंगे। यानी हमको कुछ खयाल ऐसा है कि अगर कहीं ब्रह्म होगा तो चौबीस घंटे जागा हुआ रहेगा, सोएगा नहीं। अब तक खत्म हो गया होगा, दिमाग खराब हो जाएगा अगर ऐसा करेगा तो। वह भी सो रहा होगा। वह भी सोएगा ही। सोना भी शामिल है उसमें। जब जागोगे तो सोना भी पड़ेगा ही।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, आधे को स्वीकार न करें, पूरे को, जैसा है। तब एक भान आएगा, और वह भान बहुत अलग है, वह आपका लाया हुआ नहीं है, वह आया हुआ है। और उसकी कीमत बहुत है।

प्रश्नः वह कब आता है?

वही तो आप लाने की कोशिश में लगते हैं, इसलिए पूछते हैं, कब आता है। वही तो मैं कह रहा हूं कि लगिए मत उस कोशिश में।

प्रश्नः पूछा कि तकलीफ है।

वह चिंता मत बनाइए ध्यान को। क्योंकि ध्यान और चिंता का कभी मेल नहीं
हो सकता। अगर आपने ध्यान को भी चिंता बना लिया तो फिर कभी ध्यान उपलब्ध नहीं होगा।

प्रश्नः नहीं, चिंता तो नहीं रहती, लेकिन जैसा1

वह चिंता ही है न।

प्रश्नः अच्छा।

क्यों क्या जरूरत है कब आएगा। जब आना होगा आ जाएगा और नहीं आना होगा नहीं आएगा। जो मैं कह रहा हूं, दोनों पहलू एक साथ स्वीकृत होने चाहिए, तभी आएगा, नहीं तो नहीं आएगा। मेरी कठिनाई समझ रहे हैं आप? मेरी कठिनाई यह है कि ठीक है आ जाएगा तो आ जाएगा, नहीं तो कोई पक्का ठेका तो लिया नहीं कि आएगा ही। और किससे हम रिस्पांसिबल ठहराएंगे नहीं आएगा तो। समझ लो नहीं आया ध्यान, तो किसको पकड़ कर कहेंगे कि नहीं आया, नहीं आया तो नहीं आया, आ गया तो आ गया। जब इतनी सरलता से आप लेंगे तो आ जाएगा।

प्रश्नः ऐसा।

हां। मगर ऐसा कहने में वही डर मौजूद है। क्योंकि आप कहेंगे तब तो ठीक है। आ जाएगा तो फिर हम ऐसा ही कर लेंगे। लेकिन आने के लिए ही करेंगे, तब फिर चिंता पैदा हो जाएगी। जो मैं जो कह रहा हूं वह यह कि आप इसको चिंता मत बनाएं, टेंशन मत बनाएं। जब आप कहते हैं न कि ऐसा, तो उसमें ऐसा लगताः तब फिर ठीक है, यह तरकीब अच्छी रही, इससे आ जाएगा। न, यह आने की तरकीब नहीं हुई। न, आने की तरकीब नहीं हुई। आ सकता है अगर तरकीब न लगाएं।

प्रश्नः सहज।

सहज ही आएगा, नहीं तो नहीं आएगा। और हमारा माइंड इतना चालाक है कि वह
हर चीज को तरकीब बनाना चाहता है, वह कहता है कि अच्छा चलो फिर यही कर लेंगे। अगर आप कहते हैं कि इससे आ जाएगा तो यही कर लेंगे, तो भी लाना तो हमको है ही। बस यही तो गड़बड़ हो गई। लाने-वाने की क्या जरूरत। क्या हर्जा है न आया तो। क्या खोया जा रहा है। ब्रह्म को कोई कमी नहीं मालूम पड़ रही आप अगर ध्यान में नहीं जा रहे तो। काहे के लिए झंझट कर रहे। अगर बूंद सागर में नहीं गिर रही है तो सागर को कौन सी तकलीफ है, मत गिरो।

प्रश्नः बूंद को तकलीफ हो सकती है।

बूंद को भी तकलीफ नहीं है। बूंद को भी तकलीफ यह है कि कुछ नासमझ उसको सिखा रहे हैं कि तुझे सागर होना चाहिए, वह तकलीफ हो सकती है। क्या जरूरत है सागर होने की, बूंद अपने में भी काफी है। और जिस दिन बूंद इतनी अपने में काफी हो जाएगी कि समझेगी कि मैं काफी हूं, सीधी सागर हो जाएगी, फिर फर्क क्या रहा। वह पर्याप्त होने का बोध ही सागर होना है न। अगर बूंद भी यह समझ ले कि ठीक है मैं जो हूं हूं, मैं क्यों सागर हो जाऊं। जब सागर बूंद होने को तैयार नहीं तो मैं क्यों सागर हो जाऊं। ठीक है मैं मैं हूं, तुम तुम हो, तो उसी दिन हो जाएगी। उस दिन चिंता गई, दौड़ गई, तनाव गया, बूंद सागर हो जाएगी। हम प्रत्येक चीज को फौरन विधि बनाते हैं न, यह तकलीफ है। और विधि में सारा उपद्रव है।

प्रश्नः तो ध्यान की गहराई में कैसे उतरा जाता है?

अरे, वही तो बीमारी वे बता रहे हैं। वही बीमारी है। वही बीमारी है।
वही बीमारी है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

वही बीमारी वे कह रहे हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, मैं यह कह रहा हूं कि जब हम सब स्वीकार कर लेते हैं तो गहराई में उतर जाते हैं। कैसे उतरा जा सकता है यह नहीं कह रहा हूं। मैं यह कह रहा हूं कि यह कांसिक्वेंस है। जब हम सब स्वीकार कर लेते हैं तो उथले में रहने का उपाय नहीं रह जाता। आप उतर ही जाएंगे गहरे में, करेंगे क्या। लेकिन कोई पूछता है कि हमें गहरे में उतरना है। जब वह कहता है, उतरना है, तब वह यह कह रहा है उथले में हमें नहीं रहना है। बस वह स्वीकार में नहीं है वह। आधे को निषेध कर रहा है, आधे को मान रहा है। और मैं यह कह रहा हूं जब वह पूरे को स्वीकार करे तो ही गहराई में उतर सकता है।
इसलिए गहराई में उतरने की आकांक्षा गहराई में नहीं ले जाएगी, वह भी उथले में बिठा देगी। हां, जो व्यक्ति कहता है, कहीं जाना ही नहीं है, जो है है--उथले में हैं तो हर्ज क्या है, उथले की बुराई क्या है? यानी मैं यह पूछता हूं कि उथले में ऐसी बुराई क्या है, और अगर उथला न हुआ तो गहरा होगा कैसे? उथला जो है वह गहरे का ही हिस्सा है। और अगर गहरा ब्रह्म है, तो उथला कौन है? वह भी ब्रह्म है। वह जरा ऊपर वाले ब्रह्म हैं, वह जरा नीचे वाले ब्रह्म हैं, ऐसा कोई फर्क तो नहीं है। और जब हम इन दोनों को एक साथ स्वीकार कर लेते हैं तब एक गहराई मिलती है जो न उथलाई है, न गहराई है। वह बात ही और है। इसलिए कोई शब्द नहीं है कहने का। इसलिए कोई शब्द नहीं है कहने का।

उपासना के क्षण
ग्यारहवां प्रवचन

अलोभ की दृष्टि

लाभ की दृष्टि से जाना ही छोटी चीज के लिए जाना है। यह बड़ा सवाल नहीं
है कि आप किस लाभ की दृष्टि से जाते हैं। आध्यात्मिक लाभ की दृष्टि से जाना भी लोभ ही ले जा रहा है।

प्रश्नः थोड़ा लोभ ही है।

हां। और इसलिए साधु के पास आप पहुंच न पाएंगे। साधु के पास तो आप जब अत्यंत सहज, बिना किसी कारण के जाते हैं, तभी आप लाभांवित होते हैं। लाभ का कारण भी मन में हो, तो भी बाधा पड़ जाती है। असल में, जैसे हम किसी को प्रेम करते हैं, तो कोई भी दृष्टि नहीं होती, लाभ की दृष्टि भी नहीं होती। लाभ मिलता है, यह दूसरी बात है। हम प्रार्थना करते हैं, तो लाभ की दृष्टि हो, तो प्रार्थना नहीं हो पाएगी।
साधु के पास हम जाते हैं, पहुंच नहीं पाते। वह लाभ चाहे धन का हो, चाहे स्वास्थ्य का हो, चाहे अध्यात्म का हो। इतना ही मैं कहूंगा कि आप छोटे लाभ को इनकार कर रहे हैं बड़े लाभ को इनकार नहीं कर रहे हैं। लेकिन छोटा लाभ अगर लोभ है तो बड़ा लाभ बड़ा लोभ है। और लोभ की दृष्टि से साधु के पास जाकर खाली हाथ ही लौटना पड़ेगा। हां, अगर बिना लोभ की दृष्टि के जाते हैं तो शायद भरे हाथ भी लौट सकते हैं। और फिर जरूरी नहीं कि साधु के पास से ही भरे हाथ लौटें, अगर खाली हाथ वृक्ष के पास भी खड़े हो जाएं, और सुबह उगते सूरज के पास भी खड़े हो जाएं, तो भी हाथ भर सकते हैं।
तो दूसरी बात मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि अगर अलोभ की हमारी दृष्टि हो, और कहीं तो जीवन में कोई जगह होनी चाहिए जहां हमारा कोई भी लोभ नहीं है। दुकान पर हम जाते हैं, बाजार में हम जाते हैं, मित्र के पास जा रहे हैं, वोटर के पास जा रहे हैं, सब जगह कुछ न कुछ कारण हैं। साधु को मैं वह जगह कहता हूं जहां हम सब कारणों से थके हुए लोग जा रहे हैं। जहां हम सब कारणों से थक गए हैं और कहीं अकारण संबंध भी बनाना चाहते हैं। जहां, इसलिए अगर कोई साधु आपसे पूछे कि कैसे आए, तो मैं कहता हूं, वह साधु नहीं है। और आप अगर बता पाएं कि इसलिए आया, तो आप साधु के पास गए नहीं। जिंदगी कारण से इतनी परेशान है, लोभ से इतनी पीड़ित है, हमारे सारे संबंध कंडीशनल हैं, शर्त के साथ हैं। साधुता का संबंध ही अनकंडीशनल है।
मेरे एक प्रोफेसर थे, वे फिलासफी के प्रोफेसर थे, और नये-नये आए थे। तो मैं उनके घर मिलने गया। बूढ़े आदमी थे। तो उन्होंने मुझसे पूछा, कैसे आए? तो मैंने कहाः बताना मुश्किल है। मैंने कहाः बताना मुश्किल है। और अगर दुबारा भी आप पूछेंगे यह, तो अब मैं नहीं आऊंगा। मुझे यह पता नहीं था कि कारण हो तभी आना आवश्यक है। तो मैंने कहाः मैं जाता हूं, क्योंकि मैं बिल्कुल बिना कारण आया। मेरा खयाल ऐसा था कि कम से कम फिलासफी का प्रोफेसर इतना समझेगा कि अकारण मिलने में भी एक रस है। सच तो यह है कि अकारण मिलने में ही रस है। और जीवन में जब भी हम किसी से अकारण मिल पाते हैं, तो जो फूल खिलता है दोनों के बीच में, वही मैत्री है, वही प्रेम है। तो आपकी बात से मैं राजी ही हूं, आपकी बात तो बिल्कुल ठीक ही है। इतना ही कहूंगा कि दूसरी बात जो आप कह रहे हैं, वह पहली बात का ही दूसरे तल पर फैलाव है।
रामकृष्ण के साथ ऐसी एक घटना है कि विवेकानंद के घर पर बहुत तकलीफ थी, पिता मर गए तो बहुत कर्ज छोड़ कर मर गए थे। और घर में ऐसी हालत थी कि एक ही बार का खाना होता, और वह भी इतना होता कि या तो मां खा ले या विवेकानंद खा ले। तो मां को वे यह कह कर गांव में चले जाते कि किसी मित्र ने आज निमंत्रण भेजा है, तो मैं वहां खाना खाने जा रहा हूं। सड़कों के चक्कर लगा कर लौट आते; न तो कोई निमंत्रण था, न किसी मित्र ने बुलाया था। लेकिन मां भोजन कर ले, अन्यथा वह उनको खिला देती और खुद भूखी रह जाती।

रामकृष्ण को पता लगा कि वे कई दिन से भूखे हैं, तो उन्होंने कहाः तू कैसा पागल! तू जाकर मंदिर में परमात्मा से क्यों नहीं मांग लेता। तू भीतर जा, मैं बाहर बैठा हूं। उन्हें जबरदस्ती भीतर भेज दिया। घंटे भर बाद वे लौटे, बड़े आनंद से भरे हुए थे। तो रामकृष्ण ने कहा कि मांग लिया? मिल गया? तो विवेकानंद ने कहाः कौन सी चीज?
तो रामकृष्ण ने कहाः मैंने तुझे भेजा था कि अपनी मुसीबत के लिए प्रार्थना कर लेना।
तो विवेकानंद ने कहाः मैं तो भूल गया। परमात्मा के सान्निध्य में पेट कोई याद रख पाता, तो परमात्मा से सान्निध्य नहीं बन सकता। मैं तो भूल गया। यह दो-चार दिन हुआ। फिर तो रामकृष्ण बहुत नाराज हुए और उन्होंने कहाः तू आदमी पागल तो नहीं है!
पर विवेकानंद ने कहा कि जैसे ही मैं मंदिर के भीतर जाता हूं, जैसे ही उनका सान्निध्य मुझे मिलता है, वैसे ही न मैं रह जाता, न मेरा पेट रह जाता, न मेरी भूख रह जाती, न मेरी कोई मांग रह जाती। तो मैं देकर लौट आता हूं, मांग नहीं पाता। विवेकानंद ने कहा कि मैं अपने को देकर लौट आता हूं, मांग नहीं पाता हूं।
साधु सत्संग अकारण है। वह ऐसे ही जैसे आप एक फूल के सौंदर्य को देखने
के लिए रुक गए, नहीं कुछ मिलेगा। ऐसे ही है जैसे चांद-तारे रात को निकलें और आपने आंख उठा कर देख लिया, नहीं कुछ मिलेगा। ऐसे ही मनुष्य के भीतर भी जो फूल खिलते उनका नाम साधु है। इनके पास आप अगर कारण से गए, अगर फूल के पास कोई कारण से गया कि बाजार में बेच लूंगा या भगवान को चढ़ा दूंगा, तो भी फूल का जो सौंदर्य-संबंध है, फूल से जो संबंध है वह पैदा होने वाला नहीं। क्योंकि वह तो निपट काव्य का संबंध है, जहां कोई लाभ नहीं है, कोई लोभ नहीं है।
तो वह तो आप ठीक ही कहते हैं पागेजी कि अगर कोई बीमारी ठीक करवाने जा रहा हो, कोई धन पाने जा रहा हो, कोई चुनाव जीतने जा रहा हो, ये सारे कारणों से जा रहा है तो वह तो पागल है ही, वह गलत जगह तो जा ही रहा है। न, मैं तो यह कह रहा हूं कि अगर वह किसी भी कारण से जा रहा, मोक्ष पाने भी जा रहा है, परमात्मा को भी पाने जा रहा है, तो भी गलत जा रहा है। क्योंकि कारण से गया हुआ आदमी साधु के पास नहीं पहुंचता। साधु की जगह वैसी जगह है जहां हम अकारण जाते हैं।
एक झेन फकीर हुआ, रिंझाई। तो जापान का सम्राट उससे मिलने गया। और उसने कहा कि मैंने बड़ी प्रशंसा सुनी है, तो मैं यहां आया हूं। तुम मुझे सारा आश्रम घूमा कर दिखाओ, कहां क्या करते हो? तो बीच में बड़ा मंदिर है, विशाल, और जिसके शिखर दूर से, मीलों से चमकते हैं। और वह रिंझाई इस सम्राट को लेकर एक-एक छोटी-छोटी कोठरी में गया कि यहां साधु स्नान करते हैं, यहां भोजन करते हैं, यहां पुस्तकालय है, यहां पढ़ते हैं। बार-बार सम्राट ने पूछा कि मुझे व्यर्थ की जगह में मत घुमाओ, उस बीच के भवन में क्या करते हैं? यह जैसे ही वह सम्राट पूछता कि रिंझाई चुप हो जाता, जैसा बहरा हो गया। पूरा आश्रम घुमा दिया--पाखाने, शौचालय, स्नानगृह, सब दिखा दिए। सम्राट ने कहाः या तो मैं पागल हूं या तुम पागल हो। मैं तुमसे पूछता हूं, एक बीच में जो बड़ा भवन है यहां क्या करते हो?
बस वह चुप हो जाता। फिर दरवाजे पर विदा का भी वक्त आ गया, वह अपने घोड़े
पर बैठने लगा, तब उसने फिर कहा कि तुम आदमी कैसे हो, मैं कुछ समझ नहीं पाया। तो उसने कहा कि अब आप मानते ही नहीं तो मुझे कहना पड़े, आप गलत सवाल पूछते हैं। आपने मुझसे पूछा था कि साधु जहां जो करते हों वह जगह मुझे बता दो। वहां तो साधु वह जो बीच में भवन है तब जाता है जब उसे कुछ नहीं करना होता। वह हमारी प्रार्थना की जगह है। वहां हम कुछ करने नहीं जाते, जब हम करने से थक गए होते हैं और न करने की इच्छा होती है, नॉन-डूइंग की इच्छा होती है, तब हम वहां जाते हैं। और तुमने पूछा था कि साधु जहां जो करते हैं वह तो मैंने सब जगह बता दी--यहां स्नान करते हैं, यहां भोजन करते हैं, यहां सोते हैं, यहां अध्ययन करते हैं--वह है मंदिर, वहां हम कुछ करते नहीं। और जो करने जाएगा वह मंदिर में जा नहीं सकता। वहां तो हम करने से थके हुए लोग न करने

के लिए जाते हैं। वहां हम कुछ भी नहीं करते हैं, वहां हम न होने में लीन हो जाते हैं।
साधु वह जगह है जहां हम मांगने, पाने, किसी भी लोभ के वश जाएं, तो हमारा संबंध ही नहीं हो पाता। संबंध हो ही नहीं सकता। फिर हम किसी दुकान की तलाश में हैं। फिर किसी डाक्टर की तलाश में हैं, किसी ज्योतिषी की तलाश में हैं। वह बेहतर आप कहते हैं कि वह हमें वहीं खोजना चाहिए जहां डाक्टर है।

प्रश्नः यह जैन-बुद्धिज्म की बात आपने कही है। मैंने जो बुद्धिज्म के बारे में पढ़ा है, एक-दो लोगों से बातें भी हुई हैं। वह एक सहजभाव की प्रक्रिया है। और किसी धर्म में जाकर 1 हिंदू धर्म में तो यही बात है, आखिरी बात है सहजभाव। और उन्होंने यह सही कहा, हम यहां करते नहीं हैं कुछ। इसकी मानी यह है कि वैल्यूएशन नहीं है, मन की इच्छा नहीं है, एक्शन नहीं है, लेकिन ऑल रिएक्शन, प्रतिक्रिया वाले रिएक्शन। मैंने जो कहा कि आध्यात्मिक बात पाने के लिए, तुम्हारी जिंदगी है कोई इच्छा रख कर जाना चाहिए। लेकिन मेरा अनुभव यह हुआ कि वह आखिरी अवस्था का हम कल्पना करते हैं1 सहज अवस्था की1 वह कभी अनुभूति होती है, कभी नहीं। चौबीस घंटा अनुभूति तो होती नहीं है, उसी अवस्था में हम हैं। आगे का मुझे मालूम नहीं, मैं तो इसी अवस्था में हूं। तो हमेशा टेंस ही रहती है, और देर, देर से वैसे हो जाते हैं। तो यह सही है कि कोई इच्छा रख कर जाना नहीं है। इच्छा है तो क्रिया होती है। जैसे मैंने कहा, एक्शन, राइट रिएक्शन जहां यह तय हो। रिएक्शन का मानी जैसे सहजभाव हो। कोई दूसरी वस्तु है, परिस्थिति है, विचार है, विचार नहीं, कुछ भी हो, जिसे रिएक्शन का सवाल रहता है। तो सहजभाव ऐसे आखिरी चीज है जैसे जैन-बुद्धिज्म लोग मानते हैं। और हम भी मानते हैं आखिर। साधो, सहज समाधि भली। लेकिन उसके बीच में बहुत सारी कई अवस्थाएं होती हैं। यह अवस्था आत्मा की भी, यह भी मन की अवस्था होती है। आत्मा तो हमेशा सहज अवस्था में ही है। लेकिन हमारा मन, हमारा शरीर, हमारा कर्म, ये सब सहज अवस्था में आज है नहीं, होना चाहिए। यह कैसे हो सकता है1 इसका एक सबूत हमें मिलता है साधुओं के पास। इच्छा हमें नहीं रहती कि उनके पास से कुछ लेना है, लेकिन एक सबूत मिलता है कैसे2 देख-देख कर सहज लाभ यहां भी होता है।

बड़ी कठिन बात है। और आप जो कहते हैं बड़ी उलटी बात कहते हैं। दो बातें हैं। एक तो सहज अवस्था अंतिम अवस्था नहीं है। क्योंकि अगर सहज अवस्था अंतिम अवस्था होगी, तो असहज अवस्था प्राथमिक अवस्था होगी। और असहज से सहज तक पहुंचा नहीं जा सकता। सहज अवस्था अगर हो सकती है तो उसे प्रथम ही होना पड़ेगा।

प्रश्नः इसलिए मैंने कहा कि अंतिम अवस्था कि मानी वह तो हमेशा सहज-आत्म पराई है, पहले से आज तक कुछ छिपाना नहीं है, होना नहीं है, अंतिम नहीं है, आदि नहीं है, कुछ नहीं है, बात यह है कि है ऐसा सहज आत्मा।

वही न। ऐसा अगर सिर्फ धारणा कर रहे हैं ऐसी, तो यह धारणा सहज नहीं है।
नहीं, यह धारणा भी सहज नहीं है अगर धारणा कर रहे हैं।

प्रश्नः नहीं, यह धारणा नहीं सहज होती कि जो मन करता रहता है वह करने
की उनकी क्रिया, उसके एक्शन की क्रिया बंद हो जाना है। इसकी मानी यह निगेटिव वाइज प्रोसेस है।

नहीं, यह जो मैं कह रहा हूं वह यह कह रहा हूं कि एक तो यह अगर हमारी धारणा है कि आत्मा सहज अवस्था में पड़ी है, है ही, अगर यह धारणा है तो यह धारणा कभी सहज नहीं होती। धारणा तो हमेशा मन की ही होती है, और सहज नहीं हो सकती। अगर यह अनुभव है तो सहज हो सकता है। और धारणा और अनुभव में बड़ा फर्क है।

प्रश्नः न, ये दोनों हैं। अनुभव है, हमेशा अनुभव नहीं रहता।

अब यह भी सोचने जैसी बात है, यह सोचने जैसी बात है कि जो अनुभव हमेशा रहता है वही केवल सहज हो सकता है, जो चला जाता है, आता है, वह सहज नहीं हो सकता। सहज का मतलब ही यह है कि जो आता, न जाता। इसलिए हम ऐसा कभी नहीं कह सकते कि सहज अनुभव मुझे कभी-कभी होता है और बाकी समय नहीं होता।

प्रश्नः वह तो ठीक है। और मेरी धारणा ऐसी है, गलत हो, सही हो, जहां तक शरीर है और पूरी तरह से ऐसी धारणा होनी चाहिए। और न किसी की हुई है, बातों से कहते हैं हुई या नहीं हुई। बड़े-बड़े भी हो, उनकी हुई है यह कहने के लिए कोई सबूत नहीं है। और उनके शब्द देखोगे तो वे भी कहते हैं, वह नाइनटी नाइन परसेंट है, हंड्रेड परसेंट है ही नहीं।

नहीं। यह जो बात है न, यह जो बात है, जैसे ही हम इस बात को पकड़ लेते हैं, अगर हम शरीर को एक दुश्मन की तरह देख लें, तब तो1

प्रश्नः कोई दुश्मन नहीं।

नहीं, तब फिर कठिनाई नहीं रह जाती।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, अगर हम शरीर को किसी शत्रुभाव से न देखें, तो शरीर तो सदा ही सहज अवस्था में है, वह तो असहज कभी होता ही नहीं। मैं जो कह रहा हूं वह यह कि शरीर तो असहज होता ही नहीं, वह तो सहज है ही। उसे तो भूख लगती है, तो भूख लगती है; ठंड लगती है, तो ठंड लगती है; बीमारी आती है, तो बीमारी आती है; रोता है, तो रोता है; हंसता है, तो हंसता है। शरीर तो असहज हो नहीं सकता, असहज सिर्फ मन हो सकता है। आत्मा असहज हो नहीं सकती, शरीर असहज हो नहीं सकता। ये तो दोनों ही सहज हैं। असहजता जो आती है, जो जटिलता है, कांप्लेक्सिटी है वह तो मन की है। और मन की भी क्यों है? जो हम कह रहे हैं वही तो आधार है। मन की असहजता इसलिए है कि मन सदा कुछ मांग रहा है, जो है उसके लिए राजी नहीं है, सदा कुछ मांग रहा है। वह यह भी मांग रहा है कि कल मुझे सहज अवस्था मिल जाए आत्मा की, तो कभी नहीं मिलेगी। क्योंकि जब तक मैं यह कह रहा हूं कि कुछ मुझे मिल जाए कल। और सहज मिलना है तो अभी और यहीं है, कल का कोई प्रश्न नहीं है।

प्रश्नः इसलिए मैंने कहा निगेटिव प्रोसेस है करके।

निगेटिव ही होने वाली है। सारा अध्यात्म निगेटिव है। सारा अध्यात्म निगेटिव है।

प्रश्नः इसीलिए मैंने कहा कि मन जो एक्शन कर रहा है1 सम डिजायर। इच्छा
की वजह से कोई क्रिया कर रहा है मन। तो इच्छा की वजह से वह क्रिया करता है, तो इच्छा समाप्त हो जाना और क्रिया उनकी समाप्त हो जाना ही यही सहज अवस्था है।

नहीं, जब आप कहते हैं, समाप्त हो जाना, तब आप सहज के लिए भी शर्त लगाते हैं, जो कि गलत है। क्योंकि अगर सहज किसी कंडीशन पर होता होगा तो सहज नहीं रह जाएगा। अगर आप यह कहते हैं कि इच्छाएं समाप्त हो जाएंगी, तब जो होगा वह सहज है। तो इसका मतलब यह हुआ कि इच्छाओं का समाप्त होना एक कंडीशन है, जिसके बिना सहज नहीं हो सकेगा। तब तो सहज बड़ा कमजोर है, इच्छाएं बड़ी मजबूत। फिर यह कभी नहीं होगा। नहीं, यह जो बात है, इच्छाओं के समाप्त हो जाने से नहीं सहज होगा।

प्रश्नः मैं मेरे अनुभव की बात कहता हूं, दो तरह की इच्छा को मैंने अनुभव किया है। एक इच्छा ऐसी होती है कि मिटाने का प्रयास करके नहीं मिट सकती है। अनुभव की बात है, यह शास्त्र की बात नहीं है। उस इच्छा को मैं कहता हूं, वासना, आज तक। और एक इच्छा ऐसी है कि दूर हटाने से हटती है इसी प्रकार। वह जो हटती नहीं वह सहज इच्छा है2 आर्टिफिशियल लाई गई है न उधर से, तो दूर हो सकती है।

हां, मैं जो कह रहा हूं वह और बात कह रहा हूं, मैं यह कह रहा हूं कि सहज
का अर्थ यह है कि जो बेशर्त है। उसमें इतनी शर्त भी नहीं लगाई जा सकती कि इच्छा हटेगी तब वह होगा।

प्रश्नः हां, शर्त को हटाना कि मानी यह होती है कि आज जो चला है शर्त
से जीवन, वह शर्त को हटाने के लिए नहीं होता है।

न, हटाने की बात नहीं है, इसलिए मैं कह रहा हूं आपसे कि सहज जीवन स्वीकार का जीवन है, हटाने का जीवन नहीं। अगर आपमें इच्छा है तो है, इसे स्वीकार करें, हटाने की क्या बात है। और जैसे ही पूर्ण स्वीकृति होगी, सहजता फलित होगी।
मेरे भीतर क्रोध है, तो एक उपाय तो यह है कि इसको मैं हटाऊं, तब सहज जीवन फलित होगा। लेकिन क्रोध के हटाने की शर्त पर जो सहज जीवन फलित होगा वह सहज नहीं हो सकता। मुझमें क्रोध है इसके लिए मैं राजी हूं, क्योंकि कोई उपाय नहीं। क्रोध है इसे मैंने पाया1 जैसे मैंने आंख पाईं, जैसे मैंने हाथ पाया1 ऐसा क्रोध भी पाया। क्रोध है, इसे मैं न दबाता, न इसे मैं हटाता, यह है, इसे मैं स्वीकार करता हूं। और जैसे ही मैं इसे स्वीकार करता हूं, यह हटता है, हटाया नहीं जाता, तब बेशक सहजता फलित होती है। हटाए जाने में तो शर्त है, हट जाना और बात है। अगर मैं क्रोध को स्वीकार कर लेता हूं और कहता हूं कि परमात्मा ने दिया है, जो है वह है, ऐसा मैं हूं। क्रोधी मैं आदमी हूं। बुरा मैं आदमी हूं। और मैं नहीं कहता कि कल मैं अच्छा आदमी हो जाऊंगा, क्योंकि जो आज बुरा है उससे ही तो कल निकलने वाला है। मेरा कल मुझसे ही निकलेगा। वह मुझसे, बाहर से आने वाला नहीं है, यह मेरा ही एक्सटेंशन है, वह मेरी ही कंटीन्युटी है। तो मैं कल अच्छा हो जाऊंगा इसकी मैं कैसे कामना करूं। क्योंकि जो मैं हूं इसी बीज से मेरा कल निकलेगा, परसों निकलेगा, भविष्य निकलेगा; इसी से मेरा आत्मा, मेरा परमात्मा, मेरा मोक्ष निकलेगा जो मैं हूं। इस "मैं" के खिलाफ लड़ कर जो चलेगा वह कभी सहज नहीं हो सकता। हां, सहज होने का दिखावा कर सकता है, ढांचा भी सहज होने का बना सकता है।
तो जिन साधु-संतों का आप कह रहे हैं, अगर आप ठीक कह रहे हैं, जो कहते हैं कि हम निन्यानबे परसेंट कर पाए लेकिन पूरा नहीं हो पाता, तो वे इस तरह के लोग होंगे जिन्होंने सहज होने की कोशिश की है। लेकिन जिसने जीवन को स्वीकार कर लिया है1 क्रोध को, काम को, जो भी है। यह कहेगा हंड्रेड परसेंट सहज है, क्योंकि अगर यह क्रोध में आ जाए, तो आप इससे यह नहीं कह सकते कि अरे तुम क्रोध में आ गए, तुम कैसे सहज हो। वह कहेगा कि सहज क्रोध आ रहा है। सहज का मतलब ही और है। जब कबीर जैसा आदमी कहता हैः साधो, सहज समाधि भली! तो उसका मतलब यह नहीं होता कि किसी शर्त से पूरी होगी, वह यही कह रहा है कि सहज समाधि का मतलब ही इतना है कि मैंने लड़ाई छोड़ी और मैं समर्पित हूं, मैं लड़ता नहीं। जीवन जैसा है वैसा स्वीकार कर लेता हूं--बुरा है तो बुरा है, नरक है तो नरक, उसे मैं स्वीकार कर लेता हूं। इस स्वीकृति में से सहज का जन्म होता है। इस टोटल एक्सेप्टिबिलिटी में से सहज का जन्म होता है। और वह जो सहज है, वह अनकंडीशनल है। अनकंडीशनल इस अर्थों में है कि न तो हमने उसके लिए कोई चेष्टा की, न हमने कोई उसके लिए प्रयास किया, न हमने उसके लिए कोई उपाय किया। क्योंकि एक बड़े मजे की बात है, जिस चीज के लिए हम उपाय करेंगे वह उपाय के छोड़ने पर खो जाएगी, और जिस चीज को हम साधेंगे, कल अगर नहीं साधेंगे तो वह नष्ट हो जाएगी।

एक सूफी फकीर को मेरे पास लाए, पागेजी, तो उनके भक्त मुझे कहे कि उन्हें सब जगह परमात्मा दिखाई पड़ता है1 वृक्ष में, पत्थर में, पौधे में, सब जगह परमात्मा दिखाई पड़ता है। तो मैंने उनसे पूछा कि दिखाई पड़ता है या आप देखते हैं? उन्होंने कहाः नहीं-नहीं, मुझे दिखाई पड़ता है। पर उन्होंने इतने घबड़ा कर कहा कि नहीं-नहीं, मुझे दिखाई पड़ता है। तो मैंने कहा कि आप फिर एक दफा सोचें, आपने कभी देखना तो शुरू नहीं किया था? उन्होंने कहा कि शुरू तो किया, नहीं तो दिखाई कैसे पड़ता। तीस साल पहले देखने की साधना शुरू की थी, हर चीज में देखने की कोशिश की थी, फिर धीरे-धीरे दिखाई पड़ने लगा। तो मैंने उनसे कहाः आप आठ दिन मेरे पास रुको, और अब कोई कोशिश न करें देखने की, तीस साल आपने देखने की कोशिश की और अब दिखाई पड़ता है, आठ दिन इस कोशिश को छोड़ दें। तो उन्होंने कहाः आप नास्तिक तो नहीं हो, आप कैसी गलत बात कर रहे हैं। अगर मैं एक घंटे को भी छोड़ दूंगा, तो वह दिखाई नहीं पड़ेगा।
तो अब यह जो दिखाई पड़ रहा है यह कोई सहज अनुभव नहीं है। यह एफर्ट बेस है, एक प्रयास है देखने का, तब फिर यह हमारा ही अनुभव है। इससे परमात्मा का कोई लेना-देना नहीं है। यह हम थोप रहे हैं अनुभव जगत के ऊपर। यह एक क्षण को भी हम थोपना बंद कर दें, तो प्रोजेक्शन खो जाएगा। और जगत जैसा पत्थर पत्थर दिखाई पड़ने लगेगा, परमात्मा उसमें से खो जाएगा। पत्थर का पत्थर दिखाई पड़ना तो सहज है, पत्थर का परमात्मा दिखाई पड़ना असहज है। जिस दिन पत्थर का पत्थर दिखाई पड़ना कोशिश हो जाए, और पत्थर का परमात्मा दिखाई पड़ना घटित हो, उस दिन हम कहेंगे, सहज अनुभव हुआ। लेकिन वैसे अनुभव को खोया नहीं जा सकता है। जिस अनुभव को सम्हालना पड़ता है वह अनुभव असहज है। और जिस अनुभव के लिए में चेष्टा करनी पड़ती है, चाहे हमने अतीत में की हो और हम भूल गए हों, आज भी खोने से खो जाएगी।
तो जिन साधुओं की आप बात कर रहे हैं1 अगर वे कहते हैं कि सहज जीवन हो नहीं पाया, और जब तक शरीर है तब तक सहज हो न पाएगा, तब तक शरीर से उनकी एक शत्रुता है, शरीर स्वीकार नहीं हुआ। नहीं तो परमात्मा का ही शरीर है, तुम्हें क्या बाधा देगा। और परमात्मा इतने बड़े जगत के रहते हुए सहज हो पाए, और मैं इतने से शरीर के रहते हुए सहज न हो पाऊं, तो मैं नहीं मान सकता कि यह सहजता हुई। अगर वह कहता है कि जब तक क्रोध है तब तक सहज न हो पाऊंगा, जब तक काम है तब तक सहज न हो पाऊंगा, तब फिर वह लड़ेगा और काटेगा, मिटाएगा इन सबको। और जो भी बनेगा आखिर में वह उसका खुद का निर्माण होने वाला है, वह सहज होने वाला नहीं है। सहज का तो अर्थ ही यह है कि हमने लड़ाई छोड़ी, हम लड़ते नहीं, हमारा कोई प्रयास नहीं।

प्रश्नः इसलिए निरोध का निरोध होता है।

हां।

प्रश्नः पतंजलि महाराज ने तो कहाः निरोधत्तः पे निरोधः। वह निरोध के निरोध की बात है आखिरी।

आखिर कहते हैं वहीं जरा दिक्कत पड़ जाती है।

प्रश्नः देखिए, आखिर की मानी यह है1 लेकिन निरोध का निरोध है तो सहज नहीं है। वे समझ पाते हैं तो सहज हो जाता है आखिर वह, समझता है तो हो जाएगा।
नहीं तो हरेक आदमी किसी ने किसी बात के लिए कोशिश करता ही रहता है। अगर वह सहज अवस्था का कोशिश न करे तो दूसरी प्रपंच की बात का कोशिश करता है।

कोशिश करना ही प्रपंच है, पागेजी।

प्रश्नः कोशिश करना ही प्रपंच है, यह मैं कहता हूं। अगर यह प्रपंच के बारे में कोशिश करता रहता है हमेशा, तो जैसे मैंने कहा निरोध की सहज होता है। उनको निरोध ही करने के लिए मौके आते हैं, वह निरोध ही करता है, कोशिश भी

करता है, निरोध भी करता है, यह सब डुप्लीकेट चलता है। तो चलते, चलते, चलते, निरोध का भी निरोध हो जाए।

यह जो आप कहते हैं, चलते, चलते, चलते, ऐसा नहीं होगा, कभी नहीं होगा।
क्योंकि आप जिस तरह सोच रहे हैं उसका मतलब यह हुआ कि वह एक कनक्लुजन है बहुत सी क्रियाओं का। जब आप कहते हैं, चलते, चलते।

प्रश्नः नहीं, क्रिया का कनक्लुजन नहीं है।

तो उसका मतलब क्या होता है?

प्रश्नः इवेंट्स का कनक्लुजन।

हां-हां, उसका मतलब यह हुआ कि बहुत सी इवेंट्स का, एक चेन का, एकशृंखला का1 कृत्यों की, सोच की, विचार की साधना का वह अंतिम निष्कर्ष है। तब वह ऐसे ही है जैसे हम पानी को गरम करते हैं, वह सौ डिग्री पर भाप बनता है। लेकिन जो पानी सौ डिग्री पर भाप बना है वह अस्सी डिग्री पर फिर पानी बन जाएगा, शून्य डिग्री पर फिर बर्फ बन जाएगा। पानी का भाप बन जाना कंडीशन है, उस कंडीशन से वापस गिर जाएगा तो फिर वही हो जाएगा। जब हम कहते हैं, चलते- चलते, तब हम, हम सहज को भी एक मंजिल बनाते हैं कहीं दूर। और सहज वह है जो दूर नहीं है, जो इसी वक्त है, अभी है, यहीं है। और जब हम मंजिल बनाते हैं और हम कहते हैं, चलते-चलते, धीरे-धीरे, करते-करते वह मिलेगा, उसका मतलब ही यह है कि वह मिला हुआ नहीं है, कभी मिलेगा।

प्रश्नः इसलिए मैंने कहा कि आत्मा की अवस्था तो सहज है। और अगर यह भय
है ऐसा मान कर बैठेंगे।

हां, यह जो डर है।

प्रश्नः डर नहीं है, डर की बात में यह है, दुनिया में हुई हुई बात है। समाज में इसका प्रचार बुद्ध भगवान के समय में यही प्रचार हुआ था कि सब लोग ब्रह्म ही हैं। न होते हुए भी हैं, ऐसा सब लोग मानने लगे। और आखिरी ब्रह्म में रहमान होने लगे। अनुभव की बात हो तो ठीक। इसलिए मैंने कहा कि साधुओं के अनुभव की बात उचित है। और 2 विभूति नहीं है। जितने बैठे उनके अनुभव की नहीं है। आप उनसे कहिए तो कि यह अदभुद है, तो एक दफे यह अनुभव नहीं होता।

प्रश्नः नहीं, यह सवाल नहीं है, सवाल बड़ा यह है कि वह अनुभव की कैसे होगी। अनुभव की नहीं है यह तो तय है। क्योंकि अनुभव की हो तो फिर तो बात नहीं है।

प्रश्नः बात वह नहीं है। तो अनुभव की सुनी है, तो मैंने कहा निरोध से निरोध के निरोध से होती है।

हां, वही मैं कह रहा हूं कि नहीं होती। अगर अनुभव की होनी है तो इस सत्य की समझ से होगी कि सहज किसी भी व्यवस्था और किसी भी प्रक्रिया और किसी भी साधना से नहीं पाया जा सकता। यह अनुभव जीवन में हजार-हजार विफलताओं के अनुभव से होगी, सफलताओं के अनुभव से नहीं। यह होते-होते नहीं हो जाएगी। यह हम रोज-रोज सब करके देखेंगे और हम पाएंगे कि नहीं होती है, वह नहीं होती है।

प्रश्नः इसके मानी निरोध के बारे में और निरोध के निरोध के बारे में ध्यान ही बाधा है1 समझ से होगी, ज्ञान से होगी।

प्रश्नः तो ठीक, यह भी मैं मानता हूं। बोलने के तरीके हैं और कोई नहीं।

नहीं, अगर कहेंगे बोलने के तरीके हैं2

प्रश्नः मेरा अर्थ यह है ऐसे ही बोलते हैं ध्यान के मौके पर।

यह जो, यह जो हमारी कठिनाई है2

प्रश्नः क्योंकि चलने वालों में से ऐसा भाव अंदर के दूसरे रहते हैं2

यह जो, यह भी हमारे मुल्क में एक दुर्घटना हो गई है। हमारे मुल्क में
एक दुर्घटना हो गई है। और वह दुर्घटना बड़ी है। और वह यह है कि करीब-करीब सब जो हो सकता है वह शब्दों से हमें ज्ञात है। और दूसरा, जीवन के बहुत गहरे अनुभव को हम शब्दों के फासले में भी बांट पाते हैं। यह सिर्फ शब्दों का फासला है। और तीसरा, कुछ बातें हम मान लेते हैं और इस भांति मान लेते हैं कि फिर उन पर चर्चा की कोई जरूरत नहीं रह जाती। और उनका हमें कोई पता नहीं होता। जैसे हम कहते हैं, आत्मा सहज है ही। अब यह बिल्कुल मान्यता हुई। इसके मान लेने से बड़ी कठिनाई खड़ी होगी, इसको मान कर हम सारा इंतजाम करना शुरू कर देंगे। यह अनुभव ही बन सकता है कि आत्मा सहज है या नहीं, यह मान्यता नहीं बन सकती। और जिस दिन अनुभव बनेगी, उस दिन हमें दिखाई पड़ेगा कि इसे हम कभी भी मान्यता बना कर पा नहीं सकते थे। यह हम पर उतरी हुई घटना होगी। और यह जो उतरने की घटना बनेगी, उसके लिए मैं कह रहा हूं कि फर्क पड़ेगा। अगर कनक्लुजन में फर्क हो तो बहुत दिक्कत नहीं है। अगर निष्कर्ष में फर्क हो तो वह शब्दों का फर्क होता है। लेकिन उस तक पहुंचने की भी बात है।
एक हेरिगल, एक जर्मन विचारक, जर्मनी से, जापान था तीन साल तक। और वह जिस झेन फकीर के पास सीख रहा था1 उससे वह सीख रहा था, धनुर्विद्या। और उस फकीर का कहना था कि धनुर्विद्या के माध्यम से मैं तुझे इशारे करवा दूंगा ध्यान के। क्योंकि झेन फकीर कहता है कि जो सहज है उसका डायरेक्ट इंडिकेशन नहीं हो सकता। इसलिए मैं सीधा ध्यान नहीं करवा सकता तुझे। तू कर कुछ और, इस करने में किसी दिन न करने का कोई क्षण होगा तो वह मैं तुझे इशारा करूंगा कि ध्यान ऐसा है। अभी एक, क्योंकि कठिनाई है जो चीज न करने से होने वाली है उसको कैसे इशारा किया जाए। इशारा भी करना बन जाएगा। तो यह व्यक्ति हेरिगल इतनी निष्ठा से धनुर्विद्या सीखने लगा कि डेढ़ साल में इसके सब सत-प्रतिशत निशाने अचूक लगने लगे। तब इसने अपने गुरु से कहा कि निशाने अचूक लगने लगे हैं, अब मुझे कुछ दे दो।
तो उसके गुरु ने कहाः निशाने तो अचूक लगने लगे, लेकिन वह क्षण अभी नहीं आ रहा जिस पर मैं इशारा करूं कि ध्यान कैसा होता है।
तो उसने कहाः वह क्षण कब आएगा, अब निशाने तो सब पूरे लगने लगे। मैं तो सोचता था धनुर्विद्या सीख लूंगा, तो ध्यान की तरफ इशारा हो जाएगा। तो उसके गुरु ने कहा कि नहीं, वह मौका ही नहीं आ रहा। तू अभी भी तीर चलाता है, अभी भी तुझसे तीर चल नहीं रहा है। अभी भी एफर्ट है। अभी भी तू साधता है, निशाना लगाता है। अभी भी तेरा चित्त तीर के चलाते वक्त खिंचता है। मैं उस क्षण की प्रतीक्षा कर रहा हूं किसी दिन तुझसे तीर चलता हो, तू चला न रहा हो, सहज चल रहा हो, तेरे मन में कोई खिंचाव न हो, तो मैं तुझे इशारा करूं कि ध्यान कुछ ऐसा होता है।
डेढ़ साल और बीत गया और रोज वह हेरिगल कहने लगा कि निशाना मेरा बिल्कुल ठीक लग रहा है और सब ठीक है, अब कोई भूल-चूक भी नहीं रह गई, अब वह इशारा कब होगा? उसके गुरु ने कहा कि तू बात ही नहीं समझ पा रहा है, निशाना लगाने से हमारा प्रयोजन नहीं है। हमारा प्रयोजन यह है कि तू तीर ऐसे चला सके1 जैसे आकाश मैं चील कभी तैरती है पंखों को छोड़ कर, तैरती नहीं फिर, कोई प्रयास

नहीं करती, बस छोड़ देती है। तरती है, तैरना नहीं कहना चाहिए। बस हवा में तरती है। ऐसा किसी क्षण की मैं तलाश में हूं।
तीन साल बीत गए, वह थक गया। और जर्मन दिमाग जो एफर्ट के अतिरिक्त कुछ सोच नहीं सकता। और नो-एफर्ट की बात जिसके पकड़ के बाहर है। आखिर हेरिगल ने कहाः मुझे क्षमा करें, मैं वापस लौट जाऊं, क्योंकि मेरे बस के बाहर है। और मुझे यह बिल्कुल पागलपन मालूम पड़ता है। क्योंकि जब मैं तीर चलाऊंगा तो मैं चलाऊंगा ही, बिना चलाए मेरा तीर चलेगा कैसे? और जब मैं निशाना लगाऊंगा तो लगाऊंगा ही। और डूअर तो मौजूद रहेगा, करने वाला मौजूद रहेगा। तो कल मैं वापस जाता हूं, क्षमा करें, आप एक सर्टिफिकेट तो लिख देंगे न कि मैं तीर चलाना सीख गया।
उसके गुरु ने कहाः मैं न लिख सकूंगा। मैं न लिख सकूंगा, क्योंकि अभी तुझसे तीर चला नहीं है। अभी तू चलाए ही चला जा रहा है, अभी सिर्फ अभ्यास ही है। तो अभी मैं तुझको तीरंदाज नहीं कह सकता। तीरंदाज तो वह है जो तीर न चलाए और तीर चल जाए। तब तो वह और हैरान हो गया, दूसरे दिन सुबह वह विदा लेने गया, तो वह गुरु दूसरों को सिखा रहा था। वह कुर्सी पर बैठ गया और देखता रहा। आज पहली दफा वह सीखने नहीं आया था, जाने की तैयारी मैं था, विदा लेने आया था। इसलिए बैठा था रिलैक्स। उसने गुरु को कमान उठाते देखा, उसने तीर चलाते देखा। आज पहली दफा वह करने के खयाल में नहीं था। और उसे दिखाई पड़ा कि फर्क गहरा है। वह आदमी कमान उठा नहीं रहा है, कमान जैसे उठ रही है। वह आदमी तीर चला नहीं रहा है, तीर जैसे चल रहा है। जैसे चलाने वाला और चलने वाले में कोई फासला नहीं है, वह एक ही घटना है। डूअर नहीं है पीछे, सिर्फ हैपनिंग ही रह गई है। वह उठा वहां से, उसने गुरु के हाथ से कमान लिया, तीर लिया और चलाया। और उसके गुरु ने कहा कि सर्टिफिकेट तेरे लिए मैं दे दूंगा। आज, आज तू नहीं है और तीर चला।
ध्यान ऐसी घटना है। जब हम प्रक्रिया की बात में पड़ते हैं, तो निश्चित
ही आप जो कहते हैं एक अर्थ में ठीक है कि चलते-चलते होगा, लेकिन चलते-चलते से नहीं होगा, चलते-चलते की जो असफलता है, चलते-चलते की जो विफलता है, चलते- चलते हर बार जो लगेगा कि चलते हैं और मंजिल नहीं मिलती है। और किसी दिन आप थक कर बैठ जाएंगे और कह देंगे, अब नहीं चलता है, न कोई रास्ता है, न कोई मंजिल है, और न मैं हूं, और कुछ नहीं होने वाला है। जिस दिन इतनी हेल्पलेस, असहाय अवस्था होगी, उस दिन हो जाता है। उस दिन जो होता है, उस दिन जो होता है वह आपके चलने का परिणाम नहीं है।

प्रश्नः वह तो बराबर है न। असफलता से आगे चलेंगे, सफलता हो तो आगे जाएंगे कैसे। असफलता है तो आगे जाइए, सफलता नहीं तो2

आगे जाने को नहीं कह रहा हूं, रुकने को कह रहा हूं। वह बात वही की वही है, उसमें फर्क नहीं पड़ रहा है। मैं आपसे यह नहीं कह रहा हूं कि आप आगे जाकर सहज हो जाएंगे, सहज तो आप हैं ही। जब तक आप आगे जाते रहेंगे तब तक सहज न हो पाएंगे।

प्रश्नः वह तो बराबर है, लेकिन पहले असफलता हो तो आगे जाएगा, भूल से जाएगा, आगे जाएगा तो असफलता होगा, आगे जाएगा, आखिर रुक जाएगा न। आखिरी यह है तो यकायक बोलने से आज ही आज नहीं होता है वह।

न, किसी को आज भी आज हो सकता है। किसी को आज भी आज हो सकता है।

प्रश्नः इसलिए शास्त्र में सद्यो-मुक्ति, क्रमो-मुक्ति रखी है।

न, वह जो क्रम-मुक्ति रखी है, वह जिनको हो सकता है वे भी क्रम-मुक्ति के आलस्य में पड़ते हैं, और नहीं हो पाता। होती क्या है कठिनाई कि हम सोच लेते हैं कि मुझको नहीं हो सकता, अभी कैसे हो सकता है। और अभी नहीं हो सकता, अगर यह माइंड का टें्रड है, तो किसी भी क्षण, अभी नहीं हो सकता, यही माइंड का

टें्रड होने वाला है। दस साल बाद के क्षण में भी यही माइंड होगा, वह कहेगा अभी नहीं हो सकता। क्रम-मुक्ति होगी। क्योंकि मेरा जो माइंड है, जो कह रहा है, अभी नहीं हो सकता, यह माइंड दस साल बाद भी मेरा ही माइंड होगा। कहेगा, अभी नहीं हो सकता। और जिस माइंड ने कहा है कि कल होगा, वह कल भी कहेगा कि कल होगा। वह जो पोस्टपोनिंग माइंड है, वह करता चला जाता है।

प्रश्नः ठीक है। पर यह आगे होगा इसे कहने वाले का भी होता नहीं है।

यह सवाल नहीं है, यह बड़ा सवाल नहीं है, क्योंकि तब कोई हानि नहीं हो रही। यानी मैं जो कह रहा हूं1

प्रश्नः नहीं होता यह मान कर बैठेंगे।

न, मान कर बैठ नहीं सकता। क्योंकि जिंदगी झूठ नहीं मानने देती, जिंदगी चौबीस तरफ से पकड़ती है और झूठ नहीं मानने देती। जिंदगी झूठ नहीं मानने देती।

प्रश्नः मानने नहीं देगी, आखिर में देखो वहां आकर बैठेगा।

नहीं। नहीं मान कर बैठ सकते हैं। कितना ही मान कर बैठ जाएं। ब्रह्म में एक जरा सा पत्थर लगेगा और पता चलेगा कि नहीं उससे फर्क नहीं पड़ता है।
जिंदगी नहीं मानने देती।

प्रश्नः आकर बैठेगा तो समझेगा कैसे?

मान कर बैठ सकते नहीं। भूख लगेगी और पता चल जाएगा। कोई गाली देगा और पता चल जाएगा। जरा सा धक्का लगेगा और पता चल जाएगा।

प्रश्नः क्यों? वह कहेगा, गाली देगा तो गुस्सा आता है, तो गुस्सा तो सहज है, पता कैसे चलेगा?

न, अगर इतना वह कह सके, अगर इतना वह कह सके, अगर इतना कह सके कि गुस्सा सहज है, भूख सहज है, बीमारी सहज है, मौत सहज है, अगर इतना वह कह सके, तो आप फिकर मत करिए कि उसको हुआ कि नहीं हुआ। क्योंकि आपको कोई हर्जा नहीं कर रहा है वह, एक बात। आपको कोई हर्जा नहीं कर रहा। अगर हर्जा भी करेगा तो अपने को करेगा। और मजा यह है कि जिस दिन 1

प्रश्नः नहीं, मैं उनकी बात नहीं कहता, मैं मेरी कहता हूं, अगर मैं ऐसा कहूं तो भूल में पड़ जाऊंगा, कि न अनुभव होते हुए भी सहज है, करके मान कर बैठूं, तो वह अदभुत बात नहीं होगी।

जिंदगी आपको नहीं मानने देगी। और मजा यह है कि धोखा सदा आप दूसरे को
दे सकते हैं अपने को दे नहीं सकते।

प्रश्नः इसलिए मैंने कहा।

नहीं, आप दे न सकेंगे।

प्रश्नः नहीं, मैं यह बोल रहा हूं कि अगर मैं ऐसे मान कर बैठूंगा2

नहीं, ऐसा मान कर पागेजी बैठ नहीं सकते हैं।

प्रश्नः इसलिए बैठ नहीं सकते, लेकिन कहते जाएंगे।

दूसरे को कह सकते हैं। दूसरे को कह सकते हैं। आप तो पूरे वक्त जानते रहेंगे कि पीड़ा कहां है। यानी मजा यह है कि हम आत्मज्ञान का धोखा सिर्फ दूसरे को दे सकते हैं, अपने को तो नहीं दे सकते। और जब अपने को नहीं दे सकते, और आत्मज्ञान का मामला निपट निजी है। और दूसरे मामले में दूसरे को धोखा देने में नुकसान है। आत्मज्ञान के मामले में किसी को धोखा देने का कोई अर्थ नहीं। मैं कहता हूं मैं आत्मज्ञानी हूं, इससे आपको तो कोई नुकसान नहीं पहुंच सकता। पहुंचा सकता हूं तो अपने को पहुंचा सकता हूं। और मजा यह है कि अपने को डिफिट किया नहीं जा सकता इस मामले में। इस मामले में मैं पूरे वक्त जब-जब कह रहा हूं मैं आत्मज्ञानी हूं तब 3 ब भी मैं जान रहा हूं कि मैं नहीं हूं। सच तो यह है कि मेरा यह कहना भी मेरे न होने का ही गहरा सबूत है, अन्यथा इसके कहने की भी कोई जरूरत नहीं।
अगर एक पुरुष रोज-रोज चिल्ला-चिल्ला कर सड़क पर कहता है कि मैं पुरुष हूं स्त्री नहीं हूं, तो सबूत देता है कि उसे शक है। पुरुष जानता है कि है और बात खत्म हो गई, उसको याद भी नहीं आता। पुरुष को भी अपने पुरुष होने की याद तभी आता है जब किसी क्षण में वह पाता है कि पुरुष नहीं है। नहीं तो याद नहीं आता। स्वास्थ्य, हमें स्वास्थ्य की कोई खबर नहीं आती सिर्फ बीमारी में पता चलता है। स्वस्थ आदमी को पता ही नहीं चलता कि मैं स्वस्थ हूं। सिर्फ बीमार आदमी को ही पता चलता है कि हूं कि नहीं। स्वस्थ आदमी का मतलब यह है कि जिसे पता नहीं चलता कि शरीर है। तो आत्मज्ञान तो इतना गहरा स्वास्थ्य है कि वह आपको पता चलता है। रह गई यह घटना, जैसे ही हम इसको क्रमिक दृष्टि से सोचना शुरू करते हैं वैसे ही हम पोस्टपोन कर पाते हैं। खतरा वहां है। जैसे ही हम सोचते हैं कि धीरे-धीरे होगा, कल होगा। तो मैं यह कहता हूं कि कोई आज मान कर बैठ जाए, हो गया, तो मैं कहता हूं, खतरा नहीं, क्योंकि वह धोखा दे नहीं सकता अपने को। लेकिन जो मान कर बैठा है कल होगा, यह अनंत जन्मों तक बैठा रह सकता है। इसलिए बैठा रह सकता है क्योंकि कल का कोई अंत नहीं है। यह कल भी कहेगा कि कल होगा। यह रोज टालता रहेगा। इसे रोज टालने की सुविधा है, जो मैं कह रहा हूं वह यह कह रहा हूं कि पहले के खतरे हैं, जो आप बता रहे हैं वह खतरा है। कि कोई आदमी मान कर बैठ सकता है। लेकिन बैठ जाए, मान कर बैठ सकता नहीं, भीतर जानता है कि नहीं हो सका। लेकिन यह दूसरा खतरा बहुत ही वास्तविक है। कल पर टाल सकता है, जांचने की परीक्षा नहीं, कल आएगा तभी तो पता चलेगा न। और कल से फिर कल पर टाल देगा। और कल आएगा तभी पता चलेगा। यह जन्म-जन्म टाल सकता है।
इस मुल्क में, खतरा जैसा आप कहते हैं कि लोग मान कर बैठ गए ब्रह्मज्ञानी हैं, उससे नहीं हुआ, इस मुल्क को खतरा पुनर्जन्म के पक्के भरोसे से हुआ। इस मुल्क को जो खतरा हुआ वह इस बात से हुआ कि बहुत जन्म हैं, जल्दी क्या है। अगले जन्म में पा लेंगे, और अगले जन्म में पा लेंगे, जल्दी इतनी नहीं है। इतनी जल्दी क्या है, पोस्टपोनमेंट करने की इटरनल सुविधा है हमें। वह जो सुविधा हमारे दिमाग में है1 इस जन्म में नहीं हुआ अगले जन्म में हो जाएगा, अगले जन्म में नहीं और अगले जन्म हो जाएगा। अगर मुझे पता चल जाए कि समय की इतनी सुविधा है कि कभी भी हो जाएगा, तो खतरा है, तो मैं कल पर टाल दूंगा। फिर जो कल का भरोसा नहीं वह आज कर लूं। स्त्री को भोगना है, वह आज भोग लूं, ब्रह्म को कल भोग लूंगा। धन कमाना है, वह आज कमा लूं, ब्रह्म को कल कमा लूंगा। मकान बनाना है, वह आज बना लूं, मोक्ष को कल बना लूंगा। हमारे मुल्क में जो खतरा हुआ है वह ब्रह्मज्ञान से नहीं हुआ। हमारे मुल्क का गहरा खतरा टाइम का एक बहुत लंबा कंट्रेक्शन है कि अनंत जन्म पड़े हैं, हो जाएगा, कभी भी हो जाएगा। और कल पर टाल देंगे, और यह कोई आज तो होने वाला नहीं है, धीरे-धीरे होगा। और हम तो कमजोर हैं, एकदम से कैसे हो जाएगा, यह धीरे-धीरे होता रहेगा, हम करते रहेंगे।
यह जो टालने की एक वृत्ति क्रमिक खयाल से पैदा होती है, उसके खतरे हैं। और इसलिए मैं कहना चाहता हूं निरंतर कि क्रमिक होगा ही नहीं। हालांकि मैं जानता हूं कि आज सबको नहीं हो जाएगा। लेकिन फिर भी मैं कहता हूं, क्रमिक होगा ही नहीं। आज ही होगा। और आज ही होने का जो इंटेंसिटी है

अगर वह खयाल में पड़ जाए, तो कल भी हो सकता है, परसों भी हो सकता है। लेकिन जब भी होगा तब आज ही होगा। जब भी होगा तब आज ही होगा।

प्रश्नः यह भी ठीक है सोचने की। शब्द से हम कहेंगे, मन के एटिट्यूट से
एक ही चीज है। इसके माने यह है कि हजारों जन्म हैं, कल हो जाएगा, यह तो कोई साधक की चीज नहीं है। ऐसे वे बोल सकते, नहीं, ऐसा नहीं है। साधक ऐसा नहीं हो सकता कि अगले जन्म में करेंगे ऐसा।

कर ही रहा है। कर ही रहा है।

प्रश्नः ऐसे कोई साधक नहीं है।

साधक का नहीं। आदमी के मन का सोचने का ढंग पोस्टपोनमेंट है। साधक का सवाल नहीं है। आदमी के मन का सोचने का जो ढंग है वह टालने का है।

प्रश्नः वह तो अच्छा ढंग नहीं है। मैं इस पर विश्वास नहीं करता, मेरा
भी ऐसा नहीं है। वह पोस्टपोन जो करता है वे चाहते ही नहीं हैं इसके माने यह है। अगर वे चाहते हैं तो पोस्टपोन नहीं करेंगे।

हां।

प्रश्नः सच्चे रूप से चाहते हैं तो पोस्टपोन करने का क्या हो, 2

सच्चे रूप से चाहते हैं तो आज ही चाहेंगे।

प्रश्नः चाहने के मानी यह है, इसलिए आज ही चाहिए।

हां, वही मेरा मतलब।

प्रश्नः तो मतलब चाह ही बात अलग है। इसलिए मैंने कहा कि वह पोस्टपोन नहीं करता है, लेकिन जैसा आपने कहा जिस दिन पाएंगे उस दिन आज ही पाएंगे।
लेकिन वह आज आज का आज है कि नहीं। यह अनुभव से समझना है शब्दों से नहीं। और अनुभव से दूसरे का नहीं, अपने थोड़ा अनुभव से।

हां-हां।

प्रश्नः अपने अनुभव को कैसा समझा जाए? कैसा हो ऐसा?

वह तो अपने को खुद समझना है।

प्रश्नः नहीं, लेकिन हो कैसा? उसका वह, यह तो चर्चा का विषय है।

नहीं, चर्चा का विषय है। और यह जो हम कहते हैं कि दूसरे से नहीं समझा जाएगा, इसमें हम अपने को बड़ा छोटा कर रहे हैं। क्योंकि दूसरा इतना दूसरा नहीं है जितना हम मान लेते हैं। और जब हम कहते हैं अपने से ही होगा, तो हमने बहुत गहरे सत्य का बहुत दुरुपयोग कर लिया। अपने से ही होगा इसका अर्थ कोई ईगोइस्ट होना नहीं है, कोई अहं और अस्मिता नहीं है। अपने से होने का मतलब इतना ही स्मरण रखना है कि दूसरे के अनुभव को हम अपना अनुभव न समझ बैठें। लेकिन दूसरे का अनुभव भी बिल्कुल दूसरे का अनुभव नहीं है। दूसरे के अनुभव में भी हम जुड़े हैं। दूसरे के अनुभव में भी हम जुड़े हैं। और यहां एक आदमी मर जाए, तो सिर्फ वही नहीं मरता, बहुत गहरे में मेरे मरने की खबर भी मुझे दे जाता है। मरता तो दूसरा ही है, लेकिन मैं भी मरता हूं अगर थोड़ी भी समझ है,

और थोड़ी भी देखने की दृष्टि है। तो दूसरा ही मरता है ऐसा कहना गलती होगी, मैं भी मरता हूं। और मेरी मृत्यु भी दूसरे की मृत्यु में खड़ी हो जाती है।

प्रश्नः यही दृष्टि है साधुओं के पास जाने की बल्कि।

हां।

प्रश्नः कि मरे हुए आदमी को देख कर अपने मरण का स्मरण होता है। वैसे
वह सहज होने वाले साधुओं का दर्शन होता है तो अपने को भी सहज होने का मौका मिलता है।

हां-हां, बिल्कुल।

प्रश्नः इसलिए सत्संग जरूरी है इसके माने। सत्संग जरूरी है।

असल में जब हम उन चीजों को सिद्धांत बना लेते हैं तो कठिनाई में पड़ जाते हैं।

प्रश्नः हो गया कठिनतर।

हां, कठिनाई में पड़ जाते हैं। सत्संग जरूरी है कि गैर-जरूरी यह सवाल नहीं है बड़ा।

प्रश्नः यही दृष्टि से मैंने कहा, पहले जो मैंने कहा यही दृष्टि से कि किसी सहज भाव हुए आदमी को देखते हैं तो अपने को भी सहज भाव की स्मृति होती है। जैसे मरे हुए आदमी को देख कर अपने मरण की स्मृति होती है।

वह इसलिए हो जाती है कि दूसरा निपट दूसरा नहीं है। कहीं न कहीं हम दूसरे से भी गहरे में जुड़े हैं। और गहरी कठिनाई जब दूसरे पर घटित होती है तो उनका संस्पर्श, उनका कंपन, उनकी तरंग हमको भी स्पर्श कर जाती है। कोई आदमी आइलैंड नहीं है।

प्रश्नः इ.ज नॉट ए एक्सेप्शन। यूनिवर्स में एक एक्सेप्शन नहीं है।

हां, अलग कोई आइलैंड नहीं, हम सब कांटिनेंट्स हैं। और कांटिनेंट्स बड़े हैं। जितने हम हैं उससे बहुत बड़े हैं। और उसमें बहुत कुछ दूसरे भी समाए हुए हैं। और यह जो, इसलिए सीखा जा सकता है। पकड़ा नहीं जा सकता, सीखा जा सकता है। और सीखना बड़ी और बात है, पकड़ना बड़ी और बात है। किसी को ऑथेरिटी बना लेने की कोई जरूरत नहीं है। लेकिन जितना हम जानते हैं, उतना ही जानने की सीमा है, ऐसे पागलपन में पड़ जाने की भी कोई जरूरत नहीं है।
इसलिए जिंदगी बहुत बारीक, डेलिकेट बैलेंस है। उसमें जब हम चीजों को सीधे हिस्सों में दो में तोड़ कर खड़े हो जाते हैं। कोई कहता सत्संग जरूरी है, तब कोई कहने वाला मिल जाता है कि बिल्कुल जरूरी नहीं है, घातक है। कोई कह देता है, गुरु बिल्कुल अनिवार्य है, गुरु के बिना ज्ञान नहीं होगा, तब कोई कहने वाला मिल जाता है कि गुरु से ज्ञान होगा ही नहीं। और जिंदगी ऐसी नहीं है। जिंदगी ऐसी नहीं है। यहां गुरु से कुछ भी नहीं होता और यहां गुरु से बहुत कुछ हो भी जाता है। यानी जिंदगी जो है बहुत नाजुक है। और उसको हम जब ऐसे डेड कंपार्टमेंट्स में बांटते हैं, तो मुश्किल हो जाती है। जब कोई कहता है, सत्संग से सब हो जाएगा, तब भी खतरा हो जाता है। तब लोग आंख बंद करके सत्संग करते रहते हैं। फिर वे सिर्फ आंख बंद करके बैठ जाते हैं, सोचते हैं सत्संग से सब हो जाएगा। और जब कोई कहता है, सत्संग से कुछ नहीं होगा, तब दरवाजे बंद कर लेते हैं दूसरों के लिए, अपने घर के भीतर बैठ जाते हैं कि जो होना है वह अपने से होगा। तो तब भी खतरा हो जाता है।

जिंदगी जो है वह बहुत मृत सिद्धांतों में नहीं बांटी जा सकती। और सब जीवित सिद्धांत अपने विरोधी को समाहित करते हैं, सब जीवित सिद्धांत। जो भी लिविंग ट्रुथ है, वह अपने विरोधी को अपने में समा लेता है, वह उस विरोधी के खिलाफ नहीं खड़ा होता, वह उसको आत्मसात ही कर जाता है। वह कहता है, वह छोर भी मेरा है। तब जरूर सोचा जा सकता है कि कैसे, वह आज कैसे आ जाए। वह घटना कैसे घट जाए। उस दिशा में बहुत कुछ सोचा जा सकता है। और दूसरे से भी बहुत कुछ सीखा जा सकता है। लेकिन पहले तो यह है कि हम दूसरे को दूसरा मान लें तो सीखने में बाधा पड़ जाती है। क्योंकि जैसे हमने दूसरे को दूसरा माना रेसिस्टेंट शुरू हो जाता है। और तब संवाद की संभावना कम और विवाद की संभावना बढ़ जाती है। जैसे हमने दूसरे को दूसरा माना, हम आत्मरक्षा में लग जाते हैं। वह जो दूसरा है उससे तो बचना ही पड़ेगा। तो जिसको डायलाग कहें वह फिर संभव नहीं हो पाता।
दूसरा दूसरा इतना नहीं है, वह भी मेरा ही एक छोर है। या हो सकता है मेरे ही मन का एक कोना है जो दूसरे से बोलता है। मेरे मन में भी वह कोना है जो पागेजी बोलते हैं। पागेजी के मन में भी वह कोना है जो मैं बोलता हूं। और जब उनमें से अपने ही मन के कोने की एक आवाज समझ पाते हैं, तब समझना बहुत आसान हो जाता है। तब समझना बहुत आसान हो जाता है। तब ये हमारे ही स्वर हैं, चाहे कितने ही विरोधी दिखाई पड़ते हों। चाहे कितने ही विरोधी स्वर हों, सभी संगीत का निर्माण करते हैं। ऐसा खयाल हो तब बड़ी सीखने की संभावना है। और ऐसा जरूरी नहीं है कि शब्द से ही सीखने की संभावना है। और सत्संग का मतलब 1

प्रश्नः खाली शब्द से ही नहीं है।

बात अलग है, हां, बात शब्द से है न। सत्संग से मतलब सिर्फ 2 से है, पास बैठने से है। उपनिषद शब्द जो बना वह ऐसे ही बना। उसका मतलब है, पास बैठना।

प्रश्नः नजदीक बैठना।

नजदीक बैठना। किसी ने जिसने जाना है उसके नजदीक बैठना। उसके नजदीक बैठने से जो मिला है वह उपनिषद बन गया। उसके नजदीक बैठने से। जस्ट सीटिंग बाय।

प्रश्नः शब्द का होकर तुम्हारा-हमारा दोनों का ही हो जाए।

हां, हो जाए।

प्रश्नः पर खाली बैठे हैं। पर बेचारे बेकार हो जाएंगे।

नहीं, संभावना इसी की है कि इनको ज्यादा हो जाए। क्योंकि यह बात ऐसी है1 बातचीत तो दूर ले ही जाती है। बातचीत दूर ले जाती है। तो सबसे ज्यादा दूर पागेजी और हम हैं। इनके लिए दूर होने का कोई कारण नहीं है। ये ज्यादा निकट हो पाते हैं। शब्द दूर ले ही जाता है। शब्द बोला नहीं गया कि दूर ले गया। क्योंकि शब्द बोला नहीं गया कि विचार शुरू करवा देता है। इधर मैंने कुछ बोला कि आपने सोचा। आपने सोचा कि आप दूर यात्रा पर निकले। मौन निकट ले आता है।
इसलिए सत्संग का गहरा अर्थ तो पास ही बैठना है। और कई बार जो हम नहीं शब्दों से कह पाते वह निकट बैठ कर ही अनुभव में उतर आता है। और तब दूसरा दूसरा नहीं होता, तब दूसरा दूसरा नहीं होता, मौन में दूसरा दूसरा नहीं होता। मौन में जो बाउंड्रीज हैं हमारी, सीमाएं हैं वे इंटर पैनीट्रेट कर जाती हैं। जब हम बहुत चुप किसी के पास बैठते हैं, चुप ही बैठे हैं, अगर आंख भी बंद रख ली और सिर्फ बैठे ही हैं, तो थोड़ी ही देर में उस कमरे में दो आदमी नहीं रह जाते।

क्वेकर्स की जो बैठक होती है वह मुझे बड़ी प्रीतिकर है। वे चुप ही बैठेंगे। पच्चीस आदमी इकट्ठे हो जाएंगे, तो चुप बैठ जाएंगे। और नियम यही है कि किसी को कभी बोलने जैसा लगे तो वह खड़े होकर बोल दे। लेकिन इसका कभी पहले से कोई सूचना नहीं होगी कि कौन बोलेगा, किस विषय पर बोलेगा, यह कोई सवाल नहीं है। कई दफा ऐसा होगा कि महीनों बैठते रहेंगे और कोई नहीं बोलेगा, बैठेंगे घंटे भर और चले जाएंगे। फिर किसी दिन किसी को लगेगा बोलने जैसा है, तो बोल देगा, और नहीं लगेगा तो फिर उठ जाएंगे। सत्संग का मतलब यही है1 मौन में बैठना है, पास बैठना है। और तब सत्संग कहीं भी घटित हो सकता है, जहां भी आप मौन में बैठ सकते हैं। तब फिर ऐसा जरूरी नहीं है कि वह किसी संत के पास ही घटित हो। वह एक वृक्ष के पास भी घटित हो सकता है। एक समुद्र के तट पर भी घटित हो सकता है। पर सत्संग का मौलिक अर्थ खो गया। और उसका मतलब हो गया है कि हम बैठें, बात करें, चर्चा करें। वह मौलिक अर्थ खो गया।

प्रश्नः आपने जो भी कहा है कि सहज स्वीकृति करना है। सहज अवस्था में बहुत तरह की बात पकड़ी। जब सहज स्वीकृति हो गई, तो वे दृष्टा कौन थे, जो अंदर से जाकर के उस दिन तथाकथित पहुंचने की प्रक्रिया शुरू हो गई।

असल में हमारे जो भी शब्द हैं वे सभी क्रमिक भाषा के हैं। जैसे ही आपने स्वीकार किया, सब स्वीकार कर लिया, कोई इनकार ही नहीं है आपको। बुरा जो आपको लगता है वह भी स्वीकृत है, अच्छा जो लगता है वह भी स्वीकृत है। तो एक तो जैसे ही बुरा और अच्छा लगने का फ्रेम टूटा वैसे ही आपके भीतर इंट्रीग्रेशन पैदा होता है। क्योंकि आपके भीतर खंड की अब कोई जरूरत न रही। नहीं तो बच्चू भाई दो आदमी हैं, एक तो वे बच्चू भाई हैं जो धार्मिक हैं, अच्छे हैं, और एक वे बच्चू भाई हैं जो कंडेम्ड हैं, जिनको कि ठीक करना है। और यह काम आप ही कर रहे हैं, यानी ये दोनों काम आप ही कर रहे हैं। वह बुरा होने का काम भी आपका एक हिस्सा कर रहा है, और यह अच्छा करने का काम भी आपका ही हिस्सा कर रहा है।
यह जैसे मैं अपने दोनों हाथ लड़ा रहा हूं, तो बायां हाथ भी मेरा, दायां हाथ भी मेरा, ताकत भी मेरी, तो इनमें से जीत होने वाली नहीं है। हां, सिर्फ कलह होने वाली है। और अंत में मैं थक कर मर जाऊंगा, क्योंकि दोनों हाथ मेरे हैं। किसी दिन मुझे पता चल जाए कि ये दोनों हाथ मेरे हैं, तो मैं जीता किसको रहा हूं, हरा किसको रहा हूं, तो हाथ की मुट्ठी खुल जाएगी और लड़ाई बंद हो जाएगी। और भीतर एक होलनेस, एक इंटिग्रेशन, एक समग्रता पैदा होगी, आप एक हो जाएंगे, पहली दफा। और जो व्यक्ति एक है, उसकी जिंदगी में क्रांति घटनी शुरू हो जाती है। और जो व्यक्ति दो है, उसकी जिंदगी में उपद्रव ही घटते रहते हैं। क्योंकि वह जो दो का होना है वही हमारा उपद्रव है।
कठिनाई क्या है कि एक बच्चू भाई अच्छे और एक बच्चू भाई बुरे। तो हमारी जिंदगी सिर्फ पाप और पश्चात्ताप की होने वाली है और कुछ होने वाला नहीं है। बुरा काम करेगा वह एक हिस्सा और फिर अच्छा हिस्सा पछताएगा। और अच्छा हिस्सा पछताता रहेगा और बुरा हिस्सा बुरा काम करता रहेगा। और यह जिंदगी भर चलेगा। और पछता कर हम जो करेंगे, पश्चात्ताप करके जो हम करेंगे वह इतना ही करेंगे कि बुरे हिस्से को फिर बुरा करने का तैयार करवा देंगे। जब भी मैं क्रोध कर लूं, तो मेरा अच्छा हिस्सा दुखी हो जाता है और वह कहता है फिर वही गलत काम कर लिया। अब नहीं करना है। तब मेरा अहंकार फिर हो जाता है ठीक कि बुरा काम किया सो तो ठीक, लेकिन पछताया भी। मैं बुरा आदमी नहीं हूं, बुरा काम हो गया यह दूसरी बात है। ऐसे मैं आदमी अच्छा हूं। पछता कर मैं फिर पुरानी जगह वापस लौट गया, कल मैं फिर क्रोध कर लूंगा। और यह जारी रहेगा। एक विशेष सर्किल है जो जारी रहेगा।
तो जब तक आप लड़ रहे हैं तब तक आप एक न हो सकेंगे। क्योंकि लड़ किसी आप दूसरे से नहीं रहे हैं अपने से ही लड़ रहे हैं। जैसे ही लड़ाई बंद हुई और आपने अपनी पूर्णता को स्वीकार किया जैसी भी है, इंच भर अस्वीकार नहीं रहा, तो आप पहली दफा इकट्ठे हो जाएंगे। और यह बड़े मजे की बात है कि इकट्ठे होकर

रूपांतरण करना नहीं पड़ता, होना शुरू हो जाता है। वह जो प्रोसेस शुरू होती है वह फिर आपका एक्ट नहीं है, वह घटना है।

प्रश्नः स्वाभाविक।

हां, वह घटना घटनी शुरू हो जाती है। आप अचानक पाते हैं, आप अचानक पाते हैं कि पूरा आदमी क्रोध नहीं कर पाता, अधूरा आदमी ही क्रोध कर पाता है। पूरा आदमी क्रोध नहीं कर पाता, क्योंकि पूरा आदमी इतना शक्तिशाली हो जाता है। तो क्रोध हमेशा कमजोर का ही लक्षण है।
मैं अभी एक कहानी पढ़ रहा था। एक बूढ़ी औरत 1 आक्सफर्ड में एक युनिवर्सिटी का विद्वानों का डिबेटिंग क्लब है1 उसमें एक बूढ़ी औरत रोज आकर बैठ जाती है। वह कोई ढाई सौ साल पुरानी घटना है। और सारी चर्चा लेटिन में होती है वहां। और वह बूढ़ी औरत रोज सुनती है और चली जाती है। तो एक दिन एक आदमी ने उससे पूछा कि यहां लेटिन में चर्चा हो रही, तुम लेटिन समझ पाती हो? उसने कहाः नहीं, लेटिन में नहीं समझ पाती। तुम क्या समझ पाती हो फिर यहां? उसने कहाः इतना मैं समझ जाती हूं कि जो आदमी डिस्कस करने में क्रोध में आ जाता है, मैं समझती हूं वह हार गया। मैं वापस चली जाती हूं। हार-जीत का मुझे पता चल जाता। तुम्हारी भाषा का पता नहीं चलता। तुम्हारी भाषा मैं बिल्कुल नहीं समझती, लेकिन हार-जीत का मुझे पता चल जाता है कि कौन आदमी हार गया।
वह जो क्रोध है वह कमजोरी का ही लक्षण है। और वह जो आनंद है वह शक्ति
का अभिव्यक्ति है। जितना कमजोर आदमी होगा उतना गलत में उतरता चला जाएगा। जितनी शक्ति भीतर इकट्ठी होगी, उसका गलत में जाना मुश्किल हो जाएगा। शक्तिशाली गलत में जाता ही नहीं। जितनी बड़ी शक्ति उतना ही गलत आपके लिए बचकाना मालूम पड़ने लगता, आपके योग्य नहीं रह जाता। बुरा नहीं होता आपके योग्य नहीं रह जाता। जस्ट इररिलेवेंट हो जाता कि आप कर पाएं यह बात ही नहीं रह जाती। और यह जो शक्ति का संग्रह है, यह आपके भीतर कांफ्लेक्ट बंद हो जाए तो होना शुरू होता है। आपके भीतर एक रिजवार्यर होता है, उसकी ओवरफ्लोइंग शुरू हो जाती है। और ये जो परिवर्तन शुरू होते हैं ये आपके किए हुए नहीं हैं, ये बच्चू भाई के किए हुए नहीं हैं, यह बच्चू भाई से ज्यादा जो आपके भीतर है उसका काम है। और तब आप एक दिन पाते हैं कि बच्चू भाई बह गए हैं। वे तभी तक रह सकते थे जब तक दो में थे, नहीं तो रह नहीं सकते, वे गए।

प्रश्नः तो भी दिखता यह है साक्षीभाव में2 इस बात का पहले स्वीकृति कर
ली है। न कानून है, 2 कोई भी नहीं, बिल्कुल स्वीकृत है। लड़ना बंद कर दिया। तो फिर स्वाभाविक साक्षीभाव खड़ा हो गया। जो अंदर की प्रक्रिया2

बिल्कुल हो जाएगी।

प्रश्नः कि प्रक्रिया शुरू हो गई 1 तो अंदर से जो काम आता है, क्रोध आता है, उसे देखते जाते हैं और अपने सामने अपना भाव बदल जाता है और 2 जाता।
और उनका2 बहुत बड़ी दूर से आते हैं कभी-कभार।

आएंगे ही। आएंगे ही।

प्रश्नः दूर हो तो दबाएं और जितना दबाएं उतना कल ज्यादा2

उतना ही आने की2

प्रश्नः और फिर स्थिति ऐसी आती है कि जिसके अंदर वह साक्षीभाव भी मिट जाता, सरल अवस्था हो जाती है।

मिट ही जाता है। मिट ही जाता है।

प्रश्नः तो वह दिखता है जैसा दिखता है। उसमें से भी निकल नहीं सकते हैं।

आप मत निकलिए। वह अगर आप निकलने की कोशिश करते हैं तो कभी न निकल पाएंगे, क्योंकि तब द्वंद्व जारी है।

प्रश्नः द्वंद्व तो चालू है, चलता ही रहता है।

नहीं, आप मेरी बात नहीं समझे। आप मेरी बात नहीं समझे। तब स्वीकार पूरा नहीं है। जब हम यह कहते हैं कि स्वीकार कर लिया। तब फिर दुबारा यह प्रश्न उठाने की गुंजाइश नहीं है कि इस क्रोध से छुटकारा कब होगा, इस काम से छुटकारा कब होगा। अगर यह प्रश्न उठ सकता है तो स्वीकृति पूरी नहीं है।

प्रश्नः प्रोसेस तो आता है न।

नहीं, आप मेरी बात नहीं समझे। मेरी आप बात नहीं समझे। यानी मैं यह कह रहा हूं, अक्सर होता क्या है कि हम साक्षी और स्वीकार भी लड़ने के साधन की तरह स्वीकार करते हैं। हमारी क्या कठिनाई है, हमारा यह लड़ने का चित्त इतना गहरा है कि अगर मैं आपसे कहूं कि स्वीकार करने से क्रोध चला जाएगा, तो आप कहते हैं कि ठीक है, हम स्वीकार करते हैं, लेकिन क्रोध जाना चाहिए। तो आप स्वीकार को भी लड़ने का एक यंत्र ही बनाते हैं। तब यह स्वीकार कभी पूरा नहीं हो सकता।
नहीं, जब मैं यह कह रहा हूं कि स्वीकार करने से क्रोध चला जाएगा, तो यह नहीं कह रहा हूं कि स्वीकार अगर आप कर लेंगे तो क्रोध को अलग करने में सफल हो जाएंगे। मैं यह कह रहा हूं कि स्वीकार करने का सहज परिणाम है क्रोध चला जाना। अगर परिणाम नहीं आ रहा, तो आप समझिए कि स्वीकार में कमी है। अगर परिणाम नहीं आ रहा, तो आप समझिए कि स्वीकार में कमी है। और अगर आप परिणाम लाना चाह रहे हैं तो भी सबूत है कि स्वीकार में कमी है। क्योंकि आप परिणाम क्यों लाना चाह रहे हैं? अस्वीकार है इसीलिए। कहते हैं कि क्रोध नहीं रह जाना चाहिए, काम नहीं रह जाना चाहिए। आपने बताया था कि स्वीकार करने से नहीं रह जाएगा, लेकिन वह है। वह अभी भी उठ रहा है। तो फिर आप स्वीकार नहीं किए। तब स्वीकार की बात ही खयाल में नहीं आई। दमन वाला चित्त जारी है और दमन वाला चित्त ही बड़े सूक्ष्म रूप से स्वीकार का भी उपयोग कर रहा है। और तब और ही जटिल जाल हो गया। लड़ाई जारी है। सिर्फ लड़ाई ने ढंग बदल दिया। अभी भी आप मौके-बेमौके देख लेते हैं कि देखो अभी तक क्रोध आ रहा है। नहीं, स्वीकार का मतलब यह है कि अब मैं देखने की फिकर छोड़ता हूं, आ रहा है तो आ रहा है, राजी हूं।
जिस दिन आप पूरे राजी हैं, उसी दिन आप पाएंगे कि अचानक क्रोध नहीं आ रहा है। क्योंकि आपके पूरे होते ही क्रोध की संभावना समाप्त हो जाएगी। लेकिन वह कांसीक्वेंस है, रिजल्ट नहीं है। वह फल नहीं है किसी प्रक्रिया का। वह किसी घटना के पीछे आई हुई छाया है।
जैसे कि मैं कहता हूं, आप यहां आ जाएंगे तो आपकी छाया यहां आ जाएगी। यह छाया का आ जाना जैसे सहज होगा, ठीक ऐसे ही स्वीकृति के पीछे साक्षी, और साक्षी के पीछे तथाता सहज होंगे। उसमें आपको कुछ करना नहीं, आपके करने का मेरी दृष्टि में मनुष्य के करने का दो ही शब्द हम उपयोग कर सकते हैं। अगर बौद्धों का शब्द उपयोग करना हो, तो स्वीकार है। अगर उपनिषद, भक्तों और सूफियों का शब्द स्वीकार करना हो, तो समर्पण है। यह शब्द का भेद है। स्वीकार का मतलब हैः ईश्वर के मानने की कोई जरूरत नहीं, जो है उसे हम स्वीकार करते हैं। लेकिन अगर स्वीकार न बन सकता हो, तो फिर समर्पण संभव हो सके।

प्रश्नः इसलिए समर्पण में कहा है, मिथलाचार समर्पण का।

हां, हां।

प्रश्नः बुरे और अच्छे।

हूं-हूं, सब तरफ। सब तरफ।

प्रश्नः नारद-भक्ति सूत्र ने कहा है, अच्छे और बुरे दोनों आचार का समर्पण करना यह सच्चा समर्पण है।

तभी, तभी हो पाए, नहीं तो नहीं हो पाए। तो वह जो आप पूछते हैं उसमें स्वीकार की कमी है। उसको पूछिए ही मत। या तो समर्पण कर दीजिए।

प्रश्नः देखना तो जारी रहता है।

नहीं, देखना जारी रहेगा, रहने दीजिए।

प्रश्नः देखने में जब वह काम आता है, क्रोध आता है उनकी घटना महसूस भी होता नहीं1 काम आए या क्रोध आए इसका ठोस आयाम नहीं अपने पर, तो हावी हो गया।

हां, यह जो, यह जो आपने सोचा न कि अपने पर हावी हो गया, तो आपने दो हिस्से कर लिए तत्काल। नहीं, अगर स्वीकार है तो आप ऐसा मत कहिए कि मुझे क्रोध आया, आप ऐसा कहिए कि मैं क्रोध हो गया। आया का सवाल नहीं है। आप क्रोध हो गए। और अगर आप सच में क्रोध के क्षण को देखेंगे तो क्रोध आता नहीं, आप क्रोध हो जाते हैं। यू आर द एंगर। ऐसा नहीं कि आप अलग खड़े हैं और एंगरी हो गए हैं, ऐसी दो चीजें नहीं होती हैं। और जब प्रेम आता है तो ऐसा नहीं होता कि प्रेम में भीतर अलग खड़ा है और इधर प्रेम है, आप प्रेम ही होते हैं। यह जो दो में आप तोड़ रहे हैं, यह पीछे का लौट कर सोचा हुआ खयाल है। जिस क्षण में क्रोध आएगा, जिस क्षण में क्रोध आएगा अगर उसकी1

प्रश्नः उसी क्षण में आप देख नहीं पाते, आप पीछे1

उसी क्षण में आप नहीं देख पाते।

प्रश्नः उसी क्षण में पाता है दिखता है कि आया।

यह पीछे से।

प्रश्नः अपने आप में पकड़ में भी बैठता वहां तक देखते हैं। 2 मिल जाए तो उसे छुड़ा लोगे। चिंता हो जाती इसलिए सुधारना चाहते हैं।

यह जो हम भाषा का उपयोग कर रहे हैं न, यह हमारी व्याख्या है जो पीछे से पकड़ी गई है। यह व्याख्या जैसी कि जब आपको भूख लगती है, तो आप फिर से देखें, क्रोध को जरा छोड़ दें, क्योंकि क्रोध के साथ हमारे एसोसिएंस हैं, और मन में ऐसा है कि वह बुरा है, उसको स्वीकार करना एकदम आसान मामला नहीं है। वह बुरा है ही। ऐसा हमें इतना पक्का है गहरे में कि हम कितना ही ऊपर-ऊपर स्वीकार कर लें, भीतर उसकी बुराई का डंक, कांटा चुभता ही रहता। वह लाखों साल की दिमाग पर बैठी हुई संस्कार है, वह एक दिन में मिट भी नहीं जा सकता।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां। भूख को आप पकड़ें, वह उसमें जरा हमें बुरे का खयाल नहीं होता है।
जब भूख आपको पकड़े तब आप देखें तो आपको ऐसा पता नहीं लगेगा कि मुझे भूख लगी है, आपको ऐसा ही पता लगेगा मैं भूख हूं। शब्दों को छोड़ दें और जरा भीतर भूख में उतरें, तो आप पाएंगे भूख आपका अस्तित्व बन गई है, भूख आपका अस्तित्व बन गई है, लेकिन भाषा में तो हमको चीजें तोड़नी पड़ती हैं। भाषा में हमें कुछ चीजें तोड़नी पड़ती हैं, क्योंकि भाषा में, भाषा के साथ एक कठिनाई है, वह कठिनाई थी, जैसे हम यहां इतने लोग बैठे हैं, हम साथ यहां सब साइमलटेनियस बैठे हैं। लेकिन अगर हम बोलना शुरू करें, तो मैं बोलूंगा, फिर आप बोलेंगे, फिर आप बोलेंगे। भाषा जो है, वह साइमलटेनियस नहीं हो सकती, उसमें क्रम हो जाएगा फौरन। हमारा होना साइमलटेनियस हो सकता है, लेकिन हमारा बोलना नहीं हो सकता। बोलने में एक बोलेगा, फिर दूसरा, फिर तीसरा, और एक लंबी वन डायमेंशन बात बनेगी। जब आप बाहर दरवाजे पर खड़े होकर देखते हैं1 आकाश, चांद, वृक्ष, फूल, सुगंध, सड़क की आवाजें, तब ये साइमलटेनियस होती हैं, ये एक ही साथ युगपत होती हैं। लेकिन जब आप सोचते हैं तब युगपत नहीं होती। आप कहेंगे, चांद देखा, तारे देखे, सड़क पर आवाज थी, सुगंध आई, यह वन डायमेंशन हो गई। इनमेंशृंखला हो गई।
तो जैसे ही आप किसी भीतरी अनुभव को विचार से देखते हैं वैसे ही वह लंबा दिखाई पड़ने लगता है। उसमें लगता है, भूख लगी है, मुझे भूख लगी है, मैंने अनुभव की कि भूख लगी है, फिर मैंने खाना खाया, फिर भूख मिटी। जब आप भूख के क्षण में एक्झिस्टेंसियल, भूख के क्षण में उतरेंगे तो आप पाएंगे कि आप भूख हैं। और यह जो अनुभव हो तो बड़ा कीमती है, तब अस्वीकार करने वाला ही है नहीं कोई, क्योंकि कोई पीछे बचा नहीं, भूख ही है। न स्वीकार करने वाला, न अस्वीकार करने वाला, तभी स्वीकार पूरा है। क्योंकि अगर स्वीकार करने वाला भी मौजूद है तो अस्वीकृति चल रही है। अगर मैं यह भी कहता हूं कि मैं आपको बिल्कुल स्वीकार करता हूं, तो यह इसी बात की गवाही दे रहा हूं कि मेरे मन में अस्वीकृति है, उसे हटा कर मैं आपको स्वीकार कर रहा हूं। नहीं तो इसका कोई मतलब नहीं है।
और क्रोध और काम के साथ कठिनाई है, क्योंकि वे शब्द जो हैं बड़े लोडेड, उनके साथ हमारा भारी भार है। तो उनको तो देखने में और कठिनाई पड़ती है। हमारा मन कहे ही चला जाता है कब छुटकारा पाओगे, कब छुटकारा पाओगे। नहीं, एक ज्यादा दिन का नहीं, पंद्रह दिन का प्रयोग करें। और पंद्रह दिन यह कर लें कि छुटकारा पाना ही नहीं, इसको पहले निर्णय कर लें। कि छुटकारा पाना ही नहीं, जो है उसे जानना है कि वह क्या है। हमें सिर्फ जानना ही है अभी। अभी हम पंद्रह दिन के बाद सोचेंगे कि छुटकारा करना कि नहीं करना। पंद्रह दिन, सालेड पंद्रह दिन मैं सिर्फ जानता ही रहूंगा कि क्या-क्या है1 क्रोध है, काम है1 कैसा है, क्या है, कैसी प्रतीति होती है, कैसा अनुभव होता है, क्या घटना घटती है, सिर्फ जानता ही रहूंगा।
जैसे कि आदमी एक अजनबी द्वीप पर छोड़ दिया गया है और अभी कुछ तय नहीं करता कि कहां मकान बनाना है, किससे दोस्ती करनी है, किससे दुश्मनी करनी है, अभी सिर्फ घूम कर देखता है कि क्या है। एक एक्वेंटेंस भर करने के लिए हम पूरे क्या हैं, कहां क्रोध है, कहां प्रेम है, कहां घृणा है। इसका अभी स्वीकार की भी फिकर न करें, सिर्फ इसको जानने की। और जानने में ही आप पाएंगे कि स्वीकार आता है। और उस स्वीकार में ही आप पाएंगे कि साक्षी आता है। और उस साक्षी में ही आपकी तरफ से जो एक कदम जरूरी है वह सिर्फ स्वीकार का ही है, बाकी सब आता है।
यह मैं निरंतर कहता हूं कि जैसे एक आदमी छत से कूद पड़े, तो एक ही कदम उसको उठाना पड़ता है। फिर वह आदमी पूछे कि कूदने के बाद फिर और क्या करना है मुझे, तो हम कहेंगे, तुम कुछ मत करो, फिर बाकी काम जमीन कर लेगी, वह तुम्हें खींच लेगी। फिर तुम्हें कुछ करने की बात नहीं है। तुम एक कदम उठा लेना, क्योंकि वही कदम तुम्हें जमीन की खिंचावट से रोके हुए है, बस। एक कदम आदमी की तरफ से और हजार कदम परमात्मा की तरफ से। एक कदम हमारी तरफ से स्वीकार या समर्पण या कोई भी नाम दें1 साक्षी दें, एक कदम जिसमें हमने अपने को पूरे के पूरे हम राजी हैं, हममें कोई शिकायत नहीं है, किसी चीज को काटने का कोई भाव

नहीं है। इसको ही मैं आस्तिक कहता हूं, ऐसे आदमी को। यह एक दफा उठ जाए तो दूसरे कदम अपने से उठते हैं, वे आपको उठाने नहीं हैं। मगर इसमें ध्यान रखने की जरूरत यही है कि अगर इस कदम को भी आप सिर्फ क्रोध को, काम को अलग करने के लिए उठा रहे हैं, तो कदम उठाया ही नहीं गया है, वह उपद्रव जारी रहेगा।

प्रश्नः संध्या जो प्रक्रिया हुई साक्षीभाव की या उसकी संवेदना की,
तो इससे ही हुई या इससे भी छुटकारा पाना है।

हां, वह इससे ही हुई। इससे हुई लेकिन इससे पूरी न हो पाएगी। इससे ही होगी, पहला खयाल इससे ही उठेगा, लेकिन वह असफल होगी। अब दूसरी प्रक्रिया उसकी असफलता से शुरू करिए, इससे हो नहीं पाएगा। उससे ही होती है। कोई भी आदमी जब शुरू करेगा तो ऐसे ही शुरू करेगा कि यह बुरा है, परेशान कर रहा है, दुख दे रहा है, नरक में डाल रहा है, इससे कैसे बाहर हो जाएं। लेकिन बाहर होने की कोशिश ही1(एक उदाहरण, फिर अपन उठें) एक, जैसे एक आदमी को नींद नहीं आ रही, तो स्वभावतः वह नींद लाने की कोशिश करेगा। और कोशिश से कभी नींद नहीं आ सकती। क्योंकि वह बिल्कुल ही एंटी-थेटिकल है। सब तरह की कोशिश नींद को तोड़ती है, नींद लाने की कोशिश भी। क्योंकि जब आप नींद लाने की कोशिश कर रहे हैं तब आपका जागना बढ़ता जाएगा, क्योंकि हर कोशिश जगाती है। लेकिन आप कहेंगे कि जिसको नींद नहीं आती वह तो नींद लाने के लिए ही कोशिश शुरू करेगा, यह तो बिल्कुल ठीक कहते हैं। लेकिन एक दिन उसको अनुभव करना पड़ेगा कि नींद लाने की कोशिश से नींद नहीं आती।

प्रश्नः कोशिश की थकावट से नींद आएगी।

हां, कोशिश की थकावट से नींद आएगी। जब कोशिश असफल हो जाएगी और एक दिन
वह कहेगा, भाड़ में जाने दो इस नींद को, और भाड़ में जाने दो इस कोशिश को, और पड़ा रह जाएगा, तो नींद आ जाएगी। तो अभी दूसरा कदम उठाना पड़ेगा आपको, जब कि कोशिश भी बेकार मालूम होती है, नहीं तो नहीं होता है।